कुप्रीन की कहानियां

अनुवादक

निर्मल वर्मा

पोपुल्स पब्लिशिंग हाउस (प्रा.) लिमिटेड

एम. एम. रोड, नई दिल्ली १.

सूची

मलोच

एक

मिल के भोंपू के गुरु-गर्जन ने काम शुरू हो जाने की घोषणा की—एक नया दिन आरम्भ हुआ। जमीन के चारों ओर फैलता हुआ वह कर्कश और गहरा स्वर मानो धरती की अंतड़ियों से बाहर निकल रहा था। बरसात में भीगी मटमैली धुंधली अगस्त की सुबह अपने में एक अजीब सा अवसाद लिए थी, मानो किसी अनिष्ट की ओर संकेत कर रही हो।

उधर भोंपू बज रहा था, इधर इंजीनियर बोबरोव अभी चाय पी रहा था। पिछले कई दिनों से उसके उन्निद्र रोग ने अधिक गम्भीर रूप धारण कर लिया था। हालांकि वह हर रात भारी सिर लिए सोने जाता और बार-बार चौंक कर झटके के साथ उठ बैठता, फिर भी शीघ्र ही उसकी आंख लग जाती। किन्तु वह चैन की नींद नहीं सो पाता था। पौ फटने से बहुत पहले ही वह जाग जाता। मन चिड़चिड़ा हुआ रहता, और लगता मानो सारा शरीर टूट रहा है। निश्चय ही इसका कारण उसकी मानसिक और शारीरिक थकान थी। इसके अलावा उसे मार्फिया के इंजेक्शन लेने की पुरानी लत थी, जिसने उसके रोग को अधिक उग्र बना दिया था। किन्तु आजकल वह अपनी इस आदत को जड़ से उखाड़ फेंकने के लिए जी-जान से प्रयत्न कर रहा था।

इस समय वह खिड़की के पास बैठा हुआ चाय पी रहा था। चाय उसे बिलकुल बदमजा और फीकी जान पड़ रही थी। खिड़की के शीशों पर बारिश

की बूंदें टेढ़ी-मेढ़ी रेखाएं खींचते हुए नीचे पानी के गड्ढों में गिर कर छोटी-छोटी ऊर्मियों में परिणत हो जाती थीं। खिड़की के बाहर खुरदुरे और रुक्ष विलो वृक्षों से — जिनके तने नंगे ठूंठ के समान थे और डालियां हरे-भूरे पत्तों से लदी थीं — घिरा हुआ एक चौकोर तालाब दीखता था। हवा के झोंकों से तालाब की सतह पर हल्की सी लहरें तिर जाती थी और विलो के पत्ते चांदी-से चमचमाने लगते थे। बारिश के थपेड़ों से मुरझाई, अधमरी घास क्षत-विक्षत सी होकर धरती पर झुक आयी थी। पड़ोस का गांव, दूर क्षितिज पर फैले जंगल की ऊंची-नीची, कटी-फटी झुरमुट छायाएं और काले-पीले परिधान में झिलमिलाता खेत — सब एक भूरे धुंधलके में सिमटे से दिखायी देते थे, मानो बीच में धुंध का झीना-सा परदा गिर गया हो।

सात बजे बोबरोव कन्टोप वाली बरसाती पहन कर घर से बाहर निकल आया। वह उन अस्थिर और अधीर प्रकृति के लोगों में से था, जो सुबह के समय परेशान और उद्विग्न हो जाते हैं; शरीर टूट-सा रहा था, आंखें भारी हो रही थीं, मानो कोई उन्हें जोर से दबा रहा हो और मुंह का स्वाद बासी-कसैला सा हो रहा था। किन्तु इन सब कष्टों से अधिक दुःखदायी वह मानसिक संघर्ष था जो इधर कई दिनों से उसके मन में उथल-पुथल मचा रहा था। उसके साथियों की बात अलग थी — जीवन के प्रति उनका दृष्टिकोण आदिम, हल्का-फुल्का और व्यवहारिक था; जो बात इतने दिनों से उसके दिल में कांटे की तरह चुभ रही थी, यदि वे उसे जान पाते, तो शायद हंस कर उड़ा देते; बात जैसी भी हो, वे उसकी परेशानी को तो समझ ही न पाते। मिल में अपने काम से बोबरोव को ऐसी घृणा होने लगी थी मानो वह उसे काट खाने को दौड़ता हो; उसका यह खौफ दिन-पर-दिन बढ़ता ही जाता था।

यदि वह अपनी रुचि, प्रवृत्ति और स्वभाव के अनुकूल खेती-बाड़ी, प्राध्यापन या कोई ऐसा ही काम, जिसमें ज्यादा दौड़-धूप करने की गुंजायश न हो, चुन लेता, तो उसके लिए अधिक उपयुक्त और सुविधाजनक होता। इंजीनियरिंग से उसे अधिक संतोष प्राप्त नहीं होता था। यदि उसकी मां आग्रह न करती, तो वह कॉलेज के तीसरे वर्ष में ही अपना विषय बदल लेता।

वास्तविक-जीवन के कठोर प्रहारों से उसके स्वभाव की नारी-सदृश कोमलता आहत सी हो गयी थी। उसे लगता था मानो जीतेजी उसकी खाल खींच ली गयी हो। कभी-कभी ऐसी छोटी-मोटी घटनाएं, जिन्हें दूसरे लोग आसानी से नजरन्दाज कर देते, उसके मन में देर तक खटकती रहतीं।

बोबरोव शक्ल-सूरत से सीधा-सादा व्यक्ति लगता था — कहीं दिखावे की बू नहीं थी। पतला-दुबला और जरा नाटे कद का उसका शरीर था, किन्तु उसकी रग-रग से एक अशान्त और अधीर कान्ति फूटी पड़ती थी। उसके चेहरे

की विशेषता उसके उन्नत गोरे ललाट में निहित थी। आंखों की विस्फारित पुतलियां, आकार में एक दूसरे से भिन्न, इतनी बड़ी थीं कि भूरी आंखें काली सी जान पड़ती थीं। उसकी घनी, ऊंची-नीची भौंहें नाक के ऊपर माथे के बीचों-बीच आपस में उलझ गयीं थीं, जिससे उसकी आंखें स्थिर, कठोर और कुछ-कुछ वैराग्य-भावना में डूबी सी दिखलायी देती थीं। उसके होंठ पतले और फड़कते हुए थे, किन्तु उनमें क्रूरता का आभास नहीं मिलता था। उसके होंठों की बनावट कुछ बेडौल सी थी — मुंह का दाहिना छोर बाएं छोर की अपेक्षा तनिक ऊंचा था; उसकी उजली दाढ़ी और मूछें छोटी और छितरी हुई थीं, मानो किसी नौजवान की मसें भीगी हों। यदि उस सादे-साधारण चेहरे का कोई आकर्षण था तो वह उसकी मुस्कराहट में छिपा था। जब वह मुस्कराता तो एक स्निग्ध, उल्लसित सा भाव उसकी आंखों में चमकने लगता, और उसका पूरा चेहरा खिल जाता।

आधा मील चलने के बाद वह एक छोटे से टीले पर चढ़ गया। नीचे मिल के विस्तार का पूरा अनवरुद्ध दृश्य बीस वर्ग मील के घेरे में चारों ओर फैला था। मिल क्या थी, लाल ईंटों का एक अच्छा-खासा शहर था। चारों ओर लम्बी, कालिख में पुती काली चिमनियां सिर उठाए खड़ी थीं। गन्धक और पिघले हुए लोहे की तीखी गन्ध हवा में व्याप्त हो रही थी। समूचा वातावरण एक अनवरत, कर्णभेदी कोलाहल में डूबा था। चार पवन-भट्टियों की भीमकाय चिमनियों के समूह सारे दृष्य पर छाये हुए थे। उनके पास ही गर्म हवा परिचारित करने के लिए आठ ऊष्ण-पवन चूल्हे तथा गोल गुम्बदों वाले आठ विशालकाय लौह-बुर्ज खड़े थे। पवन भट्टियों के आसपास अन्य इमारतें दिखलायी देती थीं — मरम्मत के कारखाने, ढलाई-घर, धुलाई-सफाई का खाता, एक इंजन शैड, लोहे की पटरियां ढालने वाला कारखाना, खुले मुंह की और लोहा गलाने की भट्टियां, इत्यादि।

मिल का अहाता तीन विशाल प्राकृतिक सोपानों में नीचे उतर गया था। छोटे-छोटे इंजन चारों दिशाओं में दौड रहे थे। पहले वे सबसे नीचे की सतह पर नजर आते, फिर कर्कश सीटी बजाते हुए ऊपर की ओर भागते, कुछ क्षणों के लिए सुरंगों में विलीन हो जाते और फिर सफेद भाप में लिपटे हुए बाहर निकल आते, पुलों को घर्घराते हुए पार करते, फिर पत्थर की बाड़ों के संग-संग इस तरह दौड़ते जाते मानो हवा में उड़ रहे हों और अन्त में कच्ची धातु और कोयले का चूरा पवन भट्टियों में फेंक आते।

दूर, उन प्राकृतिक सोपानों के पीछे, पांचवीं और छठी पवन भट्टियों के निर्माण-स्थल पर अराजकता का ऐसा साम्राज्य फैला था कि देखने वाला हक्का-बक्का सा रह जाता। लगता था मानो एक भयंकर भूकम्प वहां जबर्दस्त उथल-

पुथल मचा गया हो। कुटे हुए पत्थरों तथा विभिन्न आकृतियों और रंगों के ईंटों के अनगिनत ढेर, रेत के टीले, चौकोर पत्थरों के अम्बार, लोहे की चादरों और लकड़ी के ढेर — सबकुछ अस्त-व्यस्त सा बिखरा था। लगता था मानो बिना किसी कारण या प्रयोजन के, किसी विचित्र संयोग से ये सब वस्तुएं यहां जमा हो गयीं हों। सैकड़ों ठेले और हजारों आदमियों की चहल-पहल को देख कर लगता था मानो किसी भग्न-बाल्मीक के इर्द-गिर्द असंख्य चीटियां रेंग रही हैं। चूने की सफेद चुनचुनाती धूल हवा में धुंध की तरह छा गयी थी।

कुछ और दूर, क्षितिज के पास मजदूरों की भीड़ लगी थी। वे एक लम्बी मालगाड़ी से सामान उतार रहे थे। रेल के डब्बों से ईंटों का अविरल प्रवाह फट्टों पर सरकता हुआ नीचे आ रहा था, लोहे की चादरें झनझनाती हुई नीचे गिर रही थीं और लकड़ी के पतले तख्ते हवा में कांपते हुए से उड़ रहे थे। एक ओर खाली गाड़ियां रेल की ओर सरक रहीं थीं, दूसरी ओर से सामान से लदी गाड़ियां वापिस लौट रही थीं। राज-मजदूरों की खेनियों की स्पष्ट खटाखट, बायलर की कीलों पर लगती हुई हथौड़ों की गूंजती चोटें, भाप के हथौड़ों की भारी कड़कड़ाहट, भाप की नलियों की शक्तिशाली फुंकार और सीटी, और कभी-कभी धरती के भीतर से जमीन को थर्रा देनेवाले विस्फोट का धमाका — चारों ओर से उठती हुई हजारों आवाजें एक दूसरे में घुल-मिल कर एक दीर्घ लपलपाते कोलाहल में परिणत हो रहीं थीं।

यह एक ऐसा विचित्र दृष्य था जो बरबस मन को स्तम्भित, अभिभूत सा कर लेता था। एक विशालकाय, पेचीदी और विधिवत चलने वाली मशीन के समान मानव-श्रम का काम पूरी तरह जारी था। हजारों आदमी — इंजीनियर, राज मजदूर, कारीगर, बढ़ई फिटर, भूमि खोदने वाले मजदूर, तरखान, लुहार — दुनिया के चारों कोनों से यहां इकट्ठा हुए थे ताकि वे औद्योगिक विकास को एक कदम और आगे ले जाने की खातिर अपना सब कुछ — बल और स्वास्थ्य, शक्ति और बुद्धि — स्वाहा कर दें। पेट भरने का यही एक लौह-नियम था, जिसका अनुसरण किये बिना जीवित रहना असंभव था।

उस दिन बोबरोव का मन असाधारण-रूप से खिन्न था। साल में तीन-चार बार उस पर घने अवसाद का विचित्र भाव घिर आता था और वह चिड़-चिड़ा सा हो जाता था। वह अवसाद का भाव आम तौर पर किसी पतझड़ की सुबह, जब बदली घिरी होती, अथवा सरदी की शाम, जब बर्फ पिघल रही होती, उसे आ दबोचता। सब चीजें सूखी, कान्ति-हीन सी जान पड़तीं, लोगों के चेहरे फीके, भद्दे और रुग्ण से दिखायी देने लगते, उनकी बातचीत से केवल जी ऊबता, लगता मानो कोई दूसरे लोक से बोल रहा है। उस दिन लोहे की पटरियों के कारखाने का चक्कर लगाते हुए जब उसने मजदूरों के कोयले की कालिख में

लिपे-पुते, आग में तपे हुए पीले चेहरों को देखा, तो उसे विशेष रूप से झुंझलाहट हुई। सफेद गर्म लोहे से उड़ती भभकती हुई भाप मजदूरों के हाथ-पैरों को झुलसा जाती थी, और पतझर की ठंडी हवा के कड़कड़ाते झोंके खुली हुई दहलीज से भीतर आकर हड्डियों को भेद जाते थे। उसे लगा मानो वह भी मजदूरों की शारीरिक यातना को उनके साथ भुगत रहा है। उसे अपने सजे-संवारे रूप का, सुन्दर कीमती पोशाक और तीन हजार रूबल के वार्षिक वेतन का ध्यान हो आया और शर्म से उसका माथा झुक गया।

दो

एक वेल्डिंग-भट्टी के पास खड़े होकर वह देखने लगा। हर क्षण भट्टी का जलता हुआ भीमकाय जबड़ा खुलता और एक अन्य धधकती हुई भट्टी से हाल में निकले हुए पचास सेर वजन के फौलाद के धधकते टुकड़ों को एक-एक कर निगल जाता। पन्द्रह मिन्ट बाद, दर्जनों मशीनों में से कर्णभेदी आवाज के साथ गुजरते हुए फौलाद के ये टुकड़े कारखाने के दूसरे सिरे पर लम्बी चमचमाती लोहे की पटरियों की शक्ल में प्रकट होते और वहां उनके अम्बार लग जाते।

किसी ने पीछे से आकर बोबरोव का कंधा छुआ। खीजकर वह घूम गया—देखा, सामने उसका सहयोगी स्वेजेवस्की खड़ा है।

बोबरोव को स्वेजेवस्की से सख्त नफरत थी। उसकी कमर हमेशा कुछ ऐसी झुकी रहती, मानो चोरी करने जा रहा हो या सलामी कर रहा हो। उसके होठों पर सदा एक व्यंगपूर्ण मुस्कराहट खेलती रहती, अपने ठंडे लिसलिसे हाथों को वह हमेशा रगड़ता रहता। उसके हाव-भाव में कुछ ऐसा था जिससे खुशामद की, गिड़गिड़ाहट और विद्वेश की, बू आती थी। मिल में कहीं कोई बात हो जाती, तो उसी को हमेशा सबसे पहले उसकी खबर लगती। यदि वह जान लेता कि कोई बात अमुक व्यक्ति को कष्ट पहुंचाएगी, तो जानबूझ कर उसके सामने वही बात खूब नमक-मिर्च लगाकर सुनाता। बात करते समय उसके हाथ-पांव स्थिर न रहते थे—जिस व्यक्ति के साथ बात कर रहा होता, उसकी बगलों, कंधों, हाथों और कोट के बटनों को बार-बार छूता रहता।

"अरे भाई तुमसे मिले मुद्दत हो गयी," स्वेजेवस्की ने खिखियाते हुए बोबरोव का हाथ पकड़ लिया। "पुस्तकें पढ़ने में लीन थे क्या?"

"नमस्कार," बोबरोव ने अपना हाथ छुड़ाते हुए अनमने भाव से कहा। "बस, मेरी तबियत ठीक नहीं थी।"

"जिनेन्को के यहां तुम्हें सब लोग बहुत याद करते हैं," संकेत भरी आवाज में स्वेजेवस्की कहता गया। "आजकल तुम वहां क्यों नहीं जाते? अभी

कुछ दिन पहले मिल के डायरेक्टर महोदय वहां मौजूद थे; तुम्हारे बारे में पूछताछ कर रहे थे। बातों-ही-बातों में पवन भट्टियों की चर्चा चल पड़ी। बस, फिर क्या था, उन्होंने तुम्हारी प्रशंसा के पुल बांध दिये।"

"अच्छा, मैं धन्य हुआ!" बोबरोव ने सिर झुकाने का अभिनय किया।

"सच कह रहा हूं, वह कहते थे कि बोर्ड के सदस्य तुम्हें एक बहुत निपुण इंजीनियर मानते हैं। उनके विचार में तुम बहुत दूर तक जाओगे। कहते थे कि नाहक हमने मिल का डिजाइन बनवाने के लिये फ्रांस से इंजीनियर बुलवाया जबकि तुम्हारे जैसे अनुभवी व्यक्ति यहां मौजूद हैं। किन्तु..."

"अब यह कुछ नागवार बात कहेगा," बोबरोव ने सोचा।

"एक बात पर उन्हें आपत्ति है। तुम जो सबसे अलग-थलग रहते हो, किसी से मिलते-जुलते नहीं, एक रहस्य की दीवार जो तुमने अपने इर्द-गिर्द खड़ी कर रखी है, वह उन्हें कुछ जंचती नहीं। हां भई, याद आया! इधर-उधर की बातों में मैं तुम्हें सबसे बड़ी खबर सुनाना तो भूल ही गया। संचालक महोदय फरमा रहे थे कि कल बारह बजे स्टेशन पर हम सब लोगों का मौजूद रहना जरूरी है।"

"क्या फिर किसी से भेंट करने जाना है?"

"बिलकुल ठीक! अच्छा, बताओ, इस बार कौन आ रहा है?"

स्वेजेवस्की के चेहरे पर एक भेद भरी मुस्कराहट खिल उठी और जाहिरा खुशी से वह अपने हाथ रगड़ने लगा। वह दिलचस्प खबर जो सुनाने वाला था!

"मुझे कुछ नहीं मालूम," बोबरोव ने कहा। "अनुमान लगाना मेरे बस की बात नहीं।"

"अरे, कोशिश तो करो। जो नाम जबान पर आये, वही कह डालो।"

बोबरोव ने कुछ न कहा और भाप से चलनेवाले एक माल-असबाब उठाने वाले यंत्र को देखने का उपक्रम करने लगा। स्वेजेवस्की ने जब उसे इस मुद्रा में देखा तो और भी अधीर हो उठा।

"शर्तिया तुम कभी नहीं बता सकते। खैर, मैं तुम्हारी उत्सुकता को और अधिक नहीं बढ़ाऊंगा। सुना है, खुद क्वाशनिन यहां पधार रहे हैं।"

उसने जिस दास-भाव से उस नाम का उच्चारण किया, उसे सुन कर बोबरोव का मन घृणा से भर उठा।

"इसमें इतनी महत्वपूर्ण बात क्या है?" उसने लापरवाही से पूछा।

"अरे, कैसी बात करते हो! संचालक-मंडल में वह जो जी में आये करता है, जो उसके मुंह से निकल गया, वही ब्रह्मवाक्य माना जाता है। इस बार मंडल ने निर्माण-कार्य की गति को तेज करवाने की जिम्मेदारी उसके

कंधों पर सौंपी है — या यू कहो कि उसने मंडल की ओर से खुद यह जिम्मेदारी अपने हाथों में ली है। उसके यहां आने पर देखना कैसी हाय-तौबा मचेगी। पिछले साल उसने मिल का निरीक्षण किया — तुम्हारे यहां आने से पहले की बात है, ठीक है न ? मैनेजर और चार इंजीनियरों को खड़े-खड़े बरखास्त कर दिया गया। सुनो, तुम्हारी पवन-भट्टी कब तक तैयार हो जाएगी ?"*

"एक तरह से तैयार ही समझो।"

"चलो यह भी ठीक हुआ। क्वाशनिन की उपस्थिति में ही नींव डालने के काम के साथ-साथ इसकी भी खुशी मना लेंगे। तुम कभी उससे मिले हो ?"

"नहीं, कभी नहीं। नाम जरूर सुना है।"

"मुझे उससे मिलने का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। सच मानो, एक ही आदमी है अपनी किस्म का। पीटर्सबर्ग में ऐसा कौन है जो उसे नहीं जानता ? पहली बात तो यह कि वह इतना मोटा है कि अपने पेट पर दोनों हाथ नहीं मिला सकता। क्यों, तुम्हें यकीन नहीं होता क्या ? भगवान कसम, ऐसी ही बात है। उसने अपने लिए खास गाड़ी भी बनवायी है, जिसकी समूची दाईं दीवार कब्जों पर खुलती है। कद भी कुछ छोटा नहीं, ताड़ सा ऊंचा है। बाल सुर्ख हैं और आवाज तोप की तरह गूंजती है। लेकिन पट्ठा है कितना होशियार ! भगवान जाने, तमाम-की-तमाम जॉयन्ट-स्टॉक कम्पनियों के संचालक-मंडलों का सदस्य है। साल में सिर्फ सात बार उनकी बैठकों में भाग लेता है और उसके एवज में दो लाख रूबल खड़ा कर लेता है। जब कभी सामान्य सदस्यों की बैठक में कुछ मंजूर करवाना होता है, तो उसकी योग्यता की तुलना में दूसरे लोग घास छीलते से दिखाई देते हैं। झूठ और धांधली से भरी रिपोर्ट भी वह इस ढंग से प्रस्तुत कर सकता है कि कम्पनी के भागीदार काले को सफेद समझ लें और खुश होकर संचालक-मंडल का शुक्रिया अदा करने में कोई कसर न उठा रखें। आश्चर्य की बात तो यह है कि वह स्वयं नहीं जानता कि वह क्या बक रहा है। किन्तु उसे अपने पर इतना भरोसा है कि बस उसी के बूते पर बात को निभा ले जाता है। कल जब तुम उसका भाषण सुनोगे तो कोई आश्चर्य नहीं यदि तुम्हें यह गलतफहमी हो जाए कि उसका सारा जीवन पवन भट्टियों के बीच बीता है, हालांकि हकीकत यह है कि उसे उनके बारे में उतना ही ज्ञान है, जितना संस्कृत के सम्बंध में मेरा।

* इस्तेमाल में लाने से पहले पवन भट्टी को कच्ची धातु के पिघलने के ताप-बिन्दु तक गरम किया जाता है। यह ताप-बिन्दु लगभग ३,०००° फारेन्हीट है। इस काम में कभी-कभी महीनों लग जाते हैं।

"ला-ला-ला-ला !" बोबरोव ने मुंह फेर लिया और जानबूझ कर लापरवाही के साथ बेसुरी आवाज में गाने लगा ।

"लो मैं तुम्हें एक मिसाल देता हूं । जानते हो, पीटर्सबर्ग में लोगों का वह स्वागत कैसे करता है ? गुसलखाने में पानी से भरी टब में वह अपना लाल चमकता हुआ सिर बाहर निकाले बैठा रहता है, और कोई राज-मंत्री या अन्य अफसर वहीं, अदब से झुक कर खड़ा हुआ उसे अपनी रिपोर्ट सुनाता है । खाने में भी वह एक नम्बर का पेटू है और बढ़िया-से-बढ़िया भोजन चुनने की तमीज रखता है । क्वाशनिन की पसन्द का भुना हुआ मांस सारे शहर में प्रसिद्ध हो चुका है और बड़े-बड़े रेस्तरांओं के विशिष्ट पकवानों में उसकी गणना होती है। रही स्त्रियों की बात, सो उसके सम्बंध में भी एक मजेदार घटना है, जो तीन साल पहले घटी थी ।"

जब उसने देखा कि बोबरोव उसकी पूरी बात सुने बिना ही जा रहा है, तो उसने उसके कोट का बटन पकड़ लिया ।

"जाओ मत," वह याचना भरे स्वर में बुदबुदाया । "बहुत ही मजेदार बात है । मैं संक्षेप में ही तुम्हें सुना दूंगा । तीन साल पहले की बात है, पतझड़ में एक निर्धन आदमी पीटर्सबर्ग आया । बेचारा कोई क्लर्क रहा होगा, उसका नाम इस वक्त मुझे याद नहीं आ रहा है । वह किसी पुश्तैनी जायदाद के झगड़े के सिलसिले में पीटर्सबर्ग आया था । सुबह दफ्तरों के चक्कर काटता और दुपहर को पन्द्रह-बीस मिनटों के लिए 'ग्रीष्म-वाटिका' में बैठकर आराम करता । इसी तरह चार-पांच रोज गुजरे । रोज वह एक स्थूलकाय, सुर्ख बालों वाले महाशय को बाग में टहलते हुए देखा करता था । एक दिन दोनों में बातचीत चल पड़ी । लाल बालों वाला व्यक्ति और कोई नहीं, क्वाशनिन ही था । उसने उस गरीब युवक की राम कहानी सुन कर उसके प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट की । किन्तु क्वाशनिन ने उसे अपना नाम नहीं बताया । एक दिन लाल बालों वाले व्यक्ति ने उस युवक से कहा, 'क्या तुम किसी भद्र महिला से इस शर्त पर विवाह करने के लिए तैयार हो कि विवाह के एकदम बाद तुम उसे छोड़ दोगे और फिर उससे दुबारा नहीं मिलोगे ?' उन दिनों वह युवक भूखा मर रहा था । 'मैं राजी हूं !' उसने कहा । 'लेकिन पहले लेन-देन की बात तय कर लो । रुपया मुझे पेशगी चाहिए ।' वह युवक कच्ची गोलियां नहीं खेला था । आखिर सौदा पट गया । एक सप्ताह बाद लाल बालों वाले महाशय ने उसे एक बढ़िया कोट पहनने के लिए दिया और पौ फटते ही उसे अपने संग गांव के एक गिरजे में ले गया । आदमी न आदमजात, गिरजा सुनसान पड़ा था । एक कोने में दुल्हन परदा किये चुपचाप खड़ी थी, किन्तु परदे के बावजूद उसका सौंदर्य और यौवन छिपा न रह सका । विवाह की रस्म शुरू हुई ।

युवक को लगा कि उसकी वधू बहुत उदास है। उसने दबे स्वर में उसके कानों में कहा, 'मुझे लगता है कि तुम अपनी इच्छा के विरुद्ध यहां आयी हो।' और 'शायद तुम्हारा भी यही हाल है,' लड़की ने उत्तर दिया। अब सारी पोल खुल गयी। ऐसा जान पड़ता था कि लड़की की मां ने जोर जबरदस्ती करके यह विवाह उसके सिर पर थोप दिया था। बात यह थी कि सीधे तौर पर लड़की को क्वाशनिन के हवाले करते हुए उसकी भी आत्मा संकोच करती थी। इसीलिए यह षडयंत्र रचा गया था। कुछ देर तक दोनों में इसी तरह बातचीत होती रही। आखिर उस युवक ने लड़की के सामने यह सुझाव रखा, 'क्यों न हम एक चाल चलें? अभी हम दोनों जवान हैं, और सम्भव है हमारे भाग्य में अभी खुशकिस्मती बदा हो। आओ, क्वाशनिन को यहीं छोड़ कर हम दोनों भाग चलें।' लड़की दिलेर और होशियार थी। बोली: 'मैं तैयार हूं, चलो!" विवाह सम्पन्न हो जाने के बाद सब लोग गिरजे के बाहर आ गये। क्वाशनिन का चेहरा प्रसन्नता से चमक रहा था। युवक ने क्वाशनिन से एक मोटी रकम पहले से ही झाड़ ली थी। क्वाशनिन का जहां अपना स्वार्थ होता है, वहां हाथ नहीं खींचता, पानी की तरह रुपया बहा देता है। बाहर आकर क्वाशनिन नव-विवाहित दम्पति के पास आ गया और व्यंग्यात्मक स्वर में उन्हें बधाई दी। दोनों ने उसे धन्यवाद दिया और कहा कि उसने उनकी जो सहायता की है, उसके लिए वे हमेशा उसके कृतज्ञ रहेंगे। यह कह कर वे दोनों लपक कर गाड़ी में बैठ गये।

'यह क्या माजरा है—तुम दोनों कहां चल पड़े?'

'और कहां जाना है क्वाशनिन साहब! नयी-नयी शादी है, कुछ दिनों तक सैर-सपाटा ही करेंगे। चलो भाई कोचवान जल्दी करो!' और क्वाशनिन मुंह बाए देखता ही रह गया। एक दूसरे अवसर पर भी...क्यों, अभी से चल पड़े आन्द्रेइलिच?" स्वेजेवस्की बोलते-बोलते रुक गया। उसने देखा कि बोबरोव अपनी टोपी टेढ़ी करके ओवरकोट के बटन बन्द करने लगा है। उसकी हरकतों में एक दृढ़ निश्चय का भाव था।

"मुझे खेद है कि मैं और अधिक नहीं ठहर सकूंगा। मेरे पास समय नहीं है," बोबरोव ने रूखे स्वर में कहा। "तुम्हारी कहानी की जहां तक बात है, उसे मैं पहले ही कहीं पढ़ या सुन चुका हूं। अच्छा, नमस्ते।"

बोबरोव उसकी ओर पीठ करके तेजी से कारखाने के बाहर चला गया। उसकी इस रुखाई से स्वेजेवस्की का चेहरा लटक आया।

तीन

मिल से वापिस लौटने पर बोबरोव ने जल्दी-जल्दी भोजन किया और बाहर ड्योढ़ी में आकर खड़ा हो गया। उसके आदेशानुसार उसका साईस मित्रोफान उसके घोड़े फेयरवे पर काठी की पेटी कस रहा था। फेयरवे डॉन इलाके का एक कुम्मैद घोड़ा था। वह अपना पेट फुला लेता और तेजी से गरदन मोड़ कर मित्रोफान की कमीज की आस्तीन पर अपना मुंह मारता। तब मित्रोफान झुंझला कर क्रुद्ध और अस्वाभाविक रूप से कर्कश आवाज में चिल्ला उठता, "अरे ओ मंगते — सीधा खड़ा रह !" और फिर हांफता हुआ कहता, "देखो तो साले को...।"

फेयरवे बिचले कद का घोड़ा था — मजबूत छाती, लम्बी देह, चूतड़ पतले और कुछ नीचे को झुके हुए से। सुन्दर गुमचियों और मजबूत खुरों से लैस सुडौल टांगों पर शान से खड़ा था। किन्तु घोड़ों के किसी विशेषज्ञ की आंखों में उसका झुका हुआ पार्श्व भाग और लम्बे गले के भीतर से उभरा हुआ टेंटुआ जरूर खटकता। लेकिन बोबरोव का विचार था कि डॉन के घोड़ों की शारीरिक बनावट की यह विशेषता फेयरवे के सौंदर्य को उसी तरह बढ़ा देती है, जिस तरह दाख-शून्ड कुत्ते की टेढ़ी टांगे और शिकारी कुत्ते के लम्बे कान उनके सौंदर्य को बढ़ा देते हैं। इसके अलावा मिल में कोई ऐसा घोड़ा नहीं था, जो दौड़ में उससे आगे निकल जाता।

सभी अच्छे रूसी साईसों की तरह मित्रोफान भी घोड़ों के संग बहुत सख्ती से पेश आता था। वह अपने या घोड़े के व्यवहार में कभी कोमलता का भाव न आने देता, और उसे "मुजरिम", "गन्दे मांस की लोथ," "हत्यारा" और यहां तक कि "हरामी" आदि नाम से पुकारता। किन्तु वह मन-ही-मन फेयरवे को बहुत चाहता था। वह उसकी देख-रेख बड़े स्नेह से करता और 'स्वेलो' और 'सेलर'—मिल के दो अन्य घोड़े जो बोबरोव के इस्तेमाल में थे — की अपेक्षा फेयरवे को खाने के लिए अधिक जई डालता था।

"इसे पानी पिला दिया था, मित्रोफान ?" बोबरोव ने पूछा।

मित्रोफान ने तुरन्त उत्तर नहीं दिया। एक अच्छे साईस के समान वह हमेशा अपनी बात को तोल-तोल कर और गम्भीरता के साथ कहता था।

"बेशक, आन्द्रेईलिच। सीधा खड़ा रह, शैतान !" वह गुस्से में भरकर घोड़े पर बरस पड़ा। "जरा ठहर, अभी होश ठिकाने लगाये देता हूं। काठी के लिए मचल रहा है, सरकार, जरा इसकी बेताबी तो देखिए।"

बोबरोव ने पास जाकर जब फेयरवे की लगाम हाथों में ली, तो वही बात हुई जो लगभग रोज होती थी। फेयरवे अपनी बडी, क्रुद्ध आंख को टेढ़ा कर

कनखियों से बोबरोव को देख रहा था। ज्यों ही वह उसके निकट आया, फेयरवे ने बिदकना शुरू कर दिया। कभी अपनी गरदन टेढ़ी कर लेता, कभी अपने पिछले पैरों को पटकता हुआ मिट्टी उछालने लगता। बोवरोव एक पांव से उछलता-कूदता दूसरा पांव रेकाब में डालने का प्रयत्न कर रहा था।

"लगाम छोड़ दो मित्रोफान !" रेकाब में आखिरकार अपना पांव फंसा लेने पर वह चिल्लाया। अगले ही क्षण एक छलांग के साथ वह काठी पर सवार हो गया।

सवार की एड़ लगते ही फेयरवे का विरोध समाप्त हो गया; अपने सिर को झटकाते और घर्घराते हुए उसने कई बार चाल बदली। फाटक के बाहर निकलते ही वह चोकड़ी भरता हुआ हवा से बातें करने लगा।

कुछ ही देर में घोड़े की तेज सवारी, कानों में सीटी बजाती हुई ठंडी कड़कड़ाती हवा और पतझर की नम धरती की ताजी गन्ध ने कुछ ऐसा जादू किया कि बोवरोव की थकान और सुस्ती जाती रही और रगों में खून की रवानी तेज हो गयी। इसके अलावा यह भी बात थी कि जिनेन्को परिवार से भेंट करने के लिए वह जब भी निकलता, तो एक सुखद और उत्तेजक आनन्द का अनुभव करता।

मां, बाप और पांच लड़कियों का जिनेन्को-परिवार था। पिता मिल के गोदाम का संचालक था। ऊपर से देखने में आलसी और भलामानस दीखनेवाला यह भीम वास्तव में बड़ा चलता-पुर्जा और चालबाज था। वह उन लोगों में से था जो सबके मुंह पर सच्ची बात कह देने के बहाने अफसरों को चिकनी-चुपड़ी बातों से रिझाते हैं, चाहे वे बातें कितने ही भोंड़े तरीके से क्यों न कही गयीं हों, निर्लज्ज होकर अपने साथियों की चुगली करते हैं और अपने आधीन कर्मचारियों के साथ वहशियाना तानाशाही बरतते हैं। वह जरा-जरा सी बात पर बहस करने लगता, गला फाड़ कर चिल्लाता और किसी की बात को सुनने को तैयार न होता। वह बढ़िया भोजन का शौकीन था और यूक्रेन के कोरस गीतों से उसे गहरा लगाव था, हालांकि वह उन्हें हमेशा बेसुरी आवाज में गाता। उसकी पत्नी का उस पर खाम्ख्वाह रौब गालिब था। वह एक बीमार स्त्री थी—बातचीत में अशिष्ट और फूहड़। उसकी छोटी-छोटी भूरी आंखें बहुत अजीब ढंग से एक दूसरे से सटी हुई थीं।

लड़कियों के नाम माका, वेता, शूरा, नीना और कास्या थे।

सब लड़कियों के लिए परिवार में अलग-अलग भूमिका निर्धारित थी।

माका का चेहरा बगल से देखने पर मछली का सा लगता था। वह अपने साधु-स्वभाव के लिए प्रसिद्ध थी। उसके मां-बाप हमेशा यही कहते, "हमारी माका तो विनय की साक्षात मूर्ति है।" बाग में टहलते हुए या शाम को चाय

पार्टी के समय वह हमेशा गुमसुम होकर पीछे-पीछे रहती ताकि उसकी छोटी बहिनें दूसरों के सम्मुख अपना जौहर दिखला सकें (उसकी आयु तीस वर्ष से कुछ ऊपर ही थी)।

बेता की गिनती अक्लमन्दों में होती थी। वह ऐनक पहनती थी और उसके बारे में यह भी कहा जाता था कि एक बार वह औरतों के ट्रेनिंग-कोर्स में दाखिल होने का इरादा रखती थी। उसका सिर बग्गी में जुते हुए बूढ़े घोड़े की तरह मुड़ा रहता था। जब वह चलती, तो उसकी सारी देह नीचे की ओर झुक जाती थी। आगन्तुकों के सामने वह इस बात को कहते कभी न थकती कि स्त्रियां पुरुषों से कहीं ज्यादा श्रेष्ठ और ईमानदार होती हैं, या मासूमियत भरी शरारत के अन्दाज में पूछ बैठती, "अच्छा जी, तुम बड़े होशियार बनते हो, जरा बताओ तो मेरा स्वभाव कैसा है?" जब किसी पिटे-पिटाये, घरेलू विषय पर बातचीत का सिलसिला चल पड़ता — जैसे "कौन अधिक महान है, लरमन्तोव या पुश्किन?" अथवा "क्या प्रकृति मनुष्य को अधिक दयालु बनाती है?" — तो बेता को लड़ाकू हाथी की तरह अखाड़े में उतार दिया जाता।

तीसरी सुपुत्री शूरा की भी अपनी विशेषता थी। वह बारी-बारी से हर अविवाहित पुरुष के संग ताश खेलना पसन्द करती थी। ज्यों ही उसे पता चलता कि उसके साथी का विवाह होने वाला है, वह अपनी झल्लाहट और कुढ़न दबा कर ताश खेलने के लिए एक नया साथी चुन लेती। ताश खेलते हुए छोटे-मोटे मीठे मजाकों की फुलझड़ियां छोड़ी जातीं, छेड़छाड़ की जाती, अपने साथी को "कमीने" की उपाधि दी जाती और ताश के पत्तों से उसके हाथों पर हल्के-फुल्के थप्पड़ों की वर्षा की जाती।

नीना उस परिवार की सबसे लाड़ली बेटी थी। लाड़-प्यार ने उसे बिगाड़ दिया दिया था, किन्तु उसकी सुन्दरता सबको बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेती थी। भारी भरकम देह और भोंड़े फूहड़ चेहरों वाली अपनी बहनों के बीच वह ऐसी लगती थी जैसे कौओं के बीच में हंस। नीना के अद्‌भुत आकर्षण का भेद सम्भवत: मदाम जिनेन्को ही बतला सकती थीं। उसकी कोमल छुई-मुई सी देह, कोमल मुलायम हाथ जो करीब-करीब शहजादियों के से थे, मोहक सांवले चेहरे पर चित्ताकर्षक तिल, छोटे-छोटे गुलाबी कान और घने घुंघराले केश — अपूर्व सुन्दरी थी नीना।. मां-बाप को उससे बड़ी आशाएं थीं और इसीलिए उसे हर बात की छूट मिली हुई थी। वह जी भर कर मिठाई खाती, एक अजीब चित्ताकर्षक ढंग से शब्दों का उच्चारण करती। यहां तक कि अपनी बहनों के मुकाबले में कपड़े भी वह अधिक बढ़िया पहनती थी।

सबसे छोटी लड़की कात्या चौदह वर्ष से जरा ऊपर थी, किन्तु अभी से उसका कद इतना लम्बा हो गया था कि उसकी मां उसके सामने बौनी सी लगती

थी। अपनी बड़ी बहनों की अपेक्षा उसके अंग अधिक विकसित और उभरे हुए दिखाई देते थे। मिल में काम करने वाले नौजवानों की आंखें ललचायी दृष्टि से उसके शरीर पर गड़ जातीं। मिल शहर से दूर थी, इसलिए वे स्त्रियों के सम्पर्क से वंचित रह जाते थे। कम उम्र होने के बावजूद कास्या उनकी निगाहों का अर्थ समझती थी और निधड़क होकर उनकी आंखों से आंखें मिलाया करती थी।

जिनेन्को परिवार में सौंदर्य के इस अनूठे बंटवारे से मिल के सभी लोग परिचित थे और एक मसखरे युवक ने एक बार कहा था कि या तो जिनेन्को परिवार की पांचों लड़कियों से एक साथ विवाह करना चाहिए, अन्यथा किसी से नहीं। मिल में काम सीखने के लिए जो विद्यार्थी और इंजीनियर आते थे, वे दिन-रात जिनेन्को के घर में डटे रहते, मानो वह कोई होटल हो। भर पेट खाते-पीते थे, मौज उड़ाते थे, किन्तु बड़ी चालाकी से विवाह के फन्दे से बच निकलते थे।

जिनेन्को परिवार के सदस्य बोबरोव को कुछ ज्यादा पसन्द नहीं करते थे। बोबरोव का व्यवहार और बातचीत का ढंग मदाम जिनेन्को के गले के नीचे नहीं उतर पाता था। कस्बाती शिष्टाचार की घिसी-पिटी लीक से आगे उसकी आंखें नहीं जाती थीं। जब कभी बोबरोव अपनी धुन में होता तो ऐसे तीखे चुभते हुए मजाक करता कि जिनेन्को परिवार के सदस्य स्तम्भित से होकर फटी आंखों से उसका मुंह ताकते रह जाते। कभी-कभी थकान के कारण वह चिड़-चिड़ा सा हो जाता और मुंह सी कर गुमसुम-सा बैठा रहता। तब सब लोग उस पर तरह-तरह के सन्देह करने लगते। कोई उस पर घमन्डी होने का अभियोग लगाता, कोई कहता कि वह मन-ही-मन सब लोगों का मजाक उड़ा रहा है। कुछ की राय थी कि वह कोई बड़ा भेद छिपाये बैठा है, जिसे दूसरों के सामने प्रकट करना नहीं चाहता। किन्तु सबसे गम्भीर अभियोग यह लगाया जाता कि वह "पत्रिकाओं के लिए कहानियां लिखता है और यहां वह केवल इसलिए आता है कि उनके लिए पात्र चुन सके।"

खाने की मेज पर उसके प्रति जो रुखाई बरती जाती अथवा जब कभी मदाम जिनेन्को उसकी ओर देखकर कंधे उचका लेती, तो उससे यह छिपा न रहता कि उन्हें उसकी उपस्थिति खटकती है। फिर भी उसने उनके घर जाना बन्द नहीं किया। क्या वह नीना से प्रेम करता था? इस प्रश्न का उत्तर वह कभी नहीं दे पाया। कभी-कभी तीन-चार दिन गुजर जाते और किसी कारण-वश उसका वहां जाना नहीं हो पाता। तब उसकी आंखों के सामने नीना का चेहरा बार-बार घूमने लगता और हृदय में देर तक एक मीठी कसक स्पन्दित होती रहती। नीना का विचार आते ही उसकी कोमल लता सी सुकुमार देह आंखों के सामने थिरक जाती। पलकों की छाया में नीना की

विहंसती उनींदी आंखों, और उसके शरीर की सुगन्ध का खयाल आते ही, उसे चिनार की नवजात कलियों की भीगी खुशबू का स्मरण हो आता।

किन्तु जिनेन्को परिवार के संग लगातार तीन शामें बिताने पर ऊब और उकताहट से उसका मन भारी हो जाता था। उन्ही पुरानी परिस्थितियों में वही पुरानी घिसी-पिटी बातें, चेहरों के वही भद्दे, कृत्रिम हाव-भाव। पांच "भद्र युवतियां" थीं, उनके संग "प्रेम क्रीडा" करते हुए उनके "प्रशंसक" थे (जिनेन्को-परिवार के सदस्य अक्सर इन शब्दों का प्रयोग किया करते थे) और इस तरह उनके परस्पर सम्बंध हमेशा के लिए एक सतही, उथले स्तर पर कायम हो गये थे। दोनों पक्ष हमेशा एक दूसरे का विरोध करने का अभिनय करते। अक्सर ऐसा होता कि कोई प्रशंसक किसी लड़की की कोई वस्तु चुरा लेता और उसे यह विश्वास दिलाने का उपक्रम करता कि वह उस वस्तु को कभी वापिस नहीं लौटाएगा। पांचों लड़कियां कुछ देर के लिए उदास हो जातीं, आपस में काना-फूसी करतीं, मजाक करने वाले युवक को "कमीने" की उपाधि देतीं और फिर कुछ ही देर में कर्कश स्वर में हंसी के ठहाके लगाती हुई लोट-पोट हो जातीं। यह बात हर रोज दुहराथी जाती—हूबहू उन्हीं शब्दों और इशारों के साथ। जैसी संकीर्ण कस्बाती मनोवृत्ति थी इन लोगों की, वैसे ही निरर्थक उनके हंसी-खेल के साधन भी थे। बोबरोव वहां से सिर-दर्द लेकर और परेशान हालत में घर वापिस लौटता।

एक ओर बोबरोव के दिल में नीना की छवि बस गयी थी, उसके गर्म हाथों के स्पर्श के लिए उसका रोम-रोम पुकारता था, दूसरी ओर उसके परिवार के खोखले आचार-व्यवहार और एकरसता के प्रति उसकी वितृष्णा गहरी होती चली गयी थी। कभी-कभी वह नीना से विवाह का प्रस्ताव करने के लिए तैयार हो जाता, हालांकि उसे मालूम था कि नीना का छैलछबीलापन, बाहरी तड़क-भड़क और आध्यात्मिक रुचिहीनता उनके वैवाहिक-जीवन को नरक बना देंगे। कहीं भी तो उन दोनों के बीच साम्य नहीं था—मानो दोनों अलग-अलग दुनिया के वासी हों। इसी उधेड़बुन में वह कोई निश्चय नहीं कर पाता था और चुप्पी साधे रहता था।

अब इस समय शेपेतोवका जाते हुए वह पहले से ही अनुमान लगा सकता था कि वे लोग किस विषय पर कैसी बातें कर रहे होंगे। प्रत्येक व्यक्ति के चेहरे की भाव-मुद्राओं की भी वह आसानी से कल्पना कर सकता था। उसे मालूम था कि अपने बरामदे में खड़ी पांचो बहने दूर से ही जब उसे घोड़े पर आता हुआ देखेंगी—वे हमेशा "भले नौजवानों" की प्रतिक्षा में रहती थीं—तो उनके बीच एक लम्बा विवाद छिड़ जायेगा कि कौन आ रहा है। सब अपना-अपना अनुमान लगायेंगी। जब वह घर के पास पहुंचेगा, तो वह लड़की जिसका अनु-

मान सही निकला होगा, ताली बजाती हुई खुशी से नाचने लगेगी और जबान चटखारती हुई बोलेगी, "देखा, मैंने क्या कहा था !" और तब वह भागती हुई अन्ना अफानास्येवना के पास जायेगी। "बोबरोव आ रहा है, मां! मेरा अनुमान सही निकला !" और उसकी मां, जो उस समय अलस-भाव से चाय के गीले प्याले सुखा रही होगी, सबको छोड़ कर केवल नीना को सम्बोधित करती हुई कहेगी, "सुना नीना, बोबरोव आ रहा है।" उसके स्वर से ऐसा जान पड़ेगा मानो यह कोई हास्यास्पद और अप्रत्याशित बात हो। अन्त में बोबरोव जब भीतर प्रवेश करता तो वे सब-की-सब आश्चर्य-चकित होने का उपक्रम करतीं।

चार

फेयरवे दुलकी मारता, ऊंचे स्वर में घर्घराता और लगाम को झटके देता हुआ दौड़ा चला जा रहा था। सामने शेपेतोवका का अहाता दिखायी दे रहा था। बबूल और बकाइन के हरे वृक्षों के झुरमुट के पीछे शेपेतोवका की लाल छत और सफेद दिवारें छिप सी जाती थीं। नीचे की ओर हरियाली से घिरा हुआ एक छोटा सा तालाब था।

मकान की सीढ़ियों पर एक युवती खड़ी थी। दूर से ही बोबरोव ने नीना को पहचान लिया। जब वह पीले रंग का ब्लाउज पहनती थी तो उसका सांवला रंग और भी अधिक खिल उठता था। उसने लगाम खींच ली, काठी पर तन कर बैठ गया और रेकाबों में धंसे हुए अपने पैरों को पीछे की ओर सरका लिया।

"आज फिर अपने लाड़ले घोड़े पर सवार हो ? मुझे तो यह राक्षस एक आंख नहीं सुहाता !" नीना एक नटखट और मनचले बच्चे की तरह उल्लसित स्वर में चिल्लाई। वह हमेशा बोबरोव के प्रिय घोड़े को लेकर उसे चिढ़ाया करती थी। बिरला ही कोई ऐसा होगा जिसे किसी-न-किसी कारण से जिनेन्को परिवार में चिढ़ाया न जाता हो।

बोबरोव ने लगाम मिल के साईस के हाथों में छोड़ दी, घोड़े के मजबूत गले को, जो पसीने से भीग कर काला पड़ गया था, थपथपाया और नीना के पीछे-पीछे बैठक में चला आया। अन्ना अफानास्येवना चाय के समोवार के पास अकेली बैठी थी। बोबरोव के आगमन पर उसने गहरे अचम्भे का प्रदर्शन किया।

"अच्छा तो आन्द्रेइलिच, तुम हो !" वह लोचदार आवाज में चिल्लाई। "आज आखिर रास्ता भूल ही गये !"

बोबरोव अभी अभिवादन कर ही रहा था कि अन्ना अफानास्येवना ने अपना हाथ उसके होठों से सटा दिया और नकियाती हुई बोली : "चाय ? दूध ? सेब ? क्या लोगे ?"

"शुक्रिया, अन्ना अफानास्येवना।"

"हामी का शुक्रिया या नाहीं का ?"

यह प्रश्न फ्रेंच भाषा में पूछा गया था। जिनेन्को परिवार में इस प्रकार के फ्रेंच मुहावरे अक्सर प्रयोग में लाये जाते थे। बोबरोव ने कहा कि इस समय वह कुछ खाएगा-पीएगा नहीं।

"लड़कियां बरामदे में खेल रही हैं। तुम भी शामिल हो जाओ।" मदाम जिनेन्को ने उदारता से उसे बरामदे में जाने की अनुमति दे दी।

जब वह बरामदे में आया तो चारों बहनें ठीक अपनी मां के आवाज में उसी तरह नकियाती हुई चिल्ला उठीं, "आन्द्रेइलिच, तुम तो ईद का चांद बन गये ! क्या लायें तुम्हारे लिए — चाय, सेब, दूध ? क्या कुछ भी नहीं लोगे ? यह कैसे हो सकता है ? कुछ तो खा ही लो। अच्छा यहां आकर बैठ जाओ। तुम्हें भी खेलना पड़ेगा।"

वे नाना प्रकार के खेल खेलती थीं — "भद्र महिला ने सौ रूबल भेजे हैं," अथवा "अपनी-अपनी राय," और एक अन्य खेल जिसे कास्या तुतलाती हुई "देंद का थेल" कहा करती थी। उस समय वहां तीन विद्यार्थी मौजूद थे, जो छाती फुला कर, एक हाथ अपने फ्रॉक-कोट की जेब में डाल कर और एक पांव आगे की ओर बढ़ाते हुए अजीब तरह की नाटकीय-मुद्रायें बना रहे थे। मिलर मौजूद था, जो एक प्राविधिज्ञ था और अपने आकर्षक चेहरे, भोंदूपन और मुमधुर स्वर के लिए प्रसिद्ध था; भूरे रंग की पोशाक पहने हुए एक अन्य व्यक्ति गुमसुम-सा कोने में बैठा था। उसकी ओर किसी का ध्यान नहीं था।

खेल में किसी को रुचि नहीं थी। पुरुषों के चेहरों पर ऊब के चिन्ह थे और "जुर्माना" अदा करते समय ऐसा प्रतीत होता था मानो वे किसी पर अहसान लाद रहे हों। लड़कियों को खेल में कोई दिलचस्पी नहीं थी। वे आपस में कानाफूसी कर रही थीं और कृत्रिम-ढंग से हंस रही थीं।

शाम का अंधेरा घिरने लगा। पड़ोस के गांव के मकानों के पीछे से गोल सुनहरा चांद उग रहा था।

"बच्चो, अब भीतर आ जाओ।" खाने के कमरे से अन्ना अफानास्येवना की आवाज आयी। "मिलर से कहो, कोई गाना ही सुना दे।"

एक क्षण बाद ही लड़कियों की आवाजें कमरों में गूंजने लगीं। "बड़ा मजा आया, मां," वे अपनी मां को घेर कर चहचहाने लगीं। "हंसते-हंसते पेट में दर्द हो गया।"

नीना और बोबरोव बरामदे में अकेले रह गये। नीना खम्बे से सटी रेलिंग पर झुकी हुई बैठी थी। उसका बायां हाथ खम्बे से लिपटा था। उसकी यह आयासहीन मुद्रा बहुत आकर्षक लग रही थी। बोबरोव उसके पैरों के पास एक छोटी सी बेंच पर बैठ गया। उसने मुंह उठा कर नीना के चेहरे पर आंखें गड़ा दीं और उसके गले और ठुड्डी की कोमल रूपरेखा को निहारने लगा।

"आन्द्रे इलिच — कोई दिलचस्प बात सुनाओ," नीना ने अधीर होकर हुक्म दिया।

"समझ में नहीं आता कि कौन सी बात सुनाऊं," उसने उत्तर दिया। "बात करनी है, इसलिए कुछ बोलूं, ऐसा मुझ से कभी नहीं हो पाता। क्यों नीना, क्या विभिन्न विषयों पर गढ़ी-गढ़ायी बातें मिल सकती हैं?"

"छि: ! तुम भी एक ही सनकी आदमी हो ! अच्छा बताओ इसका क्या कारण है कि मैंने तुम्हें कभी प्रसन्न चित्त नहीं देखा?"

"पहले तुम बताओ कि चुप्पी से तुम क्यों इतना घबराती हो। ज्यों ही बातचीत का ढर्रा जरा उखड़ने लगता है, तुम बेचैन हो जाती हो। क्या मौन रह कर बातें नहीं की जा सकतीं?"

"खामोश रहें हम आज रात," नीना उसे चिढ़ाने लिए गाने लगी।

"हां, ठीक है। देखो : आकाश कितना स्वच्छ है और सुनहरा चांद उसमें तिरता जा रहा है। कितनी घनी शान्ति है चारों ओर — हमें और क्या चाहिए?"

"'वंध्या मतिहीन आकाश में वंध्या मतिहीन चांद'" नीना ने किसी कविता की पंक्ति गुनगुना दी।

"तुमने सुना, जीना माकोवा की सगाई प्रोतोपोपोव के संग हो गयी है। आखिर उसने उसके संग विवाह करने का फैसला कर ही लिया। किन्तु आज तक मैं प्रोतोपोपोव को नहीं समझ सकी।" उसने अपने कंधों को बिचकाते हुए कहा। "जीना ने तीन बार उसके विवाह प्रस्ताव को ठुकरा दिया था। किन्तु वह हथियार कब डालने वाला था, चौथी बार फिर प्रस्ताव रख दिया। प्रोतोपोपोव ने जानबूझ कर अपने पांव में कुल्हाड़ी मारी है। जीना उसका आदर कर सकती है, किन्तु उसे अपना प्रेम नहीं दे सकेगी।"

बोबरोव का मन खिन्न हो उठा। जिनेन्को-परिवार की कस्बाती, खोखली शब्दावली को सुनते-सुनते उसके कान पक चुके थे। जब वह उनके मुंह से इस प्रकार के अर्थहीन, थोथे वाक्य सुनता — "वह उसका आदर करती है, किन्तु उससे प्रेम नहीं करती," अथवा "वह उससे प्रेम करती है, किन्तु उसका आदर नहीं करती" — तो उसका मन झुंझला उठता था। वे लोग बड़ी आसानी से स्त्री-पुरुष के जटिल, विषम सम्बंधों की व्याख्या इन घिसे-पिटे वाक्यों द्वारा कर

देते थे। इसके अलावा वे सब व्यक्तियों को दो कटघरों में विभाजित कर देते थे—काले बालों वाले लोग और उजले बालों वाले लोग। प्रत्येक व्यक्ति की नैतिक, मानसिक और शारीरिक विशेषताएं इन दो कटघरों में समा जाती थीं।

बोबरोव अपनी क्रोधाग्नि में घी डलवाने का लोभ संवरण न कर सका। "और यह प्रोतोपोपोव किस किस्म का आदमी है?" उसने नीना से पूछा।

"प्रोतोपोपोव?" नीना एक क्षण के लिए सोच में पड़ गयी। "लम्बा सा कद है और उसके... भूरे बाल हैं।"

"और कुछ नहीं?"

"और क्या बताऊं? हां, याद आया। वह चुंगी दफ्तर में काम करता है।"

"बस क्या यही उसका पूरा ब्योरा है? नीना ग्रिगोरयेवना, किसी व्यक्ति के सम्बंध में चर्चा करते हुए केवल इतना कह देना क्या प्रर्याप्त है कि वह चुंगी-दफ्तर में काम करता है, उसके बाल भूरे रंग के हैं? जरा सोचो, दुनिया में हम कितने योग्य, चतुर और दिलचस्प लोगों के सम्पर्क में आते हैं। क्या हम सिर्फ यह कह कर उनके गुणों को नजरअन्दाज कर देंगे कि उनके बाल भूरे रंग के हैं और वे चुंगी दफ्तर में काम करते हैं? जरा किसानों के बच्चों को देखो, वे अपनी आस-पास की जिन्दगी को कितनी जिज्ञासा-भरी निगाहों से देखते हैं। तभी तो उनकी पहचान इतनी सही होती है। लेकिन तुम हो कि एक सतर्क और संवेदनशील लड़की होते हुए भी किसी चीज में दिलचस्पी नहीं लेतीं। क्या तुम समझती हो कि दस बारह घिसे-घिसाए फिकरे, जो तुमने अपने ड्राइंग-रूम में बैठकर रट लिये हैं, जिन्दगी को समझने के लिये काफी हैं? मैं जानता हूं कि जब कभी बातचीत में चांद का जिक्र आएगा, तो तुम "बंध्या और मतिहीन चांद" या ऐसा ही कोई फिकरा जरूर कहोगी। जब मैं तुमसे किसी असाधारण घटना का उल्लेख करने वाला होता हूं, तो मुझे पहले से ही पता चल जाता है कि तुम उस पर यह फिकरा कस दोगी, "घटना चाहे नयी हो, किन्तु उस पर विश्वास करना कठिन है।" हमेशा तुम यही वाक्य दोहराती रहती हो, हमेशा! विश्वास करो नीना, दुनिया में अनेक ऐसी चीजें हैं जो विशिष्ट और मौलिक ..."

"मेहरबानी करके मुझे लेक्चर न पिलाओ!" नीना ने प्रतिवाद किया।

बोबरोव के मन में व्यर्थता का कटु भाव उमड़ आया। दोनों लगभग पांच मिनट तक निस्तब्ध और निश्चल बैठे रहे। अचानक ड्राइंग-रूम से संगीत की सुमधुर ध्वनियां सुनायी देने लगीं। मिलर गा रहा था। उसकी आवाज तनिक बिगड़ी हुई थी, फिर भी उसमें गहरा सोज था:

ताता थैया की तालों पर,
नृत्य और उन्माद जहां था!

सुमुखि, सलोने मुख पर तेरे,
उर का घना विषाद वहां था !

बोबरोव का क्रोध शीघ्र ही शान्त हो गया। उसे अब आत्म-ग्लानि हो रही थी कि नाहक उसने नीना का दिल दुखा दिया। "आखिर नीना अभी बच्ची ही तो है; एक छोटी सी चिड़िया ! जो बात उसके मुंह में आती है, चहचहा देती है। बच्चों सा भोला और निरीह उसका मन है, उससे किसी प्रकार की मौलिक बातों की अपेक्षा करना मूर्खता नहीं तो क्या है ? सच पूछा जाय तो नारी-स्वतंत्रता, नीत्शे और पतनोन्मुख लेखकों के सम्बंध में जो बहसें होती हैं, उनकी तुलना में नीना की मधुर चहचहाट क्या अधिक आकर्षक नहीं है ?

"मुझ से खफा हो गयी हो, नीना ग्रिगोरयेवना ?" वह बुदबुदाया। "मैं जो अनाप-शनाप बकता गया हूं, क्या उस पर ध्यान देना उचित है ?"

नीना ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह चुपचाप चांद की ओर देखती रही। अंधेरे में नीना का हाथ नीचे लटक रहा था। बोबरोव ने उसे पकड़ लिया।

"नीना ग्रिगोरयेवना," उसके होंठ फड़क कर रह गये।

नीना अचानक बोबरोव की ओर मुड़ गयी और उद्भ्रान्त सी होकर उसने जल्दी से उसका हाथ दबा दिया।

"तुम बहुत बुरे हो !" उसके स्वर में क्षमा और उलाहना का भाव था। "जानते हो कि मैं तुमसे नाराज नहीं हो पाऊंगी, इसलिए पीड़ा पहुंचाते हो।"

उसने बोबरोव के कांपते हाथ से अपने हाथ को छुड़ा लिया और जबरदस्ती अपने आप को उससे अलग खींच कर घर के अन्दर भाग चली।

मिलर के गीत से गहरा अनुराग और वेदना छलक रही थी :

रंग-बिरंगे सपनों में मैं रहा भटकता !
क्या है मूल्य तुम्हारी नजरों में उसका,
मैं नहीं जानता !
मैं तो केवल यही जानता : प्यार
तुम्हें मैं करता !

"मैं तो केवल यही जानता : प्यार तुम्हें मैं करता !" बोबरोव ने उद्वेलित मन से होठों-ही-होठों में इस पंक्ति को बार-बार दुहराया और फिर गहरा उच्छ्वास छोड़ कर अपना हाथ धड़कते हुए दिल पर रख दिया।

"नाहक अपने को परेशान करता हूं। एक अज्ञात असामान्य सुख के फेर में पड़ कर भूल जाता हूं उस सहज, पावन सुख को जो मेरे निकट है।" भावावेश में उसने सोचा। "सहृदयता, स्नेह, सहानुभूति—सभी कुछ तो नीना में है, जो एक नारी, एक पत्नी में होना चाहिए। फिर मुझे और क्या

चाहिए ? वास्तव में हम लोग अपने को एक ऐसी उद्‌भ्रान्त, डांवाडोल स्थिति में पाते हैं कि जीवन के सुखों को सहज रूप से स्वीकार करना हमारे लिए असंभव हो जाता है। हम प्रत्येक अनुभूति और भावना की — चाहे वह अपनी हो या किसी दूसरे की — चीरफाड़ करने का लोभ संवरण नहीं कर पाते और उसे दूषित, विषाक्त बना डालते हैं। यह निस्तब्ध रात, उस लड़की का सामीप्य जिससे मैं प्रेम करता हूं, उसकी मधुर, निश्छल बातें, क्षण भर का आवेश और फिर यकायक एक कोमल स्निग्ध स्पर्श — यही तो है, यही तो सब कुछ है, जो जीवन को अर्थ देता है !

जब वह वापिस ड्राइंग रूम में लौटा, उसका मुख कुछ-कुछ विजय-गर्व और उल्लास से चमक रहा था। उसकी आंखें नीना की आंखों से मिलीं। उसे लगा मानो नीना की दृष्टि उसके विचारों का स्नेहभरा उत्तर दे रही है। "वह मेरी पत्नी होकर रहेगी," उसने सोचा। उसका मन अब सुखी और शान्त था।

क्वाशनिन के सम्बंध में बातचीत चल रही थी। अन्ना अफानास्येवना ने दृढ़ स्वर में घोषणा की कि वह भी अपनी "बच्चियों" के संग स्टेशन जाएगी।

"संभव है, वासिली तैरन्त्येविच हमारे घर भी तशरीफ लाएं। क्वाशनिन के यहां आने का समाचार मुझे मेरी चचेरी बहिन के पति की भतीजी लिजा वेलोकोनस्काया ने एक महीना पहले ही भिजवा दिया था।"

"कहीं यह वही वेलोकोनस्काया तो नहीं है जिसके भाई का विवाह राजकुमारी मुखोवेत्स्काया के संग हुआ है ?" जिनेन्को ने विनीत भाव से हमेशा की तरह प्रश्न दोहरा दिया।

"हां !" अन्ना अफानास्येवना ने ऐसी मुद्रा बनाकर कहा मानो प्रश्न का उत्तर देकर वह उस पर अहसान कर रही हो। "अपनी दादी की तरफ से उसका स्त्रेमोऊखोव परिवार से भी दूर का सम्बंध है। स्त्रेमोऊखोव से तो आप परिचित हैं। पत्र में उसने लिखा था कि वह एक पार्टी में क्वाशनिन से मिली थी। उसने उन्हें यह भी कह दिया था कि जब कभी कारखाने का निरीक्षण करने के लिए इस ओर आएं तो हमारे घर अवश्य पधारें।"

"क्या हम उचित ढंग से उसका स्वागत कर सकेंगे अन्ना ?" जिनेन्को ने चिंतित स्वर में पूछा।

"कैसी बेतुकी बातें करते हो। अपनी ओर से हम कोई कसर नहीं उठा रखेंगे। किन्तु जिस आदमी की वार्षिक आमदनी तीन लाख रूबल हो, उसे आसानी से प्रभावित थोड़े ही किया जा सकता है।"

"तीन लाख रूबल !" जिनेन्को के मुंह से हल्की सी चीख निकल गयी। "मेरा तो सुनकर ही दिल दहल जाता है।"

"तीन लाख !" नीना ने एक ठंडी सांस भरी।

"तीन लाख !" अन्य बहनों ने रोमांचित होकर एक सुर में कहा।

"और खर्चालू इतना है कि सब कुछ—आखिरी कोपेक तक—पानी की तरह बहा देता है।" अन्ना अफानास्येवना ने कहा। फिर मानो अपनी लड़कियों के छिपे भाव को ताड़कर वह बोली, "वह विवाहित है। लेकिन सुना है कि वह अपने विवाहित जीवन से सुखी नहीं है। उसकी पत्नी का अपना कोई व्यक्तित्व नहीं, साधारण-सी स्त्री है। और फिर, चाहे कुछ कह लो, हर स्त्री को अपने पति के व्यवसाय में रुचि तो रखनी ही चाहिये।"

"तीन लाख !" नीना मानो सपना देख रही थी। "इतने रुपये से क्या कुछ नहीं किया जा सकता ?"

अन्ना अफानास्येवना नीना के घने बालों पर अपना हाथ फेरने लगी।

"ऐसा पति मिल जाय तो बुरा न रहेगा, क्यों मेरी बच्ची ?"

एक पराये, अपरिचित आदमी की तीन लाख रूबल की आमदनी ने सारे परिवार को चकाचौंध-सा कर दिया था। लखपति-लोगों से सम्बंधित अद्भुत कहानी-किस्से सुनते-सुनाते उनकी आंखें चमकने लगी थीं, चेहरे तमतमाने लगे थे। वे सब हैरत से आंखें फाड़ कर धनाड्य-दौलतमंद लोगों की बातें सुन रहे थे—उनके शानदार घोड़ों, विराट-भोजों और नृत्य समारोहों के बारे में, उनकी कल्पनातीत फजूलखर्ची के बारे में बातों का सिलसिला अघाता ही न था !

बोबरोव का मन विक्षुब्ध हो उठा। उसने चुपचाप अपना हैट उठाया और सबकी आंख बचाकर दबे पांवों ओसारे में चला आया। किन्तु वे अपनी बातों में इतना व्यस्य थे कि उसके प्रस्थान की ओर किसी का ध्यान वैसे भी न जाता।

घर की ओर सरपट घोड़ा दौड़ाते हुए उसे नीना की श्रान्त, स्वप्निल आंखें याद हो आयीं और वे धीमे, अकुलाए स्वर से कहे गये शब्द "तीन लाख !" कानों में गूंज गये। हठात उसे स्वेजेवस्की की वह कहानी स्मरण हो आयी, जो जोर-जबरदस्ती उसने सुबह उसे सुना दी थी।

"यह लड़की भी अपने को आसानी से बेच सकती है," वह दांत पीसते हुए बुड़बुड़ाया और गुस्से में फेयरवे की गर्दन पर सड़ाक से चाबुक जमा दी।

पांच

बोबरोव ने दूर से ही अपने कमरे की बत्ती जली हुई देखी। "मेरी अनुपस्थिति में डॉक्टर आया होगा और सोफे पर लेटा हुआ मेरी प्रतीक्षा कर रहा होगा," उसने झाग और पसीने से लथपथ घोड़े की लगाम खींचते हुए सोचा।

इस समय कोई और व्यक्ति होता तो वह झुंझला उठता, किन्तु डा० गोल्डबुर्ग की बात ही दूसरी थी।

उस यहूदी डॉक्टर को वह दिल से चाहता था। उसका सर्वतोमुखी ज्ञान, उसकी जिन्दा-दिली और सैद्धान्तिक बहसों के प्रति उसका गहरा लगाव कुछ ऐसे गुण थे जो बोबरोव को बरबस अपनी ओर आकर्षित करते थे। बोबरोव चाहे किसी भी विषय पर बातचीत छेड़ दे, डॉक्टर गोल्डबुर्ग हमेशा गहरी रुचि और अदम्य उत्साह के संग वाद-विवाद किया करता था और हालांकि इन लम्बे, कभी न खत्म होने वाले तर्क-द्वन्द्वों के अलावा उन्होंने अभी तक और कुछ न किया था, फिर भी दोनों सदा एक दूसरे से मिलने के लिए व्याकुल रहते थे, और उनकी भेंट प्रायः हर रोज हो जाया करती थी।

डॉक्टर सोफा की पीठ पर पांव लटकाए लेटा था और कमजोर दृष्टि होने के कारण एक पुस्तक को बिलकुल आंखों से सटा कर पढ़ रहा था। बोबरोव ने उड़ती निगाहों से पुस्तक के शीर्षक — मेवियस की 'धातु विज्ञान के सिद्धान्त' — को भांपा और मुस्करा दिया। कोई भी पुस्तक डाक्टर के हाथ में आ जाए, वह उसे हमेशा बीच से खोल कर बड़ी तल्लीनता से पढ़ने लगता था। डाक्टर की इस आदत से बोबरोव परिचित था।

"जानते हो, जब तुम बाहर थे, मैंने यहीं अपने लिए चाय बनवा ली थी," डॉक्टर ने किताब एक ओर फेंक दी और अपनी ऐनक के ऊपर से बोबरोव को देखने लगा। "अच्छा तो फरमाइये आन्द्रेइलिख साहब, क्या हालचाल हैं? अरे क्या बात है, तुमने त्यौरियां क्यों चढ़ा रखी हैं? क्या किसी नये दुख ने आ घेरा है?"

"कुछ नहीं डॉक्टर, जिन्दगी बकवास है," बोबरोव ने थके-मांदे स्वर में कहा।

"ऐसा क्यों, मेरे दोस्त ?"

"ओह, मुझे नहीं मालूम। बस, कुछ ऐसा ही लगता है। तुम सुनाओ— अस्पताल में कैसा काम चल रहा है?"

"सब ठीक है। आज सर्जरी का एक बड़ा दिलचस्प केस मेरे पास आया। हंसी भी आती थी और रोना भी। मसालस्क का एक राज-मिस्त्री आज सुबह अस्पताल आया। तुम तो जानते हो, ये मसालस्क के लौंडे सब-के-सब बिना अपवाद के पहलवान होते हैं। 'क्या बात है?' मैंने पूछा। 'डॉक्टर साहब, बात यह है कि जब मैं अपनी टोली के लिए रोटी काट रहा था तो चाकू से मेरी उंगली पर जरा सी खरोच लग गयी। खून बन्द होने को ही नहीं आता।' मैंने उसकी उंगली की परीक्षा की; महज एक छोटी सी खरोच थी, इसलिए चिन्ता की कोई बात नहीं थी। किन्तु घाव पकने लगा था, सो मैंने अपने सहा-

यक से उस पर पट्टी बांधने के लिए कह दिया। किन्तु लड़का वहां से टस-से-मस नहीं हुआ। 'तुम्हारी उंगली पर पट्टी बांध दी गयी है। अब तुम जा सकते हो।' 'धन्यवाद,' उसने कहा, 'किन्तु मुझे अपना सिर फटता हुआ सा प्रतीत हो रहा है। सो मैंने सोचा कि शायद आप मुझे इसके लिए भी कोई दवा दे दें।' 'क्यों भई, सिर में क्या हुआ? क्या डंडे पड़े हैं?' मैंने मजाक में कहा। वह एकदम खुशी से उछल पड़ा और जोर-जोर से हंसने लगा। 'अब आपके सामने इनकार नहीं करूंगा डाक्टर साहब। तीन दिन पहले *सेवियर* डे की छुट्टी के दिन हमने पीने-पिलाने का प्रोग्राम बनाया। सबने खूब छक कर वोद्का पी, और फिर हंसी-मजाक, छेड़-छाड़ के बाद कुछ कहा-सुनी हो गयी और हाथापाई की भी नौबत आ पहुंची। आगे क्या कहूं, आप जानते ही हैं कि इस तरह के झगड़े-फसादों में क्या कुछ नहीं होता। किसी ने अपनी खेनी से मेरा सिर फोड़ दिया। पहले तो मैंने उस जख्म की थोड़ी-बहुत मरम्मत करवा ली। कोई ज्यादा चोट नहीं लगी थी और दर्द भी कम होता था। किन्तु अब मुझे अपना सिर फटता हुआ सा जान पड़ रहा है।' मैंने उसके सिर की परीक्षा की और आतंकित रह गया। उसकी खोपड़ी भीतर तक टूटती चली गयी थी, अन्दर पांच कोपेक जितना बड़ा सुराख हो गया था और हड्डी के छोटे-छोटे टुकड़े भेजे में फंस गये थे। इस समय वह अस्पताल में बेहोश पड़ा है। भई, कमाल के लोग हैं ये —जीवट साहसी, किन्तु बिलकुल बच्चे! मुझे पक्का विश्वास है कि केवल रूसी किसान ही अपने सिर की इस तरह 'मरम्मत' करवा सकता है। कोई और आदमी होता, तो कब का स्वर्ग सिधार गया होता। और ऐसी विकट स्थिति में भी हंसी-मजाक नहीं छूटता। कह रहा था, 'आप जानते ही हैं कि इस तरह के झगड़े-फसादों में क्या कुछ नहीं होता।' मानो यह एक बहुत सहज साधारण घटना हो... या खुदा!"

बोबरोव अपने ऊंचे जूतों पर चाबुक फटकारता हुआ कमरे के चक्कर लगा रहा था। डाक्टर की बातों को वह अनमने भाव से सुन रहा था। जिनेन्को के घर में जो कड़वाहट उसकी आत्मा में भर गयी थी, वह अब तक उससे छुटकारा नहीं पा सका था।

डॉक्टर ने भांप लिया कि बोबरोव इस समय बातचीत करने के मूड में नहीं है, इसलिए उसने पल भर मौन रहने के बाद सहानुभूति पूर्ण स्वर में कहा, "मेरा कहना मानो, आन्द्रेइलिच, दो चम्मच ब्रोमाईड लेकर सोने की कोशिश करो। तुम्हारी मौजूदा हालत में उससे तुम्हें लाभ ही पहुंचेगा, कम-से-कम नुकसान तो नहीं होगा।"

दोनों उसी कमरे में लेटे रहे— बोबरोव अपनी पलंग पर और डाक्टर सोफा पर। किन्तु दोनों की आंखों से नींद उड़ चुकी थी। बहुत देर तक

गोल्डबुर्ग को बोबरोव के बिस्तरे से कसमसाने और ठंडी आहों की आवाज सुनायी देती रही। आखिर उससे बोले बिना न रहा गया।

"दोस्त, कुछ बताओ भी, क्या चीज है जो तुम्हें खाये जा रही है? क्या तुम मुझसे दिल खोलकर अपना दुःख-दर्द नहीं कहोगे? आखिर मैं कोई अजनबी तो हूं नहीं, जो महज अपना कुतूहल शान्त करने के लिए तुमसे यह प्रश्न पूछ रहा हूं।"

डॉक्टर के इन सीधे-सादे शब्दों ने बोबरोव के मर्म को छू लिया। हालांकि दोनों के बीच गहरी मित्रता थी, फिर भी वह उसका उल्लेख या पुष्टि करना अनावश्यक समझते थे। दोनों ही कोमल, समवेदनशील व्यक्ति थे, अतः अपनी निजी, व्यक्तिगत भावनाओं को एक दूसरे के सम्मुख खोलने में संकुचाते थे। किन्तु कमरे के अंधेरे और बोबरोव की व्यथा ने बहुत से व्यवधान तोड़ दिये और डॉक्टर ने अपने मन की बात बोबरोव से पूछ ली।

"हर चीज के प्रति मनमें एक गहरी वितृष्णा उत्पन्न हो गयी है ओसिप ओसिपोविच। मानो जिन्दगी कोई भारी बोझ है जिसे मैं ढो रहा हूं।" बोबरोव ने धीमे स्वर में कहा। "मेरी खीज का सबसे पहला कारण तो यह है कि मैं मिल में काम करता हूं और मोटी तनख्वाह पाता हूं, जबकि मुझे इस पूरे मामले से सख्त नफरत हो गयी है। मैं अपने को एक ईमानदार व्यक्ति समझता हूं इसलिए अपने से सीधा प्रश्न पूछता हूं: 'तुम यहां क्या कर रहे हो? तुम्हारे काम से आखिर किसे लाभ पहुंचता है?' मैं चीज़ों को उनके असली रूप में देखने लगा हूं, और मैं यह समझता हूं कि मेरे सारे काम का फल यह निकलता है कि अन्ततः सौ फ्रेंच पट्टेदार और एक दर्जन रूसी मगरमच्छ करोड़ों का मुनाफा अपनी जेबों में भरेंगे। मैंने जिस काम के लिए अपनी आधी से अधिक जिन्दगी बर्बाद कर दी, उसका अर्थ और उद्देश्य यदि कुछ है, तो सिर्फ यही है—इसके अलावा मुझे और कुछ दिखायी नहीं देता!"

"तुम भी बिलकुल फिजूल सी बातें कर रहे हो, आन्द्रेइलिच," अंधेरे में डॉक्टर ने बोबरोव की ओर मुड़ कर प्रतिवाद किया। "तुम चाहते हो कि पूंजीपतियों का दिल पसीज जाए। मेरे दोस्त, जब से दुनिया शुरू हुई है, सारा काम-काज उदर-क्षुदा के अटल नियम द्वारा संचालित होता रहा है। सदा से ऐसा होता आ रहा है, और भविष्य में भी ऐसा ही होता रहेगा। किन्तु तथ्य की बात यह है कि करोड़पतियों की तुम्हें क्या परवाह, जबकि तुम उनसे कहीं ऊंचे हो? समाचार पत्रों में 'प्रगति के रथ' की बड़ी चर्चा रहती है। क्या यह सोच कर तुम्हारा मस्तक गर्वोन्नित नहीं हो जाता कि तुम उन मुट्ठी भर लोगों में से हो, जो प्रगति के इस रथ को आगे खींच रहे हैं? ठीक है, जहाज की कम्पनियों के शेयर सोना उगलते हैं, किन्तु क्या इस कारण से हम फुल्टोन को मानवता का हितकारी मानने से इन्कार कर देंगे?"

"मेरे प्यारे डॉक्टर!" झुंझलाहट से बोबरोव ने मुंह बिचकाते हुए कहा। "तुम आज जिनेन्को के घर नहीं गये, किन्तु वास्तव में तुम उन लोगों के जीवन-दर्शन को मुखरित कर रहे हो। सौभाग्य से तुम्हारे विचारों को असंगत साबित करने के लिए तुम्हारी प्रिय थ्योरी का उल्लेख मात्र ही पर्याप्त होगा, किसी नये तर्क को खोजने की आवश्यकता नहीं पड़ेगी।"

"तुम्हारा किस थ्योरी की ओर संकेत है? मुझे तो अपनी कोई थ्योरी याद नहीं। सच, मेरे दोस्त, इस वक्त मुझे कुछ याद नहीं आ रहा।"

"अब तुम्हें क्यों याद आने लगा जी! जरा बताना तो, उस दिन इसी सोफा पर बैठ कर कौन उत्तेजित होकर इतनी जोर से हाथ नचा-नचा कर कह रहा था कि हम इंजीनियरों और आविष्कर्ताओं की ईजादों ने हमारे समाज के हृत्-स्पन्दन को इतना अधिक तीव्र कर दिया है कि वह अब एक ज्वरग्रस्त, उन्मत्त अवस्था पर पहुंच गया है? कौन था वह जो कह रहा था कि हमारा जीवन आक्सीजन से भरे बरतन में बन्द जीव के समान है? विश्वास करो, मुझे बीसवीं सदी की सन्तानों की, टूटी जर्जरित आत्माओं, मेहनत के बोझ से दबे हुए लोगों की, पागलों और आत्महत्या करने वालों की वह खौफनाक फहरिस्त अच्छी तरह याद है, जिसकी जिम्मेदारी तुमने इन्हीं मानवता के हितैषियों पर आयद की थी। तुमने कहा था कि टेलीफोन, टेलीग्राफ और एक घंटे में अस्सी मील की रफ्तार से चलने वाली रेलों ने फासले को इतना कम कर दिया है कि वह लगभग मिट चुका है। समय का मूल्य इतनी तेजी से बढ़ता जा रहा है—तुमने कहा था कि शीघ्र ही रात को दिन में परिणत करके दिन को दुगना लम्बा बना दिया जायगा। जहां पहले सुलह-संधि या लेन-देन की बातचीत में महीनों लग जाते थे, वहां अब मामला मिनटों में निबट जाता है। किन्तु हमारे लिए यह उन्मत्त-गति अभी यथेष्ट नहीं है। वह दिन दूर नहीं जब हम तार द्वारा एक दूसरे को सैकड़ों, हजारों मीलों के फासले पर देख सकेंगे! अभी पचास वर्ष से अधिक अर्सा नहीं गुजरा होगा, जब हमारे बाप-दादा गांव से प्रान्तीय केन्द्र जाने से पूर्व गिरजे में जाकर प्रार्थना किया करते थे और इतने दिन पहले निकल जाया करते थे मानो उत्तरी ध्रुव की यात्रा करने जा रहे हों। किन्तु अब वे दिन लद गये। आज तो हम लोग भीमकाय मशीनों के कर्णभेदी गर्जन-तर्जन के बीच अपने होश-हवाश गुम कर चुके हैं। घोर प्रतियोगिता के पहिये में फंस कर हमारा दिल-दिमाग छलनी हो गया है, रुचि दूषित और छिछली हो गयी है और हम हजारों नयी बीमारियों के शिकार होते जा रहे हैं। अब कुछ याद आया डॉक्टर? आज तुम 'मानव-प्रगति' के गुण गाते नहीं थकते, किन्तु कुछ दिन पहले तुमने ही ये सब बातें कही थीं।"

इस बीच डॉक्टर ने प्रतिवाद करने के लिये कई बार मुंह खोला, किन्तु हर बार बोबरोव ने उन्हें रोक दिया था। जब बोबरोव सांस लेने के लिये एक क्षरा रुका तो डॉक्टर ने झट अपनी बात शुरू कर दी।

"हां मेरे दोस्त, तुम सही फरमाते हो। मैंने यह सब कुछ कहा था और आज भी मैं यही कहता हूं," डॉक्टर ने तनिक संदिग्ध भाव से कहा। "किन्तु तुम इतनी सी बात क्यों नहीं समझते, कि हमें अपने आपको परिस्थितियों के अनुकूल बनाना पड़ेगा, वरना जीना मुहाल हो जायगा। हर व्यवसाय में इस प्रकार की छोटी-छोटी पेचीदगियां पेश आती हैं। हम डॉक्टरों की ही बात लो। क्या तुम समझते हो कि हमारा रास्ता साफ है, हमें किसी संशय अथवा संकट का सामना नहीं करना पड़ता? सच बात तो यह है कि शल्य-विद्या से परे हम कोई बात निश्चयपूर्वक नहीं कह सकते। हम चिकित्सा प्रणालियों की बड़ी-बड़ी बातें करते हैं, किन्तु यह बिल्कुल भूल जाते हैं कि हजार में दो व्यक्ति भी ऐसे नहीं होते जिनकी रक्त-रचना, हृत-स्पन्दन, आनुवंशिकता आदि एक दूसरे से मिलते हों। सही चिकित्सा उन दवाओं द्वारा की जाती थी जिन्हें जंगली प्राणी और अशिक्षित हकीम प्रयोग में लाते थे, किन्तु हम आधुनिकता के फेर में पड़कर उसे भुला बैठे हैं। आज हमारे केमिस्टों की दुकानों में कोकीन, एट्रोपाइन, फैनासटिन इत्यादि चीजों की बाढ़ सी आ गयी है, किन्तु हम यह बात भूल गये हैं कि यदि हम किसी मरीज को सादे पानी का गिलास देकर उसे यह आश्वासन दिला दें कि वह बढ़िया दवा है, तो मरीज बिमारी से मुक्ति पा लेगा। फिर भी, हमारा पादरियों का सा आत्मविश्वास ही मरीजों में वह भरोसा पैदा करता है जिसके सहारे हम सौ में से नब्बे मरीजों का उपचार कर पाते हैं। तुम मानो चाहे न मानो, किन्तु एक बढ़िया चिकित्सक ने, जो होशियार और इमानदार भी था, एक बार मुझ से यह स्वीकार किया कि हम डॉक्टर जिस ढंग से आदमियों का इलाज करते हैं, उससे कहीं ज्यादा सावधानी और समझदारी से शिकारी अपने बीमार कुत्तों की सेवा-शुश्रूषा करते हैं। उनकी एक मात्र दवा गन्धक का फूल है, जो अधिक हानि नहीं पहुंचाता और कभी-कभी लाभदायक भी साबित होता है। कितना भारी अन्तर है हममें और उनमें—देखा मेरे दोस्त! फिर भी अपनी सामर्थ्य के अनुसार हम भी जो कुछ अपने से बन पड़ता है, करते हैं। अगर जीना है तो कहीं-न-कहीं समझौता करना ही पड़ेगा। कभी-कभी किसी आदमी की यातना को दूर करने के लिए हमें सर्वज्ञ मसीहा का भी अभिनय करना पड़ता है। इसके लिये हमें ईश्वर को धन्यवाद देना चाहिये।"

"तुम समझौतों की बात करते हो, किन्तु तुमने आज खुद मसालस्क के राज-मजदूर की खोपड़ी से चिप्पियां निकाली हैं—क्यों, ठीक है न?" बोबरोव का स्वर विषाद में डूबा था।

"लेकिन एक आदमी की खोपड़ी को जोड़ने से क्या बनता-बिगड़ता है मेरे दोस्त ? जरा सोचो, तुम जो काम करते हो उससे कितने अधिक लोगों को रोजी मिलती है, पेट भर खाने को मिलता है। यह क्या छोटी सी बात है ? इलोवेइस्की ने *इतिहास* में एक स्थान पर लिखा है कि "जार बोरिस जनता की सहानुभूति और समर्थन प्राप्त करना चाहता था, इसलिये उसने दुर्भिक्ष के दिनों में सार्वजनिक इमारतों का निर्माण करने का काम हाथों में लिया।" या कुछ ऐसा ही लिखा है। अब जरा अनुमान लगाओ, तुम अपने काम से लोगों का कितना भला..."

डॉक्टर के अन्तिम वाक्य को सुनकर बोबरोव तिलमिला सा गया। वह झपटकर बिस्तरे में उठ बैठा और अपने नंगे पांव नीचे लटका दिए।

"लोगों का भला ?" वह बदहवास होकर चिल्लाया। "तुम लोगों के 'भले' की बात मुझ से कह रहे हो ? क्या बुरा है और क्या भला है, यह मैं अभी कुछ आंकड़े देकर साफ किये देता हूं।" और वह तीखे, स्पष्ट और सधे-सधाए स्वर में बोलने लगा, मानो किसी मंच से भाषण दे रहा हो : "यह बात किसी से छिपी नहीं है कि खानों, धातु-उद्योगों और बड़े कारखानों में काम करने से मजदूरों की जिन्दगी का लगभग चौथाई भाग घट जाता है। इसके अलावा मशीन से जो दुर्घटनाएं होती हैं और रात-दिन जो खून-पसीना एक करना पड़ता है, उसकी बात तो छोड़ ही दीजिए। डॉक्टर होने के नाते तुम से यह बात छिपी नहीं है कि कितने मजदूर सूजाक या मद्य-पान के व्यसन से पीड़ित हैं, तुम यह भी जानते हो कि जिन बैरकों और मिट्टी के झोपड़ों में वे रहते हैं, वे कितनी भयावह, गली-सड़ी, टूटी-फूटी अवस्था में पड़े हैं। ठहरो डॉक्टर, इससे पेश्तर कि तुम कोई आपत्ति उठाओ, जरा एक मिनट के लिये अपने दिमाग पर जोर डाल कर सोचो — क्या तुमने कारखानों में कोई मजदूर चालीस या पैंतालीस वर्ष से ज्यादा उम्र का देखा है ? मैंने अब तक एक भी ऐसा मजदूर नहीं देखा। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि हर मजदूर एक वर्ष में अपनी जिन्दगी के तीन महीने, एक महीने में पूरा एक सप्ताह और अगर संक्षेप में कहें तो एक दिन में छः घंटे अपने कारखानेदार को अर्पित कर देता है। अब जरा ध्यान से सुनो। हमारी छः भट्टियों को चलाने के लिए तीस हजार मजदूरों की आवश्यकता पड़ेगी — कदाचित् जार बोरिस ने स्वप्न में भी इतनी बड़ी संख्या की कल्पना न की होगी। तीस हजार आदमी, जो एक संग, प्रति दिन अपने जीवन के एक लाख अस्सी हजार घंटे भट्टियों में भस्मीभूत कर देंगे, अर्थात अपने जीवन के साढ़े सात हजार दिन — कुल मिलाकर कितने वर्ष हुए ?"

"लगभग बीस साल," कुछ देर चुप रहने के बाद डॉक्टर ने कहा।

"लगभग बीस साल प्रतिदिन !" बोबरोव चीख उठा। "दो दिन का काम एक आदमी को हड़प कर जायगा। खुदा रहम करे ! बाइबल में असीरियाई और मोबाइत लोगों का जिक्र आता है जो अपने देवताओं को प्रसन्न करने के लिए नर-बलि चढ़ाते थे। किन्तु जो आंकड़े मैंने अभी बताये हैं, उन्हें देखकर तो वे पीतल के देवता, मलोच और डेगोन भी लज्जा और क्षोभ से सिर झुका लेंगे।"

बोबरोव का ध्यान इससे पहले कभी आंकड़ों के इस विचित्र जमा-जोड़ की ओर नहीं गया था। कल्पनाशील व्यक्तियों की तरह उसे यह सब बातें बहस के दौरान में ही सूझ आयीं थीं। गोल्डबुर्ग की तो बात अलग रही, वह स्वयं आंकड़ों के इन असाधारण परिणामों को देखकर स्तम्भित रह गया था।

"अब क्या कहूं, तुमने तो मुझे हैरत में डाल दिया," डॉक्टर ने कहा। "किन्तु ये आंकड़े गलत भी हो सकते हैं।"

"और क्या तुम जानते हो कि इससे भी कहीं ज्यादा भयंकर आंकड़ों की तालिकाएं हैं," बोबरोव और भी अधिक जोश में भरकर बोलता जा रहा था, "जिनसे हम इस बात का बिलकुल सही अनुमान लगा सकते हैं कि तुम्हारे 'प्रगति के रथ' के प्रत्येक दानवीय कदम के नीचे कितने मनुष्यों को कुचल दिया जाता है ? जानते हो, हर छोटे-से-छोटे छलनी यंत्र, बीज बोने के यंत्र अथवा लोहे की पटरी बनानेवाली मशीन के आविष्कार के साथ कितनों को प्राणाहुति देनी पड़ती है ? क्या खूब चीज है तुम्हारी यह सभ्यता, जिसके फल हमें ऐसे आंकड़ों के रूप में दिखाई देते हैं, जिनकी इकाइयां इस्पात की मशीनें हैं और सिफर हैं आदमियों की जिन्दगियां !"

डॉक्टर इस समय तक बोबरोव की उत्तेजना से हतप्रतिभ सा हो आया था। "लेकिन मेरे दोस्त," उसने कहा, "क्या तुम्हारा अभिप्राय यह है कि हम पुराने जमाने के यंत्रों का प्रयोग करने लगें ? तुम हर चीज का निराशाजनक पहलू ही क्यों देखते हो ? आखिर तुम्हारे आंकड़ों के बावजूद मिल की ओर से स्कूल, गिरजे, एक अच्छे अस्पताल और मजदूरों को कम सूद पर ऋण देनेवाली एक संस्था की व्यवस्था भी तो की गयी है।"

बोबरोव बिस्तरे से कूद पड़ा और नंगे पांव कमरे में तेजी से चक्कर काटने लगा।

"तुम्हारे ये अस्पताल और स्कूल एक कौड़ी का मूल्य नहीं रखते। जनमत को रिझाने और तुम जैसे मानववादियों की आंखों में धूल झोंकने के लिए ही ये संस्थाएं खोली गयी हैं। चाहो तो मैं तुम्हें बता सकता हूं कि उनकी असलियत क्या है। जानते हो 'फिनिश' किसे कहते हैं ?"

"फिनिश ? क्या वह तो नहीं, जो घोड़ों अथवा घुड़दौड़ से कुछ सम्बंध रखता है ?"

"हां वही ! घुड़दौड़ में विजय-स्तम्भ के पार निकलने से पूर्व अन्तिम सात सौ फुट का फासला 'फिनिश' कहलाता है। इसी फासले को पार करते हुए घुड़सवार अपना पूरा जोर लगा देता है और घोड़े को चाबुकों से मारते-मारते लहुलुहान कर देता है। बस, विजय-स्तम्भ तक उसे भगाने में ही घुड़सवार को दिलचस्पी है, उसके बाद घोड़ा मरे-जिये, उसकी बला से। हमारा व्यवहार भी उस घुड़सवार से मिलता-जुलता है। हम विजय की लालसा में घोड़े के बदन से खून की आखिरी बूंद तक निचोड़ लेते हैं, और जब उसकी कमर टूट जाती है और वह अपनी क्षत-विक्षत टांगों को हवा में पटकता हुआ दम तोड़ने लगता है, तो वह हमारे किसी काम का नहीं रह जाता। हम उस पर थूकना भी पसन्द नहीं करते। तुम्हारे स्कूल और अस्पताल उस मृतप्राय घोड़े को क्या लाभ पहुंचा सकते हैं, मुझे समझ में नहीं आता। क्या तुमने आग में धातु को गलते अथवा गर्म धातु को लोहे की पटरियों में परिणत होते देखा है ? यदि तुमने देखा है, तो मुझे यह बतलाने की आवश्यकता नहीं कि इस काम को करने के लिए कितने धैर्य और साहस, इस्पाती पुट्ठों और सर्कस के खिलाड़ी की सी स्फूर्ति की जरूरत पड़ती है। तुम्हें पता होना चाहिए कि हर मजदूर दिन में अनेक बार मृत्यु के मुंह में जाने से बाल-बाल बच निकलता है, जिसका श्रेय हम केवल उसके आत्म-संयम की अद्भुत शक्ति को ही दे सकते हैं। क्या तुम जानना चाहोगे कि इस खतरनाक काम के एवज में उस मजदूर को क्या मिलता है ?"

"किन्तु फिर भी जब तक मिल है, तब तक हर मजदूर कम-से-कम अपनी रोजी की ओर से तो निश्चिंत है," गोल्डबुर्ग अपनी बात पर अड़ा रहा।

"क्यों बच्चों की सी बातें करते हो, डॉक्टर !" बोबरोव ने खिड़की की देहरी पर बैठते हुए गर्म होकर कहा। "आज मजदूरों का भाग्य उत्तरोत्तर मंडी की मांग, शेयरों के क्रय-विक्रय और अनेकानेक कुचक्रों-षड्यंत्रों पर निर्भर होता जा रहा है। हर औद्योगिक-व्यवसाय स्थायित्व प्राप्त करने से पूर्व तीन-चार उद्योगपतियों के हाथों से गुजरता है। क्या तुम जानते हो कि हमारी कम्पनी की नींव कैसे पड़ी ? कुछ मुट्ठी भर उद्योगपतियों ने मिलकर पूंजी इकट्ठा की। आरम्भ में इस व्यवसाय का संगठन छोटे पैमाने पर किया गया था। किन्तु इससे पेश्तर कि व्यवसाय के मालिक कुछ कर पाते, इंजीनियरों, संचालकों और ठेकेदारों की टोली ने सारी पूंजी पानी की तरह बहा दी। बड़ी-बड़ी इमारतों का निर्माण किया गया जो बाद में बिलकुल बेकार साबित हुईं। उन सबको बारूद से उड़ा दिया गया। आखिरकार मजबूरी की हालत में

सारा धंधा रूबल में दस कोपेक के भाव पर बेच देना पड़ा। बाद में विदित हुआ कि एक अन्य कम्पनी के चतुर, कार्यकुशल उद्योगपतियों ने इंजीनियरों और ठेकेदारों की मुट्ठी गर्म की थी, ताकि वे हमारी कम्पनी को मिट्टी में मिलाकर अपना उल्लू सीधा कर सकें। यह सही है कि आज यह कम्पनी काफी बड़े पैमाने पर चल रही है, किन्तु मैं अच्छी तरह जानता हूं कि जब पहली बार कम्पनी फेल हुई थी तो मजदूरों को दो महीने की मजूरी से हाथ धोना पड़ा था। सो डॉक्टर, रोजी इतनी ज्यादा सुरक्षित नहीं है, जितनी तुम समझते हो! शेयरों के दाम गिरे नहीं कि मजूरी में तुरन्त कटौती कर दी जाती है। संभवतः शेयरों के उतार-चढ़ाव का कारण तुम जानते हो? पीटर्सबर्ग में जाकर किसी दलाल के कानों में चुपके से कह दो कि तुम तीन लाख रूबल के शेयर बेचना चाहते हो। उसे यह भी जतला दो कि यदि वह इस बात को गुप्त रखेगा, तो तुम उसे एक अच्छी-खासी रकम कमीशन के रूप में दे दोगे। यही बात तुम दूसरे दलालों के कानों में फूंक दो। फिर देखो, शेयरों के दाम धड़ाधड़ गिरने शुरू हो जायेंगे। मामला जितना अधिक गुप्त रखा जायगा, उतनी ही तेजी से दाम गिरते जायेंगे। इन परिस्थितियों में रोजी सुरक्षित कैसे रह पायगी, डाक्टर?"

बोबरोव ने एक झटका देकर खिड़की खोल दी। ठंडी हवा का झोंका भीतर घुस आया।

"डॉक्टर, देखो!" बोबरोव ने मिल की ओर इशारा किया।

गोल्डबुर्ग उठ कर कुहनी के सहारे बैठ गया और खिड़की से बाहर फैले अंधकार को देखने लगा। दूर फासले पर फैला विस्तार चूने की गर्म तपी हुई चट्टानों के अनगिनत ढेरों के प्रकाश से जगमगा रहा था। चट्टानों की सतहों पर गन्धक की नीली-हरी लपटें जब तब भड़क उठती थीं। ये लपटें चूने के पत्थरों के आदम-कद ढेरों* से निकल रही थीं। मिल के ऊपर हल्का सा रक्तिम आलोक छाया था, जिसमें अंधकार में डूबी ऊंची चिमनियों के पतले शिखर दिखायी दे रहे थे। मैला-भूरा सा कुहरा धरती से ऊपर उठ रहा था, जिसमें चिमनियों के निचले हिस्से धुंधलके में छिपे थे। वे दानवी, भीमकाय चिमनियां अनवरत रूप से घने धुएं के बादल उगल रही थीं, जो आपस में घुल-मिल कर एक बिखरे-छितरे झुंड की शक्ल में पूरब की ओर उड़े जा रहे थे। उन्हें देख कर लगता था मानो मैले-भूरे अथवा हल्के लाल रंग के ऊन के गाले हवा में तिरते जा रहे हैं। पतली ऊंची चिमनियों के ऊपर जलती गैस की चमकदार शहतीरें थिरक

* इन ढेरों पर कोयले और लकड़ी से आग जलायी जाती है और लगभग एक सप्ताह तक इन्हें गर्म किया जाता है। उस समय तक चूने का पत्थर चूने में परिणत हो जाता है।

ग्रौर नाच रही थीं जिससे वे विशालकाय मशालों के समान दीख रही थीं। गैस की लपटें मिल के ऊपर उड़ते हुए धुएं के बादल पर विचित्र, भयावह किस्म की छायाएं फेंक रही थीं। रह रह कर संकेत-हथौड़े का भारी धमाका सुनाई देता था, जिसके तुरन्त बाद भट्ठी की घंटी नीचे की ग्रोर चली जाती थी ग्रौर ग्राग की लपटों तथा कालिख का वातचक्र भट्ठी के मुख से फूट कर प्रचंड गति से बादलों की तरह गड़गड़ाता हुग्रा ग्राकाश की ग्रोर लपकने लगता था। तब, ग्रचानक कुछ देर के लिए मिल का समूचा ग्रहाता ग्रालोकित हो उठता। उस क्षणिक ग्रालोक में गर्म तपे हुए ग्रौर एक दूसरे से सटे हुए चूल्हे एक ग्रालीशान दुर्ग के बुर्ज से दिखायी देते थे। जलते हुए कोयलों से भरे भट्ठे सीधी लम्बी कतारों में खड़े थे। कभी-कभी किसी भट्ठे से ज्वाला भड़क उठती ग्रौर वह एक विशाल, सुर्ख नेत्र सा दीखने लगता। कहीं-कहीं विद्युत प्रकाश की नीली, निर्जीव ग्राभा तपते हुए लोहे की चकाचौंध चमक में घुल-मिल सी गयी थी। लोहा पीटने की झनझनाहट बराबर सुनायी दे रही थी।

मिल की रोशनियों की ग्राभा में बोबरोव के चेहरे पर तांबे के रंग की कुटिल छाया घिर ग्रायी थी। उसकी ग्रांखें प्रज्वलित सी हो उठी थीं। ग्रौर बाल माथे पर बिखर ग्राये थे। उसकी ग्रावाज गुस्से में उफनती सी जान पड़ती थी।

"वह देखो — वह मलोच इंसान के गर्म खून को पीने की लालसा में मुंह फाड़े खड़ा है!" ग्रपनी पतली बांह से खिड़की के बाहर इशारा करते हुए बोबरोव ने कहा। "ठीक है, यह प्रगति, मशीन श्रम, सभ्यता ग्रौर सांस्कृतिक विकास का प्रतीक है। किन्तु ग्रल्लाह के नाम पर जरा मानव के जीवन के उन बीस वर्षों के बारे में सोचो, जो एक दिन में स्वाहा हो जाते हैं! सच मानो, कभी-कभी तो मुझे लगता है कि मैं हत्यारा हूं!"

"क्या यह ग्रादमी ग्रपने होश-हवास गुम कर बैठा है ?" डाक्टर इस विचार से कांप उठा। वह बोबरोव को सांत्वना देने लगा।

"ग्ररे छोड़ो भी ग्रान्द्रेइलिच! तुम इन बेकार की बातों से नाहक परेशान होते हो। बाहर सीलन है ग्रौर तुमने खिड़की खोल रखी है। देखो, यह थोड़ी सी ब्रोमाईड लो ग्रौर सोने की तैयारी करो।"

"सचमुच, इस ग्रादमी का तो सर फिर गया है," डाक्टर ने सोचा। वह भय ग्रौर करुणा से ग्रभिभूत सा हो उठा।

बोबरोव ने दिल की भड़ांस निकाल ली थी ग्रौर वह ग्रब इतना थक गया था कि उसने डाक्टर के ग्रादेश का विरोध नहीं किया। किन्तु बिस्तर में घुसते ही वह विक्षिप्त व्यक्ति की भांति फफक-फफक कर रोने लगा। डॉक्टर

बड़ी देर तक उसके पास बैठा उसके बालों को सहलाता रहा, मानो वह कोई बच्चा हो। सहानुभूति के जो शब्द उसे उस समय सूझ पड़े, उन्हीं से बोबरोव को सांत्वना देने लगा।

छः

दूसरे दिन इवांगकोवो स्टेशन पर वासिली तेरेन्त्येविच क्वाशनिन का भव्य स्वागत किया गया। ग्यारह बजे तक मिल की समूची प्रबंध समिति स्टेशन पर आ जमा हुई थी। सबका दिल घबरा रहा था। मैनेजर सर्गे वेलेरियानोविच रोल्कोवनिकोव सोडा-वॉटर के गिलास-पर-गिलास पीता जा रहा था। पल-पल में वह जेब से घड़ी निकालता और डॉयल पर नजर डाले बिना उसे यंत्रवत जेब में रख लेता था। उसका यह विचित्र व्यवहार उसकी घबराहट का सूचक था। उसके सुन्दर, साफ-सुथरे और आत्म-विश्वास से दमकते चेहरे पर— जिसे देखकर लगता था कि समाज में उसका प्रतिष्ठित स्थान है— इस समय भी घबराहट के बावजूद कोई शिकन नहीं दिखायी देती थी। अधिक लोग इस बात को नहीं जानते थे कि निर्माण-योजना का वह केवल नाममात्र के लिए ही मैनेजर था। संचालन और व्यवस्था की असली बागडोर बेलजियन इंजीनियर आन्द्रेयस के हाथों में थी। आन्द्रेयस के वंश में पोलिश और स्वीड जातियों का रक्त मिला हुआ था। मिल के संचालन में वह किस प्रकार का योग देता था, इसका रहस्य मिल के कुछ इने-गिने विश्वासपात्र अधिकारी ही जानते थे। दफ्तर में रोल्कोवनिकोव और आन्द्रेयस के कमरों को जोड़ता हुआ एक दरवाजा था। किसी भी महत्वपूर्ण विषय पर आन्द्रेयस की सलाह के बिना रोल्कोवनिकोव में फैसला देने का साहस नहीं था। हर कागज के एक कोने पर आन्द्रेयस पेन्सिल का चिन्ह बना देता और उसके अनुसार ही रोल्कोवनिकोव अपना निर्णय लिया करता। जब कभी किसी फौरी विषय पर आन्द्रेयस के साथ सलाह-मशविरा करना संभव न हो पाता, तो वह प्रार्थी के सम्मुख व्यस्त बनने का उपक्रम करते हुए लापरवाही से कहता, "मैं बहुत व्यस्त हूं। मुझे खेद है कि मैं आपको समय नहीं दे सकता। कृपया आपने जो कुछ कहना है, मि० आन्द्रेयस से कह दीजिए। वह बाद में मुझे उसके सम्बंध में विशेष सूचना भेज देंगे।"

आन्द्रेयस ने संचालक-मंडल की अनगिनत सेवाएं की थीं। पुरानी कम्पनी को नष्ट करने की धोखाधड़ी की अद्भुत योजना उसके कल्पनाशील, कार्यकुशल मस्तिष्क की ही उपज थी। उस षड्यंत्र में उसका अदृश्य हाथ आखिर तक काम करता रहा था। उसके तैयार किये हुए खाके अपनी सफाई और सादगी के

लिए खनिज विज्ञान के क्षेत्र में अतुलनीय और अद्वितीय माने जाते थे। वह योरप की अनेक भाषाएं आसानी से बोल सकता था और अपने विषय के अलावा अन्य अनेक विषयों का भी अच्छा ज्ञाता था। ऐसे व्यक्ति इंजीनियरों में कम ही दिखलायी देते हैं।

स्टेशन में एकत्र भीड़ में आन्द्रेयस ही ऐसा व्यक्ति था जिसकी प्रकृतस्थ, शान्त मुद्रा में कोई अन्तर नहीं आया था। देखने में वह तपेदिक का मरीज सा लगता था और उसका चेहरा बूढ़े लंगूर का सा था। हमेशा की तरह उसके मुह में सिगार दबा हुआ था। वह सबसे बाद में आया था और अब अपनी चौड़ी खुली पतलून की जेबों में कुहनियों तक हाथ ठूंस कर प्लेटफार्म के चक्कर काट रहा था। उसकी हल्के भूरे रंग की आंखों से स्पष्ट रूप से विदित होता था कि एक वैज्ञानिक का प्रगल्भ मस्तिष्क उसके पास है और जीवट का दुस्साहसी कार्य करने के लिए वह आग में भी कूद सकता है। उसकी फूली पलकें भारी थकान से नीचे की ओर झुक आयीं थीं और वह विरक्त भाव से चारों ओर देख रहा था।

स्टेशन पर जिनेन्को परिवार के आगमन से किसी को आश्चर्य नहीं हुआ। सबकी आंखों में अब वह परिवार मिल के सामूहिक जीवन का एक अभिन्नतम अंग बन चुका था। स्टेशन के ठंडे, बुझे-बुझे धुंधलके में लड़कियों का हास-विनोद और हंसी के कहकहे कृत्रिम और असंगत से दीख रहे थे। नौजवान इंजीनियरों ने—जो प्रतीक्षा करते-करते थक गये थे—पांचो बहनों को घेर लिया था। जिनेन्को की लड़कियों ने तुरंत अभ्यासवश व्यवहारिकता की सुरक्षित आड़ में अपने आस-पास खड़े लोगों के संग आकर्षक, किन्तु बासी और बचकानी बातें करनी शुरू कर दीं। नाटे कद की अन्ना अफानास्येवना एक परेशान, बेचैन मुर्गी सी अपनी लड़कियों के बीच फुदक रही थी।

पिछली रात जो उफान आया था, उसके चिन्ह बोबरोव के भ्रान्त, रुग्ण चेहरे पर इस समय भी दिखायी दे रहे थे। वह प्लेटफार्म के एक कोने में सबसे अलग-थलग चुपचाप बैठा था और सिगरेट-पर-सिगरेट पिये जा रहा था। जब जिनेन्को परिवार शोर-गुल मचाता और चहचहाता हुआ एक गोल मेज के इर्द-गिर्द आकर बैठ गया, तो उसके मन में दो धुंधली सी भावनाएं उत्पन्न हुईं। एक थी शर्म की भावना—*किसी अन्य की नागवार हरकत पर शर्म करने की भावना*—जो उसके हृदय को चीरती चली गयी। जिनेन्को परिवार, औचित्य अनौचित्य की चिन्ता किये बिना इस स्थान पर आ धमका था, जो बोबरोव को सर्वथा असंगत और अवांछनीय प्रतीत हुआ। दूसरी ओर उसे नीना को देखकर प्रसन्नता भी हुई थी। स्टेशन आते हुए बग्गी की सरपट चाल के कारण नीना के गालों पर लाली छा गयी थी, आंखें गहरी उत्तेजना से चमक रही थीं; उसकी

वेश-भूषा सबका ध्यान बरबस अपनी ओर आकर्षित कर लेती थी। अपनी कल्पना में बोबरोव ने नीना की जो छवि बसा रखी थी, इस समय वह उससे कहीं अधिक सुन्दर लग रही थी। उसकी पीड़ित और रुग्ण आत्मा में सहसा स्निग्ध सुगन्धित प्रेम के लिए अदम्य उत्कण्ठा जाग उठी, नारी के सुकोमल सहानुभूतिपूर्ण स्पर्श के लिए वह विकल हो उठा।

वह नीना से मिलने का अवसर खोजने लगा, किन्तु नीना धातु शास्त्र के दो विद्यार्थियों से गप्पें लड़ा रही थी। दोनों विद्यार्थी उसे हंसाने के लिए एक दूसरे से होड़ लगा रहे थे और नीना हंस रही थी—नखरों और चोंचलों से भरी हंसी, जिसे देख कर लगता था मानो उसके आनन्द और उल्लास का कोई ओर-छोर नहीं है। उसके छोटे-छोटे सफेद दांत खुले हुए होठों के भीतर से चमक रहे थे। फिर भी नीना की आंखें दो-चार बार बोबरोव की आंखों से टकरायीं। बोबरोव को लगा कि नीना की भौहें मानो कुछ पूछती हुई सी तनिक उठ गयी हैं, और उनके उस मूक प्रश्न में उसे रोष या अप्रसन्नता की कोई झलक न दिखायी दी।

प्लेटफार्म की घंटी ने सूचना दी कि रेल पिछले स्टेशन से छूट चुकी है। घंटी सुनते ही इंजीनियरों के दल में भगदड़ सी मच गयी। बोबरोव अपने कोने में बैठा रहा। उसके होठों पर व्यंग्य की हल्की मुस्कान सिमट आयी। वह उन बीस-एक इंजीनियरों को देखता रहा, जो घबड़ाए हुए इधर-उधर डोल रहे थे और जिनके दिलों में एक ही भय कुण्डली मार कर बैठ गया था। उनके चेहरे एकदम गम्भीर और चिन्तित से हो गये। आखिरी बार वे अपने फ्राक-कोट के बटनों, टाईयों और टोपियों पर हाथ फेर रहे थे। उनकी आखे घंटी पर चिपकी हुई थीं। देखते-देखते सारा हाल खाली हो गया।

बोबरोव बाहर प्लेटफार्म पर निकल आया। उसने देखा कि जिन युवकों से जिनेन्को की लड़कियां हंसी-मजाक कर रही थीं, वे अब उन्हें अकेला छोड़कर चलते बने थे और वे दरवाजे के पास अन्ना अफानास्येवना को घेरकर असहाय-सी खड़ी थीं। नीना ने पीछे मुड़कर बोबरोव को देखा, जो उसे टकटकी बांधे निहार रहा था। नीना उसके पास इस तरह चली आयी, मानो बोबरोव के हाव-भाव से उसे ऐसा प्रतीत हुआ हो कि वह उससे एकांत में बात-चीत करना चाहता है।

"नमस्ते! क्या बात है, आज तुम्हारा मुंह इतना पीला-सा क्यों जान पड़ रहा है? तबियत ठीक नहीं है क्या?" उसने बोबरोव के हाथ को अपने कोमल हाथों में जकड़ते हुऐ पूछा। वह अपनी निश्छल, स्नेहसिक्त निगाहों से बोबरोव की आंखों में देख रही थी। "कल रात तुम इतनी जल्दी बिना कुछ कहे अचानक चले गये। नाराज हो गये थे क्या?"

"हां भी और नहीं भी," बोबरोव ने मुस्कराते हुए उत्तर दिया। "नहीं इसलिए कि मुझे नाराज होने का कोई अधिकार नहीं है। क्यों, ठीक है न ?"

"मेरे विचार में हर आदमी को नाराज होने का अधिकार प्राप्त है, विशेषकर उस समय जब वह जानता हो कि उसकी राय की कद्र की जाती है। अच्छा, और 'हां' क्यों ?"

"हां इसलिए कि—बात यह है, नीना ग्रिगोरयेवना," बोबरोव ने सहसा अपनी झिझक को उतार कर फेंकते हुए कहा, "कि कल रात जब हम दोनों बरामदे में देर तक बैठे रहे थे—याद है न ? उस समय मैंने जीवन के कुछ इतने सुन्दर, विलक्षण क्षण बिताये, जिनके लिए मैं हमेशा तुम्हारा कृतज्ञ रहूंगा। तब मुझे लगा था कि यदि तुम चाहो, तो मुझे दुनिया का सबसे सुखी आदमी बना सकती हो ... नहीं, अब मैं कोई संकोच नहीं करूंगा, अब तुम से मैं सारी बात बेझिझक कह डालूंगा। तुम जानती हो ... तुमने अनुमान तो अवश्य लगा लिया होगा ... शायद काफी पहले से तुम समझ गयी होगी कि मैं ..."

किन्तु वह अपना वाक्य पूरा नहीं कर सका। कुछ देर पहले उसके हृदय में साहस का जो ज्वार उठा था, वह सहसा उतर गया।

"कि तुम क्या ? तुम क्या कहने जा रहे थे ?" नीना ने दिखावटी लापरवाही के साथ कहा, किन्तु अपने पर कड़ा संयम रखने के बावजूद उसका स्वर कांपने लगा था और आंखें नीचे झुक आयीं थीं।

वह बोबरोव से उस प्रेम प्रस्ताव की प्रतीक्षा कर रही थी, जो प्रत्येक नवयौवना के हृदय को, चाहे वह स्वयं उस प्रेमानुभूति में साझीदार हो या न हो, इस कदर रोमांचित कर देता है, इस कदर मिठास से भर देता है। उसका चेहरा कुछ पीला पड़ गया था।

"अभी नहीं ... फिर कभी सही," बोबरोव हकलाने लगा था। "मैं तुम्हें यह बात किसी और दिन बताऊंगा। किन्तु अभी रहने दो, अभी मैं कुछ भी नहीं कह सकूंगा।" उसने अभ्यर्थना करते हुए कहा।

"अच्छा। किन्तु तुमने अपनी नाराजगी का कारण तो बताया ही नहीं।"

"हां बताता हूं। बरामदे में बिताये गये उन क्षणों के बाद जब मैं खाने वाले कमरे में आया तो मेरी आत्मा एक...एक कोमल, दिव्य अनुभूति में डूबी थी और जब मैंने ..."

"और जब तुमने क्वाशनिन की आमदनी के सम्बंध में हमारी बातचीत को सुना, तो तुम्हारी भावनाओं को ठेस पहुंची, क्यों यही बात है न ?" नीना ने बीच में ही कह दिया। जिस प्रकार कभी-कभी नितान्त संकीर्ण बुद्धि वाली स्त्रियां भी मानो अन्तःप्रेरणा से दूसरों के हृदय का भेद पा लेती हैं, उसी तरह

नीना ने भी बिलकुल सही अनुमान लगाया था। "क्या मैंने ठीक बात कही है ?" वह बिलकुल उसके सामने खड़ी हो गयी और एक बार फिर उसने बोबरोव को अपनी गहरी, स्नेहसिक्त दृष्टि से ढंक लिया। "अपने दिल की बात मुझ से कह दो। देखो, अपने मित्र से कोई बात छिपायी नहीं जाती।"

तीन या चार महीने पहले की घटना थी। वे सब लोग एक रात नौका-विहार करने निकले थे। गर्मी की रात के स्निग्ध सौंदर्य से द्रवित होकर नीना का हृदय कोमलता से भर गया था। उसने बोबरोव से आजीवन मित्रता का प्रस्ताव किया था। बोबरोव ने भी पूरी गम्भीरता से उसके प्रस्ताव को स्वीकार किया था। पूरे एक सप्ताह तक वे दोनों एक दूसरे को "मेरे मित्र" कह कर पुकारते रहे थे। जब कभी वह अपने उनींदे से, धीमे और रहस्य में डूबे स्वर में उसे "मेरे मित्र" के सम्बोधन से बुलाती थी तो ये दो छोटे-छोटे शब्द बोबरोव के अन्तस्तल की अतल गहराइयों को छू जाते थे। उस मजाक को याद करके उसने एक ठंडी सांस भरी।

"दिल की बात कहना क्या इतना सुगम है, मेरे मित्र ? फिर भी मैं तुम्हें सब कुछ बताऊंगा। तुम्हें देख कर मेरा दिल हमेशा दो परस्पर विरोधी भावनाओं में बंट जाता है, और मैं अनिश्चय की पीड़ा से आक्रान्त हो उठता हूं। कभी-कभी तुम से बातचीत करते समय तुम्हारा सिर्फ एक शब्द, संकेत, या महज उड़ती हुई सी निगाह मुझे आनन्द-विभोर कर देती है। किन्तु... मैं अपनी इस अनुभूति को शब्दों में कैसे व्यक्त करूं ? क्या कभी तुमने इस बात पर गौर किया है ?"

"हां," नीना ने दबे होठों से कहा, और पलकों को फड़फड़ाते हुए अपनी आखें झुका लीं।

"और फिर किसी दिन अचानक तुम्हारे व्यवहार और बातचीत से एक कस्बाती, संकीर्ण विचारों वाली भद्र महिला की गन्ध आने लगती है— वही दिखावा आडम्बर, वही घिसे-पिटे मुहावरे ! यह बात शूल की तरह मेरे दिल में गड़ती रहती है, इसीलिए बिना किसी दुराव-छिपाव के मैंने यह सब कुछ तुम से कह दिया है। आशा है, तुम मेरी बात का बुरा नहीं मानोगी।"

"मैं यह बात भी जानती थी।"

"सच ? मुझे इस बात में कभी कोई सन्देह नहीं रहा कि तुम्हारा हृदय अत्यंत कोमल और सम्वेदनशील है। किन्तु जैसी तुम आज हो, वैसी ही हमेशा क्यों नहीं रहतीं ?"

वह उसकी ओर दुबारा मुड़ी और अपने हाथ को इस तरह आगे बढ़ाया मानो उसके हाथ का स्पर्श करना चाह रही हो। वे प्लेटफार्म के एक सुनसान कोने में टहल रहे थे।

"तुम बहुत जल्दी अधीर और उत्तेजित हो उठते हो आन्द्रेइलिच ! तुमने आज तक मुझे समझने का प्रयत्न ही नहीं किया ।" नीना ने उलाहना भरे स्वर में कहा । "जो कुछ मुझ में अच्छा है. उसे तुम बढ़ा-चढ़ा कर देखते हो, किन्तु जैसी मैं हूं — वह तुम्हें एक आंख नहीं सुहाता । भला इसमें मेरा क्या दोष है ? जिस वातावरण में पल कर मैं इतनी बड़ी हुई हूं, वैसी ही तो रहूंगी । तुम मुझे उससे भिन्न देखने की आशा क्यों करते हो ? यदि मैं अपने को बदलने की कोशिश भी करूं, तो सारे परिवार में कलह और फूट पड़ जायेगी । मैं इतनी कमजोर और, सच पूछो, तो इतनी क्षुद्र हूं, कि अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना मेरे बूते के बाहर की बात है । जहां सब लोग जाते हैं, वहीं मैं भी जाती हूं, उन्हीं की आंखों से सब चीजों को जांचती परखती हूं । सच मानो, मुझे अपने सम्बंध में कोई गलतफहमी नहीं है । मुझे मालूम है मैं कितनी साधारण हूं । किन्तु जब मैं दूसरों के संग होती हूं तो मुझे यह बात इतनी नहीं खटकती जितनी कि जब मैं तुम्हारे संग होती हूं । तुम्हारे सम्मुख मैं अपना सब संतुलन खो बैठती हूं ..." वह क्षण भर के लिए झिझकी । "क्योंकि, क्योंकि तुम उन सब लोगों से भिन्न हो, क्योंकि मैंने तुम जैसा व्यक्ति जीवन में कभी नहीं देखा ।"

नीना को लग रहा था मानो वह सच्चे दिल से यह सब बातें कह रही हो । शरद ऋतु की ताजी, मादक हवा, स्टेशन की हलचल और शोरगुल, खुद अपनी खूबसूरती का अहसास और बोबरोव की प्रेम से भीगी दृष्टि के स्पर्श की सुखद अनुभूति — इन सब चीजों ने मिल कर उसे इतना अधिक उन्मादित कर दिया था कि भावोन्मत्त व्यक्तियों की तरह वह बिना जाने-बूझे, जोश और खूबसूरती के साथ झूठ बोलती चली गयी । नैतिक सम्बल पाने के लिए विकल युवती की अपनी इस भूमिका के प्रवाह में बह कर वह बोबरोव को लुभावनी बातें सुनाकर खुश करना चाहती थी ।

"मैं जानती हूं कि तुम मुझे एक मनचली लड़की समझते हो । इन्कार मत करो — मेरे कुछ हाव-भाव से तुम्हारा ऐसा समझना स्वाभाविक ही है । मिसाल के तौर पर मिलर को ही लो — उसके संग गप्पें मारती हूं, उसके मजाकों पर हंसती हूं । किन्तु काश तुम जान पाते, कि उस गबरू-गंवार से मैं कितनी नफरत करती हूं । या उन दोनों विद्यार्थियों को ही ले लो । सच पूछो तो खूबसूरत आदमी, और कुछ नहीं तो सिर्फ इसलिए असह्य होते हैं कि वे खुद अपनी खूबसूरती पर लट्टू बने रहते हैं — अपनी प्रशंसा करते कभी नहीं थकते । चाहे यह बात तुम्हें कितनी अजीब क्यों न लगे, किन्तु विश्वास करो, मुझे सादी सूरत वाले लोग ही विशेष रूप से अच्छे लगते हैं ।"

कोमल स्वर में कहे गये इन मधुर शब्दों को सुनकर बोबरोव ने एक ठंडी आह भरी । स्त्रियों के मुख से सांत्वना के ऐसे शब्द वह अनेक बार सुन चुका

था। हर सुन्दर स्त्री अपने कुरूप प्रशंसकों को ऐसी सांत्वना देकर धीरज बंधाने में कोई कोर-कसर नहीं उठा रखती !

"अच्छा तो फिर किसी-न-किसी दिन में आपसे अपील करने की आशा रख सकता हूं ?" उसने मजाक के अन्दाज में, किन्तु ऐसी आवाज में पूछा जो तीखे आत्मोपहास से भरी हुई थी।

नीना झट अपनी गलती सुधारने के लिए बोल उठी, "कैसे अजीब आदमी हो ! तुमसे तो दो बातें करना भी गुनाह है। क्या आप कुरेद-कुरेद कर हमसे अपनी प्रशंसा करवाना चाहते हैं जनाब ? शर्म आनी चाहिए आपको !"

अपनी नासमझी पर नीना खुद ही कुछ लज्जित सी हो गयी, और विषय को बदलने के लिए उसने हंसते हुए बोबरोव को आदेश दिया, "अच्छा बताओ, तुम मुझे 'किसी और दिन' क्या बताने वाले थे ? कृपा करके सब कुछ अभी तुरंत बता दो !"

"कौन सी बात, मुझे तो कुछ याद नहीं," बोबरोव हकलाता हुआ बोला। उसका उत्साह फीका पड़ चुका था।

"अच्छा तो मेरे रहस्यमय मित्र, मैं अभी तुम्हें सब याद दिलाये देती हूं। तुम कल रात की बात कर रहे थे। बरामदे में कुछ सुखद क्षणों का जिक्र करने के बाद तुमने मुझसे पूछा था कि एक बात तो मैंने बहुत दिन पहले से ही जान ली होगी—किन्तु कौन सी बात ? तुमने अपना वाक्य बीच में अधूरा छोड़ दिया था। अब उस बात को कह डालिये—फौरन कह डालिये !"

उसकी आंखों में मुस्कराहट थिरक रही थी—शरारत भरी, प्रोत्साहन-पूर्ण, कोमल मुस्कराहट ! एक मधुर क्षण के लिए बोबरोव का हृत-स्पन्दन स्तब्ध सा रह गया और एक बार फिर उसका हौसला बढ़ा। "वह मेरे दिल की बात जानती है, प्रतिक्षा कर रही है कि मैं कुछ बोलूं !" उसने साहस बटोरते हुए सोचा।

वे प्लेटफार्म के दूसरे सिरे पर आकर खड़े हो गये थे, जहा उनके अलावा अन्य कोई न था। दोनों के दिल जोर-जोर से धड़क रहे थे। नीना ने जो खेल शुरू किया था, उसमें वह पूरी तरह रम चुकी थी और बड़ी उत्सुकता से बोबरोव के उत्तर की प्रतीक्षा कर रही थी। बोबरोव इतना अधिक उत्तेजित हो गया था कि घबराहट में उसके मुंह से बात ही न निकल रही थी। किन्तु उसी समय भोंपू का कर्कश, तीखा स्वर सुनाई दिया और प्लेटफार्म पर भगदड़ सी मच गयी।

"मैं तुम्हारे उत्तर की प्रतीक्षा करती रहूंगी, समझे ? तुम शायद नहीं जानते कि मैं उसको कितना अधिक महत्व देती हूं।"

सहसा दूर मोड़ के पीछे काले धुएं में लिपटी एक्सप्रेस-ट्रेन आती हुई दिखायी दी। कुछ मिनटों के बाद उसके पहियों की गड़गड़ाहट धीमी पड़ने लगी और वह प्लेटफार्म के सामने आकर रुक गयी। उसके सिरे पर नीले रंग का एक चमकता हुआ लम्बा डब्बा था। भीड़ का रेला उसी की ओर टूट पड़ा।

कन्डक्टर तेजी से कम्पार्टमेंट का दरवाजा खोलने के लिए आगे बढ़े। रेल के डब्बे से प्लेटफार्म तक एक सीढ़ी बिछा दी गयी। स्टेशन-मास्टर का चेहरा उत्तेजना और घबराहट से लाल हो गया था। वह उन मजदूरों को जोर-जोर से हांक रहा था, जो क्वाशनिन के कम्पार्टमेंट को ट्रेन से अलग कर रहे थे। क्वाशनिन 'एक्स' रेलवे का प्रमुख भागीदार था, इसलिए ब्रान्च-लाइन के हर स्टेशन पर जिस आन-बान से उसका स्वागत किया जाता था, वैसा स्वागत शायद ही कभी रेलवे के किसी ऊंचे अफसर का किया जाता हो।

केवल चार व्यक्ति गाड़ी के डब्बे में घुसे—शेल्कोवनिकोव, आन्द्रेयस और दो प्रमुख बेल्जियन इंजीनियर। क्वाशनिन एक आरामकुर्सी पर अपनी लम्बी-चौड़ी टांगें फैलाकर बैठा था। उसकी तोंद बाहर की ओर निकली थी और उसने एक गोल फेल्ट टोपी पहन रखी थी, जिसके नीचे से लाल सुर्ख बाल नजर आ रहे थे। उसने एक अभिनेता की भांति अपनी दाढ़ी मूछ सफाचट करवा रखी थी। उसके जबड़ों का ढीला-ढाला मांस नीचे की ओर लटक रहा था और ठुड्डी के नीचे मांस की तीन तहें बन गयी थीं। झाईयों से भरे उसके चेहरे पर निद्रा और खीज के चिन्ह स्पष्ट दिखायी दे रहे थे। उसके होंठ व्यंगात्मक मुद्रा में मुड़े थे।

कुर्सी से सप्रयास उठकर उसने इंजीनियरों का अभिवादन किया।

"नमस्कार सज्जनो!" उसने भारी और गहरी आवाज में कहा और अपना लम्बा मोटा हाथ आगे बढ़ा दिया, ताकि सब इंजीनियर बारी-बारी से श्रद्धा और सम्मान के साथ उसका स्पर्श कर लें। "मिल में सब काम ठीक तरह से चल रहा है न?"

शेलकोवनिकोव ने रूखी नीरस भाषा में रिपोर्ट पेश की। उसने बतलाया कि मिल का सब काम सुचारु रूप से चल रहा है, और वे लोग वासिली तेरन्त्येविच के आगमन की बड़ी उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे, ताकि उनकी उपस्थिति में पवन-भट्टी को चालू किया जाए और नई इमारतों का शिलान्यास किया जा सके। मजदूरों और फोरमैनों को उचित वेतन पर नियुक्त कर दिया गया है। ऑर्डरों की संख्या इतनी तेजी से बढ़ रही है कि संचालक-मंडल ने निर्माण-कार्य को शीघ्रातिशीघ्र आरम्भ कर देना ही उचित समझा।

क्वाशनिन खिड़की की ओर मुंह मोड़कर प्लेटफार्म पर लोगों के जमघट को निर्विकार भाव से देख रहा था। एक बड़ी भीड़ उसके डिब्बे के आगे खड़ी

हो गयी थी। उसके चेहरे पर गहरी वितृष्णा और थकान का भाव घिर आया।

अचानक उसने मैनेजर को बीच में ही टोककर पूछा : "देखो, वह लड़की कौन है ?"

शेलकोवनिकोव ने खिड़की के बाहर झांककर देखा।

"अरे वह देखो, वही लड़की जिसने अपने हैट पर पीला पंख लगा रखा है।" क्वाशनिन ने अधीर होकर कहा।

"अच्छा, अब समझ गया। वही न ?" मैनेजर ने बड़ी उत्सुकता से झुककर क्वाशनिन के कान में रहस्य भरे स्वर में फ्रांसीसी भाषा में कहा : "वह हमारे गोदाम-मैनेजर जिनेन्को की कन्या है।"

क्वाशनिन ने धीरे से अपना सर हिलाया। शेलकोवनिकोव ने अपनी रिपोर्ट का टूटा हुआ सिलसिला दोबारा जोड़ा ही था कि क्वाशनिन ने एक बार फिर उसे बीच में टोक दिया।

"जिनेन्को ?" खिड़की के बाहर देखता हुआ वह गुनगुनाया, "कौन जिनेन्को ? क्या पहले मैंने कभी उसका नाम सुना है ?"

"वह हमारे गोदाम का मैनेजर है।" शेलकोवनिकोव ने आदरपूर्वक पुनः वही वाक्य दोहरा दिया। इस बार उसके स्वर से "जिनेन्को" के नाम के प्रति गहरी उदासीनता का भाव टपक रहा था।

"अरे हां, याद आया। पीटर्सबर्ग में किसी ने उसका जिक्र मुझसे किया था। अच्छा, आप अपनी बात जारी रखिए।" क्वाशनिन ने कहा।

क्वाशनिन की भाव-मुद्रा देखकर नीना की नारीगत-प्रखर बुद्धि से यह छिपा न रह सका कि वह उसकी ओर देखता हुआ उसी के सम्बंध में बातचीत कर रहा है। वह तनिक पीछे हट गयी, किन्तु क्वाशनिन की आंखें अब भी नीना पर टिकी थीं और वह उसके खुशी से मुस्कराते गुलाबी कपोलों को देख रहा था, जिस पर छोटे-छोटे सुन्दर तिल चमक रहे थे।

आखिर रिपोर्ट समाप्त हुई और क्वाशनिन गाड़ी के दूसरे छोर पर शीशे के बने चौड़े खुले कम्पार्टमैन्ट में चला गया।

बोबरोव ने मन-ही-मन सोचा कि यदि उसके पास एक बढ़िया कैमरा होता, तो वह इस दृश्य को हमेशा के लिए चित्रित कर लेता। क्वाशनिन शीशे के पीछे किसी कारणवश खड़ा था। उसका भारी-भरकम शरीर डब्बे के दरवाजे के पास जमा भीड़ के ऊपर पहाड़ सा प्रतीत हो रहा था। उसका चेहरा खिन्न और क्लान्त था और अपनी टांगों को फैलाकर खड़ा हुआ वह एक भद्दा जापानी बुत-सा लग रहा था। उसकी नितान्त निश्चल और भावहीन मुद्रा ने उन लोगों की आशाओं पर तुषारपात कर दिया जो बड़े अरमान बांध कर

उससे मिलने आये थे। क्वाशनिन के सम्मुख उनकी हीन-भावना भय में परिणत हो गयी, और जो मुस्कराहट वे अपने होठों पर सजा कर लाये थे, वह धीरे-धीरे मुरझाने लगी। कुछ देर पहले जो कन्डक्टर तेजी से इधर-उधर घूम-फिर रहे थे, अब सैनिक-मुद्रा में काठ के पुतलों के समान दरवाजे के दोनों ओर कतार बांधकर जड़वत खड़े थे। बोबरोव ने जब नीना के चेहरे पर भी वही हीन मुस्कराहट देखी, जो उसने दूसरों के चेहरों पर देखी थी, तो उसके हृदय में एक टीस उठी। नीना उसी तरह भयातुर आंखों से क्वाशनिन की ओर देख रही थी, जैसे एक असभ्य जंगली अपने देवता की मूर्ति की ओर देखता है।

"क्या लोगों की यह प्रतिक्रिया क्वाशनिन की तीन लाख रूबल की आमदनी के प्रति आदरपूर्ण किन्तु सर्वथा तटस्थ और निर्वैयक्तिक आश्चर्य भावना की ही अभिव्यक्ति है? यदि ऐसा है तो ये लोग इस आदमी के सामने कुत्तों की तरह क्यों दुम हिलाते हैं, जब कि यह उनकी ओर ताकता तक नहीं?" बोबरोव ने सोचा। "कदाचित् यह हीन-भावना का कोई ऐसा अनबूझा, अनजाना मनोवैज्ञानिक नियम है, जो सब लोगों पर अपना असर दिखा रहा है?"

कुछ देर ऊपर खड़े रहने के बाद क्वाशनिन अपनी तोंद हिलाता हुआ सीढ़ियों से नीचे उतरा। उसके पीछे-पीछे उसको सहारा देते हुए सेवकों का झुंड चल रहा था।

भीड़ दो भागों में बंट गयी और क्वाशनिन के लिए रास्ता साफ हो गया। लोगों के अभिवादन के उत्तर में वह केवल लापरवाही से सिर हिलाता जाता था। आखिरकार उसने अपना निचला मोटा होंठ बाहर निकाल कर, नकियाते हुए कहा: "सज्जनो, अब आप जा सकते हैं—कल आप से फिर मुलाकात होगी।"

स्टेशन के गेट पर पहुंचने से पूर्व उसने मैनेजर को अपने पास बुलाया।

"तुम मेरा परिचय उस आदमी से करवा देना।" क्वाशनिन ने दबे स्वर में कहा।

"आपका मतलब जिनेन्को से है?" शेलकोवनिकोव ने अनुगृहीत होकर पूछा।

"जी हां, उससे नहीं तो और किससे?" क्वाशनिन क्रोध से गुर्रा उठा। फिर अचानक झुंझलाकर उसने कहा, "अरे, यहां नहीं!" मैनेजर जाने के लिए उद्यत हुआ ही था कि क्वाशनिन ने उसके कोट की आस्तीन पकड़ ली। "यहां नहीं, मिल में..."

सात

कार्यक्रम के अनुसार यह निश्चित हुआ था कि क्वाशनिन के आगमन के चार दिन बाद भट्टी चालू की जाएगी और उसी समय नई इमारतों का शिलान्यास-समारोह भी सम्पन्न होगा। उस सुअवसर के लिए अभी से व्यापक पैमाने पर धूमधाम से तैयारियां आरम्भ हो गयी थीं। क्रुतोगोरी, वोरोनिनो और ल्वोवो शहरों में स्थित लोहे और इस्पात के कारखानों के लिए निमंत्रण-पत्र भी रवाना कर दिये गये थे।

क्वाशनिन के बाद पीटर्सबर्ग से संचालक-मंडल के दो अन्य सदस्य, चार बेल्जियन इंजीनियर और कुछ बड़े-बड़े भागीदार भी आये। खबर थी कि संचालक-मंडल ने उत्सव-भोज का आयोजन करने के लिए लगभग दो हजार रूबलों की रकम निर्दिष्ट की है। किन्तु इस अफवाह की पुष्टि अभी तक नहीं हुई थी और फिलहाल बेचारे ठेकेदारों पर ही खाने-पीने की सामग्री जुटाने की जिम्मेदारी आ पड़ी थी।

आखिर उत्सव-दिवस आ पहुंचा। पतझड़ के आरम्भ का वह दिन बहुत मनोरम था। गहरा नीला आकाश और नशीली मदिरा सी मादक, मदमाती हवा! इस्पात बनाने की भट्टी और आग फूंकने की नयी धोंकनी स्थापित करने के लिए चौकोर गढ़े खोद दिये गये थे, जिनके इर्द-गिर्द अर्ध-चन्द्राकार बनाकर मजदूरों की भीड़ जमा थी। लोगों की इस जीती-जागती दीवार के बीच में गढ़े के किनारे एक मामूली सी मेज रखी थी, जिस पर सफेद मेज-पोश बिछा हुआ था। मेज पर बाइबल, क्रॉस और पवित्र-जल से भरा टीन का एक कटोरा रखा था। पास ही पानी छिड़कने की एक बोतल थी। कुछ दूरी पर पादरी खड़ा था। उसने हरे रंग का चोगा पहन रखा था जिस पर कसीदा किये गये सुनहरे 'क्रॉस' चमक रहे थे। प्रार्थना और भजन गाने के लिए पादरी के पीछे पन्द्रह मजदूर खड़े थे। अर्ध-चन्द्राकार के सामने लगभग दो सौ व्यक्तियों की कसमसाती भीड़ एकत्र थी, जिसमें इंजीनियर, ठेकेदार, ऊंचे दर्जे के फोरमैन, क्लर्क आदि शामिल थे। पास ही एक छोटे से टीले पर एक फोटोग्राफर अपने सर को काले कपड़े से ढंककर कैमरे से उलझ रहा था।

दस मिनट बाद, एक सुन्दर बग्गी में बैठकर क्वाशनिन वहां पहुंचा, जिसमें भूरे रंग के बढ़िया घोड़े जुते थे। बग्गी में क्वाशनिन अकेला बैठा था। कोई दूसरा व्यक्ति साथ बैठना भी चाहता तो संभव न था क्योंकि क्वाशनिन की स्थूल काया ने सारी सीट घेर रखी थी। उसकी बग्गी के पीछे पांच-छ: अन्य गाड़ियां सरपट भागी चली आ रही थीं। क्वाशनिन की वेश-भूषा और हाव-भाव को देखते ही मजदूरों ने स्वत: यह अनुमान लगा लिया कि वह "मालिक"

है। सब ने मिलकर एक साथ अपनी टोपियां उतार लीं। क्वाशनिन ने पादरी को देखकर अपना सिर हिलाया और अकड़ता हुआ मजदूरों के सामने से निकल गया।

क्वाशनिन के आगमन से जो सन्नाटा छा गया था, उसे पादरी की कर्कष, नकियाती हुई आवाज ने तोड़ा। वह बहुत विनम्र, विनीत भाव से गा रहा था : "हे प्रभु ! तेरी महिमा अपरमपार है !"

"आमीन," भजन-मंडली के मजदूरों ने सुर-से-सुर मिलाकर एक आवाज में कहा।

तीन हजार मजदूरों ने उसी तरह एक साथ मिलकर सलीब का चिन्ह बनाया, जिस तरह उन्होंने क्वाशनिन का अभिवादन किया था। फिर उन्होंने अपना सिर नीचे झुकाया, ऊपर उठाया और झटके के साथ अपने बालों को पीछे समेट लिया। बोबरोव ध्यान से उन्हें देखता रहा। अगली दो पंक्तियों में राजगीर गम्भीर मुद्रा बनाये खड़े थे। वे सब-के-सब सफेद चोगे पहने थे। लगभग सभी के बाल सनी के रंग के थे और दाढ़ियां लाल थीं। उनके पीछे लोहा गलाने और ढालनेवाले मजदूर फ्रांसीसी और अंग्रेज मजदूरों की तरह गहरे नीले रंग के ढीले-ढाले ब्लाऊज पहनकर खड़े थे। उनके चेहरों पर लोहे की धूल की परतें जमी थीं जिन्हें पानी से साफ करना असम्भव था। उनकी पांतों में टेढ़ी-लम्बी नाक वाले कुछ विदेशी मजदूर भी दिखायी देते थे। लोहा गलाने और ढालनेवाले मजदूरों के पीछे चूने की भट्टियों में काम करनेवाले मजदूरों की झलक भी मिल जाती थी। उनकी लाल सुर्ख और सूजी हुई आंखों से, तथा चूने की गर्द से सने हुए चेहरों से उन्हें आसानी से पहचान लिया जा सकता था।

"हे मां ! हर विपत्ति से हमें मुक्ति दिला, हम तेरे दास हैं !" जब कभी भजन-मंडली के ये शब्द मजदूरों के कानों में पड़ते, उनके हाथ सलीब का चिन्ह बनाने के लिए उठ जाते और तीन हजार सिर श्रद्धा से नीचे झुक जाते। समूची भीड़ में एक कोमल सी सरसराहट दौड़ जाती। बोबरोव को यह दृश्य देखकर ऐसा प्रतीत हुआ मानो एक अज्ञात, आदिम शक्ति ने भीड़ के हर आदमी को आलोड़ित कर दिया है। इतने विशाल जन-समुदाय की इस सामूहिक-प्रार्थना से एक निरीह, निश्छल अबोधता झलकती थी, जिसने उसके मर्मस्थल को छू लिया। कल यही लोग बारह घंटे तक मेहनत-मशक्कत में पिसते रहेंगे। कौन जानता है कि कल इनमें से किसी को इस मेहनत की कीमत अपनी जान देकर चुकानी पड़ जाए—किसी ऊंची मचान से नीचे गिर पड़े, पिघलती हुई धातु से शरीर झुलस जाए अथवा वह टूटे हुए पत्थरों और ईंटों के ढेर के नीचे आकर दफन हो जाये ? उनका काम ही ऐसा था, जो हर समय किसी

भी मजदूर को मृत्यु के जबड़ों में फेंक सकता था। आज जब भजन-मंडली परम जगत-माता से अपने दासों को विपत्तियों से मुक्ति दिलाने के लिए प्रार्थना कर रही है, तो क्या ये लोग नीचे झुकते और अपने सफेद बालों को समेटते हुए संयोगवश अपनी नियति की क्रूर अनिवार्यता के सम्बंध में ही तो नहीं सोच रहे ? ये विनीत, विनम्र श्रम-वीर, जो हर रोज अपनी अंधेरी, सीलन भरी झोपड़ियों से निकलकर अदम्य साहस और धैर्य का परिचय देते हुए खून पसीना एक करते हैं, जो बच्चों की तरह निडर और निश्छल है, वर्जिन मेरी को नहीं, तो और किसे अपनी आस्था अर्पित कर पायेंगे ?

यही सब कुछ बोबरोव सोच रहा था। जब तक वह अपने विचारों को काव्यात्मक प्रतीकों और चित्रों में अनूदित न कर लेता, उसे चैन नहीं पड़ती थी; और हालाकि अर्से से उसकी प्रार्थना करने की आदत छूट गयी थी, किन्तु जब कभी पादरी की मद्धम कर्कश आवाज के बाद उसे भजन-मंडली का सुमधुर सामूहिक स्वर सुनायी देता, तो अनायास उसके शरीर का अंग-अंग रोमांचित हो उठता था। ये लोग सीधे-सादे साधारण मजदूर थे, जो दूर-सुदूर इलाकों से अपना घरबार त्याग कर इस कठिन, जान-जोखिम के काम पर आ जुटे थे। यही कारण था कि उनकी प्रार्थना में साहस, विनय और आत्म-बलिदान के मार्मिक स्वर ध्वनित हो रहे थे।

प्रार्थना समाप्त हो गयी। क्वाशनिन ने लापरवाही से सोने का एक सिक्का गढ़े में फेंक दिया, किन्तु नीचे झुककर फावड़ा चलाना उसके बस की बात न थी। सो शेलकोवनिकोव ने यह काम पूरा कर दिया। उसके बाद वे लोग उन भट्टियों की ओर चल पड़े, जिनके काले बुर्ज पत्थरों की नींव पर आकाश में सिर उठाये खड़े थे।

नव-निर्मित पांचवी भट्टी, कारीगरों की शब्दावली में पूरे 'गर्जन-तर्जन' के साथ चल रही थी। धरती से तीस इंच ऊपर भट्टी में सूराख कर दिया गया था, जिसमें से पिघली हुई धातु की गर्म भभकती धारा गन्धक की नीली लपटें फेंकती हुई बाहर निकल रही थी। भट्टी के खड़े पेंदे के सहारे बड़े-बड़े कड़ाहे टिके थे, जिनमें धातु की पिघलती धारा एक ढलुवां नली से बहकर हरे रंग की ठोस वस्तु में जम जाती थी, जो देखने में जौ की खांड सी लगती थी। भट्टी की छत पर खड़े मजदूर उसके मुंह में बराबर कोयला और कच्ची धातु झोंकते जाते थे, जिन्हें ट्रालियों में भर-भरकर हर मिनट ऊपर पहुंचाया जा रहा था।

पादरी ने भट्टी के चारों ओर पवित्र जल का छिड़काव किया और फिर एक वृद्ध व्यक्ति की भांति लड़खड़ाते पैरों पर वहां से चल दिया। भट्टी का फोरमैन एक हृष्ट-पुष्ट, काले चेहरे वाला बूढ़ा था। उसने सलीब का चिन्ह

बनाया और अपनी हथेलियों में थूककर उन्हें रगड़ने लगा। उसके चार सहायकों ने भी उसका अनुकरण करते हुए यही सब कुछ किया। उसके बाद उन्होंने इस्पात का एक लम्बा छड़ उठाया, देर तक उसे आगे-पीछे झुलाते रहे, फिर सहसा एक जबरदस्त धक्के के साथ उसे भट्टी के सबसे निचले भाग में घुसेड़ दिया। लोहे का छड़ भट्टी के डट्टे के साथ टकराया। दर्शकों ने घबराकर आंखें मूंद लीं और उनमें से कुछेक तो डर के मारे कुछ कदम पीछे हट गये। उन पांचों आदमियों ने मिलकर दूसरा, तीसरा, चौथा प्रहार किया, और सहसा पिघली हुई धातु की एक सफेद चमचमाती धार उस छिद्र से उफनती हुई फूट पड़ी, जो इस्पात के छड़ के प्रहारों से भट्टी के निचले भाग में बन गया था। फोरमैन ने छड़ को घुमाते हुए उस छेद को और अधिक चौड़ा कर दिया। पिघला लोहा धीरे-धीरे छेद से बाहर निकलता हुआ रेत पर बह चला और गहरा गेरुवा रंग पकड़ने लगा। छिद्र से अंगारे पट-पट करते हुए हवा में उलछते थे और क्षण भर के लिए आंखों को चौंधिया कर गायब हो जाते थे। भट्टी से पिघली हुई धातु बहुत धीमी गति से बाहर निकल रही थी, फिर भी उससे आसपास का वातावरण इतना उत्तप्त हो उठा कि अनभ्यस्त दर्शक अपने चेहरों को हाथों से ढांपकर पीछे हटते चले गये।

भट्टियों को पीछे छोड़कर इंजीनियरों के दल ने धौंकनी-विभाग की ओर अपना रुख किया। विशालकाय कारखाने के हर विभाग में कितने जोर-शोर से काम हो रहा है, यह बात क्वाशनिन मिल के भागीदारों के दिलों में अच्छी तरह बिठा देना चाहता था। उसने इस बात का बिल्कुल ठीक-ठीक अनुमान लगाया था कि इन महानुभावों के दिमागों पर इन तमाम दृश्यों का इतना जबरदस्त असर पड़ेगा कि बाद में वे कम्पनी के भागीदारों की आम सभा के सम्मुख रिपोर्ट पेश करते समय प्रशंसा के पुल बांध देंगे। व्यवसायी-वर्ग की मनोवृत्ति और मानसिक रुझानों का उसे गहरा अनुभव था। उसे इस बात का पूरा भरोसा था कि इतनी बढ़िया रिपोर्ट सुनने के बाद भागीदारों की आम सभा बाजार में नये शेयर चालू करने के लिए तैयार हो जाएगी जिसके लिए वह अभी तक आनाकानी करती रही थी, और, इस तरह, वह लाखों का मुनाफा बटोर सकेगा।

और सचमुच मिल के भागीदार प्रभावित हुए बिना न रह सके, यहां तक कि थकान के मारे उनकी टांगें लड़खड़ाने लगीं और सिर दर्द से फटने लगा। धौंकनी-विभाग में पन्द्रह फीट लम्बे लोहे के चार खड़े पिस्टनों के द्वारा हवा को नलियों में खींचा जा रहा था, जिसकी तुमुल, कर्णभेदी गड़गड़ाहट से इमारत की पत्थर की दीवारें थर्रा उठती थीं। लोहे की इन विशालकाय नलियों का घेरा लगभग दस फीट था। हवा इन नलियों में से गुजर कर

गर्म भभकते चूल्हों में जाती थी जहां जलती हुई गैसों के स्पर्श से उसका तापमान एक हजार डिग्री तक बढ़ जाता था और फिर उसके बाद वह भट्टियों में घुसकर अपनी गर्म धधकती सांसों से कच्ची धातु और कोयले को मोम की तरह पिघला देती थी। धौंकनी-विभाग का संचालक एक इंजीनियर था जो वहां खड़े-खड़े शुरू से आखीर तक सभी प्रक्रियाओं को समझा रहा था। वह हर भागीदार के पास जाता और उसके कान के पास मुंह ले जाकर अपने फेफड़ों का पूरा जोर लगाकर चिल्लाता। किन्तु मशीनों की भीषण घड़घड़ाहट में उसके शब्द डूब जाते थे और ऐसा लगता था मानो वह बिना कोई आवाज निकाले योंही चुपचाप अपने होठों को चला रहा हो।

उसके बाद शेलकोत्रनिकोव अपने अतिथियों को उन भट्टियों के पास ले गया जहां सांचे में ढले लोहे को पिघलाकर तरल पदार्थ में परिणत किया जाता था। भट्टियों का यह ओसारा इतना लम्बा था कि उसका दूसरा सिरा एक धुंधले, छोटे से छिद्र के समान लगता था। ओसारे की एक दीवार के साथ-साथ पत्थर का एक चबूतरा छोर तक चला गया था, जिस पर बिना पहियों के रेल के डब्बों के आकार की बीस भट्टियां खड़ी थीं। इन भट्टियों में पिघले हुए लोहे को कच्ची धातु के साथ मिलाकर इस्पात में परिणत किया जाता था, जो नलियों में से बहता हुआ लोहे के ऊंचे सांचों में चला जाता था। ये सांचे हैंडल लगे हुए बिना पेंदे के डब्बों के समान दिखायी देते थे। हर सांचे में इस्पात के पिंड जम जाते थे। प्रत्येक पिंड का वजन इक्कीस मन के लगभग हो जाता था। ओसारे के दूसरी ओर रेल की पटरियां बिछी थीं जिन पर भाप द्वारा संचालित भार ढोनेवाले यंत्र अपने चौड़े, लचकीले धड़ों को लिए घर्घराते, फूत्कारते और खड़खड़ाते हुए पालतू और फुर्तीले जानवरों की तरह ऊपर-नीचे जा रहे थे। कभी कोई क्रेन किसी सांचे को हैंडल से पकड़ कर उठा लेता और तभी उसके नीचे से इस्पात का लाल-सुर्ख चमकता हुआ दंड ढुलक पड़ता। किन्तु दंड के फर्श पर गिरने के पहले ही एक मजदूर असाधारण फुर्ती से कलाई जितनी मोटी जंजीर उसके इर्द-गिर्द बांध देता। फिर दूसरा क्रेन जंजीर को कांटे में अटकाकर इस्पात के दंड को अपने संग घसीट ले जाता और तीसरे क्रेन से जुड़े हुए चबूतरे पर दूसरे दडों के साथ उसे भी फेंक देता। तीसरा क्रेन सारे सामान को ढोता हुआ ओसारे के दूसरे सिरे पर ले जाता जहां चौथा क्रेन कांटे के बजाय संडसे द्वारा लोहे के दंडों को उठाकर फर्श के नीचे बनी हुई गैस की भट्टियों में डाल देता। अन्त में पाचवां क्रेन आग में तपे हुए उन दंडों को भट्टियों से निकालकर उन्हें बारी-बारी से तीक्ष्ण दांतोंवाले एक पहिये के नीचे डाल देता। तिर्छी धुरी पर भीषण गति से घूमता हुआ यह पहिया लोहे के मोटे दंडों को कुछ क्षणों में

ही मक्खन के समान काटकर दो टुकड़ों में बांट देता। फिर इन टुकड़ों पर पच्चीस हजार पौंड भारी वाष्प-संचालित हथौड़े की मार पड़ती, जो पलक मारते इस तरह उनके टुकड़े-टुकड़े कर देता मानो वे लोहे के न होकर कांच के बने हों। पास खड़े हुए मजदूर तेजी से उन टुकड़ों को ट्रॉलियों में भरकर उन्हें ढकेलते हुए दौड़ जाते। जो भी रास्ते में पड़ता, लाल गर्म लोहे से उड़ती हुई गरम हवा की लपट उसे झुलसा जाती।

उसके बाद शेलकोवनिकोव अपने अतिथियों को उस कारखाने में ले गया जहां रेल की पटरियां बनायी जाती थीं। लाल गर्म धातु का एक लम्बा कुन्दा एक रोलर से दूसरे रोलर पर फिसलता हुआ अनेक मशीनों के भीतर से गुजर रहा था। ये रोलर फर्श के नीचे घूम रहे थे और केवल उनका ऊपरी भाग ही दिखायी देता था। विपरीत दिशाओं में घूमते हुए इस्पात के दो बेलनों के बीच में फंसकर यह कुंदा उन्हें जबरन अलग कर देता था, जिसके कारण रोलर तनकर कांपने लगते थे। कुछ दूर पर एक और मशीन थी जिसके बेलनों के बीच का फासला और भी कम था। एक मशीन से दूसरी मशीन में जाता हुआ यह कुंदा उत्तरोत्तर अधिक लम्बा और पतला बनता जाता था। लोहे का यह कुंदा कारखाने के चारों ओर ऊपर-नीचे कई बार चक्कर काट लेने के बाद सत्तर फीट लम्बी तपी हुई गर्म रेल की पटरी की शक्ल अख्तयार कर लेता था। यहां कुल मिलाकर पन्द्रह मशीनें थीं, जिनके संचालन का दुरूह और पेचीदा काम केवल एक व्यक्ति के हाथों में था। वाष्प-इंजन के ऊपर एक ऊंचे चबूतरे पर खड़ा रहकर वह सब कार्रवाईयों की देखभाल करता था। वह हैंडल खींचता तो तुरंत सब रोलर और बेलन एक दिशा में घूमने लगते। जब वह उसे दबा देता तो वे दूसरी दिशा में पलटकर घूमने लगते। जब लोहे की पटरी को निश्चित लम्बाई तक खींच लिया जाता, तब एक गोल आरा कर्णभेदी चीत्कार के साथ सुनहरी चिंगारियां उड़ाता हुआ उसे तीन भागों में काट देता।

अब वे लोग खराद के कारखाने में आये। यहां अधिकतर इंजन और रेल के डब्बों के पहिये तैयार किये जाते थे। छत के एक छोर से दूसरे छोर तक इस्पात की एक शहतीर लगी हुई थी, जिस पर घूमती हुई चमड़े की पेटियां विभिन्न आकार-प्रकार की दो-तीन सौ मशीनों को चलाती थीं। छत की शहतीर से मशीनों को जोड़ती हुई इन पेटियों का ऐसा ताना-बाना बिछा था मानो एक ही उलझा और कांपता हुआ जाल हो। कुछ मशीनों के पहिये इतनी तेजी से घूम रहे थे कि वे एक क्षण में बीस चक्कर लगा लेते थे, और कुछ मशीनों के पहियों की गति इतनी धीमी थी कि पता भी न चलता था। इस्पात, लोहे और पीतल की पतली वर्तुलाकार कतरनें चारों ओर बिखरी

पड़ी थीं। एक ओर सूराख बनानेवाली मशीनें चल रही थीं, जिनकी कर्कश आवाज कानों के परदे फाड़े डालती थी। ढिबरियां बनानेवाली मशीन भी अतिथियों को दिखलायी गयी। देखकर लगता था मानो इस्पात के दो भारी-भरकम जबड़े भीतर-ही-भीतर धीरे-धीरे कोई चीज चबा रहे हों। दो मजदूर लोहे की एक गर्म सलाख उस मशीन में डालते थे और वह उसे काट-काटकर बनी-बनायी ढिबरियों के रूप में बाहर उगल देती थी।

जब वे लोग खराद के कारखाने से बाहर आये, तो शेलकोवनिकोव ने, जो मिल के भागीदारों को बड़ी तत्परता से अब तक सारी बातें समझाता आ रहा था, प्रार्थना की कि वे नौ सौ हार्स-पावर का "कम्पाऊन्ड" — जो मिल की सबसे शानदार मिल्कियत थी — देखने चलें। किन्तु पीटर्सबर्ग से आये हुए महानुभाव अब तक इतना कुछ देख-सुन चुके थे कि थकान के कारण एक कदम भी आगे चलना उनके लिए मुहाल था। किसी भी नयी वस्तु को देखकर उत्सुकता की अपेक्षा अब उन्हें ऊब और थकान ही होती थी। रेल की पटरियों के कारखाने के गरम वातावरण से उनके चेहरे तमतमा गये थे और उनके हाथों और कपड़ों पर कालिख जम गयी थी, इसलिए जब मैनेजर ने उनसे "कम्पाऊन्ड" देखने की प्रार्थना की तो काफी रुखाई के साथ उन्होंने उसके निमंत्रण को स्वीकार किया और वह भी केवल इसलिए कि उन्हें मिल के उन बाकी भागीदारों की इज्जत का ख्याल था, जिनके प्रतिनिधि बनकर वे यहां आये थे।

"कम्पाऊन्ड" एक अलग साफ-सुथरी और सुन्दर इमारत में स्थित था— फर्श पर पच्चीकारी का काम, खुली हवादार खिड़कियां। भारी-भरकम होने पर भी "कम्पाऊन्ड" बहुत ही कम आवाज पैदा कर रहा था। तीस फीट लम्बी पिस्टनें लकड़ी के बक्सों में रखे सिलिन्डरों में द्रुतगति से अविराम चल रही थीं। बीस फीट व्यास का एक पहिया, जिसके ऊपर से बारह रस्सियां सरक रही थीं, बिना कोई आवाज पैदा किये तेजी से घूम रहा था। पहिये की प्रत्येक परिक्रमा के साथ कमरे में सूखी, गर्म हवा के झोंके फैल जाते थे। इस मशीन से धौंकनियों, रोलिंग-मिलों और खराद के कारखाने को बिजली हासिल होती थी।

"कम्पाऊन्ड" का निरीक्षण करने के बाद भागीदारों ने चैन की सांस ली और सोचा कि अब छुटकारा मिल जायगा। किन्तु शेलकोवनिकोव कब उनका पीछा छोड़नेवाला था। छूटते ही उसने एक नया सुझाव रख दिया : "महानुभावो, अब मैं आपको उस स्थान पर ले जाऊंगा, जो मिल का 'हृदय' अर्थात केन्द्र-स्थल है। वहां से मिल की तमाम कार्रवाईयों का संचालन होता है।"

वह वाष्प-बॉयलर गृह में उन्हें अपने पीछे-पीछे घसीटता ले गया। किन्तु अब तक वे जितना कुछ देख चुके थे, उसके बाद "मिल के हृदय-स्थल" ने उन्हें अधिक प्रभावित नहीं किया। वहां पर बेलन के आकार के पैंतीस फीट लम्बे और दस फीट ऊंचे बारह बॉयलर खड़े थे। बॉयलरों के बजाय अतिथियों का ध्यान भोजन पर अटका था। अब वे शेलकोवनिकोव से कोई प्रश्न नहीं पूछ रहे थे। उसकी टीका-टिप्पणियों को चुपचाप विरक्त-भाव से सुनकर केवल सिर हिला देते थे। जब वह उन्हें सब कुछ दिखा-सुना चुका, तो उन्होंने चैन की सांस ली और बाहर जाते हुए बड़े तपाक से शेलकोवनिकोव के साथ हाथ मिलाया।

वे लोग चले गये—केवल बोबरोव अकेला वहां बॉयलरों के सामने खड़ा रहा। अंधकार में डूबी पत्थर की गहरी खाई के किनारे पर खड़ा हुआ वह देर तक भट्टियों को देखता रहा, जहां कमर तक नंगे छः मजदूर जी-तोड़ काम कर रहे थे। वे लोग दिन-रात भट्टियों में कोयला झोंकते रहते थे। भट्टियों के लोहे के गोल दरवाजे जब-तब झपाटे के साथ खुल जाते और बोबरोव उनके भीतर आग की गरजती, लपलपाती लपटों को देख लेता। उन अर्ध-नग्न मजदूरों का शरीर आग की तपिश से मुरझा गया था और उनकी त्वचा पर कोयले की गर्द की काली परतें जम गयी थीं। जब वे झुकते तो उनकी पीठ की तमाम मांसपेशियां और रीढ़ की हड्डियां उभर आतीं। रह-रहकर उनके लम्बे कृशकाय हाथ फावड़ों में कोयला भर-भरकर एक तेज चुस्त हरकत के साथ भट्टियों के खुले द्वार के भीतर झोंक देते। ऊपर दो मजदूर बॉयलर गृह के चारों ओर खड़े कोयले के ऊंचे ढेरों से ताजा कोयला तोड़-तोड़कर नीचे गिराने में व्यस्त थे। भट्टियों में दिन-रात कोयला झोंकनेवाले मजदूरों का जीवन कितना अमानवीय, नीरस और भयावह है, बोबरोव ने सोचा। उन्हें देखकर लगता था मानो किसी दैवी शक्ति ने उन अभिशप्त मजदूरों को मुंह फाड़ती हुई भट्टियों के संग जीवन भर के लिए बांध दिया है। जो वहां से भागने की चेष्टा करेगा उसे तड़पा-तड़पाकर मार दिया जायगा। भट्टी ने मानो एक भयानक, भीमकाय राक्षस का रूप धारण कर लिया है, जिसकी अतृप्त जठराग्नि को शान्त करने के लिए मजदूरों को आजीवन, दिन-रात उसका पेट भरना पड़ता है।

"क्यों, अपने मलोच को मोटा होते हुए देख रहे हो?" बोबरोव को अपने पीछे से किसी की खुशी में भरी आवाज सुनायी दी।

वह चौंक उठा और खाई में गिरते-गिरते बाल-बाल बचा। कुछ ऐसा विचित्र संयोग हुआ कि जो बात डॉक्टर ने अभी-अभी मजाक में कही थी, वही बात भट्टी के सम्मुख खड़े-खड़े बोबरोव के मस्तिष्क में भी आ रही थी।

प्रकृतस्थ होने के काफी देर बाद तक वह इस विचित्र संयोग पर आश्चर्य करता रहा। जब कभी वह किसी विषय के सम्बंध में पढ़ या सोच रहा होता और संयोगवश कोई अन्य व्यक्ति उसके संग अचानक उसी विषय के सम्बंध में चर्चा छेड़ देता, तो उसे यह अत्यंत रहस्यमय बात लगती और वह विस्मित हो उठता।

"माफ करना मेरे भाई, लगता है मैंने तुम्हें डरा दिया।"

"हां, कुछ घबराहट जरूर हुई। घबराने की बात भी थी, तुम इतने चुपके से जो चले आये।"

"आन्द्रेइलिच, तुम्हारा कलेजा बहुत कमजोर हो गया है। तुम्हें अपनी सेहत का ख्याल रखना चाहिए। मेरी राय मानो तो कुछ महीनों की छुट्टी ले लो और देश के बाहर कहीं जाकर आराम करो। यहां पड़े-पड़े व्यर्थ की चिन्ताओं में घुलते रहने में क्या तुक है? छः महीने तक कहीं मौज उड़ाओ, अच्छी शराब पियो, घुड़सवारी करो और मोहब्बत के खेल में अपना हाथ आजमा देखो।"

डॉक्टर भट्टी की खाई के पास गया और किनारे पर खड़ा होकर नीचे झांकने लगा।

"अरे, यह तो दोजख की आग है!" वह चिल्लाया। "इन केतलियों का कितना वजन होगा? मेरे विचार में पन्द्रह टन से तो क्या कम होंगी?"

"नहीं, कुछ ज्यादा है। पच्चीस टन से ऊपर।"

"अंह! और अगर इनमें से कोई अचानक फट जाए, तो...तो अजीब तमाशा होगा, क्यों?"

"जरूर होगा डॉक्टर। सम्भव है ये सारी बड़ी-बड़ी इमारतें धूल में लोटती नजर आएं।"

गोल्डबुर्ग ने अपने सिर को धीरे से हिलाया और भेदभरी मुद्रा में सीटी बजाने लगा।

"अच्छा, यह तो बताओ, किन कारणों से ऐसा विस्फोट हो सकता है?"

"कारण तो अनेक हैं, किन्तु अक्सर एक ही कारण से ऐसी दुर्घटना होती है। जब बॉयलर में पानी कम रह जाता है तो उसकी दीवारें तपने लगती हैं, और धीरे-धीरे गर्म होती हुई लाल सुर्ख हो जाती हैं। यदि उस समय बॉयलर में कोई जल डाल दे तो उसके भीतर इतनी अधिक भाप इकट्ठा हो जायगी कि दीवारें उसका दबाव बर्दाश्त न कर पायेंगी और बायलर फट जायगा।

"तो क्या ऐसा जान-बूझकर भी किया जा सकता है?"

"क्यों नहीं। जब चाहो तभी किया जा सकता है। करके देखोगे ? जब गॉज में पानी बहुत कम मात्रा में बहने लगे, तो वह जो छोटा गोल सा लीवर है न ? उसे घुमा दो। बस इतना ही काफी है।"

बोबरोव मजाक कर रहा था। किन्तु उसकी आवाज विचित्र रूप से गम्भीर थी, और उसकी आंखें कठोर और पीड़ायुक्त हो गई थीं।

"भगवान जाने," डॉक्टर ने मन में सोचा, "आदमी तो नेक है, लेकिन इसके दिमाग में कहीं जरूर कुछ गड़बड़ी है।"

"तुम अपने अतिथियों के साथ भोजन के लिए क्यों नहीं गये, आन्द्रे-इलिच ?" डॉक्टर ने खाई से पीछे हटते हुए पूछा। "सुना है, प्रयोगशाला को उन्होंने शरद ऋतु की वाटिका में परिणत कर लिया है—कम-से-कम तुम वही देखने चले जाते। भोज का आयोजन उन्होंने जिस तड़क-भड़क के साथ किया है, वह तो बस देखते ही बनता है।"

"भाड़ में जाए उनका भोज-बोज। मुझे तो इंजीनियरों द्वारा आयोजित ये भोज-समारोह एक आंख नहीं भाते।" बोबरोव ने मुंह बिचकाकर कहा। "सब लोग अपने मुंह मियां मिट्ठू बनते हैं, चिल्लाते हैं, घिघियाते हैं और फिर नशे में धुत होकर एक-दूसरे के नाम पर जाम पीते हैं। आधी शराब गले के नीचे उतरती है, तो आधी कपड़ों पर ही छलक जाती है। उफ ! मुझे तो घिन्न आती है।"

"हां, तुम ठीक ही कहते हो," डॉक्टर ने हंसते हुए कहा। "भोज के आरम्भ में मैं वहां मौजूद था। क्वाशनिन अपने रंग में था। 'सज्जनो,' उसने भाषण देते हुए कहा, 'समाज में इंजीनियरों का धंधा बड़ा ही आदरणीय और महत्वपूर्ण माना जाता है। देश के कोने-कोने में रेलों, भट्टियों और खानों के निर्माण के अलावा वह दूर-दूर तक शिक्षा के बीज, सभ्यता के फूल और ...' इसके बाद उसने कुछ फलों का उल्लेख किया, जिनके नाम मुझे याद नहीं रहे। एक नम्बर का काइयां आदमी है यह क्वाशनिन ! कहने लगा, 'आओ, हम सब मिल-जुलकर अपनी उपयोगी कला के पवित्र झंडे को ऊंचा उठाएं।' भारी करतल ध्वनि से उसके भाषण का स्वागत किया गया।"

वे चुपचाप कुछ कदम आगे चले। अचानक डॉक्टर के चेहरे पर एक छाया सी घिर आयी।

"उपयोगी कला !" उसने क्रोध में भरकर कहा। "मजदूरों के बैरक गली-सड़ी लकड़ी की चिप्पियों से बने हैं। मरीजों का कोई अन्त नहीं और बच्चे मक्खियों की तरह मरते हैं। क्या यही शिक्षा के बीज हैं ? और अभी तो इन्हें आगे पता चलेगा। इवानकोवा में टॉयफायड की महामारी को फैल जाने दो, तब इनकी आंखें खुल जाएंगी।"

"क्या कहते हो डॉक्टर ! तुम्हारे पास टॉयफॉयड के कुछ केस आये हैं क्या ? मजदूरों की बैरकें जिस प्रकार ठसाठस भरी हैं, उससे तो खौफनाक हालत पैदा हो जाएगी।"

डॉक्टर सांस लेने के लिए रुक गया।

"और तुम क्या सोच रहे हो ?" उसके स्वर में कड़वाहट भरी थी। "कल ही दो मरीज मेरे पास लाये गये थे। एक आज सुबह चल बसा और दूसरा, यदि अब तक नहीं मरा, तो आज रात तक जरूर दम तोड़ देगा। दवाई, बिस्तरे, होशियार नर्सें—हमारे पास कुछ भी नहीं है। घबराओ नहीं, इसका मूल्य उन्हें चुकाना पड़ेगा।" उसने गुस्से में घूसा तान लिया मानो किसी अदृश्य व्यक्ति पर प्रहार करने जा रहा हो।

आठ

लोगों ने तरह-तरह की बातें करना शुरू कर दिया था। मिल में ऐसे चटपटे किस्से क्वाशनिन के आगमन के पूर्व ही मशहूर थे कि जिनेन्को परिवार के साथ उसकी आकस्मिक घनिष्टता का भेद किसी से छुपा न रहा। स्त्रियां जब इस विषय का जिक्र छेड़तीं तो उनके होठों पर एक विचित्र, भेदभरी मुस्कान खेल जाती। पुरुष जब आपस में बातचीत करते, तो बिना लागलपेट के खरीखरी सुनाते। किन्तु निश्चित रूप से किसी को कुछ पता नहीं था। सब लोग किसी दिलचस्प, चटपटे समाचार को सुनने के लिए आतुर हो रहे थे।

ये अफवाहें बिलकुल काल्पनिक और निराधार हों, ऐसी बात नहीं थी। क्वाशनिन एक बार जिनेन्को परिवार से मिलने गया था, और तब से हर शाम उसने उन्हीं के घर डेरा लगाना शुरू कर दिया। रोज सुबह ग्यारह बजे भूरे रंग के घोड़ों की शानदार बग्गी शेपेतोवका के अहाते में आकर खड़ी हो जाती। कोचवान नीचे उतर कर रोज एक ही वाक्य दुहराता : "मालिक की यह प्रार्थना है कि श्रीमती जिनेन्को और उनकी पुत्रियां आज उनके संग नाश्ता करने की कृपा करें।" ऐसे अवसरों पर किसी अन्य अतिथि को निमंत्रित नहीं किया जाता था। नाश्ता और खाना एक फ्रांसीसी बावर्ची तैयार करता था, जो हमेशा क्वाशनिन के संग रहता और जिसे वह विदेश-यात्रा के समय भी अपने साथ रखता था।

क्वाशनिन हाल में ही जिनेन्को परिवार के सम्पर्क में आया था, किन्तु उसके सदस्यों के प्रति उसका बर्ताव-व्यवहार कुछ विचित्र, अनोखे ढंग का था। वह पांचों लड़कियों के संग ऐसे पेश आता मानो वह उनका कोई सहृदय, अविवाहित मामा हो। तीन ही दिनों के अन्दर-अन्दर वह उन्हें उनके प्यार

के नामों से बुलाने लगा था। साथ में वह उनका गोत्र-नाम भी जोड़ देता। सबसे छोटी लड़की आस्या की गदरायी ठुड्डी के नन्हे से गड्ढे को पकड़ कर वह उसे 'बच्ची' और 'छबीली' कहकर चिढ़ाता था। क्षोभ और शर्म के मारे बेचारी आस्या की आंखों में आंसू भर जाते, फिर भी वह उसका विरोध नहीं कर पाती थी।

अन्ना अफानास्येवना हंसी-हंसी में उसे उलाहना देती कि वह अपनी इन हरकतों से सब लड़कियों को बिगाड़ देगा। शायद यह बात ठीक भी थी। किसी के मुंह से कोई बात निकली नहीं कि क्वाशनिन झट उसे पूरा कर देता। बातों-ही-बातों में माका के मुंह से निकल गया कि वह साइकिल सीखने के लिए बहुत उत्सुक है। बस फिर क्या था, दूसरे ही दिन एक आदमी को खारकोव भेजकर माका के लिए नयी साइकिल मंगवा दी गयी। साइकिल की कीमत तीन सौ रूबल से कम नहीं थी। बेला को १० पाउन्ड मिठाई मिली क्योंकि एक छोटी सी बात पर क्वाशनिन उससे शर्त हार गया। एक दूसरी शर्त हार जाने के कारण उसने कास्या को एक रत्नजटित ब्रोच भेंट कर दी। कास्या के नाम के अक्षरों के अनुसार उस ब्रोच पर नीलमणि, मूंगा, सूर्यकान्तमणि और नीलम के रत्न जड़े थे। उसे पता चला कि नीना को घुड़सवारी करने का शौक है। दो दिन बाद ही एक असली नस्लवाली सुन्दर सजीली अंग्रेजी घोड़ी, जिसे खास तौर से स्त्रियों की सवारी के लिए सधाया गया था, नीना के सामने हाजिर हो गयी। पांचों बहनें क्वाशनिन की उदारता पर मंत्रमुग्ध सी हो गयीं। उन्हें लगा मानो बचपन के सपनों का कोई परीजाद आ गया है जो उनकी छोटी-से-छोटी इच्छा तुरंत पूरी कर देता है। क्वाशनिन की यह उदारता अन्ना अफानास्येवना को मन-ही-मन कुछ खटकती जरूर थी। किन्तु उसमें इतना साहस और चातुर्य नहीं था कि वह क्वाशनिन को सारी बात कुशलतापूर्वक समझा भी दे और वह बुरा भी न मनाए। जब कभी वह विनीत, खुशामद भरे स्वर में उसके अनुचित व्यवहार के प्रति हल्का सा विरोध प्रकट भी करती, तो क्वाशनिन लापरवाही से हाथ हिलाकर अपने कड़े, दृढ़ स्वर में उसकी आपत्ति को रफा-दफा कर देता: "अरे छोड़ो भी—क्यों जरा-जरा सी बातों पर नाहक परेशान होती हो।"

किन्तु उसने कभी किसी एक लड़की के प्रति अपनी विशेष रुचि का प्रदर्शन नहीं किया। वह सभी को खुश करने की चेष्टा करता, और बिना किसी मान-मर्यादा का ख्याल किये उनका मजाक उड़ाता। धीरे-धीरे जिनेन्को के घर अन्य युवकों का आना-जाना बन्द हो गया, किन्तु किसी अज्ञात कारण से स्वेजेवस्की अब वहां नियमित रूप से आने लगा। क्वाशनिन के [illegible] मिल के गोदाम पूर्व वह जिनेन्को के घर केवल दो-तीन बार आया था। व[illegible]

ऐसे चला आता था मानो कोई रहस्यमयी शक्ति उसे खींच लाती हो। किन्तु कुछ दिनों में ही वह परिवार के सब सदस्यों के लिए अनिवार्य सा बन गया।

किन्तु जिनेन्को के घर नियमित रूप से जाना आरम्भ करने के पूर्व स्वेजेवस्की को लेकर एक छोटी सी घटना घटी थी। पांच महीने पहले की बात है। एक दिन स्वेजेवस्की ने अपने दोस्तों से कहा कि वह एक-न-एक दिन अवश्य लखपति बन जाएगा और वह भी चालीस वर्ष की आयु से पहले-पहले।

"लेकिन कैसे ?" उन्होंने उससे पूछा।

स्वेजेवस्की ने रहस्यमयी मुद्रा में अपने दोनों लिसलिसे हाथों को रगड़ा और दांत निपोरते हुए कहा, "सब रास्ते एक ही मंजिल पर जाकर समाप्त होते हैं।"

जब क्वाशनिन शेपेतोवका नियमित रूप से जाने लगा, तो स्वेजेवस्की की चपल-चालाक बुद्धि ने समूची परिस्थिति को अच्छी तरह समझ लिया। उसे निश्चय हो गया कि इस अवसर का लाभ उठाकर वह अपने भावी जीवन की प्रगति के लिए मार्ग प्रशस्त कर सकता है। जो भी हो, इतना तो था ही कि कम-से-कम वह अपने सर्व शक्तिमान मालिक के काम तो आ ही सकता था। यही कारण था कि वह प्रति दिन जिनेन्को के घर जाकर क्वाशनिन की हाजरी बजाने लगा। एक खुशामदी चापलूस की तरह वह उसके इर्द-गिर्द हमेशा घूमता रहता। एक छोटा सा पिल्ला जिस प्रकार एक बड़े खूंखार कुत्ते के सामने दुम हिलाने लगता है; उसी प्रकार वह क्वाशनिन के सामने दिन-रात घिघियाता रहता। उसके स्वर और हाव-भाव से यह स्पष्ट प्रकट होता था कि क्वाशनिन का इशारा पाते ही वह कोई भी काम — चाहे वह कितना ही निकृष्ट और जघन्य क्यों न हो — करने के लिए तैयार हो जाएगा।

क्वाशनिन स्वेजेवस्की के इस व्यवहार का बुरा न मानता था। जो व्यक्ति बिना कोई कारण बताने का कष्ट किये कारखाने के संचालकों और मैनेजरों को नौकरी से बर्खास्त कर देता था, वह स्वेजेवस्की जैसे आदमी के प्रति सहिष्णुता का बर्ताव करे, इससे बढ़कर अचम्भे की और कौन सी बात हो सकती थी ? अवश्य ही क्वाशनिन को स्वेजेवस्की की सेवाओं की जरूरत थी, और यह भावी लखपति उस दिन की उत्सुकता से प्रतीक्षा करने लगा, जब वह क्वाशनिन के किसी काम आ सकेगा।

बोबरोव के कानों में भी इस बात की भनक पड़ते देर नहीं लगी। किन्तु उसे कोई आश्चर्य नहीं हुआ। जिनेन्को परिवार के सम्बंध में वह अपने हृदय में पहले से ही एक निश्चित और सही धारणा कायम कर चुका था। डर उसे [illegible] बात का था कि कहीं इस अफवाह के कारण लोग नीना पर भी [illegible]गें। स्टेशन पर इन दोनों के बीच जो बातचीत हुई थी,

उससे नीना उसके लिए और भी अधिक प्रिय बन गई थी। केवल उसके ही सामने तो नीना ने मुक्त भाव से अपनी आत्मा को खोल कर रखा था! कमजोर और डांवाडोल होते हुए भी बोवरोव को यह आत्मा सुन्दर और आकर्षक जान पड़ी थी। अन्य लोग तो केवल उसकी शक्ल-सूरत और वेश-भूषा से ही परिचित हैं, उसने सोचा। बोवरोव का स्वभाव इतना निश्छल और कोमल था कि उसमें ईर्ष्या और ईर्ष्या-जनित अविश्वास, आहत अभिमान और तद्जनित ओछेपन और कठोरता के लिए कोई स्थान नहीं था।

बोवरोव अब तक नारी के सच्चे, गहरे प्रेम की कोमल, नर्म स्निग्धता से अपरिचित ही रहा था। शर्मीलेपन और आत्म-विश्वास के अभाव के कारण वह अब तक जीवन के इस अत्यावश्यक सुख से वंचित रह गया था। इसलिए यह स्वाभाविक ही था कि प्रेम की इस नयी, मदमाती अनुभूति के साथ उसका हृदय आनन्द-विभोर हो उठे।

स्टेशन पर नीना से जो उसकी बातें हुई थीं, उनका नशा दिन-रात उस पर छाया रहता था। उस मुलाकात की छोटी-से-छोटी बातों को वह बार-बार स्मरण करता, और प्रत्येक बार नीना के शब्दों में कोई नया और गहरा अर्थ खोज निकालता। सुबह जब उसकी आंखें खुलतीं तो उसे लगता मानो आनन्द की एक विराट अनुभूति ने अपनी उज्जवल रश्मियां उसकी नस-नस में बिखेर दी हैं जो उसे भविष्य में अपार सुख की सूचना दे रही हैं।

कोई जादुई शक्ति उसे जिनेन्को के घर की ओर दिन-रात खींचती रहती; नीना के प्रेम ने जो उसे सुख दिया था, वह उसकी पुनः पुष्टि चाहता था, चाहता था एक बार फिर नीना के मुंह से प्यार के वे दबे, कहे-अनकहे शब्द सुनना—जिन्हें वह कभी बचकानी निडरता के संग स्पष्ट रूप से व्यक्त करती, तो कभी सहम-सहम कर। वह यह सब कुछ याद करता था किन्तु जिनेन्को के घर जाने का साहस नहीं कर पाता था। क्वाशनिन की उपस्थिति का ध्यान आते ही पांव रुक जाते थे। फिर वह अपने मन को यह कह कर दिलासा देने लगता कि किसी भी परिस्थिति में क्वाशनिन इवानकोवो में पन्द्रह दिन से ज्यादा नहीं ठहर पाएगा। और उसके बाद वह पूर्ववत् जिनेन्को के घर जाकर नीना से मिल सकेगा।

किन्तु क्वाशनिन के जाने से पूर्व ही संयोगवश नीना से उसकी मुठभेड़ हो गयी। पवन-भट्टी के उद्घाटन का समारोह तीन दिन पहले समाप्त हो चुका था। रविवार का दिन था। बोवरोव फेयरवे पर चढ़ कर मिल से स्टेशन जाने वाले चौड़े, आम रास्ते पर जा रहा था। दोपहर के दो बजे थे। शीतल, सुहावना दिन था, आकाश नीला और स्वच्छ था। फेयरवे कान खड़े करके सिर के बालों को झटका देता हुआ तेजी से चला जा रहा था। मिल के गोदाम

के पास सड़क की मोड़ पर बोबरोव ने कुम्मैद घोड़े पर सवार एक स्त्री को ढलान से उत्तर कर आते हुए देखा। उसके पीछे-पीछे एक अन्य घुड़सवार की आकृति दिखाई दी जो छोटे कद के खिरगीज घोड़े पर चला आ रहा था। स्त्री ने घुड़सवार की पोशाक पहन रखी थी। बोबरोव ने कुछ निकट आकर उसे तुरंत पहचान लिया। वह नीना थी। वह गहरे हरे रंग की लम्बी, बलखाती हुई स्कर्ट पहने थी, हाथ पीले दस्तानों से ढंके थे और सिर पर नीचे की ओर झुका हुआ हैट चमक रहा था। घोड़ी की काठी पर बैठी हुई वह गरिमा और आत्म-विश्वास की साक्षात प्रतिमा सी दिखाई देती थी। छरहरे बदन की अंग्रेजी घोड़ी गर्दन टेढ़ी कर, अपनी पतली टांगों को ऊंचा उठाती हुई, दुलकी चाल से दौड़ रही थी। नीना का साथी स्वेजेवस्की काफी पीछे छूट गया था। घोड़े की पीठ पर बैठा वह अपनी कुहनियां हिलाता, उछलता-फुदकता, नीचे लटकती रेकाब में अपने बूट के पंजे को फंसाने का प्रयत्न कर रहा था।

बोबरोव को देखते ही नीना ने अपनी घोड़ी को एड़ मारी। घोड़ी चौकड़ियां भरती हुई क्षण भर में बोबरोव के निकट जा पहुंची। नीना ने अचानक लगाम खींच ली। घोड़ी तिलमिला कर बिदकने लगी और अपने सुन्दर चौड़े नथुनों को फुला कर घर्घराने लगी। उसके मुंह से निकलता हुआ झाग लगाम को भिगो रहा था। नीना का चेहरा आरक्त हो गया था, केश हैट से बाहर निकल कर कनपटियों पर झूल रहे थे और लम्बी घुंघराली लटें पीछे की ओर लुढ़क गयी थीं।

"इतनी खूबसूरत घोड़ी तुम्हें कहां से मिल गयी?" बोबरोव ने फेयरवे को सीधा खड़ा कर लिया और अपनी काठी पर आगे झुक कर नीना की अंगुलियों के छोरों को दबाते हुए पूछा।

"खूबसूरत है न? क्वाशनिन का उपहार है।"

"मैं होता, तो ऐसा उपहार कभी स्वीकार न करता," बोबरोव ने रुखाई से कहा। नीना के लापरवाह उत्तर से वह खीझ उठा था।

नीना का चेहरा लज्जारक्त हो उठा।

"क्यों, ऐसी क्या बात है?"

"इसलिए कि यह क्वाशनिन आखिर तुम्हारा कौन लगता है? कोई रिश्तेदार है? या तुम्हारा भावी पति है?"

"ऐ खुदा! मुझे नहीं मालूम था कि तुम इतने मीनमेखी हो—वह भी अपने नहीं, दूसरों के मामलों के लिए।" नीना ने तीखा ताना मारा।

किन्तु बोबरोव के चेहरे पर पीड़ा का विवश भाव देखकर उसी क्षण उसका हृदय पिघल उठा।

"तुम तो जानते ही हो कि वह कितना अमीर है। एक घोड़ी उपहार में दे देना उसके लिए कोई बड़ी बात नहीं।"

स्वेजेवस्की और उनके बीच में अब केवल कुछ ही कदमों का अन्तर रह गया था। अचानक नीना बोबरोव की ओर झुकी, अपनी चाबुक की नोक से धीरे से उसका हाथ छू लिया, और दबे स्वर में, मानो कोई छोटी सी लड़की अपना अपराध स्वीकार कर रही हो, बोली, "नाराज हो गये क्या ? मैं उसकी घोड़ी उसे वापिस कर दूंगी, बस ! बड़े झक्की आदमी हो तुम भी ! देखते हो न मैं तुम्हारी राय की कितनी कद्र करती हूं।"

बोबरोव की आंखें खुशी से चमक उठीं और भावाकुल होकर उसने अपने दोनों हाथ नीना की ओर बढ़ा दिये। किन्तु उसने कुछ कहा नहीं। केवल एक गहरी सांस खींचकर चुप हो रहा। स्वेजेवस्की झुककर अभिवादन करता हुआ और काठी पर शान से बैठने की चेष्टा करता हुआ बढ़ा आ रहा था।

"तुम्हें मालूम है कि हम पिकनिक पर जा रहे हैं ?" वह चिल्लाया।

"नहीं, मुझे कुछ नहीं मालूम।" बोबरोव ने कहा।

"मेरा मतलब उस पिकनिक से है, जो वासिली तेरन्त्येविच द्वारा आयोजित की जा रही है। बेरोनाया बाल्का जाने का प्रोग्राम बना है।"

"मैंने तो कुछ सुना नहीं।" बोबरोव ने फिर कहा।

"पिकनिक पर हम सब जा रहे हैं, आन्द्रेइलिच ! तुम भी जरूर आना," नीना बीच में ही बोल उठी। "अगले बुधवार को, पांच बजे सब स्टेशन से रवाना होंगे।"

"क्या पिकनिक के लिए चन्दा जमा किया जायगा ?"

"हां, लेकिन मुझे पूरी पक्की बात नहीं मालूम।" नीना ने प्रश्नयुक्त दृष्टि से स्वेजेवस्की की ओर देखा।

"अवश्य ! सब से चन्दा जमा किया जायगा।" उसने नीना के कथन की पुष्टि की। "पिकनिक सचमुच बहुत बड़े पैमाने पर आयोजित की जायगी। ऐसी तड़क-भड़क तुमने पहले कभी नहीं देखी होगी। वासिली तेरन्त्येविच ने पिकनिक की समुचित व्यवस्था करने के सिलसिले में कुछ जिम्मेवारियां बन्दे के भी सिपुर्द की हैं। लेकिन बहुत सी बातें अभी तक गुप्त रखी गयी हैं। एक बात मैं कहे देता हूं—वहां तुम जो देखोगे, उससे आश्चर्यचकित हुए बिना न रह सकोगे।"

"सारी बात मुझसे ही शुरू हुई थी," हंसी-हंसी में नीना के मुंह से निकल गया। "कुछ दिन पहले की बात है। बातों-ही-बातों में मैंने कहा कि यदि कहीं जंगल की सैर पर निकला जाए तो मजा रहेगा। मेरा इतना कहना था कि वासिली तेरन्त्येविच ..."

"मैं नहीं जाऊंगा।" बोबरोव ने भन्नाकर कहा।

"कैसे नहीं आओगे, तुम्हें आना पड़ेगा!" नीना की आंखें सहसा चमक उठीं। "चलिए, बढ़ चलिए, श्रीमानो!" घोड़ी सरपट दौड़ती हुई वह चिल्लाई। "आन्द्रेइलिच, सुनो, मुझे तुमसे एक बात कहनी है।"

स्वेजेवस्की पीछे छूट गया। नीना और बोबरोव के घोड़े साथ-साथ दौड़ रहे थे। गुस्से में बोबरोव की त्यौरियां चढ़ी हुई थीं। किन्तु नीना मुस्कराते हुए उसकी आंखों में देख रही थी।

"मेरे निष्ठुर, शक्की मिजाज मित्र! पिकनिक की सारी योजना मैंने सिर्फ तुम्हारी खातिर ही तो बनायी थी," नीना के स्वर में एक गहरी कोमलता भर आयी। "उस दिन स्टेशन पर तुम्हारी बात अधूरी ही रह गयी थी। मैं पूरी बात जानना चाहती हूं। पिकनिक में तुम अपनी बात बिना किसी विघ्न-बाधा के कह सकोगे।"

एक बार फिर बोबरोव के भाव सहसा बदल गये। उसके हृदय में एक अत्यंत कोमल अनुभूति उजागर हो उठी और उसकी आंखों में हर्ष के आंसू भर आये। वह अपने को वश में न रख सका और आवेश में भरकर बोल उठा: "नीना, काश, तुम जान पाती कि मैं तुम्हें कितना चाहता हूं!"

किन्तु नीना ने बोबरोव के प्रेम की इस आकस्मिक अभिव्यक्ति को सुनकर भी नहीं सुना। उसने लगाम खींचकर घोड़ी को धीमी गति से चलने के लिए बाध्य कर दिया।

"अच्छा, तो फिर तुम आ रहे हो न?" उसने पूछा।

"हां, हां, अवश्य आऊंगा!"

"भूलना नहीं। अब यहां मैं अपने साथी की प्रतीक्षा करूंगी। वह बहुत पीछे छूट गया है। अच्छा, नमस्ते! अब मुझे घर लौट जाना चाहिए।"

बिदा लेते हुए उसने नीना से हाथ मिलाया। देर तक वे एक-दूसरे का हाथ पकड़े रहे। उसे लगा मानो नीना के हाथ की गरमायी दस्तानों से गुजर कर उसके हाथ को सहला रही है। नीना की गहरी काली आंखों में प्यार छलक रहा था।

नौ

बुधवार को चार बजे स्टेशन पर तिल रखने की जगह न थी। पिकनिक पर जाने वाले लोगों ने पूरे दल-बल सहित स्टेशन पर धावा बोल दिया था। सबके चेहरे आनन्द और उल्लास से चमक रहे थे। लगता था मानो इस बार सच ही क्वाशनिन का दौरा बिना किसी दुर्घटना के समाप्त हो जायगा, गरचे

इस बात की आशा लोगों ने स्वप्न में भी नहीं की थी। वह इस बार आंधी की तरह किसी पर बरसा नहीं और न उसने किसी पर अपनी झिड़कियों का वज्राघात ही किया। यह भी आश्चर्य की बात थी कि उसने इस वर्ष किसी कर्मचारी को क्रोध में आकर नौकरी से बरखास्त नहीं किया। उलटे यह बात सुनने में आ रही थी कि निकट भविष्य में मिल के क्लर्कों के वेतन में वृद्धि कर दी जायगी। पिकनिक का अपना अलग आकर्षण था। बेशेनाया बाल्का— पिकनिक का स्थान — घुड़सवारी द्वारा शहर से दस मील से भी कम दूर था। सारे रास्ते पर प्राकृतिक सौन्दर्य की अनुपम छटा बिखरी थी। मौसम भी खुशगवार था — पिछले एक सप्ताह से उजली धूप निकल रही थी। पिकनिक की सफलता के लिए सब साधन मानो आप-ही-आप जुट गये थे।

कुल मिलाकर लगभग नब्बे लोगों का दल था। वे सब छोटे-छोटे दलों में बंटकर प्लेटफार्म पर खड़े थे और आपस में जोर-जोर से हंस-बोल रहे थे। बातचीत रूसी भाषा में हो रही थी किन्तु अक्सर फ्रेंच, जर्मन और पोलिश भाषाओं के शब्द और मुहावरे कानों में पड़ जाते थे। स्नेप-शॉट लेने की आशा में तीनों बेल्जियन इंजीनियर अपने संग कैमरे ले आये थे। पिकनिक सम्बंधी सब बातों को पूर्णतया गुप्त रखा गया था। यही कारण था कि सब लोगों में जिज्ञासा और उत्सुकता फैली हुई थी। स्वेजेवस्की के पैर धरती पर टिकते ही नहीं थे। गम्भीरता का लबादा ओढे वह बड़े रहस्यमय स्वर में कुछ ऐसी घटनाओं की ओर संकेत करता जो सबको "आश्चर्य में डाल देंगी।" किन्तु जब आगे उससे प्रश्न पूछे जाते तो वह कोई स्पष्ट या ठोस उत्तर देने से साफ कतरा जाता।

कुछ ही देर में लोगों ने जो पहला "आश्चर्य" आंखों के सामने खड़ा पाया, वह थी स्पेशल ट्रेन। ठीक पांच बजे दस पहियों का नया अमरीकी इंजन अपने शैड से बाहर धमधमाता हुआ निकल कर प्लेटफार्म के सामने आ खड़ा हुआ। हर्ष और विस्मय के कारण स्त्रियां अपनी चीखें न दबा सकीं। वह विशाल-काय इंजन रंग-बिरंगी झंडियों और ताजे फूलों से सुसज्जित था। गेंदे, डालिया, स्टॉक और गुलाब के फूलों के गुच्छे और बलूत के पत्तों की हरित मालाएं इंजन की लौह-देह और उसकी चिमनी से लिपटती हुई नीचे सीटी तक चली गई थीं और फिर सीटी से दोबारा ऊपर घूम कर इंजन के माथे पर फूल-पत्तों की एक झालर के समान लटक गई थीं। पतझर के डूबते सूरज की सुनहरी किरणों में, फूल-पत्तों की ओढ़नी के बीच से इंजन के इस्पात और पीतल के कल-पुर्जे चमचमा रहे थे। पता चला कि सब लोग प्रथम श्रेणी के छः डब्बों में बैठ कर २०० वें मील के स्टेशन पर जायेंगे। उसके बाद बेशेनाया बाल्का केवल दो सौ गज दूर रह जाता था।

"महानुभावो और महिलाओ ! वासिली तेरन्त्येविच ने मुझे आपको यह सूचित करने के लिए कहा है कि पिकनिक का सारा खर्च वे ही उठायेंगे।"

स्वेजेवस्की कभी एक दल के पास जाता, कभी दूसरे के पास, और सबसे यही बातें बार-बार कहता।

बहुत से लोग कौतूहलवश उसके इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गये। स्वेजेवस्की बड़े उत्साह से उन्हें सारी बात विस्तार से समझाने लगा।

"आप लोगों ने उनका जो भव्य स्वागत किया, उससे वासिली तेरन्त्येविच बहुत प्रसन्न हैं। आप लोगों के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रदर्शित करने के लिए वह पिकनिक का सारा खर्च अपनी जेब से देंगे।"

उसे देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो कोई दास अपने मालिक की उदारता का बखान कर रहा हो। उसका स्वर सहसा भारी और गम्भीर हो उठा : "अब तक हम इस पिकनिक पर तीन हजार पांच सौ नब्बे रूबल खर्च कर चुके हैं।"

"क्या तुम्हारा मतलब यह है कि आधी रकम तुमने अपनी जेब से खर्च की है ?" पीछे से किसी ने ताना मारा। स्वेजेवस्की उस व्यक्ति का चेहरा देखने के लिए तेजी से पीछे की ओर घूम गया। विष से बुझा यह बाण आन्द्रेयस ने ही छोड़ा था। वह पतलून की जेबों में हाथ ठूंसकर खड़ा था और हमेशा की तरह अपने पुराने, निर्लिप्त, निर्विकार भाव से स्वेजेवस्की को देख रहा था।

"माफ करना, मैं समझा नहीं। क्या आप अपनी बात दोहराने की कृपा करेंगे ?" स्वेजेवस्की ने पूछा। असमंजस से उसका चेहरा आरक्त हो उठा था।

"अभी तुमने ही तो कहा था श्रीमान कि 'हमने तीन हजार रूबल खर्च किये,' इसीलिए मैंने सोचा कि आधी रकम क्वाशनिन ने और आधी तुमने खर्च की होगी। यदि यह बात सच है, तो मैं आपको साफ बतला दूं कि मि. क्वाशनिन ने हम पर जो कृपा की है, उसे स्वीकार करने में मुझे कोई हिचक नहीं है, किन्तु मि. स्वेजेवस्की की कृपा को मैं कतई स्वीकार नहीं कर सकता।"

"अरे नहीं, नहीं ! आपने गलत समझा।" स्वेजेवस्की ने हकलाते हुए कहा। "सारा खर्च वासिली तेरन्त्येविच ने ही तो उठाया है। मैं... मैं तो केवल उनका विश्वासपात्र ... या एजेन्ट ... अरे भाई अब तुम कुछ ही समझ लो।" कहते-कहते एक खिसियानी सी मुस्कराहट उसके होठों पर फैल गयी।

इधर स्टेशन पर ट्रेन आयी, उधर क्वाशनिन और शेलकोवनिकोव के संग जिनेन्को परिवार प्लेटफार्म पर दिखायी दिया। किन्तु क्वाशनिन के बग्गी से उतरते ही एक ऐसी घटना घटी, जिसकी कल्पना कोई भी नहीं कर सकता

था। एक ऐसा विचित्र दृश्य था, जिसे देखकर हंसी भी आती थी और दुःख भी होता था। पिकनिक की खबर पाकर मजदूरों की पत्नियां, बहनें और माताएं सुबह से ही स्टेशन के पास धरना देकर बैठ गयी थीं। उनमें से अनेक स्त्रियां बच्चों को भी अपने संग ले आयी थीं। उन मजदूर स्त्रियों के धूप से झुलसे, मैले-मुरझाये चेहरों पर अटल धैर्य और सहनशीलता का भाव अंकित था। स्टेशन की सीढ़ियों और दीवारों की छाया में धरती पर बैठे-बैठे उन्हें घंटों बीत चुके थे। उनकी संख्या दो सौ से अधिक थी। जब स्टेशन के कर्मचारियों ने उनसे वहां आने का कारण पूछा तो उन्होंने बतलाया कि वे "सुर्ख बालों वाले अपने मोटे मालिक" से मिलना चाहती हैं। चौकीदार ने उन्हें वहां से हट जाने का आदेश दिया, किन्तु उन्होंने इतना बावेला मचाया कि बेचारे को अपना सा मुंह लेकर वहां से चला जाना पड़ा।

जब कभी कोई बग्गी स्टेशन के सामने से गुजरती, स्त्रियों के झुंड में एक क्षण के लिए हलचल-सी मच जाती। किन्तु जब वे देखतीं कि उसमें उनका "सुर्ख बालों वाला मोटा मालिक" नहीं बैठा है, तो वे फिर शान्त होकर प्रतीक्षा करने लगतीं।

अपने भारी-भरकम शरीर को लिए बग्गी के समूचे ढांचे को हिलाता-डुलाता क्वाशनिन अभी बग्गी से उतर ही रहा था कि मजदूर स्त्रियों ने उसे चारों ओर से घेर लिया और उसके सामने अपने घुटनों पर गिर पड़ीं। क्वाशनिन के जवान, जोशीले घोड़े भीड़ के कोलाहल से चिहुंक कर बिदकने लगे। साईस उन्हें काबू में रखने के लिए अपना पूरा जोर लगाकर लगाम खींच रहा था। पहले तो क्वाशनिन को कुछ समझ न आया और वह उन्हें भौंचक्का सा देखता रहा। सब औरतें अपनी बाहों में बच्चों को पकड़े जोर-जोर से चीत्कार कर रही थीं और उनके कांसे के रंग के चेहरे आंसुओं से भीगे थे।

क्वाशनिन समझ गया कि भीड़ के इस जीते-जागते घेरे को तोड़कर आगे बढ़ना हंसी-खेल नहीं है।

"क्या तमाशा बना रखा है तुम लोगों ने! यह रोना-धोना बन्द करो!" क्वाशनिन की दनदनाती गरज के नीचे अन्य सब आवाजें डूब गयीं। "कोई कुंजड़ों का बाजार समझ रखा है क्या, कि आये और गला फाड़ने लगे? इस कोलाहल में मैं कुछ नहीं सुन सकता। तुम में से कोई एक औरत खड़ी होकर मुझे सारी बात समझा दे।"

इतना सुनते ही प्रत्येक स्त्री खड़ी होकर बोलने लगी। शोर और ज्यादा बढ़ गया।

अश्रु-धाराएं और तेजी से बहने लगीं।

"मालिक ! हमारी मदद करो ! अब हमसे ज्यादा नहीं सहा जाता। हम और हमारे बच्चे मौत के किनारे बैठे हैं। सरदी से ठिठुर-ठिठुर कर हम मर जायेंगे — बच्चे-बूढ़े, सब मर जायेंगे।"

"कुछ बात तो कहो। क्या चीज तुम्हें मारे डाल रही है ?" क्वाशनिन एक बार फिर चिंघाड़ा। "लेकिन देखो, सब एक संग मत चिल्लाओ। अच्छा, तुम सारी बात कहो।" उसने एक लम्बी स्त्री को इशारा किया, जिसका क्लान्त चेहरा पीला होने के बावजूद आकर्षक था। "बाकी सब खामोश रहें।"

अधिकांश स्त्रिया शान्त हो चलीं, यद्यपि उनका सुबकना-सिसकना जारी था। वे बार-बार अपनी स्कर्ट के मैले किनारों से नाक और आंखें पोंछती जाती थीं।

क्वाशनिन की चेतावनी के बावजूद कम-से-कम बीस औरतें एक संग बोलने लगीं।

"हम जाड़े से मर रहे हैं मालिक ! इतनी कड़कड़ाती ठंड पड़ती है कि जीना मुहाल हो जाता है। जाड़े के लिए हमें जिन बैरकों में ठूंस दिया गया है, आप ही जरा सोचें, भला वहां कोई कैसे रह सकता है ? बैरक भी वे सिर्फ नाममात्र को हैं, बस लकड़ी की चिप्पियों से उन्हें खड़ा कर दिया गया है। आजकल भी वहां रात के समय इतनी ठंड पड़ती है कि दांत किटकिटाते रहते हैं। जब अभी ही यह हालत है, तो जाड़े के दिनों में कैसे गुजर होगा ? मालिक, हम पर नहीं तो कम-से-कम हमारे बच्चों पर रहम कीजिए, कुछ और नहीं तो कम-से-कम चूल्हे ही बनवा दीजिए। बैरकों में रोटी बनाने के लिए कोई जगह नहीं, खाना मजबूरन बाहर पकाना पड़ता है। थके-मांदे, भीगे और ठिठुरते हुए हमारे आदमी जब काम से वापिस लौटते हैं, तो उनके गीले कपड़ों को सुखाने का भी कोई इंतजाम नहीं है।"

क्वाशनिन बुरा फंस गया था। वह जिस ओर मुड़ता, घुटनों पर झुकी या लेटी हुई स्त्रियों की दीवार उसका रास्ता रोक लेती। जब कभी वह जबरदस्ती उनकी पांत को तोड़कर आगे बढ़ने की चेष्टा करता, तो वे उसके पैरों से लिपट जातीं और उसके भूरे रंग के लम्बे कोट के किनारों को पकड़ लेतीं। अपने को सर्वथा विवश पाकर उसने इशारे से शेलकोवनिकोव को पास बुलाया। शेलकोवनिकोव तुरंत भीड़ को चीरता हुआ उसके पास आ खड़ा हुआ। क्वाशनिन ने क्रुद्ध स्वर में उससे फ्रेंच भाषा में कहा, "सुन रहे हो तुम इनकी बात ? आखिर इसका मतलब क्या है ?"

शेलकोवनिकोव हक्का-बक्का सा उसकी ओर देखने लगा।

"मैं बोर्ड को अनेक बार इस सिलसिले में लिख चुका हूं," वह बुदबुदाने लगा। "मजदूरों की कमी थी... गरमियों के दिन थे... सूखी घास काटी जा

रही थी ... और फिर चीजों के दाम भी चढ़ने लगे थे ... बोर्ड ने स्वीकृति नहीं दी। आखिर इस हालत में मैं क्या करता ?"

"अच्छा तो फिर तुम मजदूरों की बैरकों के पुनर्निर्माण का काम कब से शुरू करोगे ?" उसने कठोर स्वर में पूछा।

"अभी निश्चित रूप से कुछ भी नहीं कहा जा सकता। फिलहाल तो इन लोगों को इन्हीं बैरकों में जैसे-तैसे गुजर करना पड़ेगा। पहले तो हमें जल्द-से-जल्द मिल के कर्मचारियों के लिये क्वार्टर बनाने पड़ेंगे। बैरकों का निर्माण बाद में ही हो सकता है।"

"खूब है तुम्हारी संचालन-व्यवस्था ! इतना अनर्थ और अन्याय तुम देखते हो, फिर भी हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहते हो !" क्वाशनिन बुड़बुड़ाया। फिर स्त्रियों की ओर उन्मुख होकर उसने ऊंची आवाज में कहा : "अरी औरतो, सुनती हो ! कल से तुम्हारे घरों में चूल्हे बनने शुरू हो जायेंगे। इसके अलावा तुम्हारी बैरकों की छतों पर लकड़ी के तख्ते जोड़ दिये जाएंगे। अब तो ठीक है न ?"

"शुक्रिया मालिक, बहुत बहुत शुक्रिया ! जब मालिक ने अपने मुंह से यह बात कही है, तो हमें कोई चिन्ता नहीं, हमें आप पर पूरा विश्वास है !" भीड़ में खुशी की लहर दौड़ गयी। "मालिक, आपसे एक प्रार्थना और है— जिन स्थानों पर इमारतें बन रही हैं, वहां से हमें लकड़ी की चिप्पियां उठाने की इजाजत मिल जाए। ईश्वर आपका भला करेगा !"

"अच्छी बात है, चुन लिया करना।"

"लेकिन उन स्थानों पर चारों ओर सरकासी पहरेदार घेरा डालकर बैठे रहते हैं। जब हम चिप्पियां बटोरने जाती हैं, तो वे कोड़ा दिखलाकर हमें भगा देते हैं।"

"फिक्र मत करो, अब तुम्हें कोई नहीं धमकाएगा। जितनी मरजी चिप्पियां बटोर कर ले जाओ।" क्वाशनिन ने उन्हें आश्वासन दिया। "अच्छा औरतो, अब तुम घर जाकर साग-सब्जी पकाओ ! यहां खड़े रहकर नाहक अपना वक्त खराब मत करो— हां, हां, जल्दी करो, देर मत लगाओ।" वह ऊंची आवाज में चिल्लाया, फिर दबे स्वर में धीरे से शेलकोवनिकोव से बोला, "कल ईटों की एक दो गाड़ियां बैरकों में भिजवा देना। काफी लम्बे अर्से तक वे उन ईटों को देख-देखकर ही खुश होते रहेंगे। समझ गये ?"

मजदूर स्त्रियां खुश होकर अपने-अपने घरों की ओर जाने लगी थीं।

"देख लेना— अगर चूल्हे नहीं बनाए गये, तो हम इजीनियरों से जाकर कहेंगी कि वे खुद आकर हमारे ठिठुरते शरीरों को गरमाहट पहुंचाएं।" उस

स्त्री ने, जिसे क्वाशनिन ने दूसरी स्त्रियों की ओर से बोलने के लिए चुना था, ऊंची आवाज में कहा।

"और नहीं तो क्या!" एक अन्य स्त्री ने बड़े जोश से पहली स्त्री का समर्थन किया। "और सच, मैं तो अपने को गरम रखने के लिये खुद मालिक को बुलवा भेजूगी। देखा तुमने— कैसा गोल-मटोल चुकन्दर सा लगता है, और ऊपर से हंसमुख भी है। जो गरमाई उससे मिलेगी, चूल्हा बेचारा उसका क्या मुकाबला करेगा?"

सारा झगड़ा इतने सुन्दर, शांतिपूर्ण ढंग से निपट गया कि सभी प्रफुल्लित हो उठे। यहा तक कि क्वाशनिन भी, जो कुछ देर पहले शेलकोवनिकोव पर खीज उठा था, मजदूर स्त्रियों के "गरमाहट पहुंचाने" के आग्रह को सुनकर हंसने लगा। शेलकोवनिकोव की कुहनी पकड़कर वह उसे मनाने लगा।

"यार बात यह है," स्टेशन की सीढ़ियों पर धीरे-धीरे चढ़ते हुए उसने शेलकोवनिकोव से कहा, "कि इन लोगों से बात करने का गुर जानना बहुत जरूरी है। वे जो कहें, बिना हील-हुज्जत के सब कुछ मान लो— अलमूनियम के मकान, आठ घंटे का दिन, हर मजदूर के लिए प्रतिदिन मांस की भुनी हुई बोटी— वादे-पर-वादे करते जाओ। किन्तु याद रखो, जो कहो पूरे विश्वास के साथ कहो। मैं यह बात दावे के साथ कहने के लिए तैयार हूं कि केवल वादों के बल पर मैं सिर्फ आध घंटे में बड़े-से-बड़े जोशीले प्रदर्शन को ठंडा कर सकता हूं।"

स्त्रियों की बगावत— जिसे उसने इतनी आसानी से दबा दिया था— की बातों को यादकर खिलखिला कर हंसता हुआ क्वाशनिन गाड़ी में चढ़ गया। तीन मिनट बाद रेल चल पड़ी। कोचवानों को पहले से ही बेशेनाया बाल्का जाने के लिये कह दिया गया था। यह तय हो चुका था कि सब लोग मशालों के संग घोड़ागाड़ियों में वापिस लौटेंगे।

बोबरोव को नीना का व्यवहार काफी विचित्र सा लग रहा था। पिछली रात से ही वह नीना को देखने के लिये छटपटा रहा था और अब स्टेशन पर बड़ी अधीरता से उसकी प्रतीक्षा करता रहा था। उसके दिल में नीना के प्रति जो सन्देह की काई जमी थी, वह अब धुल चुकी थी। उसे अब अपने सुख पर विश्वास हो चला था। दुनिया इतनी खूबसूरत हो सकती है, इसकी कल्पना भी उसने पहले कभी नहीं की थी। उसे सब लोग सहृदय और दयालु जान पड़ने लगे। जीवन में एक ऐसे सरस सौन्दर्य का आविर्भाव होने लगा, जो उसके लिये बिलकुल नया था। उस दिन वह इसी उधेड़-बुन में उलझा था कि जब वह नीना से मिलेगा तो किस प्रकार अपने उद्गार उसके सम्मुख प्रगट करेगा। वह प्यार से भरी, सुन्दर, कोमल, प्रेमोन्मादित बातों को मन-ही-मन दुहराने लगा,

फिर अपनी इस हरकत पर स्वयं हंसने लगा। प्रेम के शब्दों को याद करने की क्या जरूरत? जरूरत पड़ने पर वे खुद-ब-खुद उमड़ पड़ते हैं, और तब उनका सौन्दर्य और सोंधापन कितना अधिक निखर उठता है!

उसे एक कविता स्मरण हो आयी, जो उसने किसी पत्रिका में पढ़ी थी। कवि ने अपनी प्रेयसी को सम्बोधित करते हुए कहा था कि वे एक दूसरे को वचन देने का अभिनय कर अपने सच्चे और उज्जवल प्रेम पर कालिख नहीं लगाएंगे। प्रेम का इससे बढ़कर क्या अपमान होगा कि उसके लिये वचन देना पड़े?

क्वाशनिन की गाड़ी के पीछे-पीछे दो बग्गियां और आ रही थीं, जिनमें जिनेन्को परिवार के सदस्य बैठे थे। नीना पहली बग्गी में थी। उसने गहरे पीले रंग के वस्त्र पहन रखे थे, और उसी रंग की चौड़ी लेस उसकी फ्रॉक के अर्ध-चन्द्राकार गले को सुशोभित कर रही थी। उसके सिर पर चौड़े किनारे वाला सफेद इतालवी हैट था, जिस पर गुलाब का एक सुन्दर गुलदस्ता सुसज्जित था। नीना का चेहरा असाधारण रूप से पीला और गम्भीर दिखायी दे रहा था। नीना ने दूर से ही उसे देख लिया था, किन्तु बोबरोव को उसकी आंखों में वह संकेत नहीं मिला जिसकी वह इतनी उत्सुकता से प्रतीक्षा करता रहा था। उसे लगा मानो जानबूझकर उसने उसकी ओर से अपना मुंह फेर लिया। स्टेशन के सामने बग्गी रुकी। नीना को सहारा देकर नीचे उतारने के लिए वह भागता हुआ बग्गी के पास गया था, किन्तु नीना मानो उसके तात्पर्य को समझकर झटपट दूसरी ओर से नीचे कूद गयी थी। बोबरोव का हृदय किसी अनिष्ट की संभावना से कांप उठा। किन्तु शीघ्र ही उसने इस आशंका को पीछे धकेल दिया। "बेचारी नीना! अपने प्रेम पर नाहक इतनी लजा रही है। समझती है कि अब सब लोग उसकी आंखों में उसके दिल का भेद पढ़ लेंगे!" नीना के संकोच और उसकी अबोध लज्जा की इस कल्पना से बोबरोव के दिल में हल्की सी गुदगुदी दौड़ गयी।

उसे स्टेशन की पुरानी बात याद आ गयी। उसने सोचा कि उस दिन की तरह नीना उससे अकेले में बातचीत करने का अवसर ढूंढ निकालेगी। किन्तु नीना ने ऐसा कुछ नहीं किया। वह मजदूर स्त्रियों के संग क्वाशनिन की बातों को बड़े ध्यान से सुन रही थी। चोरी-चुपके भी उसने बोबरोव की ओर एक बार आंखें नहीं उठायीं। बोबरोव दिल मसोसकर खड़ा रहा। सहसा एक अज्ञात भय... एक चुभती, गहरी टीस उसके हृदय को मथने लगी। जिनेन्को परिवार के सदस्य एक कोने में अलग-थलग खड़े थे। जान पड़ता था कि अन्य महिलाएं उनसे मिलना-जुलना पसन्द नहीं करती थीं। स्टेशन के शोर-शराबे में सब का ध्यान भटका हुआ था। बोबरोव ने सोचा कि नीना से

मिलने का इससे अधिक उपयुक्त अवसर फिर नहीं मिलेगा। वह कुछ बोलेगा नहीं — सिर्फ आंख के इशारे से ही नीना से उसकी उदासीनता का कारण पूछ लेगा।

उसने पास जाकर अन्ना अफानास्येवना को प्रणाम किया और उसका हाथ चूमा। वह उसकी आंखों के भाव को पढ़कर जानना चाहता था कि वह नीना और उसके विषय में कुछ जानती है या नहीं? और उसे लगा, मानो वह सब कुछ जानती है। उसकी पतली, बंकिम भौंहें — जो बोबरोव के विचार में उसके कपटी स्वभाव का परिचायक थीं — घृणा से सिकुड़ आयीं थीं और उसके होंठ दर्प से फूले हुए थे। उसने एकदम समझ लिया कि नीना ने सारी बात अपनी मां से कह दी होगी और उसने नीना को डांट-डपट दिया होगा।

वह नीना के पास आया, किन्तु उसने उसकी ओर आंख उठाकर देखा तक नहीं। उसका ठंडा हाथ बोबरोव के कांपते हाथों में शिथिल सा पड़ा रहा। उसके अभिवादन का उत्तर देने के बजाय उसने अपना चेहरा बेता की ओर मोड़ लिया और उससे इधर-उधर की बातें करने लगी। नीना के इस अप्रत्याशित व्यवहार से उसे लगा मानो कोई पाप की भावना उसकी आत्मा को खरोंच रही है, मानो वह अचानक इतनी कायर और भयभीत हो गयी है कि किसी बात का भी स्पष्टीकरण करना उसके लिए दुश्वार हो गया है। बोबरोव को एक गहरा धक्का सा लगा। उसका मुंह सूख गया और पांव लड़खड़ाने लगे। वह दिग्भ्रान्त सा वहां खड़ा रहा। माजरा क्या है? यदि नीना ने अपना भेद मां को बता दिया है तो भी वह आंख के चपल, अर्थपूर्ण इशारे से — जिसमें हर स्त्री इतनी पटु होती है — उसको सारी बात समझा सकती थी। "तुम्हरा अनुमान ठीक है," वह आश्वासन देकर चुपचाप कह देती, "मां सब जानती है — किन्तु मैं वैसी ही हूं, जैसे पहले थी। मुझ में कोई परिवर्तन नहीं आया है। तुम किसी बात की चिन्ता मत करो।" किन्तु उसने यह सब कुछ नहीं कहा — चुपचाप मुंह फेर लिया। "कोई बात नहीं, पिकनिक के दौरान में उससे सब कुछ जान लूंगा।" उसने सोचा। किसी भयंकर, कायरतापूर्ण घटना की अनिष्ट संभावना ने उसे आतंकित कर दिया। "चाहे जो कुछ भी हो, उसे मुझे सब कुछ बताना ही पड़ेगा।"

दस

गाड़ी '२०० मील' के स्टेशन पर रुक गयी। लोग अपने-अपने डब्बों से बाहर निकल आए। चौकीदार के मकान से परे एक ढलुआं, संकरी सड़क चली गयी थी। पिकनिक पर जाने वालों का रंग-रंगीला लश्कर एक लम्बी

पांत बना कर बेशेन या बाल्का जाने के लिए इसी सड़क पर चलने लगा। शरद-ऋतु के पेड़-पौधों की तीखी ताजी सुगन्ध हवा में तिरती हुई उनके तप्त-आरक्त चेहरों का स्पर्श करने लगी। सड़क नीचे को उतरती चली गयी और बाद में जाकर तो वह जैतून की झाड़ियों और हनीसकल के खुशबूदार फूलों के झुरमुट में खो सी गयी थी। पैरों तले पीले सिकुड़े हुए निर्जीव पत्ते चरमरा उठते थे। वृक्षों के कुंज से परे दूर क्षितिज पर सूर्यास्त की लालिमा बिखरने लगी थी।

झाड़ियां खत्म हुईं। अचानक एक खुला मैदान सामने दिखायी दिया, जिस पर महीन रेत बिछी हुई थी। मैदान के एक छोर पर रंग-बिरंगी झंडियों और फूल-पत्तियों से सुशोभित आठ-भुजाओं वाला एक मंडप खड़ा था। दूसरे छोर पर छत से ढंका एक ऊंचा मंच था, जहां बैंड की व्यवस्था की गयी थी। ज्यों ही पेड़ों के झुरमुट से कुछ लोग बाहर निकलकर मैदान के पास आते दिखायी दिये, त्योंही बैंड पर फौजी संगीत की फड़कती हुई धुन बजने लगी। पीतल के वाद्य-यंत्रों से निकलती हुई हंसती-मचलती धुन आस-पास के पेड़-पौधों से टकरा कर सारे जंगल में गूंज उठती थी, फिर दूर दिशा से आती हुई अपनी ही प्रतिध्वनि में लय हो जाती थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो कहीं दूर एक दूसरा बैंड भी बज रहा है, जिसकी ध्वनि पहले बैंड से कभी आगे निकल जाती है, कभी पीछे रह जाती है। मंडप के चारों ओर अर्ध-चन्द्राकार में मेजें पड़ी थीं, जिनपर उज्जवल मेजपोश बिछे थे। बहुत से बैरे मेजों के इर्द-गिर्द चक्कर काट रहे थे। पिकनिक पर आए हुए लोगों की भीड़ मैदान में जमा हो गयी थी। बैंड के चुप होते ही उन्होंने बड़े उत्साह और हर्ष से करतल-ध्वनि की। उनकी खुशी का कारण भी था। आज वे जिस मैदान में खड़े थे, वह केवल पन्द्रह दिन पहले एक पहाड़ी स्थल था जहां झाड़ियां ही झाड़ियां मुंह उठाए खड़ी थीं।

बैंड पर वॉल्ज (एक नृत्य-धुन) की धुन बाजने लगी।

स्वेजेवस्की नीना के साथ खड़ा था। बोबरोव ने देखा कि वह नीना से बिना अनुमति मांगे उसकी बगल में हाथ डालकर नाचता हुआ मैदान के चक्कर काटने लगा है।

नाच के बाद स्वेजेवस्की ने नीना को अभी छोड़ा ही था कि धातु-विज्ञान का एक विद्यार्थी उसके संग नाचने के लिए आगे बढ़ आया। उसके बाद कोई और व्यक्ति नीना का साथी बना। बोबरोव को नाच में कभी दिलचस्पी नहीं रही और न ही उसे अच्छी तरह नाचना आता था। किन्तु सहसा उसने सोचा कि वह नीना को 'क्वाडरिल' नृत्य के लिये आमंत्रित करे। "उसकी उदासीनता का कारण पूछने का यह अच्छा अवसर रहेगा," उसने मन-ही-मन सोचा। नीना दो बार नाचकर थक सी गयी थी और अपने चेहरे पर पंखा कर रही थी। बोबरोव उसके पास आकर खड़ा हो गया।

"नीना ग्रिगोरयेवना, मैं आशा करता हूं कि 'क्वाडरिल' तुम मेरे संग ही नाचोगी ?"

"लेकिन ... देखो कितनी बुरी बात है ... मुझे क्या पता था ... 'क्वाडरिल' के लिए तो मैं पहले से ही वचन दे चुकी हूं।" उसने बिना बोबरोव की ओर देखे उत्तर दिया।

"वचन दे चुकी हो ? इतनी जल्दी ?" बोबरोव का स्वर भर्रा उठा।

"बेशक," उसके स्वर में बेचैनी थी, हल्का सा व्यंग्य था। "तुम अब पूछने आए — इतनी देर से ? मैं तो गाड़ी में ही 'क्वाडरिल' नाचने के लिए किसी अन्य व्यक्ति की प्रार्थना स्वीकार कर चुकी हूं।"

"तुम्हें यह भी याद न रहा कि मैं भी तुम्हारे संग हूं !" बोबरोव ने उदास होकर पूछा।

उसके स्वर ने नीना को एक बारगी झिंझोड़ दिया। वह किंकर्त्तव्यविमूढ़ सी बैठी रही — कभी पंखे को खोलती, कभी बन्द कर देती। किन्तु उसने अपना चेहरा ऊपर नहीं उठाया।

"कसूर तुम्हारा ही है। तुमने मुझ से पहले क्यों नहीं पूछा ?"

"नीना ग्रिगोरयेवना, मैं पिकनिक पर आने के लिए राजी हुआ था महज तुम्हारे लिए, केवल इसलिए कि मैं तुम्हारे संग रहना चाहता था। क्या जो कुछ तुमने मुझसे कहा था, वह सिर्फ मजाक था ?"

नीना उद्भ्रान्त सी होकर अपने पंखे से उलझने लगी। इतने में एक नौजवान इंजीनियर भागता हुआ उसके पास आया और उसे इस विकट संकट से उबार ले गया। वह एकदम उठ खड़ी हुई और बिना बोबरोव को एक नजर देखे उसने अपना पतला हाथ, जो लम्बे सफेद दस्ताने से ढका था, उस इंजीनियर के कंधे पर रख दिया। बोबरोव की आंखें उसका पीछा करती रहीं। नाच समाप्त हो जाने के बाद नीना मैदान के दूसरे छोर पर बैठ गयी। "शायद जानबूझ कर वह मुझ से अलग बैठी है," बोबरोव ने सोचा। उसे लगा मानो नीना उससे कतरा रही है, उससे आंखें चार होते ही मानो वह जमीन में गड़ जाती है, एक अजीब सा भय उसे ग्रस लेता है।

ऊब और उदासी की पुरानी चिरपरिचित अनुभूति एक बार फिर बोबरोव के मन में घिर आयी। उसे अपने इर्द-गिर्द के लोगों के चेहरे भोंडे, दयनीय और हास्यास्पद से दीखने लगे। संगीत की लय-ताल उसके मस्तिष्क में पीड़ाजनक रूप से प्रतिध्वनित हो रही थी। किन्तु अभी उसने आशा नहीं छोड़ी थी — अनेक संकल्पों-विकल्पों की शरण में जाकर वह मन को धीरज बंधा रहा था। "शायद वह मुझसे इसलिये नाराज है कि मैंने उसे फूल भेंट नहीं किये ... या मुझ जैसे उज्जड गंवार के संग वह शायद नाचना पसन्द नहीं

करती ! उसकी यह नाराजगी सम्भवतः उचित ही है। लड़कियों के लिए इन छोटी-छोटी बातों का बहुत अधिक महत्व होता है। हमें चाहे ये बातें तुच्छ और नगण्य प्रतीत हों, किन्तु उनका तो सारा सुख-दुख, जीवन का आनन्द-उल्लास इन्हीं बातों पर निर्भर करता है।"

शाम घिर आयी। चीनी लालटैनों से सारा मंडप प्रकाशमान हो उठा। किन्तु लालटैनों का प्रकाश इतना तेज नहीं था कि मैदान को रौशन कर सके। सहसा मैदान के दोनों तरफ से झाड़ियों में छिपे बिजली के दो बड़े-बड़े बल्ब जल उठे। उनके प्रखर प्रकाश से आंखें चौंधिया गईं और सारा मैदान पीली आभा में जगमगाने लगा। मैदान के चारों किनारों पर लगे पेड़-पौधों की आकृतियां अंधकार के गर्भ से निकलकर स्पष्ट दिखायी देने लगीं। बल्बों के कृत्रिम प्रकाश में वृक्षों की झिलमिलाती निश्चल टेढ़ी-मेढ़ी शाखाओं को देखकर नाट्य-मंच पर लगे परदों पर अंकित रंग-बिरंगे प्राकृतिक-दृश्यों की याद आ जाती थी। उनके परे अंधेरा आकाश था, जिसकी पृष्ठ-भूमि में भूरी-हरी धुंध में डूबे कुछ अन्य वृक्षों की नुकीली चोटियां दिखलायी दे जाती थीं। बैंड-संगीत के बावजूद स्तेपीय-मैदानों में बसने वाले झींगुरों की टर्र-टर्र बराबर सुनायी दे रही थी। उनके इस विचित्र कोरस गान को सुनकर ऐसा लगता था मानो ऊपर-नीचे, दायें-बायें—चारों दिशाओं से एक ही झींगुर की आवाज आ रही है।

बॉल-नृत्य में भाग लेनेवाले स्त्री-पुरुषों के उत्साह की कोई सीमा न थी। एक नाच समाप्त नहीं होता कि दूसरा शुरू हो जाता। बैंड बजानेवालों को दम लेने की भी फुरसत नहीं थी। नृत्य, संगीत और परियों के देश जैसे उस स्वप्निल वातावरण ने स्त्रियों को मदहोश सा कर दिया था।

चिरायते, सड़ते हुए पत्तों और ओस में भीगे पेड़-पौधों की खुशबू तथा हाल में कटी घास की दूर से आती हुई भीनी महक के साथ इत्र और पसीने से तर शरीरों की गंध घुलमिलकर विचित्र प्रभाव उत्पन्न कर रही थी। नाचनेवालों के हाथ के पंखों को देखकर लगता था मानो रंग-बिरंगे, सुन्दर पक्षियों ने उड़ने के लिए अपने पर फैला दिये हों। बातचीत का ऊंचा स्वर, हंसी-ठहाके, पैरों के नीचे मैदान की रेत की चर्र-मर्र—सब आवाजें घुलमिलकर एक आकारहीन कोलाहल में डूब गयी थीं। जब कभी कुछ देर के लिए बैंड रुक जाता, तो ये आवाजें कुछ अधिक तेज और ऊंची सुनायी पड़तीं।

बोबरोव की आंखें नीना पर जमी हुई थीं। एक-दो बार तो वह नाचती हुई उसके इतने निकट से गुजरी कि उसकी पोशाक बोबरोव को छू गयी। यहां तक कि नीना की वेगवान गति से स्तब्ध हवा में उठती हुई थिरकन तक को उसने महसूस किया। नाचते समय उसका बायां हाथ अपने साथी के कंधे पर एक खूबसूरत अदा के साथ, कुछ विवश सा पड़ा रहता, और वह अपने सिर को

इस अन्दाज में टेढ़ा कर लेती मानो वह उसे अपने साथी के कंधे पर टिका देगी। जब तब उसे नृत्य करती हुई नीना की तेज रफ्तार के कारण उड़ती हुई पोशाक के नीचे से पेटीकोट के सिरे पर लगी लेस की किनारी, काली जुराबों में ढका हुआ नन्हा सा पैर, पतला सा टखना और सुडौल, मुड़ी हुई पिण्डलियां दिखलाई दे जाते। ऐसे क्षणों में न जाने क्यों वह लज्जारक्त हो जाता और उसे उन सब दर्शकों पर क्रोध आने लगता जो नीना को उस समय देख रहे होते।

नौ बज चुके थे। माजुर्का नृत्य आरम्भ हुआ। स्वेजेवस्की, जो अब तक नीना के संग नाच रहा था, किसी अन्य व्यक्ति के साथ बातचीत में उलझ गया। नीना को मुक्ति मिली। संगीत की लय पर पांव थिरकाती हुई, अपने अव्यवस्थित, बिखरे बालों को दोनों हाथों से संभालती हुई वह ड्रेसिंग-रूम की ओर तेजी से चल पड़ी। मैदान के दूसरे छोर से बोबरोव ने उसे देखा और तेजी से कदम बढ़ाता हुआ ड्रेसिंग-रूम के दरवाजे के सामने आ कर खड़ा हो गया। पेवेलियन के पीछे लकड़ी के तख्तों से बना हुआ वह छोटा सा ड्रेसिंग-रूम घनी छाया में छिपा था। "जब तक नीना बाहर नहीं निकलेगी, मैं यहीं खड़ा रहूंगा। इस बार सब कुछ कहलवा कर ही उसे छेड़ूंगा।" बोबरोव ने निश्चय किया। उसका दिल धौंकनी की तरह धड़क रहा था। उसकी मुट्ठियां कसी हुई थीं और ठंडी अंगुलियां पसीने से तरबतर हो रही थीं।

नीना पांच मिनट बाद बाहर आयी। बोबरोव अंधेरी छाया से निकलकर उसके सामने रास्ता रोककर खड़ा हो गया। नीना के मुंह से एक हल्की सी चीख निकल पड़ी और वह हड़बड़ा कर पीछे हट गई।

"नीना ग्रिगोरयेवना, तुम मुझे इस तरह तिलतिल करके क्यों जला रही हो?" बोबरोव के दोनों हाथ अभ्यर्थना की मुद्रा में एक दूसरे से जुड़ गये। "मुझे जो पीड़ा हो रही है, क्या तुम उससे बेखबर हो? आह, मैं समझ गया, तुम्हें मुझे सताने में ही आनन्द मिल रहा है। तुम इस वक्त भी मन-ही-मन मेरी खिल्ली उड़ा रही हो।"

"न मालूम तुम मुझ से क्या चाहते हो," नीना का दर्पपूर्ण अहम् हुंकार उठा। "मैंने स्वप्न में भी तुम्हारी खिल्ली उड़ाने की बात नहीं सोची है।"

उसकी खानदानी खूबियां सिर उठाने लगी थीं।

"अच्छा?" बोबरोव के स्वर में गहरी निराशा थी। "फिर आज तुम जिस अजीब ढंग से पेश आयी हो, उसका क्या कारण है?"

"कैसा अजीब ढंग?"

"मेरे प्रति तुम्हारा व्यवहार इतना शुष्क हो चला है, मानो मैं कोई तुम्हारा दुश्मन हूं। मुझ से कतराती फिरती हो। लगता है मेरी उपस्थिति भी तुम्हें खटकती है।"

"तुम्हारी उपस्थिति से मुझे कोई फर्क नहीं पड़ता।"

"वह तो और भी बुरा है। मुझे लगता है कि तुममें कोई अत्यंत भयानक परिवर्त्तन आ गया है, जिसे मैं समझ नहीं पाता। नीना, आज तक मैं तुम्हारी सच्चाई और ईमानदारी पर विश्वास करता आया हूं। फिर आज क्यों तुम इतना बदल गयी हो? क्यों नहीं अपने दिल की बात साफ-साफ, बिना किसी लाग-लपेट के मुझ से कह देतीं? मुझ से सच्ची बात कह दो, चाहे वह कितनी ही कड़वी क्यों न हो। अच्छा यही होगा कि मामला एक-बारगी निबट जाए।"

"कौन सा मामला निबटाना चाहते हो? तुम्हारी बात अबतक मेरे पल्ले नहीं पड़ी।"

बोबरोव की कनपटियों में रक्त की गति भीषण-रूप से तीव्र हो गयी। उसने हताश होकर दोनों हाथों से अपना माथा पकड़ लिया।

"तुम सब कुछ समझती हो और न समझने का बहाना कर रही हो! क्या हमारे बीच कभी कुछ ऐसा नहीं रहा, जिसे हमें सुलझाना है, तय करना है? प्यार-मुहब्बत के वे शब्द, जो एक प्रकार से हमारे प्रेम के सूचक थे, वे खूबसूरत लमहे, जब एक कोमल, स्निग्ध भावना की डोर ने हम दोनों को एक सूत्र में बांध दिया था—क्या वह सब तुम्हारे लिए कोई महत्व, कोई अर्थ नहीं रखते? मैं जानता हूं तुम कहोगी कि मुझे गलतफहमी हो गयी है। हो सकता है तुम्हारी बात सही हो। किन्तु क्या तुम्हीं ने मुझ से पिकनिक पर आने के लिए नहीं कहा था, ताकि हम दोनों एक दूसरे से अकेले में, निर्विघ्नरूप से बातचीत कर सकें?"

अचानक नीना के हृदय में उसके प्रति सहानुभूति उमड़ पड़ी। "ठीक है, मैंने तुमसे यहां आने के लिए कहा था," नीना ने धीरे से अपना सिर नीचे झुका कर कहा। "मैं तुमसे यह कहना चाह रही थी कि हमें सदा के लिए एक दूसरे से जुदा हो जाना चाहिये।"

बोबरोव को लगा मानो किसी ने अचानक उसकी छाती पर घूंसा मार दिया हो। उसके चेहरे पर फैलती हुई मुर्दनगी अंधेरे में भी नजर आ रही थी।

"जुदा हो जाना चाहिए?" बोबरोव ने छटपटाते हुए कहा। "नीना ग्रिगोरयेवना! जुदाई... जुदाई के शब्द हमेशा कठोर और कटु होते हैं... उन्हें अपनी जुबान पर मत लाओ।"

"नहीं, मुझे कहना ही होगा।"

"कहना ही होगा?"

"हां... लेकिन यह सब मेरी इच्छा से नहीं हो रहा।"

"फिर किसकी इच्छा से हो रहा है?"

उन दोनों को किसी व्यक्ति की पदचाप सुनायी दी। नीना ने अंधेरे में अपनी आंखें फैला दीं।

"इनकी इच्छा से..." उसने दबे स्वर में उत्तर दिया।

सामने अन्ना अफानास्येवना खड़ी थी। उसने बोबरोव और नीना को संदिग्ध दृष्टि से देखा, फिर अपनी लड़की का हाथ पकड़कर लताड़ते हुए स्वर में कहा, "तुम वहां से भाग क्यों आयीं नीना? भला यह भी क्या तमाशा है कि यहां अंधेरे में खड़ी-खड़ी गप्पें हांक रही हो। मैं तुम्हें ढूंढते-ढूंढते परेशान हो गयीं।" फिर उसने बोबरोव की ओर उन्मुख होकर तेज-तर्रार आवाज में कहा, "और जहां तक आपकी बात है, श्रीमान्, अगर आप नाचना नहीं जानते या उसमें भाग नहीं लेना चाहते तो एक तरफ अलग खड़े रहिये। लड़कियों को अंधेरे में रोककर उनके संग काना फूसी करना आपको शोभा नहीं देता। आपको उसकी मान-मर्यादा का जरा तो ख्याल रखना चाहिए।"

वह नीना को अपने पीछे घसीटती हुई आगे बढ़ गयी।

"मदाम, आप नाहक परेशान क्यों होती हैं! आपकी सुपुत्री की मान-मर्यादा पर कोई हाथ नहीं डाल सकता!" बोबरोव जोर से चिल्लाया और ठहाका मार कर हंस पड़ा। उसकी यह हंसी इतनी विचित्र और कड़ुवाहट भरी थी कि दोनों मां-बेटी हठात पीछे मुड़ कर उसकी ओर देखने लगीं।

"अब देखा तूने... मैंने तुझसे कहा न था कि यह आदमी एकदम उज्जड़ गंवार है, जिसे शर्म-हया छू तक नहीं गयी?" अन्ना अफानास्येवना ने नीना का हाथ पकड़ कर खींचा। "तुम चाहे उसके मुंह पर थूक भी दो, फिर भी वह ही-ही करता रहेगा। अच्छा, देखो अब नाच शुरू होने वाला है। स्त्रियां अपने-अपने साथियों को चुन रही हैं।" उसका स्वर अब किंचित शान्त हो गया था। "क्वाशनिन के पास जाओ और उसे नाच के लिए आमंत्रित करो। देखो, अभी-अभी खेल से फुरसत पाकर वह पेवेलियन के गलियारे में खड़ा है। जल्दी करो!"

"लेकिन मां... वह मुश्किल से तो चल पाता है, नाचेगा कैसे?"

"ज्यादा हुज्जत मत करो। जो मैं कह रही हूं, वही करो। एक जमाना था, जब मास्को के बेहतरीन नाचने वालों में उसकी गिनती होती थी। खैर, तुम पूछ तो लो... वह तुम्हारे पूछने से ही खुश हो जायगा।"

बोबरोव की आंखों के सामने अंधेरा सा छा गया। उसने देखा कि नीना फुर्ती से मैदान पार करती हुई क्वाशनिन के सामने जाकर खड़ी हो गयी थी। उसके होठों पर शोखी से भरी आकर्षक मुस्कान खेल रही थी, उसका सिर एक ओर ऐसे झुका था मानो वह मीठी याचना के डोर से क्वाशनिन को अपनी ओर खींच रहा हो। क्वाशनिन नीना की प्रार्थना सुनने के लिए तनिक आगे की ओर झुक गया। अचानक वह जोर से ठहाका मार कर हंस पड़ा और अस्वीकृति में

अपना सिर हिलाने लगा। नीना काफी देर तक आग्रह करती रही, किन्तु क्वाशनिन अपनी बात पर अड़ा रहा। आखिर नीना खिन्न भाव से पीछे मुड़ने लगी। किन्तु उसी क्षण क्वाशनिन बिजली की तेजी से लपक कर नीना के साथ हो लिया। इतने भारी डील-डौल का आदमी इतनी अधिक स्फूर्ति प्रदर्शित कर सकता है, यह एक अनोखी बात थी। नीना को रोक कर उसने अपने कंधों को इस तरह बिचकाया मानो कह रहा हो, "अच्छी बात है... दूसरा कोई चारा भी तो नहीं! बच्चों की बात तो रखनी ही पड़ती है!" उसने नीना की ओर अपना हाथ बढ़ा दिया। नाचते हुए जोड़ों के पांव सहसा रुक गये। सब लोग गहरे कौतूहल से इस नये जोड़े को देखने लगे। उन्हें यकीन था कि क्वाशनिन का 'माजुर्का' में भाग लेना एक मजेदार और दिलचस्प नजारा होगा।

क्वाशनिन क्षण भर निश्चल, बिना हिले-डुले बैंड-संगीत की प्रतीक्षा करता रहा, फिर अचानक एक अद्भुत गरिमा के साथ अपनी संगिनी की ओर मुड़ कर संगीत की ताल के साथ उसने अपना पहला कदम उठाया। उसकी प्रत्येक हरकत में अपना एक विशिष्ट गौरव था, एक गहरा आत्मविश्वास और विलक्षण दक्षता थी, जिसे देख कर कम-से-कम यह बात स्पष्ट हो जाती थी कि अपने जमाने में वह एक उत्कृष्ट नर्तक रहा होगा। गर्वीली, चुनौती भरी, विहंसती निगाहों से उसने नीना को देखा। संगीत की ताल पर नाचने के बजाय शुरू में वह एक लचकीली, किंचित लड़खड़ाती चाल से चल रहा था। उसे देखकर लगता था मानो उसकी ऊंचाई और उसका डील-डौल उसके लिए कोई बोझ या व्यवधान प्रस्तुत नहीं करते, उल्टे उसके व्यक्तित्व के गौरव और गरिमा को और अधिक बढ़ाने में योग देते हैं। मैदान के छोर पर पहुंच कर वह क्षण भर के लिए ठिठका, एड़ियां खटखटायीं, अपनी बाहों के सहारे नीना को घुमा लिया, और फिर अपनी मोटी टांगों पर नाचता हुआ मैदान के बीचोंबीच निकल गया। उसके चेहरे पर एक गर्वीली मुस्कान खेल रही थी। जब वह नीना को लेकर नाचता हुआ उस स्थान पर पहुंचा जहां से नृत्य आरम्भ हुआ था, तो एक बार फिर उसने नीना को एक चपल, कमनीय मुद्रा में चारों ओर तेजी से घुमाया। फिर सहसा उसे कुर्सी पर बिठा कर खुद उसके सम्मुख सिर झुकाकर खड़ा हो गया।

स्त्रियों के झुंड ने उसे चारों ओर से घेर लिया। प्रत्येक स्त्री उसके संग नाचने के लिए अनुरोध करने लगी। किन्तु क्वाशनिन अर्से से नाचने का आदी न रहा था और अपनी इस चेष्टा से थक कर चूर हो गया था। वह हांफता और अपने रूमाल से पंखा झलता जा रहा था।

"मुझे क्षमा करो... बूढ़ा आदमी ठहरा, नाचने की उम्र अब कहां रही है... आइये अब कुछ खाया-पिया जाये।" क्वाशनिन जोर-जोर से सांस लेता हुआ हंस रहा था।

लोग मेजों के इर्द-गिर्द इकट्ठा हो गये; कुर्सियों को खींचने-घसीटने की चर्र-मर्र आवाज हवा में फैलने लगी। बोबरोव मूर्तिवत उसी कोने में स्थिर, स्तब्ध सा खड़ा था, जहां नीना उसे छोड़ गयी थी। कभी वह आहत अभिमान से विक्षुब्ध हो उठता, तो कभी परवश घनीभूत पीड़ा उसे विकल बना देती। उसकी आंखों में आंसू नहीं थे, किन्तु उनमें एक तीखी सी जलन महसूस हो रही थी। उसे लगा मानो उसके गले में एक सूखा, कांटेदार गोला अटक गया है। संगीत की धुन पीड़ादायक एकरसता के साथ उसके मस्तिष्क में अब भी प्रतिध्वनित हो रही थी।

"अरे तुम यहां खड़े हो ? तुम्हारे लिए मैंने कोना-कोना छान डाला," उसे अपनी बगल से डाक्टर की खुशी से भरी आवाज सुनायी दी। "अमा, इतनी देर कहां छिपे थे ? मुझे तो आते ही ताश खेलने के लिए घसीट ले गये। अभी-अभी वहां से छुटकारा पाकर आ रहा हूं। आओ, कुछ खा पी लें। मैंने अपने और तुम्हारे लिए दो कुर्सियां सुरक्षित करवा ली हैं, ताकि हम दोनों संग ही बैठ कर खा सकें।"

"तुम जाकर खा आओ, डॉक्टर।" बोबरोव ने बड़ी कठिनता से उत्तर दिया। "अभी कुछ भी खाने की तबियत नहीं कर रही है... मैं तुम्हारे संग नहीं आ सकूंगा।"

"हूं... तुम नहीं आ सकोगे... ?" डॉक्टर बोबरोव के चेहरे को एकटक निहारता रहा। "लेकिन भाई, कुछ बात तो बताओ... इस तरह मुंह लटका कर क्यों खड़े हो ?" इस बार डॉक्टर का स्वर सहानुभूति से भरा था। "तुम जो कुछ भी कहो, मैं तुम्हें इस तरह अकेला नहीं छोड़ूंगा। चलो, अब ज्यादा बहस मत करो।"

"तबियत बहुत घबरा रही है डाक्टर, जी बैठा जा रहा है।" बोबरोव ने धीरे से कहा।

गोल्डबुर्ग बोबरोव को खींचते हुए अपने संग ले चला और वह यंत्रवत डॉक्टर के पीछे-पीछे चलने लगा।

"पागल मत बनो, क्या इस तरह से जी कच्चा किया जाता है ? सारी बात को दिल से निकाल फेंको। 'आत्म-परीक्षा है यह तेरी, अथवा उर में कसक उठी है ?'" डॉक्टर के मुंह से कविता की ये दो पंक्तियां निकल गयीं। बोबरोव के गले में हाथ डालकर वह स्नेह-भरी आंखों से उसकी ओर देखने लगा। "मेरे विचार में सब बीमारियों का केवल एक इलाज है : 'मेरे दोस्त वान्या, आओ पियें और पी कर मस्त हो जायें।' सच मानो, आज तो आन्द्रेयस के संग इतनी छक कर कोनियक पी है कि बस कुछ मत पूछो ! वह आदमी भी बिलकुल हरामी का पिल्ला है, पीता है, तो छोड़ने का नाम नहीं लेता। अरे,

आदमी बनो भाई ! जानते हो, आन्द्रेयस हमेशा तुम्हारे बारे में पूछ-ताछ करता रहता है। अब अड़ो नहीं, चले आओ !"

डॉक्टर बोबरोव को घसीटता हुआ पेवेलियन में ले गया। दोनों सट कर पास-पास बैठे। उसी मेज पर आन्द्रेयस भी बैठा था। वह दूर से ही बोबरोव को देख कर मुस्करा उठा था। अब उसने बोबरोव के लिए जगह बना दी और स्नेह से उसकी पीठ थपथपाने लगा।

"तुम्हें यहां देख कर मुझे बहुत खुशी हुई है। तुम अच्छे आदमी हो। सच कहता हूं, मैं तुम जैसे आदमियों को बहुत पसन्द करता हूं। कोनियक पियोगे ?"

वह नशे में धुत था। उसका चेहरा असाधारण रूप से पीला था और पथरायी सी आखों में एक विचित्र चमक थी। यह बात छः महीने बाद पता चली कि यह गम्भीर, मेहनती और प्रतिभावान व्यक्ति हर शाम अपने कमरे के निपट एकांत में बैठ कर तब तक शराब पिये जाता है, जब तक वह पूरी तरह संज्ञाहीन नहीं हो जाता।

"शायद थोड़ी पी लूं तो जी कुछ हल्का हो जाय ? कम-से-कम कोशिश तो कर ही देखूं !" बोबरोव ने सोचा।

आन्द्रेयस बोतल टेढ़ी किये उसके उत्तर की प्रतीक्षा कर रहा था। बोबरोव ने बोतल के नीचे एक गिलास सरका दिया।

"क्या गिलास में पियोगे ?" आन्द्रेयस की भौहें मानो विस्मय में फैल गयीं।

"हां," बोबरोव ने उत्तर दिया। उससे होठों पर भीगी सी विषादपूर्ण मुस्कराहट सिमट आयी।

"कितनी डालूं ?"

"जितनी गिलास में आ सके।"

"वाह रे मेरे दोस्त ! जान पड़ता है कि तुम स्वीडन की नौ-सेना में काम कर चुके हो। बस करूं या और ?"

"डालते जाओ।"

"अरे भई, होश करो, यह कोनियक ऐसी-वैसी नहीं है, *वी. एस. ओ. पी. ब्रांड* है — असली, तेज और पुरानी शराब !"

"फिक्र मत करो — डालते जाओ।"

"पी कर नशे में धुत भी हो जाऊं, तो किसी का क्या बिगड़ेगा ... नीना भी तो जरा देखे !" उसने सोचा। उसके हृदय में आत्म-उत्पीड़न का भाव उमड़ पड़ा।

गिलास लबालब भर गया। बोबरोव ने एक ही घूंट में गिलास खाली कर दिया। आन्द्रेयस, जो बोतल को मेज पर रख कर कौतूहल भरी दृष्टि से बोबरोव को देख रहा था, अचानक कांप उठा।

"बेटा, लगता है कोई बात तुम्हें घुन की तरह खाये जा रही है। क्यों, ठीक है न?" आन्द्रेयस का स्वर सहानुभूति से ओत-प्रोत था। वह बड़े गौर से बोबरोव की आंखों को देख रहा था।

"हां," बोबरोव ने खिन्न मुद्रा में सिर हिला दिया।

"दिल में कोई चीज चुभती रहती है क्या?"

"हां।"

"हूं ... यह बात है! फिर तो भाई तुम्हें शायद और जरूरत पड़ेगी।"

"गिलास भर दो।" बोबरोव का स्वर एकदम निरीह सा हो आया।

कोनियक पीते हुए उसे उबकाई सी आ रही थी, किन्तु अपनी पीड़ा को दबाने के लिए वह गिलास-पर-गिलास चढाये जा रहा था। विचित्र बात यह थी कि शराब का उस पर कोई असर नहीं हो रहा था। उलटे उसकी उदासी और अधिक घनी, गहरी होती गयी और उसकी आंखें गर्म आंसुओं से जलने लगीं।

बैरों ने गिलासों को शैम्पेन से भरना शुरू कर दिया था।

क्वाशनिन दो अंगुलियों से गिलास को पकड़ कर कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और गिलास के शैम्पेन के बीच में से शमादान की रोशनी को देखने लगा। चारों ओर निस्तब्धता छा गयी। आर्क लैंपों की बत्तियों की सर्र-सर्र और झींगुरों के अनवरत गुंजन के अतिरिक्त और कुछ भी सुनायी नहीं देता था।

क्वाशनिन ने खंखार कर गला साफ किया।

"महानुभावो, महिलाओ!" यह कह कर वह कुछ देर के लिए चुप हो रहा। यह चुप्पी भी लोगों को प्रभावित करने की एक अदा थी। "आप मुझ पर विश्वास करें कि यह जाम पीते हुए मेरे मन में आपके प्रति कृतज्ञता की भावना उमड़ रही है। इवानकोवो में आप लोगों ने मेरा जो भव्य स्वागत किया, उसे मैं कभी नहीं भूलूंगा। आज रात की पिकनिक — जिसकी सफलता का बहुत बड़ा श्रेय उन महिलाओं को है, जिन्होंने यहां आने का कष्ट किया है — मेरे जीवन में चिरस्मरणीय रहेगी। मैं यह जाम उपस्थित महिलाओं के स्वास्थ्य के लिए उठाता हूं!"

उसने गिलास घुमाकर हवा में अर्ध-वृत्त सा खींच दिया और फिर उसे मुंह के पास ले आया। एक छोटा सा घूंट पीकर उसने अपना भाषण शुरू किया। "इस अवसर पर मैं कुछ बातें अपने साथियों और सहयोगियों से भी कहना चाहूंगा। अगर मेरी बातों से लेक्चर की गन्ध आने लगे, तो आप बुरा न

मानइगा। आप लोगों की अपेक्षा मेरी उम्र काफी पक गयी है, एक बूढ़े आदमी को कम-से-कम लेक्चर देने की छूट तो आप को देनी ही चाहिए !"

"उस मक्कार स्वेजेवस्की को तो जरा देखो, कैसा मुंह बना रहा है।" आन्द्रेयस बोबरोव के कान में धीरे में फुसफुसाया।

स्वेजेवस्की गहरी भक्ति और श्रद्धा भाव से क्वाशनिन की ओर ताक रहा था — मानो क्वाशनिन के मुंह से शब्दों के बदले मोती झर रहे हों। जब क्वाशनिन ने अपने बुढ़ापे का जिक्र किया, तो स्वेजेवस्की ने बड़े जोरों से अपना सिर और हाथ हिला कर असहमति प्रकट की।

"मैं एक बहुत पुरानी और घिसी-पिटी बात कहने जा रहा हूं — जो आप लोगों ने अक्सर अखबारों के संपादकीय लेखों में पढ़ी होगी।" क्वाशनिन ने अपना भाषण जारी रखते हुए कहा। "हमें अपना झंडा हमेशा ऊंचा रखना चाहिये। हम धरती के सर्वोत्तम रत्न हैं, भविष्य हमारा है। यह एक ऐसा निर्विवाद सत्य है, जिसे हमें कभी नहीं भूलना चाहिये। सारी पृथ्वी पर रेलों का जाल बिछाने का श्रेय क्या हमें नहीं जाता ? क्या हमने धरती के गर्भ में निहित अमूल्य निधियों को बाहर निकालकर उन्हें बन्दूकों, इंजनों, रेल की पटरियों, पुलों और बृहतकाय मशीनों में परिणत नहीं कर दिया ? हमने जिन विशाल, दुर्गम उद्योगों को आरम्भ करके करोड़ों रूबलों की पूंजी का निर्माण किया है, क्या औद्योगिक प्रगति के लिये वह कम महत्वपूर्ण बात है ? सज्जनो और महिलाओ, प्रकृति अपनी समूची सृजनात्मक शक्ति को एक राष्ट्र का निर्माण करने में केवल इसलिये लगाती है कि उसमें से एक-दो दर्जन ऐसे व्यक्ति निकल सकें, जो असाधारण, विलक्षण प्रतिभा से सम्पन्न हों। इसलिये महानुभावो और महिलाओ ! हमें अपने में इतना साहस और शक्ति उत्पन्न करनी चाहिये कि हम भी इन असाधारण पुरुषों की कोटि में अपने को शामिल कर सकें !"
"हुर्रा !" सब लोग एक-कंठ से चिल्लाए। स्वेजेवस्की का स्वर सबसे ऊंचा था।

एक-एक करके सब लोग उठने लगे। उनमें से हर व्यक्ति यह चाहता था कि वह जल्द-से-जल्द क्वाशनिन के पास पहुंचकर उसके गिलास से अपना गिलास खनखना सके।

"इससे बढ़कर और निंदनीय भाषण क्या होगा ?" डॉक्टर ने दबे होंठों से कहा।

अगला वक्ता शेलकोवनिकोव था। "महानुभावो और महिलाओ !" वह जोर से चिल्लाया। "यह जाम हमारे आदरणीय संरक्षक, प्रिय गुरु और इस समय हमारे मेजबान — वासिली तेरन्त्येविच क्वाशनिन के स्वास्थ्य के लिये है ! हुर्रा !"

"हुर्रा !" उपस्थित श्रोतागण एक साथ जोर से चिल्लाए और एक बार फिर क्वाशनिन की ओर लपके, ताकि उसके गिलास से अपना गिलास खनखना सकें।

फिर तो धुआंधार भाषण दिये जाने लगे। उद्योग की सफलता, अनुपस्थित भागीदारों, पिकनिक में उपस्थित महिलाओं और सामान्य रूप से सब महिलाओं के नाम पर जाम पिये जाने लगे। कुछ जामों को पीने से पूर्व ऐसे अस्पष्ट संकेत भी किये गये, जिनसे अश्लीलता की गन्ध आती थी।

एक दर्जन के करीब शैम्पेन की बोतलें खोली जा चुकी थीं। लोगों पर नशे का रंग चढ़ने लगा। पेवेलियन ऊंची-नीची आवाजों के कोलाहल से गूंजने लगा। हर व्यक्ति को जाम उठाने से पूर्व चाकू से देर तक गिलास खटखटाना पड़ता था, ताकि वह अपने भाषण के प्रति लोगों का ध्यान आकर्षित कर सके। एक अलग मेज पर खूबसूरत जवान मिलर चांदी के एक बड़े प्याले में विभिन्न मदिराएं मिला 'काकटेल' तैयार कर रहा था। सहसा क्वाशनिन अपनी कुर्सी से उठ खड़ा हुआ। उसके होठों पर एक भेद-भरी मुस्कान खेल रही थी।

"महानुभावो और महिलाओ! आज रात इस समारोह के अवसर पर मैं एक खुशखबरी की घोषणा करना चाहता हूं।" उसकी भाव-मुद्रा से शिष्टाचार की आकर्षक मधुरिमा टपक रही थी। "आज के दिन नीना ग्रिगोरयेवना जिनेन्को की शादी ..." क्वाशनिन बीच में हकलाने लगा। वह स्वेजेवस्की का नाम और पितृ-नाम भूल गया था। "हमारे साथी श्री स्वेजेवस्की के संग होनी निश्चित हुई है। आइए, इस शुभ अवसर पर हम दोनों के स्वास्थ्य के लिए जाम उठाएं और उन्हें अपनी सदभावनाएं और बधाइयां भेंट करें।"

इस सर्वथा अप्रत्याशित समाचार को सुनकर लोग हैरत में पड़ गये और जोर-जोर से करतल-ध्वनि करने लगे। आन्द्रेयस को लगा मानो उसके पास बैठे हुए किसी व्यक्ति ने एक गहरा दर्द भरा उच्छ्वास छोड़ा हो। उसकी आंखें अचानक बोबरोव पर टिक गयीं। बोबरोव का चेहरा घनीभूत मर्मान्तक पीड़ा से विकृत हो गया था।

"प्यारे साथी, तुम सारी कहानी नहीं जानते," आन्द्रेयस ने दबे होठों से कहा। "जरा मेरा भाषण ध्यान से सुनना, आंखें खुल जाएंगी।"

एक गहरे आत्मविश्वास के साथ वह कुर्सी पीछे धकेल कर खड़ा हो गया। मेज पर झटका लगने से उसके गिलास की आधी शराब नीचे छलक आयी।

"महानुभावो और महिलाओ!" उसने ऊंची आवाज में बोलना शुरू किया। "ऐसा जान पड़ता है कि हमारे मेजबान ने विवेकपूर्ण उदारता के कारण कुछ बातें अनकही छोड़ दी हैं। हमें अपने प्रिय साथी श्री स्वेजेवस्की को उनकी तरक्की पर बधाई देनी चाहिये। अगले महीने से वह कम्पनी के

संचालक-मंडल के व्यापार-मैनेजर के उच्च पद को सुशोभित करेंगे। माननीय वसिली तेरन्त्येविच की ओर से विवाह के शुभ अवसर पर यह पद नव-दम्पत्ति को उपहार-स्वरूप भेंट किया जाएगा। आदरणीय संरक्षक के चेहरे को देखकर मुझे लगता है कि वह मेरी इस घोषणा से अप्रसन्न हो गये हैं। शायद वह इस बात को अन्त तक गुप्त रखना चाहते थे ताकि ऐन मौके पर श्री स्वेजेवस्की की नियुक्ति की घोषणा करके वह आप लोगों को चकित करने का आनन्द उठा सकें। मुझे अपनी इस भूल पर खेद है और मैं उनसे क्षमा मांगे लेता हूं। किन्तु श्री स्वेजेवस्की के प्रति मेरे मन में मित्रता और सम्मान की गहरी भावना है। इसलिए यह उचित ही होगा यदि इस अवसर पर मैं यह आशा प्रकट करूं कि जिस प्रकार यहां उन्होंने एक सक्षम कार्यकर्त्ता और हितैषी मित्र के गुण हमारे सम्मुख प्रदर्शित किये हैं, उसी प्रकार पीटर्सबर्ग के इस नये पद पर वह अपने गुणों से दूसरों को प्रभावित कर सकेंगे। किन्तु सज्जनो और महिलाओ, मैं यह भी जानता हूं कि आप में से कोई भी व्यक्ति श्री स्वेजेवस्की के सौभाग्य पर ईर्ष्या नहीं करेगा।" आन्द्रेयस ने स्वेजेवस्की पर एक व्यंग्यात्मक दृष्टि फेंकी और कहता गया, "क्योंकि उनके प्रति अपनी शुभकामनाएं प्रकट करते हुए हमें इतना हर्ष हो रहा है कि..."

किन्तु उसी समय घोड़े की टापों की आवाज सुनायी दी। आन्द्रेयस का भाषण बीच में ही रुक गया। वृक्षों के पीछे से घोड़े पर सवार एक व्यक्ति प्रकट हुआ, जिसका सिर नंगा था और चेहरे पर गहरे आतंक की छाप थी। घोड़े का मुंह झाग से लथपथ था। मैदान के बीच में थकान से थर-थर कांपते घोड़े से नीचे उतरकर वह व्यक्ति दौड़ता हुआ क्वाशनिन के पास पहुंचा और उसके कान में कुछ कहने लगा। वह एक फोरमैन था जो ठेकेदार देखतेरेव के अधीन काम किया करता था। पेवेलियन में अचानक मरघट का सा मौन छा गया। केवल लालटैनों की बत्तियों की सरसराहट और झींगुरों के टर्राने की बेतुकी आवाज सुनाई पड़ रही थी।

क्वाशनिन का चेहरा, जो अधिक शराब पीने के कारण लाल हो गया था, अचानक पीला पड़ गया। उसने कांपते हाथों से गिलास मेज पर रख दिया — शराब की कुछ बूंदें मेजपोश पर छलक आयीं।

"और बेल्जियन लोग क्या कर रहे हैं?" उसने रुंधे स्वर से पूछा।

फोरमैन ने अपना सर हिलाया और एक बार फिर क्वाशनिन के कानों में कुछ फुसफुसाने लगा। "सब सत्यानाश कर दिया!" क्वाशनिन चीख उठा। वह कुर्सी से उठ खड़ा हुआ और अपने हाथों से नेपकिन को मसलने लगा। "कैसी खुराफात है। जरा ठहरो, गवर्नर को फौरन एक तार देना होगा। सज्जनो और महिलाओ!" उसने ऊंची, कांपती हुई आवाज में कहा, "मिल

में फसाद हो गया है। हमें तुरन्त कोई कार्रवाई करनी होगी। मेरे विचार में हमें फौरन यहां से चल देना चाहिये।"

"मैं जानता था कि एक दिन जरूर कुछ-न-कुछ हो कर रहेगा," आन्द्रेयस ने स्थिर, प्रकृतस्थ भाव से कहा। किन्तु उसकी शान्त मुद्रा के पीछे घृणा और क्रोध की भावना छिपी थी।

लोग बेचैनी और घबड़ाहट में इधर-उधर भागने लगे। किन्तु आन्द्रेयस उनके प्रति सर्वथा उदासीन था। उसने धीरे से एक नया सिगार निकाला, अपने गिलास को कोनियक से भर लिया और जेब में हाथ डालकर दियासलाई की डब्बी टटोलने लगा।

ग्यारह

चारों ओर भगदड़ मची हुई थी। पेवेलियन की भीड़ में लोग एक-दूसरे को धकेलते, घसीटते, चीखते-चिल्लाते, गिरी हुई कुर्सियों से टकराते बेतहाशा भागे जा रहे थे। स्त्रियां कांपते हाथों से जल्दी-जल्दी अपने हैट पहन रही थीं। न जाने क्यों, किसी ने बिजली के बल्बों को बुझाने का आदेश दे दिया था, जिससे और भी ज्यादा खलबली मच गयी थी। स्त्रियों की बदहवास, घबड़ायी हुई चीखें बार-बार अंधेरे मे गूंज उठती थीं।

लगभग पांच बजे होंगे। अभी सूर्योदय नहीं हुआ था, किन्तु आकाश का रंग काफी फीका पड़ गया था। उसके भूरे, मटियाले रंग को देखकर बारिश के आसार नजर आते थे। विद्युत-प्रकाश के बाद सहसा सुबह के धुंधले उजलेपन में आदमियों की यह भगदड़ और कोलाहल और भी अधिक भयावह और कुछ-कुछ अवास्तविक से जान पड़ते थे। आदमियों की चलती-फिरती आकृतियों को देखकर लगता था मानो किसी भयावह पैशाचिक परी-देश की प्रेत-छायाएं विचर रही हैं। रात भर जागते रहने के कारण सबके चेहरे इतने अधिक मुरझा गये थे कि उन्हें देखकर दिल कांप उठता था। खाने की मेज पर शराब के धब्बों और चारों ओर बिखरी हुई तश्तरियों, गिलासों और बोतलों को देखकर लगता था मानो राक्षसों द्वारा आयोजित किसी विराट भोज को किसी ने अचानक बीच में ही भंग कर दिया हो।

बग्गियों के इर्द-गिर्द जो गड़बड़ हो रही थी, वह तो और भी ज्यादा खौफनाक थी। भयभीत घोड़े जोर-जोर से हिनहिना रहे थे, दुलत्तियां झाड़ रहे थे और लगाम छुड़ाकर काबू से बाहर हुए जा रहे थे। दूसरी तरफ बग्गियों का बुरा हाल था—पहिये आपस में उलझ कर टूट रहे थे। इंजीनियर अपने-अपने कोचवानों को बुला रहे थे, किन्तु कोचवानों को आपस में लड़ने-झगड़ने

से ही फ़ुरसत नहीं थी। यह एक ऐसा भयंकर दृश्य था, जिसे देखकर लगता था मानो रात के समय अचानक उस स्थान पर बड़ी भारी आग लग गयी हो। इतने में शोर और कोलाहल को चीरती हुई एक चीख सुनायी दी — शायद कोई पहियों के नीचे दब गया था अथवा धक्कम-धक्का में कोई आदमी कुचल कर मर गया था।

इस भीड़-भड़क्कम में बोबरोव को मित्रोफान कहीं न दिखायी पड़ा। एक-दो बार उसे लगा था कि गाड़ियों के अपार समूह में से वह उसे बुला रहा है, किन्तु बीच का रास्ता, जो बग्गियों और लोगों की भीड़ से अटा पड़ा था, पार करके मित्रोफान तक पहुंचना उसके लिए असम्भव था।

अचानक भीड़ के ऊपर अंधेरे में एक मशाल दिखलायी दी। सड़क के दोनों ओर से आवाजें सुनायी देने लगीं : "एक तरफ हो जाइए बहिन जी! रास्ता छोड़िए, महानुभावो!" पीछे से भीड़ का एक जबरदस्त रेला आया और बोबरोव को धकेलता हुआ आगे की ओर ले गया। बोबरोव के पांव जमीन से उखड़ गये और वह बड़ी मुश्किल से अपने को गिरने से बचा पाया। जब वह कुछ संभला तो उसने देखा कि वह दो बग्गियों के बीच फंस गया है। उसने अपनी आंखें ऊपर उठायीं। सामने चौड़ी सड़क खाली पड़ी थी और गाड़ियां दोनों तरफ किनारों पर सिमट आयी थीं। बीच सड़क पर क्वाशनिन की बग्गी चली जा रही थी। बग्गी के ऊपर मशाल की ज्वाला का जगमगाता रक्तिम आलोक क्वाशनिन के भारी-भरकम शरीर पर पड़ रहा था।

भीड़ के लोग, एक-दूसरे को धकेलते-ठेलते, भय, पीड़ा और क्रोध से चिल्लाते हुए क्वाशनिन की बग्गी के पीछे भाग रहे थे। बोबरोव की कनपटियां फड़कने लगीं। उसे लगा मानो बग्गी में क्वाशनिन के स्थान पर प्राचीन काल के किसी भीमकाय, भयंकर, रक्तरंजित देवता की मूर्ति विराजमान है, जिसके रथ के नीचे धार्मिक जलूसों के दौरान में धर्मोन्मादित लोग अपने-आपको न्योछावर कर देते हैं। बोबरोव का समूचा शरीर असहाय क्रोध से थरथर कांप उठा।

क्वाशनिन के जाने के बाद भीड़ का जोर कुछ कम हुआ। बोबरोव ने पीछे मुड़कर देखा कि उसकी अपनी फिटन की बल्ली ही उसकी पीठ पर चुभ रही थी। उसका कोचवान मित्रोफान फिटन की अगली सीट के पास खड़ा मशाल जला रहा था।

"मित्रोफान! झटपट मिल की तरफ चलो!" बोबरोव जोर से चिल्लाया और उछलकर फिटन में बैठ गया। "हमें दस मिनट में वहां पहुंच जाना चाहिए। समझ गये?"

"जी, हजूर," मित्रोफान ने अनमने भाव से उत्तर दिया।

वह नीचे उतर गया और फिटन का चक्कर काटकर दूसरी तरफ चला आया। हर मर्यादाशील कोचवान की तरह वह हमेशा दाहिने दरवाजे से ही बग्गी में घुसा करता था। घोड़ों की लगाम हाथ में पकड़ते हुए उसने कहा:

"अगर घोड़े मर-मरा जाएं मालिक, तो मुझे दोष मत दीजियेगा।"

"कोई परवाह नहीं... जरा जल्दी करो।" मित्रोफान बग्गियों और घोड़ों की भीड़ में रास्ता बनाता हुआ बड़ी सावधानी और कठिनता से धीरे-धीरे आगे बढ़ने लगा। घोड़े आगे भागने के लिए बेचैन थे। आखिर जंगल की पगडंडी पर आते ही उसने लगाम ढीली छोड़ दी। खुली छूट मिलते ही घोड़े सरपट दौड़ने लगे। ऊबड़-खाबड़ सड़क पर झाड़-झंकाड़ उग आए थे, जिसके कारण बग्गी कभी दायीं तो कभी बायीं ओर डोलने लगती थी। मुसाफिर और कोचवान — दोनों को ही झटके लगते थे और उन्हें बार-बार अपना सन्तुलन कायम रखना पड़ता था।

मशाल की रक्तिम ज्वाला सिर्र-सिर्र करती हवा में कांप रही थी। पेड़ों की लम्बी, विकृत छायाएं मशाल के आलोक में बग्गी के इर्द-गिर्द नाच उठती थीं। ऐसा जान पड़ता था मानो भूत-प्रेतों की लम्बी, पतली छायाओं का दल बग्गी के साथ-साथ विचित्र, बेढंगी नृत्य-मुद्राएं बनाता, नाचता हुआ दौड़ा चला जा रहा है। कभी-कभी ये प्रेत-छायाएं विशालकाय रूप धारण करती हुई घोड़ों से आगे बढ़ जाती थीं, किन्तु कुछ ही क्षण बाद उनका वृहत् आकार धरती पर झुकता हुआ सिकुड़ने लगता था और वे तेजी से बोबरोव के पीछे खिसकती हुई अंधकार में विलीन हो जातीं थीं; कुछ क्षणों के लिए उनकी आकृतियां आस-पास की झाड़ियों पर नाचने लगतीं, फिर एकदम झाड़ियों से उतर कर बग्गी के बिलकुल निकट फुदक आतीं; कभी-कभी वे एक लम्बी पांत बनाकर डोलते, डगमगाते पैरों पर बग्गी के साथ धीरे-धीरे खिसकने लगतीं, मानो आपस में दबे स्वरों में बातचीत करती हुई चली आ रही हों। अनेक बार, सड़क के दोनों ओर लगी हुई घनी झाड़ियों की बाहर को निकली हुई टहनियां, लम्बे पतले हाथों के समान झपटकर मित्रोफान और बोबरोव के चेहरों पर थप्पड़ जमाती हुई निकल जातीं।

आखिर वे लोग जंगल के बाहर निकल आये। घोड़े गंदले पानी के एक पोखर को छप-छप करते हुए पार करने लगे। पोखर के पानी में मशाल की रक्तिम ज्वाला का प्रतिबिंब कभी लहरों के साथ उछलता तो कभी छितरकर बिखर जाता। पोखर पीछे छूट गया। अचानक घोड़े चौकड़ी भरते हुए बग्गी को एक ऊंचे टीले पर खींच लाए। सामने एक भयावह, काला मैदान फैला हुआ था।

"मित्रोफान, जरा और तेज, वरना हम वक्त से न पहुंच पाएंगे!" बोबरोव अधीर होकर चिल्लाया, यद्यपि बग्गी पूरी रफ्तार से सरपट भागी जा

रही थी। मित्रोफान अपनी दनदनाती आवाज में बुड़बुड़ाया और फेयरवे पर, जो साथ-साथ चौकड़ी भरता हुआ दौड़ रहा था, सड़ाक से चाबुक जमा दी। मित्रोफान समझ नहीं पा रहा था कि उसका मालिक, जो अपने घोड़ों को जी-जान से प्यार किया करता था, आज क्यों उनकी जान लेने पर तुला हुआ है।

एक भयंकर आग की लपटों की अरुण आभा दूर क्षितिज पर तिरते बादलों को अपनी लालिमा से रंग रही थी। रक्त-रंजित आकाश को देख कर बोबरोव की आंखें क्रूर अट्टाहास में चमकने लगीं। अब कोई गलतफहमी बाकी नहीं रह गयी थी। आन्द्रेयस ने जाम पेश करते हुए जो भाषण दिया था, उसने उसके तमाम भ्रमों को बड़ी निर्दयता से चूर-चूर कर दिया था और उसकी आंखें खुल गयी थीं। उसके प्रति नीना का रूखा उदासीन भाव, माजुर्का-नृत्य के अवसर पर नीना की मां का उस पर आंखें तरेरना, क्वाशनिन के साथ स्वेजेवस्की की घनिष्ठता—उसे अब इन सब पहेलियों का उत्तर मिल गया था। क्वाशनिन और नीना को लेकर मिल में जो अफवाहें उड़ी थीं, वे अब उसे याद आने लगीं। "लाल बालों वाला राक्षस ! ठीक ही हुआ जो यह आग लगी !" वह गुस्से में दांत पीसता हुआ बुड़बुड़ाया। उसके हृदय में क्रोध और आहत आत्माभिमान की ऐसी प्रचण्ड ज्वाला धधक उठी कि उसका मुंह सूख चला। "अगर इस समय उससे मुलाकात हो जाय," बोबरोव ने सोचा, "तो बच्चू की सारी ढीटाई दूर कर दूं। बूढ़ा बदमाश कहीं का—जवान लड़कियों का मोल-तोल करता फिरता है ! आदमी नहीं है धूर्त। सोने की मोहरों से भरा गन्दा तोंदिल थैला है ! अब कभी मिला तो उसके तांबे के मस्तक पर ऐसा धौल जमाऊं कि जिन्दगी भर के लिए यादगार छूट जाय।"

इतनी शराब पीने के बावजूद उसके होश-हवास गुम न हुए थे। वह अपने में एक अजीब, असाधारण-सी स्फूर्ति का अनुभव कर रहा था। कुछ कर गुजरने के लिए उसका मन उतावला हो रहा था। उसका समूचा शरीर पत्ते की तरह कांप रहा था, दांत किटकिटा रहे थे और एक ज्वरग्रस्त व्यक्ति के समान उसका उद्‌भ्रान्त मस्तिष्क अनर्गल विचारों के प्रवाह में बहने लगा था। वह कभी जोर-जोर से बुदबुदाने लगता, तो कभी कराह उठता, और कभी-कभी अपने आप ठहाका मार कर हंसने लगता था। उसकी तनी हुई मुट्ठियां खुद-ब-खुद उठ जाती थीं।

"मालिक ! आप कुछ अस्वस्थ से दिखायी देते हैं। क्या यह बेहतर नहीं होगा कि घर जाकर आप आराम करें ?" मित्रोफान ने डरते-डरते पूछा।

बोबरोव गुस्से से तिलमिला उठा।

"चुप हो जा, गधे !" वह कर्कश आवाज में चिल्लाया। "बढ़े चल !" कुछ ही देर में वे एक टीले की चोटी पर पहुंच गये, जहां से उन्होंने देखा कि

दूधिया-गुलाबी धुएं ने सारी मिल को ढंक लिया था। उसके परे लकड़ी जमा करने का गोदाम आग की लपटों से घिरा हुआ धू-धू करके जल रहा था। आग की जगमगाती पृष्ठभूमि में छोटी-छोटी मानव आकृतियों की काली छायाएं इधर-उधर मंडरा रही थीं। सूखी लकड़ी के तड़-तड़ जलने की आवाज़ दूर से ही सुनायी दे जाती थी। एक क्षण के लिए उष्ण-पवन चूल्हों और भट्टियों की गोल बुर्जियां चमक जातीं और फिर अंधेरे में विलीन हो जातीं। मिल के पास ही चौकोर तालाब के मटियाले जल में आग की लपलपाती लपटों का रक्तिम आलोक फैल गया था। तालाब के बांध पर लोगों की विशाल भीड़ कसमसाती हुई धीरे-धीरे आगे सरक रही थी। इस छोटे से, तंग, संकुचित स्थान में सिमटी विशाल भीड़ में से एक विचित्र, अस्पष्ट और भयावह गर्जना उठ रही थी, मानो कहीं दूर समुद्र की लहरें चट्टानों से टकरा रही हों।

"गाड़ी को इधर कहां हांक रहा है, बेवकूफ! देखता नहीं, आगे कितना जमघट है, कुतिया के पिल्ले?" सामने सड़क पर कोई चिल्लाया। अगले ही क्षण एक लम्बा दाढ़ीवाला आदमी इस तरह प्रकट हुआ, मानो घोड़ों के खुरों के नीचे से निकलकर आया हो। उसके नंगे सिर पर चारों ओर सफेद पट्टियां बंधी थीं।

"बढ़ते जाओ, मित्रोफान!" बोबरोव जोर से चिल्लाया।

"मालिक, उन्होंने मिल को आग लगा दी है," मित्रोफान का स्वर कांप रहा था।

दूसरे ही क्षण पीछे से एक पत्थर सनसनाता हुआ आया। बोबरोव को अपनी दाहिनी कनपटी के ऊपर गहरी पीड़ा अनुभव हुई। उसने अपनी कनपटी को छुआ और हाथ उठाया तो देखा कि वह गर्म खून से लिसा हुआ था।

बग्गी सरपट दौड़ती रही। आग की रक्तिम आभा अधिक उज्ज्वल हो गई। घोड़ों की लम्बी छायाएं कभी सड़क के एक ओर तो कभी दूसरी ओर दौड़ती प्रतीत होती थीं; कभी-कभी बोबरोव को ऐसा महसूस होता था कि वह अंधाधुंध एक ढलुवां सड़क पर फिसलता जा रहा है और पल दो पल में वह गाड़ी और घोड़ों समेत एक गहरी अंधेरी खाई में लुढ़क पड़ेगा। वह संज्ञा-हीन-सा अपनी सीट पर बैठा था। बग्गी जिस रास्ते से गुजर रही थी, उसे पहचान पाना भी उसके लिए कठिन हो रहा था। अचानक घोड़ों के पांव रुक गये। बग्गी ठहर गयी।

"रुक क्यों गये, मित्रोफान?" उसने झुंझलाकर पूछा।

"अब और आगे कैसे चलूं? सारी सड़क तो लोगों से अटी पड़ी है!" मित्रोफान के स्वर से दबा क्रोध झलक रहा था।

बड़े भोर के झुटपुटे में बोब्रोव को कुछ भी दिखायी नहीं दे रहा था, केवल सामने एक ऊंची-नीची सी काली दिवार खड़ी थी और ऊपर रक्तरंजित आकाश फैला था।

"ख्वामख्वाह क्यों बकते हो, कहां है लोगों की भीड़?" बोबरोव बग्गी से नीचे उतर कर घोड़ों के पास आ गया, जो झाग से लथपथ थे। घोड़ों को पीछे छोड़कर जब वह कुछ आगे बढ़ा तो उसने देखा कि जिसे वह अब तक काली दीवार समझे बैठा था, वह मजदूरों का एक विशाल हुजूम था, जो सड़क पर चुपचाप धीरे-धीरे चला जा रहा था। बोबरोव भी लगभग पचास कदमों तक मजदूरों के पीछे-पीछे यंत्रवत् चलता रहा। फिर वह मित्रोफान को यह कहने के लिए पीछे मुड़ा कि वह मिल तक जाने के लिए बग्गी को किसी दूसरे रास्ते पर मोड़ ले। किन्तु बोबरोव ने वापिस आकर देखा कि मित्रोफान और घोड़ों का कहीं पता नहीं। बोबरोव समझ न पाया कि मित्रोफान उसे कहीं ढूंढने निकल गया या वह स्वयं रास्ते से भटक गया है। उसने कोचवान को दो-चार आवाजें दीं, किन्तु कोई उत्तर नहीं मिला। आखिर निराश होकर वह मजदूरों के जलूस में शामिल होने के लिए उसी दिशा में चल पड़ा। वह दूर तक उस सड़क पर चलता रहा, किन्तु मजदूरों का कहीं पता न चला। न जाने इतनी सी देर में वे कहां गायब हो गये थे? मजदूरों के बजाय वह एक लकड़ी की नीची मेड़ से जा टकराया।

उस मेड़ का कहीं अन्त न दिखाई देता था, न दायीं ओर, न बायीं ओर। बोबरोव उसे कूद कर पार कर गया और एक ऊंची पहाड़ी पर—जो लम्बी घनी घास से ढंकी हुई थी—चढ़ने लगा। उसके चेहरे पर ठंडे पसीने की धार बहने लगी और जुबान सूखकर काठ के टुकड़े की तरह ऐंठ गयी। हर सांस के साथ उसकी छाती में दर्द की एक लहर उमड़ पड़ती थी। उसके सिर की रक्त-नाड़ियां बहुत तेजी से स्पन्दित हो रही थीं। उसकी कनपटी के घाव में बुरी तरह दर्द हो रहा था।

चढ़ाई का कोई ओर-छोर नजर नहीं आता था। चलते-चलते उसका क्लान्त-श्रान्त मन एक गहरी निराशा के बोझ के नीचे दबने लगा। किन्तु एक जिद थी, जो उसे आगे घसीटे ले जाती थी। वह बार-बार ठोकर खाता था, घुटने लहु-लुहान हो गये थे, फिर भी गिरता-पड़ता, कांटेदार झाड़ियों को पकड़ता हुआ वह चढ़ता जाता था। "क्या यह सत्य है—अथवा मानसिक संताप के कुहरे में घिरा एक दुःस्वप्न, जहां वह एक ज्वरग्रस्त प्राणी की तरह भटक रहा है? भयाकुल मन की कातरता, सड़क पर निरुद्देश्य भटकते रहना, अन्तहीन चढ़ाई—रात के डरावने सपनों की तरह यह सब कुछ कितना यातना-पूर्ण और अर्थहीन, भयावह और अप्रत्याशित था।"

आखिर चढ़ाई समाप्त हुई। बोबरोव ने अपने-आपको रेलवे लाइन के सामने खड़ा पाया। दो दिन पहले इसी स्थान पर सुबह की प्रार्थना के अवसर पर फोटोग्राफर ने मिल के इंजीनियरों और मजदूरों की तसवीर खींची थी। थकामांदा बोबरोव रेल की पटरी की धरन पर बैठ गया। अचानक एक विचित्र सी अनुभूति उसके सारे शरीर को झिंझोड़ गयी। उसके पांव थर-थर कांपने लगे, मानो किसी ने उनका सारा खून चूस लिया हो, छाती और पेट में सूइयां सी चुभने लगीं, गाल और माथा बर्फ के समान ठंडे हो गये। उसकी आंखों के सामने हर वस्तु धुंधली पड़ने लगी, उसे लगा मानो उसकी चेतना किसी अंधेरी खाई की अथाह गहराइयों में डूबती जा रही है।

लगभग आध घंटे बाद उसे होश आयी। रेलवे लाइन के नीचे, जहां कारखाने की मशीनें दिन-रात दहाड़ा करती थीं, अब घनी, खौफनाक चुप्पी छायी हुई थी। वह बड़ी मुश्किल से अपनी टांगों पर खड़ा हो पाया और धीरे-धीरे भट्टियों की दिशा में चलने लगा। उसका सिर इतना भारी हो गया था कि उसे सीधा रखना भी उसके लिए असह्य हो उठा था। हर कदम पर उसकी कनपटी का जख्म पीड़ा से जल उठता। जख्म पर हाथ रखते ही उसकी अंगुलियां गर्म खून से चिपचिपा उठीं। उसके मुंह और होठों पर भी खून लगा हुआ था, जिसका कसैला, नमकीन स्वाद वह अपनी जुबान पर महसूस कर रहा था। होश आने के बावजूद उसकी चेतना अभी पूरी तरह से वापिस नहीं लौटी थी। जब कभी वह बीती हुई घटनाओं को याद करने, उनका अर्थ समझने की चेष्टा करता, तो उसका सिर-दर्द और भी अधिक तेज हो जाता। एक उन्मत्त, लक्ष्यहीन क्रोध और अथाह, असीम विषाद उसकी आत्मा को सीलने लगा।

सुबह होने में अब देर नहीं थी। चारों ओर — धरती, आकाश, छितरी हुई पीली घास और सड़क के दोनों ओर पत्थरों के बेडौल ढूह — सभी एक ही मटमैली, सीलन भरी चादर-सी ओढ़े थे। बोबरोव मिल की सूनी, सुनसान इमारतों के इर्द-गिर्द कुछ बुदबुदाता हुआ निरुद्देश्य भटक रहा था। उसकी अवस्था उन लोगों से मिलती जुलती थी, जो किसी आकस्मिक मानसिक आघात के कारण अपने होश-हवास खो बैठते हैं और अनर्गल प्रलाप करने लगते हैं। बोबरोव अपने उलझे, विशृंखलित विचारों को एक अर्थपूर्ण, निश्चित दिशा देने का भरसक प्रयत्न कर रहा था।

"देखो, मेरी तरफ देखो! मुझसे यह दुख नहीं सहा जाता!" बोबरोव को लगा मानो वह अपनी समूची व्यथा उस अजनबी के सामने उंडेल देगा, जो कहीं उसके भीतर बैठा है, जो उसके व्यक्तित्व का अभिन्नतम अंग होने के बावजूद उससे अलग है। वह बार-बार उस अजनबी से उत्तेजित होकर पूछता है, "बताओ, अब मैं क्या करूं? कहां जाऊं? मुझे कुछ नहीं सूझता, खुदा के वास्ते

कुछ तो बोलो ! मैं कब तक इस तरह तड़पता रहूंगा ? नहीं, अब मैं बरदाश्त नहीं कर सकता। मैं खुद अपने को मारकर खत्म कर दूंगा। बस, तभी मेरी आत्मा को शान्ति मिलेगी ..."

"नहीं ... तुम महज बातें बनाते हो, अपने को मारना इतना आसान नहीं है," बोबरोव की आत्मा की अतल गहराइयों के भीतर से उस 'अजनबी' का रूखा व्यंग्यात्मक स्वर सुनायी दिया। बोबरोव की तरह 'वह' भी जोर से बोल रहा था। "नाहक क्यों अपने को धोखा देते हो। तुम कमजोर और कायर हो, शारीरिक पीड़ा से डरते हो, अपने को मारकर तुम जीने के आनन्द से कभी अपने को वंचित नहीं कर पाओगे। सोचना तुम्हारा काम है, जिन्दगी भर तुम केवल सोचते ही रहोगे।"

"तो फिर मैं क्या करूं ... क्या अब कुछ भी नहीं हो सकता ?" बोबरोव हाथ मसलता हुआ एक विक्षिप्त व्यक्ति की तरह बुड़बुड़ाने लगा। "नीना ... तुम कितनी पवित्र, कितनी कोमल हो ... सारी दुनिया में केवल एक तुम्हीं थीं, जिसे मैं अपना समझता था ... और फिर अचानक एकदम यह तुमने क्या कर दिया ? नीना, नीना ! तुम अपना यौवन, अपनी कुंवारी देह बेच डालने के लिये कैसे राजी हो गयीं ? छि: ! छि: !!"

"बस केवल जुबान हिलाना ही आता है ?" बोबरोव के भीतर दूसरे व्यक्ति ने उसे चिढ़ाते हुए कहा। "नाटकीय मुद्रा में रोनी सूरत बनाकर कब तक विलाप करते रहोगे ? अगर तुम सचमुच क्वाशनिन से इतनी घृणा करते हो तो जाकर उसका काम तमाम क्यों नहीं कर देते ?"

"करूंगा, जरूर करूंगा !" बोबरोव गुस्से में मुट्ठियां चलाता हुआ जोर से चीख उठा। "अब वह ज्यादा देर तक अपनी गन्दी सांसों से नेक, ईमानदार लोगों की आत्माओं को दूषित नहीं कर सकेगा। मैं उसे जान से मार दूंगा।"

किन्तु दूसरे व्यक्ति ने उपहास भरे स्वर में ताना मारते हुए कहा— "तुम यह सब कुछ नहीं करोगे। ऊपर से चाहे कितनी डींगें मार लो किन्तु तुम स्वयं अच्छी तरह से जानते हो कि क्वाशनिन का तुम बाल भी बांका नहीं कर सकोगे। तुममें साहस और संकल्प-शक्ति, दोनों का अभाव है। कल के दिन तुम एक कमजोर व्यक्ति की तरह फूंक-फूंक कर पांव रखना शुरू कर दोगे।"

आत्म-संघर्ष की इन भयावह घड़ियों के बीच कभी-कभी ऐसे क्षण भी आते थे, जब बोबरोव की चेतना लौट आती थी। वह चौंककर अपने चारों ओर विस्मित होकर देखने लगता और अपने मस्तिष्क पर जोर डालकर सोचने लगता कि वह इस अवस्था में वहां क्यों खड़ा है, कैसे उस स्थान पर वह अचानक आ पहुंचा, कौन सी चिन्ता उसे घुन की तरह खाए जा रही है ? फिर उसे याद आता कि वह कोई बड़ा असाधारण और महत्वपूर्ण काम करने के लिये यहां

आया था। किन्तु कौन सा काम ? वह अपनी स्मृति को कुरेदने लगता, किन्तु फिर भी जब कुछ याद न आता तो एक गहरी, घनीभूत पीड़ा से उसका चेहरा विकृत हो जाता। चेतनावस्था के एक ऐसे क्षण में उसने देखा कि वह उस भट्टी के किनारे पर खड़ा है, जिसमें मजदूर कोयला झोंकते हैं। बिजली की तेजी से उसके मस्तिष्क में वे सब बातें कौंध गयीं, जो हाल में ही उसने इसी भट्टी के किनारे पर खड़े होकर डॉक्टर से कहीं थीं।

उसने भट्टी के नीचे झांका, किन्तु उसे एक भी मजदूर की शक्ल दिखायी न दी। वे सब भट्टी को खाली छोड़कर जा चुके थे। बॉयलर कब के ठंडे हो चुके थे। केवल दायीं और बायीं ओर के अन्तिम सिरों पर स्थित दो भट्टियों में अब भी बुझी-बुझी सी आंच सुलग रही थी। हठात बोबरोव के मस्तिष्क में एक विचित्र, बेतुका सा विचार दौड़ गया। वह भट्टी के किनारे पर बैठ गया, अपने दोनों पांव नीचे लटका लिये और जमीन पर दोनों हाथ टेककर नीचे कूद पड़ा।

नीचे उतर कर उसने देखा कि पास ही कोयले के ढेर में एक फावड़ा फंसा हुआ है। उसने झट उसे खींच लिया और तेजी से दोनों भट्टियों के गढ़हों में कोयला झोंकने लगा। दो मिनट में ही भट्टी से आग की सफेद लपटें उठने लगीं और बॉयलर का पानी उबलने लगा। बोबरोव फावड़े में कोयला भरकर भट्टी में झोंकता जाता था। उसके होठों पर एक रहस्यभरी मुसकान खिल गयी थी और वह किसी अदृश्य व्यक्ति को देखता हुआ सिर हिलाता जाता था। भट्टी में कोयला डालते हुए अक्सर उसके मुंह से विस्मय से भरे कुछ अनर्गल, अर्थहीन वाक्य निकल जाते थे। सड़क पर चलते हुए प्रतिहिंसा की जो भयंकर उन्मत्त भावना बार-बार उसे कचोट जाती थी, अब मौका पाकर उसने अपने लौह-पंजों में उसके मस्तिष्क को जकड़ लिया था। गर्म, उबलते हुए पानी से लबालब भरा विशाल बॉयलर आग की लपटों में चमक जाता था और एक जीवित प्राणी की तरह गुनगुनाने लगता था। उसे देखकर बोबरोव का मन एक तीखी घृणा से भर उठा।

उसे लगा कि वह कुछ भी करने के लिये स्वतंत्र है—किसी की भी रोकटोक वहां नहीं है। माप-यंत्र में पानी तेजी से कम होता जा रहा था। बॉयलर की गड़गड़ाहट और भट्टियों का गर्जन-तर्जन उत्तरोत्तर अधिक तीव्र और भयंकर बनता जा रहा था।

किन्तु कुछ ही देर में बोबरोव का तन थकान के मारे टूटने सा लगा। शारीरिक-श्रम से अनभ्यस्त उसकी देह हताश सी हो गयी। उसकी कनपटियों की नाड़ियां धुक-धुक करती हुई तीव्र गति से स्पन्दित होने लगीं। कनपटी के घाव से खून रिसता हुआ उसके गाल पर टपकने लगा। कुछ देर पहले पाशविक-

शक्ति की जिस उन्मत्त बाढ़ ने उसे निचोड़ डाला था, अब उसका प्रवाह धीमा पड़ने लगा। उसके भीतर छिपा वह 'अजनबी' व्यक्ति अट्टहास कर उठा :

"ठहर क्यों गये—आगे बढ़ो ! बस, अब कल घुमाने की देर है और तुम्हारी इच्छा पूरी हो जायगी। किन्तु तुम हाथ-पर-हाथ धरे बैठे रहोगे और अंगुली तक नहीं हिला सकोगे। कल तक तुममें इस सत्य को स्वीकार करने का साहस भी नहीं रहेगा कि कभी तुमने इन वाष्प-चलित बॉयलरों को उड़ाने का निश्चय किया था ! अजीब बात है न ?"

* * *

जब बोबरोव मिल के अस्पताल में पहुंचा तो सूरज का बड़ा लाल धब्बा क्षितिज के ऊपर टिमक आया था।

डा० गोल्डबुर्ग आज बहुत व्यस्त थे। लूले-लंगड़े, घायल लोगों के जख्मों पर पट्टी बांधने के बाद वह पीतल की चिलमची में हाथ धो रहे थे। उनका असिस्टेंट तौलिया हाथ में लिये उनके पीछे खड़ा था। बोबरोव को देखते ही डॉक्टर चौंक गया।

"आन्द्रेइलिच, तुम ? इधर कहां से चले आ रहे हो ? यह तुमने अपनी क्या धजा बना डाली है ?" डाक्टर का स्वर आतंकित सा हो उठा।

बोबरोव की शक्ल-सूरत इतनी डरावनी लग रही थी कि कोई भी उसे देखकर सिटपिटा जाता। उसका पीला चेहरा खून के सूखे धब्बों से भरा पड़ा था, जिस पर कोयले की काली गर्द जम गयी थी। उसके कपड़ों के गीले चिथड़े उसकी बाहों और घुटनों पर लटक रहे थे। अस्त-व्यस्त से बाल उसके माथे पर बिखरे हुए थे।

"खुदा के वास्ते कुछ तो बोलो ! माजरा क्या है ? सारी बात खोल कर कहो !" डॉक्टर ने झटपट अपने हाथ तौलिए से साफ किये और बोबरोव के सामने आ खड़ा हुआ।

"कोई बात नहीं है डाक्टर," बोबरोव पीड़ा से कराह उठा। "डॉक्टर, मुझे थोड़ा सा 'मॉर्फिया' दे दो—वरना मैं पागल हो जाऊंगा। मुझे बेहद कष्ट हो रहा है डाक्टर ! जल्दी करो, इस वक्त मुझे मॉर्फिया के अलावा और कुछ नहीं चाहिए..."

डॉक्टर गोल्डबुर्ग ने बोबरोव की बांह पकड़ ली और उसे अपने संग घसीटता हुआ दूसरे कमरे में ले गया। उसे अन्दर धकेल कर उसने बड़ी साव-धानी से कमरे का दरवाजा बन्द कर दिया।

"बोबरोव, सुनो," डॉक्टर ने धीरे से कहा। "मैं अब थोड़ा-बहुत तुम्हारी पीड़ा का कारण समझने लगा हूं—कम-से-कम अनुमान तो अवश्य लगा सकता

हूं। मुझे तुम्हारी इस अवस्था को देखकर बहुत दुख होता है, बोबरोव। सच मानो, मैं हर तरह से तुम्हारी सहायता करने के लिए तैयार हूं।" डाक्टर का स्वर आंसुओं से रुंध आया। "आन्द्रेइलिच, मेरे प्यारे दोस्त ! मेरी तुमसे केवल एक प्रार्थना है — मॉर्फिया लेने का आग्रह मत करो। तुम अच्छी तरह जानते हो कि इस बुरी लत से छुटकारा पाने के लिए तुम्हें कितने हाथ-पांव मारने पड़े हैं। अगर आज मैं तुम्हें मॉर्फिया का इंजेक्शन दे देता हूं तो जानते हो, क्या होगा ? भविष्य में इसकी आदत जोंक की तरह तुमसे चिपट जायगी और फिर इससे छुटकारा नहीं मिल सकेगा।"

बोबरोव ने अपना सिर कपड़े से ढंके सोफे पर टिका दिया।

"मुझे इसकी रत्ती भर भी परवाह नहीं है," बोबरोव ने दांत भींचते हुए कहा। वह सिर से पांव तक थर-थर कांप रहा था। "डॉक्टर, मैं कब तक इस तरह तड़पता रहूंगा ? मैं अब ज्यादा बरदाश्त नहीं कर सकता — मुझे अब किसी बात की भी परवाह नहीं है।" डा० गोल्डबुर्ग ने ठंडी सांस ली, विवशता के भाव से अपने कंधे हिलाये और दवाइयों के बक्से से इंजेक्शन की पिचकारी निकाल ली। पांच मिनट बाद ही बोबरोव सोफा पर लेटा हुआ गहरी नींद सो रहा था। उसका पीला चेहरा, जो एक रात में ही मुरझा गया था, अब शान्त था और उस पर एक सुखद, स्निग्ध मुसकान बिखर आयी थी। डॉक्टर गोल्डबुर्ग सावधानी से उसके सिर का घाव धो रहा था।

१८९६

ओलेस्या

एक

यर्मोला लकड़हारा होने के अलावा मेरा अनुचर और बावर्ची भी था। हम दोनों साथ मिल कर शिकार खेलने जाया करते थे। एक दिन वह सिर पर लकड़ियों का ढेर लिए मेरे कमरे में आया और अपना सारा बोझ फर्श पर पटक दिया। फिर अपने बर्फ से ठंडे हाथों को वह फूंक मार कर गरमाने लगा।

"बाहर जबरदस्त हवा चल रही है, मालिक," उसने चूल्हे के सामने धरना देते हुए कहा। "जरा आप अपना 'लाइटर' दें, तो चूल्हे की आग और तेज कर दूं!"

"ऐसा ही मौसम रहा तो कल खरगोशों का शिकार करने नहीं जा सकेंगे, क्यों यर्मोला?"

"नामुमकिन — बिलकुल नामुमकिन! आप देख नहीं रहे बाहर कैसी सांय-सांय करती हवा चल रही है? सारे खरगोश अपने-अपने बिलों में दुबके बैठे होंगे। कल तो शायद उनके पैरों के निशान भी दिखायी न दें।"

यह उन दिनों की बात है, जब मुझे पेरीब्रोद में छः महीने गुजारने पड़े थे। पेरीब्रोद पोलेस्ये में वोलहीनिया के सीमावर्ती प्रदेश का एक छोटा सा उजड़ा, परित्यक्त गांव था। शिकार खेलने के अलावा वहां मुझे कोई दूसरा काम

नहीं था। सच बात तो यह है कि जब मुझे इस गांव में जाने के लिए कहा गया, तो मैंने कल्पना में भी न सोचा था कि यहां के वातावरण से मैं इतना ज्यादा ऊब जाऊंगा। यहां आने के विचार से उस समय मैं बहुत खुश था। गाड़ी में बैठा-बैठा मैं सोच रहा था : "पौलेस्ये के एकान्त पहलू में सिमटा हुआ छोटा सा गांव — अनुपम प्राकृतिक छटा — पुराने आदिम लोग और उनका निश्छल, सीधा-सादा आचार-व्यवहार — अजीबोगरीब रीति-रिवाज और विचित्र भाषा-भाषी लोग, जिनके बारे में मैं कुछ भी नहीं जानता — और इन सब के साथ-साथ काव्यमय लोक-कथाओं, परम्पराओं और गीतों का जखीरा, भला मुझे और क्या चाहिए ?" दरअसल बात यह थी (जब इतना कुछ कह गया, तो सारी बात कहने में क्यों झिझक करूं ?) कि उस समय मेरी एक कहानी — जिसमें मैंने एक आत्महत्या और दो हत्याओं का वर्णन किया था, एक छोटी सी पत्रिका में प्रकाशित हो चुकी थी और मैं इस बात को, कम-से-कम सिद्धान्त-रूप से, अवश्य समझता था कि लोगों के रीति-रिवाजों का अध्ययन करना एक कहानी लेखक के लिए आवश्यक है।

किन्तु शीघ्र ही मेरी सब आशाओं पर पानी फिर गया। या तो पेरीब्रोद के किसान अजनबियों से ज्यादा मिलना-जुलना पसन्द नहीं करते थे, या शायद मैं ही उनका विश्वासपात्र बनने में असफल रहा था। किन्तु कारण चाहे कुछ भी हो, हकीकत यह थी कि मैं उनके अधिक निकट नहीं आ सका। दूर से मुझे देखते ही वे सिरों से टोपियां उतार लेते और अपनी बोली में "ईश्वर भला करे" बुड़बुड़ाते हुए, उदासीन-भाव से मेरे सामने से गुजर जाते। जब कभी मैं उनसे बातचीत करने की चेष्टा करता, तो वे विस्मय से आंखें फाड़ कर मेरी ओर देखने लग जाते, मानो उन्हें मेरा आसान-से-आसान प्रश्न भी समझ में न आ रहा हो। मेरे प्रश्नों का उत्तर देने के बदले वे बार-बार मेरे हाथों को चूमने की चेष्टा करते। यह एक पुरानी प्रथा थी जो पोलिश दासता के युग से चली आ रही थी।

जो थोड़ी-बहुत किताबें अपने साथ लाया था, पढ़ डालीं। मन ऊबने लगा, तो सोचा कि चलो इस गांव के बुद्धिजीवियों से ही गपशप मार कर जी बहलाऊं, हालांकि शुरू-शुरू में यह विचार मुझे अरुचिकर लगा था। मैंने गांव से दस मील की दूरी पर रहनेवाले पोलिश पादरी, गिरजे के बाजा बजाने वाले आर्गेनिस्ट, स्थानीय पुलिस अफसर तथा एक पेंशनयाफ्ता गैर आयुक्त अधिकारी से, जो अब पड़ोस की जागीर में पटवारी का काम करता था, मेलजोल बढ़ाने की कोशिश की, किन्तु उसका कोई विशेष उत्साह-वर्धक परिणाम नहीं निकला।

आखिर सब ओर से निराश होकर समय काटने के लिए मैं पेरीब्रोद के निवासियों का डॉक्टर बन बैठा। मैंने अपने पास अरण्डी का तेल, कार्बोलिक

एसिड, बोरिक एसिड और आयोडीन आदि रासायनिक पदार्थ जमा कर लिए। किन्तु चिकित्सा-शास्त्र के सम्बंध में मेरा ज्ञान नीम-हकीम का सा ही था। इसके अलावा गांव वालों की बीमारी का पता चलाने में भी कम परेशानी नहीं होती थी। ऐसा जान पड़ता था कि मेरे सब मरीजों को एक ही रोग लग गया है। जब कभी मैं उनकी बीमारी के सम्बंध में प्रश्न पूछता, तो वे सब केवल एक ही उत्तर देते : "भीतर कहीं दर्द हो रहा है" अथवा "मुझसे कुछ खाया-पिया नहीं जाता।"

ऐसा अक्सर होता कि कोई बूढ़ी स्त्री आकर मेरे सामने खड़ी हो जाती। अपनी झेंप को मिटाने के लिए वह दाहिने हाथ की तर्जनी से नाक को कुरेद कर साफ करती, फिर अपनी चोली के अन्दर हाथ डालकर दो अंडे निकालती और उन्हें मेज पर रख देती। मुझे उसकी भूरी त्वचा की एक झलक मिल जाती। वह मेरे हाथों को चूमने के लिए अपना सिर नीचे झुका देती। मैं अपने हाथों को पीछे खींचकर उसे झिड़क देता : "दादी अम्मा, यह क्या करती हो? मैं कोई पादरी थोड़े ही हूं। क्या तकलीफ है तुम्हें?"

"क्या बताऊं, मालिक, अन्दर-ही-अन्दर दिन-रात दर्द होता रहता है। खाना-पीना सब छूट गया है।"

"कब से तुम्हें यह दर्द हो रहा है?"

"*मैं क्या जानू?" वह मानो मुझसे ही प्रश्न* पूछ *रही हो। "सारे शरीर* में जलन सी होती रहती है। खाना-पीना सब छूट गया है।"

और मैं चाहे कितना ही सिर क्यों न खपाऊं, बुढ़िया के मुंह से अपनी बीमारी के बारे में और कोई बात नहीं निकलती।

"आप कोई चिन्ता न करें, ये लोग कुत्तों की तरह खुद-ब-खुद ठीक हो जाते हैं।" एक दिन पेंशनयाफ्ता सरकारी अफसर ने मुझे परेशान देखकर कहा। "मैं तो सिर्फ एक दवाई—सल-अमोनियाक—का प्रयोग करता हूं। जब कभी कोई किसान मेरे पास आता है तो मैं उससे पूछता हूं : 'क्यों, क्या बात है?' 'तबियत ठीक नहीं है, मालिक,' यह सुनते ही मैं झट अमोनिया की बोतल उसकी नाक से लगा देता हूं। 'इसे सूंघ लो!' वह बोतल सूंघने लगता है। 'खूब अच्छी तरह से सूंघो!' वह दुबारा सूंघता है। 'कुछ आराम मालूम हुआ?' मैं पूछता हूं। 'जी हां, कुछ थोड़ा-बहुत तो...' वह कहता है। 'अच्छा ठीक है—अब खुदा का शुक्र करो और चलते बनो' मैं कहता हूं।"

इतना ही नहीं। हाथ चूमने की प्रथा से तो मुझे सख्त नफरत थी। कुछ मरीज तो ऐसे थे जो मेरे जूतों को चाटने के लिए पैरों पर गिर पड़ते थे। यह बात नहीं थी कि मेरे प्रति कृतज्ञता के भाव से प्रेरित होकर ही वे ऐसा करते थे। शताब्दियों से दासता और शोषण की व्यवस्था में रहने के कारण उनमें

एक प्रकार की हीन-भावना उत्पन्न हो गयी थी। पेंशनयाफ्ता गैर-आयुक्त अधिकारी और गांव के पुलिस अफसर को देखकर तो मुझे दांतों तले अंगुली दबा लेनी पड़ती। वे निश्चिन्त, गम्भीर भाव से अपने बड़े-बड़े लाल पंजे गांव वालों के होंठों के आगे बढ़ा देते।

आखिर शिकार खेलने के अलावा मेरे पास कोई दूसरा चारा न रहा। किन्तु जनवरी के अन्तिम दिनों में मौसम इतना खराब होने लगा कि शिकार के लिए घर से बाहर निकलना असंभव हो गया। दिन भर तेज, तूफानी हवा चलती रहती और रात को बर्फ की ऊपरी परत इतनी सख्त हो जाती कि भागते हुए खरगोशों के पद-चिन्ह उस पर न बन पाते। दिन-रात कमरे में बैठा-बैठा मैं तूफान का हाहाकार सुनता रहता। ऊबाहट से तंग आकर आखिर एक दिन मैंने यर्मोला को पढ़ाने-लिखाने का निश्चय कर लिया।

ऐसा अनोखा विचार अचानक मेरे मस्तिष्क में कैसे आया, यह भी अपने में एक दिलचस्प घटना है। एक दिन मैं खत लिख रहा था कि मुझे जान पड़ा मानो कोई चुपचाप मेरे पीछे आकर खड़ा हो गया है। मैंने पीछे मुड़कर देखा तो यर्मोला को खड़ा पाया। वह हमेशा की तरह अपने मुलायम जूतों से बिना कोई आवाज पैदा किये चुपचाप मेरी कुर्सी के पीछे आकर खड़ा हो गया था।

"क्या बात है, यर्मोला ?" मैंने पूछा।

"कुछ नहीं, मैं सिर्फ यह सोच रहा था कि कितना अच्छा हो अगर मैं भी आप जैसा लिख सकूं !" किन्तु जब उसने मुझे मुस्कराते हुए देखा, तो लज्जित होकर एकदम अपनी गलती सुधारता हुआ बोला, "नहीं, नहीं, आप जैसा नहीं—मेरा मतलब है कि अगर मैं अपना नाम लिखना सीख लूं तो मुझे बेहद खुशी होगी।"

"क्यों, किसलिए ?" मैंने आश्चर्य से पूछा। यहां यह बता देना असंगत न होगा कि यर्मोला सारे पेरीब्रोद में सबसे अधिक आलसी और गरीब किसान समझा जाता था। लकड़ियां और फसल बेचकर उसकी जो आमदनी होती थी, वह सब शराब पर स्वाह कर देता था। आस-पड़ोस के गांवों में उसके बैल सबसे ज्यादा निकम्मे और खराब माने जाते थे। मैंने कभी स्वप्न में भी न सोचा था कि उसे भी पढ़ने-लिखने की आवश्यकता महसूस हो सकती है। मैंने संदिग्ध स्वर में उससे पुनः पूछा, "अपना नाम लिखना सीखकर तुम क्या करोगे ?"

"मालिक, दर असल बात यह है," उसने विनीत भाव से उत्तर दिया, "कि इस गांव में पढ़ने-लिखने के मामले में सब कोरे हैं। जब किसी कागज पर दस्तखत करने होते हैं, या कभी-कभार जिले के सरकारी काम के सिलसिले में लिखत-पढ़त की जरूरत आ पड़ती है, तो यहां सब लोगों के हाथ-पांव फूल

जाते हैं। गांव के चौधरी को सरकारी दस्तावेजों पर मुहर लगानी पड़ती है, लेकिन वह यह भी नहीं जानता कि उन दस्तावेजों में लिखा क्या है। इसलिए अगर हम में से किसी को अपना नाम लिखना आ जाए, तो सबका भला हो जाएगा।"

आस-पास के इलाकों में यर्मोला अपनी करतूतों के कारण बदनाम हो चुका था। दूसरों के शिकार पर हाथ साफ करने में उसे कभी झिझक न होती। मस्त-मौला बनकर दिनभर आवारागर्दी करता रहता। गांव वालों की नजरों में उसकी राय दो कौड़ी का मोल भी न रखती होगी, ऐसा मेरा पक्का विश्वास था। किन्तु इसके बावजूद, उनकी सुख-सुविधा के लिए उसकी चिन्ता को देख कर मेरा दिल भर आया। उस दिन से मैंने उसे पढ़ाने-लिखाने का बीड़ा उठा लिया। किन्तु उसे पढ़ा-लिखाकर शिक्षित बना देना कोई बच्चों का खेल न था। वह जंगल की प्रत्येक पगडंडी से परिचित था, यहां तक कि उसके एक-एक वृक्ष को भी वह पहचानता था। उसे कहीं भी जाने के लिये कह दो—दिन हो या रात—वह चुटकी बजाते ही अपना रास्ता खोज निकालता था। आस-पड़ोस के इलाके के तमाम भेड़ियों, खरगोशों और लोमड़ियों के पदचिन्हों को देखते ही झट उन्हें पहचान लेता था। किन्तु इस तमाम जानकारी के बावजूद उसके भेजे में यह छोटी सी बात कभी नहीं पैठ पाती थी कि 'म' और 'आ' को मिलाने पर 'मा' क्योंकर बन जाता है। वह दस बीस मिनट तक गम्भीर मुद्रा बनाकर गुमसुम सा बैठा इसी तरह की पेचीदा समस्याओं में उलझा रहता। उसकी काली, धंसी हुई आंखों और काली खुरदरी दाढ़ी तथा लम्बी मूछों से ढके हुए दुबले-पतले सांवले चेहरे पर परेशानी के चिन्ह देखकर फौरन पता चल जाता कि वह बेचारा भाषा की पेचीदगियों को समझने के लिए कितनी मगज-पच्ची कर रहा है।

"इसमें परेशान होने की कौन सी बात है, यर्मोला? बोलो 'मा'। हां, सिर्फ 'मा' कहने में क्या मुश्किल है?" मैं उसे प्रोत्साहित करता। "कागज पर अपनी आंखें क्यों गड़ा रखी हैं, मेरी तरफ देखो। हां, ठीक है। अब कहो 'मां'।"

यर्मोला ठंडी सांस खींचकर फुटरूल मेज पर रख देता और खिन्न मन से निर्णयात्मक स्वर में कहता, "नहीं, मुझ से नहीं कहा जायगा।"

"लेकिन यर्मोला, इसमें मुश्किल क्या है? देखो, जैसे मैं 'मा' कहता हूं, वैसे ही तुम भी कह दो।"

"नहीं मालिक। मैं नहीं कह पाऊंगा। मैं बहुत जल्द भूल जाता हूं।"

मैंने हर मुमकिन कोशिश की, पढ़ाने के जितने तरीके और प्रयोग होते हैं, उन सबको अजमाकर देख लिया, किन्तु उसकी मोटी बुद्धि के आगे मेरी

एक न चली। यर्मोला फिर भी हतोत्साहित नहीं हुआ। अपना मानसिक-विकास करने की जो अभिलाषा उसके मन में जगी थी, वह दिन-प्रति-दिन बढ़ती ही गयी।

"बस मुझे और कुछ नहीं चाहिए, मालिक," वह कहता। "अपना नाम लिख सकूं, मेरे लिए तो यही बहुत है। मालिक, क्या मैं अपना नाम — यर्मोला पौपरज़ुक — कभी नहीं लिख सकूंगा ?"

अन्त में मैंने उसे पढ़ाने-लिखाने का विचार छोड़ दिया और उसकी इच्छानुसार अब यह कोशिश करने लगा कि वह बिना जाने-बूझे यंत्रवत् अपना नाम लिख सके। मुझे यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि पढ़ाई का यह नया तरीका उसे बहुत आसान और सुगम जान पड़ा। दूसरे महीने के अन्त तक वह अपना वंश-नाम लिखने की कठिनाई पार कर चुका था। जहां तक उसके प्रथम नाम का प्रश्न था, उसे तो हमने उसके बोझ को हल्का करने के लिए छोड़ ही दिया था।

शाम के समय चूल्हों में आग जलाने के बाद वह मेरी आवाज़ की बड़ी अधीरता से प्रतीक्षा करता रहता।

"चलो यर्मोला, पढ़ाई शुरू करें।" मैं उसे बुलाता।

वह उलटे-सीधे कदम रखता हुआ मेरी मेज के पास आकर दोनों कुहनियां उस पर टिका देता, फिर अपनी काली, सख्त और खुरदरी अंगुलियों में कलम पकड़कर, भौंहें ऊपर उठाता हुआ मुझ से पूछता, "शुरू करूं ?"

"हां !"

वह बड़े विश्वास के साथ 'P'— जिसे हम सोटी और फंदा कहते थे— लिखता, उसके बाद प्रश्न-युक्त दृष्टि से मुझे देखने लगता।

"रुक क्यों गये ? आगे का अक्षर भूल गये क्या ?"

"हां।" वह खीजकर अपना सर हिला देता।

"तुम भी बड़े अजीब आदमी हो भाई ! अच्छा, अब पहिया —'O'— बनाओ।"

"अरे हां, मैं तो भूल ही गया था !" उसका चेहरा चमक उठता और वह बड़ी सावधानी से एक ऐसा आकार बना देता जो कैसपियन सागर की रूप रेखा सी दिखायी देती। फिर वह मिचमिचाती आंखों से, कभी अपने सिर को दायीं ओर तो कभी बायीं ओर झुकाकर, चुपचाप अपनी 'कला-कृति' को प्रशंसायुक्त दृष्टि से देखता रहता।

"क्या देख रहे हो ? आगे क्यों नहीं लिखते ?"

"जरा ठहरिये मालिक। बस जरा एक मिनट।"

वह दो मिनट तक कुछ सोचता रहता, फिर झिझकते हुए पूछता, "वही पहले वाला निशान बनाऊं न ?"

"हां, ठीक है।"

इस तरह हम धीरे-धीरे उसके नाम के अन्तिम अक्षर 'k' तक आ पहुंचते, जिसे हम पूंछ लगी गुलैल कहते थे।

कभी-कभी वह अपने हाथ से लिखे हुए अपने नाम के अक्षरों को बड़े गर्व और प्यार से देखता हुआ मुझसे कहता, "मालिक, अगर मैं पांच-छः महीनों तक इसी तरह अभ्यास करता रहूं, तो एक दिन जरूर अच्छा लिख सकूंगा। क्यों, क्या आप ऐसा नहीं सोचते ?"

दो

उस दिन यमोला चूल्हे के पास बैठा हुआ कोयलों की राख झाड़ रहा था। मैं कमरे में चहल-कदमी कर रहा था। जमींदार की बारह कमरों वाली विशाल हवेली का एक ही कमरा मेरे पास था। किसी जमाने में यह कमरा इस हवेली की "बैठक" रहा होगा। बाकी सब कमरों में बेल-बूटेदार कीमती कपड़ों से ढंकी मेज-कुर्सियां, कांस के विलक्षण बर्तन और अठारहवीं शताब्दी के चित्र रखे हुए थे। इन कमरों के ताले हमेशा बन्द रहा करते। कमरों में रखी हुई प्राचीन वस्तुओं पर धूल मिट्टी की परतें चढ़ रही थीं।

हवेली के बाहर, हवा एक बूढ़े राक्षस की तरह थर-थर कांपती हुई हाहाकार कर रही थी। उसकी हृदय-भेदी चीख-पुकार और उन्मत्त हंसी के ठहाकों को सुनकर दिल दहल जाता था। रात होते ही बर्फ के तूफान का प्रकोप और भी अधिक भयंकर हो गया। ऐसा जान पड़ता था मानो कोई बाहर से सूखी महीन बर्फ को मुट्ठियों में भर-भर कर खिड़कियों के शीशों पर फेंक रहा हो। पास के जंगल की अविराम सरसराहट को सुन कर एक अदृश्य अनिष्ट की आशंका उत्पन्न होने लगती थी।

हवा खाली कमरों में घुस आती और चिमनियां खड़खड़ाने लगतीं। आंधी के जबरदस्त झोकों-झटकों से जीर्ण-जर्जरित हवेली की पुरानी दीवारें कांपने लगतीं और वातावरण विचित्र ध्वनियों से गूंज उठता। सुनकर मेरा रोम-रोम कांप उठता। ऐसा जान पड़ता कि उस हवेली के बड़े सफेद हॉल में कोई व्यक्ति एक उदास, टूटा सा, मर्मभेदी उच्छ्वास ले रहा है। अचानक फर्श के सूखे, घुन खाये तख्ते चरमरा उठते और लगता कि कोई तेज, भारी कदमों से उस पर दौड़ता चला जा रहा है। कभी-कभी मुझे ऐसा प्रतीत होता कि मेरे कमरे से सटे बरामदे में कोई बड़ी सतर्कता से बराबर सांकल खटखटाये जा रहा है और फिर अचानक क्रोध में दरवाजों और खिडकियों को हिलाता हुआ सारे मकान का चक्कर काटने लगता है, या फिर चिमनी में रेंगता हुआ घुस जाता है और वहां

बैठ कर बड़ी देर तक धीमे स्वर में सुबकता रहता है, फिर अचानक सुबकना बन्द कर बड़े दयनीय स्वर में चीख उठता है, किन्तु कुछ ही क्षणों में उसकी चीखें किसी जानवर की धीमी गुर्राहट में परिणत हो जाती हैं। कभी-कभी भयानक आगन्तुक न जाने कहां से मेरे कमरे में झपाटे से घुस आता, मेरी रीढ़ की हड्डी पर ठंडी सी फूंक मारता हुआ सरकने लगता और फिर झुलसे हुए हरे कागज के लैंप-शेड के नीचे टिमटिमाती लौ को झकझोर कर निकल जाता।

मेरे मन में एक विचित्र, अस्पष्ट सा भय उमड़ने लगा। "जाड़े की इस अंधेरी तूफानी रात में बर्फ और जंगलों से घिरा हुआ मैं इस टूटी-फूटी हवेली में बैठा हूं," मैंने सोचा, "शहरी जीवन, भद्र समाज, स्त्रियों की मधुर खिलखिलाहट और मानवोचित वार्तालाप—सभी चीजों से सैकड़ों मील दूर !" मुझे उस समय लग रहा था कि यह रात वर्षों, दशकों तक, मेरे जीवन के अन्तिम दिन तक, इसी तरह कायम रहेगी, घर के बाहर तूफान इसी तरह तड़पता गरजता रहेगा, हरे, मटमैले शेड तले लैम्प की लौ हमेशा इसी तरह टिमटिमाती रहेगी, मैं बेचैन होकर इसी तरह कमरे के चक्कर काटता रहूंगा और यर्मोला चुपचाप, गुमसुम-सा चूल्हे के पास इसी अवसन्न-मुद्रा में बैठा रहेगा। रात की उस घड़ी में यर्मोला मुझे निपट अजनबी सा जान पड़ा। मानो वह एक विचित्र प्राणी है, जो अपने भूखे परिवार, कड़कड़ाती हवा और मेरे अस्पष्ट, घने अवसाद की चिन्ता किये बिना, दुनिया की सब चीजों के प्रति उदासीन, कमरे के इस कोने में चुपचाप बैठा है और न जाने कब तक बैठा रहेगा।

कमरे के बोझिल सन्नाटे को मानवीय स्वर से भंग करने के लिए मेरा दिल कराह उठा, और मैंने पूछा, "यर्मोला, हवा के इतने खौफनाक झोंके कहां से आते होंगे ? क्या तुम्हें कुछ मालूम है ?"

"हवा ?" यर्मोला ने अलसाए भाव से मेरी ओर आंखें उठाकर पूछा। "क्या आप नहीं जानते मालिक ?"

"बिलकुल नहीं ! भला ऐसी चीज मुझे कैसे मालूम हो सकती है ?"

"सच, क्या आप नहीं जानते ?" यर्मोला की सारी सुस्ती हवा हो गयी। "मैं आपको बताऊंगा," उसने रहस्य भरे स्वर में कहा। "किसी चुड़ैल ने जन्म लिया है, या कोई जादूगर आनन्द मना रहा है।"

यर्मोला के इस उत्तर ने मेरे मन में गहरा कौतूहल जगा दिया। "क्या मालूम," मैंने सोचा, "शायद यर्मोला मुझे जादू, छिपे हुए खजानों या भेड़ियों का रूप धारण करने वाले आदमियों के बारे में कोई दिलचस्प कहानी सुना दे।"

"तुम्हारे यहां पौलेस्ये में चुड़ैलों का वास है ?" मैंने पूछा।

"पता नहीं। शायद होगा।" उसने पहले की तरह विरक्त-भाव से उत्तर दिया और चूल्हे के मुंह के पास झुक कर बैठ गया। "बड़े-बूढ़े लोग कहा करते

हैं कि किसी जमाने में चुड़ैलें यहां रहा करती थीं, किन्तु यह बात शायद सच नहीं है।"

यर्मोला ने मेरी आशाओं पर पानी फेर दिया। वह अधिकतर चुप रहना पसन्द करता था। मुझे मालूम था कि इस दिलचस्प विषय पर अगर उसने चुप रहने की ठान ली तो उसके मुंह से एक शब्द भी नहीं निकलेगा। किन्तु मेरा भय निर्मूल साबित हुआ। उसकी वाणी अचानक फूट निकली। लापरवाही भरे स्वर में वह धीरे-धीरे बोलने लगा, मानो वह मुझ से न बोलकर गरजते चूल्हे से बात कर रहा हो।

"पांच साल पहले इस इलाके में एक डायन रहा करती थी। लेकिन लड़कों ने उसे यहां से भगा दिया।"

"कहां भगा दिया?"

"जंगल में — और कहां? उसके घर की चिप्पी-चिप्पी उखाड़कर फेंक दी गयी। लोग उसे चेरी के बाग के परे घसीटते हुए ले गये और लात मारकर बाहर निकाल दिया।"

"लेकिन उसके संग इस तरह का दुर्व्यवहार क्यों किया गया?".

"कुछ न पूछिये मालिक, वह सबका अनिष्ट चाहती थी। सबसे लड़ती-झगड़ती रहती, मकानों पर जादू-टोना कर देती और कटी फसल की गठरियों को उलझा जाती। एक बार उसने किसी जवान बहू से पन्द्रह कोपेक मांगे। 'चल दफा हो यहां से! मेरे पास तुझे देने के लिए कुछ नहीं है।' उस स्त्री ने उसे दुतकार दिया। 'अच्छी बात है,' डायन ने कहा, 'एक-न-एक दिन तू अपने कर्मों को रोएगी, देख लेना।' जानते हो मालिक फिर क्या हुआ? उस स्त्री का बच्चा बीमार पड़ गया। वह बीमारी उससे ऐसी चिपकी कि छूटने का नाम नहीं लिया। अन्त में उसके प्राण लेकर ही विदा हुई। बस फिर तो गांव के नौजवानों के क्रोध का कोई ठिकाना न रहा। उन्होंने उस डायन को गांव से बाहर निकालकर ही दम लिया। सत्यानाश हो उसका!"

"आजकल वह डायन कहां रहती है?" मैंने पूछा।

"डायन?" अपनी पुरानी आदत के अनुसार उसने मेरे प्रश्न को ही दुहरा दिया। "मैं क्या जानूं?"

"क्या वह यहां अपना कोई रिश्तेदार नहीं छोड़ गयी?"

"नहीं, वह तो एक बनजारा औरत थी। या शायद *कतसप** रही होगी। गांव में एक अजनबी की तरह रहा करती थी। जब वह पहले-पहल गांव में

* यूक्रेन के लोग रूसियों को इस नाम से पुकारते थे।

आयी थी, तो उसके संग एक छोटी सी लड़की थी, जो उसकी बेटी या पोती रही होगी। गांव के नौजवानों ने उन दोनों को बाहर खदेड़ दिया।"

"क्या अब कोई भी उसके पास अपनी किस्मत का पता चलाने अथवा जड़ी-बूटी लेने नहीं जाता ?"

"औरतें जाती हैं।" उसके स्वर में घृणा का पुट था।

"अच्छा, फिर तो वे जानती होंगी कि वह डायन कहां रहती है ?"

"पता नहीं। लोगों को कहते सुना है कि वह कहीं पिशाच खोह के पास रहती है। आपने इरीनोवो सड़क के परे वाली दलदली जमीन तो देखी होगी ? वह बदजात बूढ़ी वहीं रहती है।"

पौलेस्ये में हाड़-मांस की जीती-जागती डायन — जो गांव से सिर्फ कुछ मीलों के फासले पर रहती है ! यर्मोला के मुंह से यह समाचार सुनकर मेरे हृदय में रोमांच और उत्तेजना की लहर सी दौड़ गयी।

"यर्मोला, उस डायन से कैसे मुलाकात हो सकती है ?" मैंने पूछा।

"छि: ! कैसी बात कहते हैं, मालिक ?" यर्मोला ने नाराज होकर थूक दिया। "उससे मिलकर आप क्या करेंगे ?"

"कुछ करूं या न करूं — लेकिन एक दिन उससे जरूर मिलकर रहूंगा। जरा सर्दी कम हो जाए तो किसी दिन उसके घर जाऊंगा। तुम मुझे उसके घर का रास्ता बतला देना। इतना तो कर दोगे, क्यों ?"

मेरे अन्तिम वाक्य का यर्मोला पर ऐसा असर पड़ा कि वह एकदम उछल कर खड़ा हो गया।

"मैं, और आपको उसके घर ले जाऊं ? तौबा, तौबा ! आप मुझे दुनिया की तमाम दौलत दे दें, तो भी मैं ऐसा काम न करूं !" वह गुस्से में चिल्लाया।

"कैसी पागलों की सी बातें कर रहे हो ! तुम्हें मेरे संग चलना ही पड़ेगा।"

"नहीं मालिक, मैं हरगिज नहीं जा सकूंगा। मैं वहां जाऊं ? यह कैसे हो सकता है, मालिक ?" वह फिर गुस्से से भर गया। "ईश्वर मुझे उस डायन के घोंसले से जितना दूर रखे, उतना ही अच्छा ! मालिक, मैं आपको भी यही सलाह दूंगा कि कभी भूलकर भी उस तरफ पैर मत बढ़ा दीजियेगा।"

"जैसी तुम्हारी इच्छा। किन्तु मैं तो जब तक उसे देख न लूंगा मेरा कौतूहल शांत न होगा।"

"मैं समझ नहीं पाया कि उसमें कौन सी ऐसी चीज है, जिसे देखने के लिए आप इतने व्याकुल हैं ?" यर्मोला ने बुड़बुड़ाते हुए कहा और चूल्हे का दरवाजा खटाक से बन्द कर दिया।

एक घंटे बाद जब यर्मोला अंधेरे बरामदे में बैठ कर चाय पीने के बाद घर जाने लगा तो मैंने उसे बीच में ही रोककर उस डायन का नाम पूछ लिया।

"मान्यूलिखा," बड़ी रुखाई से उत्तर देकर यर्मोला चल दिया।

मुझे से यह छिपा न था कि मेरे प्रति यर्मोला का लगाव उत्तरोत्तर बढ़ने लगा था, हालांकि उसने अपनी इस भावना को बाह्य-रूप से कभी प्रकट नहीं होने दिया। हम दोनों के बीच जो घनिष्ट मित्रता स्थापित हो गयी थी, उसके कई कारण थे। हम दोनों ही शिकार खेलने के बेहद शौकीन थे। उसके प्रति मेरा बर्ताव सरल था और अवसर मैं उसके दीन-दरिद्र परिवार की थोड़ी-बहुत सहायता कर दिया करता था। किन्तु शायद सबसे बड़ा कारण यह था कि उसके पियक्कड़पन पर मैंने कभी उसे डांटा-फटकारा नहीं। इस मामले में किसी भी प्रकार के दखल को वह बर्दाश्त नहीं कर सकता था और अकेला मैं ही ऐसा व्यक्ति था जिसने उसकी इस आदत की भर्त्सना नहीं की थी। वह मुझे बहुत चाहने लगा था। शायद यही कारण था कि डायन से मिलने के मेरे दृढ़ निश्चय को देखकर वह गुस्से में झुंझला उठा था। जब वह क्रोध में भुनभुनाता हुआ मेरे कमरे से बाहर निकलकर आंगन में आया, तो उसने अपने कुत्ते रियाबचिक की पसलियों पर एक लात जमा दी। बेचारा रियाबचिक हृदय-विदारक चीखें मारता हुआ दूसरी तरफ भागा, किन्तु दूसरे ही क्षण चीं-चीं करता हुआ यर्मोला के पीछे-पीछे चलने लगा।

तीन

लगभग तीन दिन बाद सर्दी का प्रकोप कुछ कम हुआ। एक दिन यर्मोला तड़के ही मेरे कमरे में आ धमका।

"मैं बन्दूकें साफ करने आया हूं मालिक," उसने लापरवाही से कहा।

"क्यों, आज क्या बात है?" कम्बलों के भीतर से ही अंगड़ाई लेते हुए मैंने पूछा।

"जान पड़ता है, कल रात खरगोश अपने बिलों से बाहर निकले हैं—हर जगह उनके पैरों के निशान दिखायी दे रहे हैं। यही वक्त है उनके शिकार का, मालिक!"

यर्मोला ऊपर से लापरवाही जतलाते हुए बोल रहा था, किन्तु भीतर-ही-भीतर उसका हृदय जंगल में शिकार खेलने के लिए मचल रहा था। उसकी छोटी सी बन्दूक बड़े कमरे के कोने में रखी हुई थी। अब तक एक भी चाहा-पक्षी पर इस बन्दूक की गोली खाली नहीं गयी थी। बन्दूक की घोड़ी के आस-पास के लोहे पर बारूद की गैस और जंग से जगह-जगह पर सूराख हो गये थे, जिन्हें टीन के टुकड़ों से ढंक दिया गया था।

अभी हम जंगल में घुसे ही थे कि एक खरगोश के पैरों के निशान दिखायी दिये। अगले पैरों के निशान साथ-साथ, उनके जरा पीछे पिछले दोनों पैरों के निशान। ये निशान कुछ दूर तक चले गये थे। खरगोश सड़क पर तीन चार सौ गज भागा होगा, और फिर किनारे पर लगे चीड़ के वृक्षों के झुरमुट में छलांग मार कर विलीन हो गया होगा।

"अब हम इस खरगोश को चारों ओर से घेर लेंगे," यर्मोला ने कहा। "वह यहीं कहीं छिपा बैठा होगा। मालिक, आप उस तरफ हो लीजिए।" वह उन चिन्हों द्वारा, जिन्हें केवल वही अकेला समझ सकता था, यह निर्णय करने के लिए ठहर गया कि मुझे किस दिशा में भेजा जाय। "देखिए मालिक, आप उस पुराने शराबखाने की तरफ चल दें। मैं जामलिन की ओर से यहां आऊंगा। ज्यों ही कुत्ता भौंकना शुरू करेगा, मैं आपको आवाज देकर बुला लूंगा।"

यह कह कर वह तुरन्त घनी झाड़ियों में विलीन हो गया। मैं कान लगा कर सुनता रहा, किन्तु शिकार चुराने में वह इतना दक्ष था कि बिना कोई आवाज किये चुपचाप झाड़ियों को चीरता हुआ भीतर घुसता चला गया। उसके पैरों के नीचे से एक भी टहनी के टूटने की आवाज न सुनायी दी।

मैं धीरे-धीरे शराबखाने के जीर्ण-जर्जरित और वीरान ढाबे की ओर बढ़ने लगा। कुछ देर चलने के बाद मैं जंगल के छोर पर एक सीधे, नंगे तने वाले लम्बे पेड़ की छाया में खड़ा हो गया। सर्दी का दिन, निस्पन्द हवा, जंगल की अथाह शान्ति — मैं खड़ा-खड़ा यह सब कुछ देखता रहा। धवल चांदी सी हिम राशियों से ढंकी पेड़ों की शाखाएं बहुत सुन्दर और सुरम्य दीख पड़ती थीं। जब कभी किसी पेड़ के शिखर से कोई टहनी टूट जाती तो अन्य शाखाओं से उसके टकराने की हल्की सी खड़खड़ाहट सुनायी दे जाती। धूप में बर्फ का रंग गुलाबी और छाया में नीला सा दिखलायी देता था। जंगल की गम्भीर और शीतल शांति के नीरव, रहस्यमय जादू ने मुझे अभिभूत कर लिया, और मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानो समय निःशब्द गति से मेरे निकट से सरकता चला जा रहा हो।

अचानक मुझे दूर झाड़ियों से रियाबचिक के भौंकने की आवाज सुनायी दी — ऊंची, उत्तेजित, रिरियाती सी आवाज, जो कुत्तों के कंठ से उसी समय निकलती है जब वे अपने शिकार का पीछा कर रहे हों। उसके तुरन्त बाद मुझे यर्मोला का कर्कश स्वर सुनायी दिया। वह "आऽऽ-बीऽऽ! आऽऽ-बीऽऽ!" की हांक लगाता हुआ अपने कुत्ते को पुकार रहा था। काफी अर्से बाद मुझे पता चला कि पौलेस्ये के शिकारियों की यह हांक "ऊबी वात" ('मारना') शब्द से बनी है।

कुत्ते के भौंकने की आवाज जिस दिशा से आ रही थी, उसके आधार पर मैंने अनुमान लगाया कि वह मेरी बायीं ओर खरगोश का पीछा कर रहा होगा,

इसलिए उसे बीच में ही रोकने के लिए मैं जंगल से घिरे मैदान को पार करने लगा। किन्तु मैं अभी मुश्किल से बीस गज ही दौड़ा हूंगा, कि भूरे रंग का एक बड़ा खरगोश पेड़ के ठूंठ के पीछे से बाहर निकल आया। उसे देख कर जान पड़ता था मानो उसे भागने की कोई खास जल्दी नहीं है। उसके लम्बे कान उसके सिर के साथ सटे हुए थे। चार-पांच लम्बी कुलाचें मारता हुआ वह सड़क पार कर पेड़ों के नीचे उगी हुई झाड़ियों में घुस गया। खरगोश के जरा पीछे रियाबचिक भी गोली की तरह लपका चला आया। मुझे देखते ही वह ठिठक कर दुम हिलाने लगा, और फिर दो चार बार बर्फ पर मुंह मारने के बाद खरगोश के पीछे हो लिया।

अचानक यर्मोला दबे पांवों झाड़ियों के बाहर प्रकट हुआ।

"आपने उसे रोका क्यों नहीं, मालिक?" वह चिल्लाया, और फिर शिकायत की मुद्रा में 'शी, शी,' करने लगा।

"भई मैं क्या करता भला? वह तो मुझ से सौ फीट या शायद उससे भी ज्यादा दूरी पर था।"

मेरे चेहरे पर गहरे अफसोस के चिन्ह देख कर वह कुछ ढीला पड़ा।

"कोई बात नहीं। बच्चू भाग कर जायगा कहां? अब आप झटपट इरीनोवो मार्ग पर चले जाएं। कुछ ही देर में वह उस तरफ दिखलायी देगा।"

मैं ईरीनोवो मार्ग की तरफ चल पड़ा। दो मिनट बाद ही मुझे खरगोश का पीछा करते हुए कुत्ते की आवाज सुनायी दी। शिकार की उत्तेजना में भर कर मैं अपनी बन्दूक सम्भालता हुआ झाड़-झंकाड़ के बीच गिरता-पड़ता भागने लगा। पेड़ों की नुकीली टहनियां मेरी देह को क्षत-विक्षत कर रही थीं, किन्तु उसकी चिन्ता किये बिना मैं आगे बढ़ता चला गया। कुछ दूर तक मैं इसी तरह भागता रहा। कुत्ते ने जब भौंकना बन्द किया, तो मैंने अपनी चाल धीमी कर दी। मेरा दम फूलने लगा था और मैं बुरी तरह हांप रहा था। मैंने सोचा कि यदि मैं सीधा चलता गया तो ईरीनोवो मार्ग पहुंचते-पहुंचते रास्ते में यर्मोला से निश्चय ही भेंट हो जाएगी। किन्तु कुछ ही दूर चलने के बाद मैं अपनी गलती पहचान गया। झाड़ियों और पेड़ों के ठूंठों के बीच भागते हुए मुझे दिशा का ज्ञान नहीं रहा था और मैं भटक गया था। मैंने आवाजें लगायीं, किन्तु यर्मोला का कहीं पता न था।

मैं यंत्रवत आगे बढ़ता गया। धीरे-धीरे जंगल छितरने लगा और दलदली जमीन आ गयी। बर्फ पर मेरे पैरों के निशान उभर आते थे और उनमें गंदला पानी भर जाता था। कई बार तो मेरे पैर दलदल में घुटनों तक धंस गये। मैं एक ढूह से दूसरे ढूह पर छलांगें मारता आगे बढ़ता जा रहा था। भूरे रंग की काई में पैर ऐसे धंसते थे मानो मुलायम कालीन हो।

कुछ ही देर में जंगल की घनी झाड़ियां पीछे छूट गयीं। मैं एक बर्फ से ढके गोल दलदली मैदान में चला आया, जिसके बीच कहीं-कहीं घास-फूस के टीले सर उठाए खड़े थे। मैदान के दूसरी ओर पेड़ों से घिरी, सफेद दीवारों वाली एक झोपड़ी खड़ी थी। "यह इरीनोवो के लकड़हारे का घर होगा। चलो, उसके पास जाकर रास्ता ही पूछ लिया जाये।" मैंने सोचा।

किन्तु झोपड़ी तक पहुंचना आसान नहीं था। मेरे पांव बार-बार कीचड़ में धस जाते थे। मेरे लम्बे जूते पानी से भर गये थे और हर कदम पर छपाछप करने लगते थे। उन्हें साथ घसीटना मेरे लिए दुश्वार हो गया।

आखिर बड़ी मुश्किल से उस दलदली मैदान को पार करके मैं एक छोटे से टीले पर चढ़ गया, जहां से झोपड़ी साफ दिखायी देती थी। परियों की कहानियों में डायनों की झोपड़ी का जो चित्र उभर कर आता है, यह झोपड़ी हूबहू वैसी ही थी। बसन्त ऋतु में इरीनोवो के जंगल हमेशा बाढ़ के पानी में डूबे रहते थे। इसीलिए शायद उस झोपड़ी को एक ऊंचे टीले के ऊपर बनाया गया था। झोपड़ी की दीवारें पुरानी और जर्जर थीं और वह बहुत दीन और उदास दिखायी देती थीं, कुछ खिड़कियों के शीशे नदारद थे; उनकी जगह फटे-पुराने चीथड़े लगा दिये गये थे, जो हवा में बाहर की ओर झूल रहे थे।

मैंने दरवाजे पर थाप दी तो वह खुद-ब-खुद खुल गया। भीतर घुप्प अंधेरा था। बर्फ को बहुत देर तक देखते रहने के कारण मेरी आंखों के सामने बैंगनी रंग के सितारे से नाच रहे थे। कुछ देर तक तो मैं यह भी न जान सका कि झोपड़ी खाली है अथवा उसके भीतर कोई बैठा है।

"कोई भला आदमी अन्दर है?" मैंने ऊंची आवाज में पूछा।

चूल्हे के पास कोई चीज हिली। मैं झोपड़ी के भीतर चला आया। एक बुढ़िया फर्श पर बैठी थी। उसके सामने मुर्गी के चूजों के टूटे हुए पंखों का ढेर पड़ा था। वह पंखों को बीन-बीन कर उनके कांटों को साफ कर रही थी और टोकरी में रखती जा रही थी। कांटों और डंडियों को वह फर्श पर फेंकती जाती।

"अरे यह बुढ़िया तो इरीनोवो की डायन मान्यूलिखा सी दिखायी देती है!" यकायक यह विचार बिजली सा मेरे मस्तिष्क में कौंध गया। लोक कथाओं में डायनों का जो विवरण मिलता है, उस बुढ़िया का चेहरा-मुहरा, हाव-भाव बिलकुल वैसा ही था—पतली-दुबली देह, पिचके हुए गाल, लम्बी नुकीली ठुड्डी, जो उसकी लम्बी चोंच सी नाक को छूती सी जान पड़ती थी। उसका पोपला मुंह—जिसमें एक भी दांत न था—बराबर चल रहा था, मानो वह किसी चीज को चबा रही हो। उसकी फटी सी आंखें—जो किसी जमाने में नीली रही होंगी, अब फीकी और कठोर बन गयी थीं और उनकी छोटी-छोटी सुर्ख पलकों को देख कर बरबस किसी मनहूस पक्षी की आंखों की याद आ जाती थी।

"दादी मां, प्रणाम !" मैंने अपने स्वर को यथासंभव मीठा बनाते हुए कहा। "क्या आप मान्यूलिखा तो नहीं है ?"

बुढ़िया की छाती से अचानक 'घर्र-घर्र' का स्वर उठने लगा। उसके पोपले मुंह से विचित्र सी आवाजें आने लगीं, मानो कोई बूढ़ा कौवा तीखे कर्कश स्वर में चीख रहा हो।

"मुमकिन है कभी नेक आदमी मुझे मान्यूलिखा कह कर पुकारते रहे हों। किन्तु अब मेरा नाम और यश, दोनों ही मिट गये हैं। खैर ! तुम यहां किस लिए आये हो ?" उसने रूखी आवाज में कहा। अपना नीरस काम वह बराबर करती जा रही थी।

"मैं रास्ता भूल गया हूं, दादी मां ! क्या मुझे थोड़ा सा दूध मिल सकेगा ?"

"यहां दूध-वूध कुछ नहीं," उसने टका सा जवाब दिया। "तुम जैसे बहुतेरे लोग यहां से गुजरते हैं। मैंने सबका पेट भरने का ठेका थोड़े ही लिया है !"

"अतिथियों का सत्कार क्या इस तरह किया जाता है, दादी मां ?"

"आप जो जी में आये, समझें, जनाब ! लेकिन खाना-वाना यहां किसी को नहीं दिया जाता। अगर थक गये हो तो कुछ देर यहां बैठ कर कमर सीधी कर लो—मुझे कोई एतराज न होगा। आपको यह कहावत याद है ना : 'आओ, हमारे घर के पास बैठ कर गिरजे की घंटियां सुन लो। लेकिन जहां तक भोजन का सवाल है, उसके लिए हम तुम्हारे घर आना ही पसन्द करेंगे।' सोई बात है भाई !"

उस बुढ़िया की मुहावरेदार भाषा को सुन कर मैं समझ गया कि वह उस इलाके की रहने वाली नहीं है, जहां के लोग तेज तर्रार, चटपटी भाषा को पसन्द नहीं करते। उत्तरी प्रदेश के वाक-पटु लोग ही ऐसी भाषा का मजा लेना जानते हैं।

इस दौरान में बुढ़िया अपना काम करती और होठों-ही-होठों में कुछ बुड़बुड़ाती जा रही थी। उसकी आवाज इतनी धीमी थी कि कभी-कभार कुछ असम्बद्ध से वाक्य ही मैं समझ पाता था : "यह रही तुम्हारी मान्यूलिखा दादी—न जाने कौन है यह आदमी—अब मैं बूढ़ी हो चली हूं—दिन-रात नीलकन्ठ की तरह झींकती, चीखती, बुड़बुड़ाती रहती हूं—"

मैं कुछ देर तक उसकी बुड़बुड़ाहट को सुनता रहा, और सहसा मेरे मस्तिष्क में यह विचार आया कि मैं एक पागल बुढ़िया के सम्मुख बैठा हूं। इस विचार से मैं कुछ भयभीत हुआ, कुछ विरक्त भी। फिर भी मैं झोपड़ी का निरीक्षण करने का लोभ संवरण न कर सका। कमरे के एक बड़े भाग को टूटे-

फूटे चूल्हे ने घेर रखा था। सामने ताक में देवी-देवता की कोई मूर्ति नहीं रखी थी और वह खाली पड़ा था। दीवारों पर हरी मूछों वाले शिकारियों, बैगनी रंग के कुत्तों और गुमनाम सेनापतियों के चित्रों के बजाय सूखी मुरझायी हुई जड़ी-बूटियां और बर्तन-भांड़े लटक रहे थे। मुझे कमरे में कहीं भी उल्लू या काली बिल्ली नहीं दिखायी दिये। चूल्हे के ऊपर दो चितकबरी मैनाएं गम्भीर मुद्रा में बैठी थीं और मुझे आश्चर्य और सन्देह से देख रही थीं।

"दादी मां, क्या मुझे थोड़ा सा पानी भी नहीं मिल सकता ?" मैंने तनिक ऊंचे स्वर में पूछा।

"पानी उस तरफ बाल्टी में रखा है।" उसने कहा। पानी से कीचड़ का स्वाद आ रहा था। मैंने बुढ़िया को धन्यवाद दिया, किन्तु उसने मेरी ओर कोई ध्यान न दिया। फिर मैंने उससे रास्ता पूछा।

उसने अपना सर ऊपर उठाया और परिन्दे की सी उसकी कठोर आंखें देर तक मेरे चेहरे पर जमी रहीं। फिर वह तेज स्वर में चीख उठी, "चले जाओ! यहां से फौरन दफा हो जाओ! 'मान न मान मैं तेरा मेहमान!' ... यह भी कोई बात हुई भला!"

अब मेरे पास वहां से चले जाने के अलावा कोई दूसरा चारा न था। किन्तु जाने से पहले उस बुढ़िया के कठोर दिल को पिघलाने की मैंने आखिरी कोशिश की। मैंने अपनी जेब से चांदी का बिलकुल नया चमचमाता सिक्का निकालकर उसके आगे रख दिया। मेरा अनुमान सही निकला। देखते ही उसकी आंखें फैल गयीं, और सिक्के को उठाने के लिए उसने अपनी कांपती टेढ़ी-मेढ़ी अंगुलियां आगे बढ़ा दीं।

"नहीं, दादी मान्यूलिखा, मुफ्त में नहीं मिलने का," मैंने उसे चिढ़ाने के लिए सिक्का छिपा लिया। "पहले मुझे मेरी किस्मत के बारे में कुछ बतलाना पड़ेगा।"

डायन ने झुंझला कर झुर्रियों से भरा अपना चेहरा गुस्से में सिकोड़ लिया। वह दुविधा भरी दृष्टि से मेरी मुट्ठी को देख रही थी। आखिर वह अपनी लालच को न दबा सकी।

"अच्छा बेटा, जैसे तेरी मर्जी।" वह बुड़बुड़ायी, और हांफती हुई फर्श से उठ कर खड़ी हो गयी। "बहुत दिनों से मैंने किस्मत देखने का काम छोड़ दिया है बेटा, बूढ़ी जो हो गयी हूं। आंखों से भी तो कुछ नहीं सूझता। अब तो मैं सबकुछ भूल गयी हूं, लेकिन तुमने कहा है, तो तुम्हारा दिल रखने के लिए दो चार बातें कह दूंगी।"

दीवार का सहारा लेकर, थर-थर कांपती अपनी झुकी हुई काया को वह मेज तक घसीट कर ले गयी। मेज के ऊपर से उसने भूरे रंग के ताश उठाये, जो

इतने पुराने हो गये थे कि हाथ लगाते ही फटने का डर था। फिर वह उन्हें धीरे-धीरे फेंटने लगी।

"तुम्हारे दिल के नजदीक कौन सा हाथ पड़ता है? बायां हाथ! अच्छा तो बायें हाथ से इन्हें काट दो।" उसने ताश की गड्डी मेरे आगे बढ़ा दी।

उसने अपनी अंगुलियों को थूक से गीला किया और पत्ते बिछाने लगी। प्रत्येक पत्ता मेज पर गिरते ही धप्प से आवाज करता था, मानो वह आटे का बना हो। मेज पर ताश के पत्तों का एक अष्टभुज सितारा बन गया। जब आखिरी पत्ता बादशाह पर गिरा, तो मान्यूलिखा ने झट अपनी हथेली आगे बढ़ा दी।

"इस पर चांदी का सिक्का फेर दीजिए, जनाब। बहुत सा धन मिलेगा, हमेशा सुखी रहोगे।" वह एक भीख मांगनेवाली बनजारिन के खुशामदी स्वर में गिड़गिड़ाने लगी।

मैंने उसकी हथेली पर चांदी का सिक्का सरका दिया। सिक्का हाथ में आते ही उसने लंगूर की सी चपलता के साथ उसे अपने गाल के पीछे छिपा लिया।

"आप एक लम्बी यात्रा करेंगे, जिससे आपको बहुत बड़ा लाभ होगा।" उसने तोते की तरह रटे-रटाये वाक्यों को कहना शुरू किया। ईंट की बेगम से आपकी मुठभेड़ होगी, जिसका मतलब है कि एक महत्वपूर्ण व्यक्ति के घर में आपका किसी के साथ बहुत आनन्ददायक वार्तालाप होने वाला है। निकट भविष्य में आपको चिड़ी के बादशाह से एक अनोखा समाचार मिलेगा, शुरू में थोड़ी सी परेशानी होगी, फिर कुछ रुपया मिलेगा। एक दिन आप बहुत से लोगों के साथ होंगे और शराब पीकर मदमस्त हो जायेंगे। इसका मतलब यह नहीं कि आप नशे में सुध-बुध खो बैठेंगे, लेकिन यह बात पक्की है कि एक-न-एक दिन दोस्तों की मंडली में बैठकर आप खूब छक कर शराब पियेंगे। आपकी आयु बहुत लम्बी है। अगर सड़सठ वर्ष की उम्र में आपकी मृत्यु न हो तो..."

किन्तु उसने अपना वाक्य बीच में ही अधूरा छोड़ दिया। मुझे लगा कि वह सिर उठाकर कुछ सुन रही है। मेरे कान भी खड़े हो गये। एक स्त्री अपने निर्मल, निर्भीक, गूंजते स्वर में गाना गाती हुई झोपड़ी की ओर आ रही थी। यूक्रेन के उस सुमधुर गीत की लय और धुन मैं एकदम पहचान गया:

भार सहन कर नहीं सकी क्या
डाली लाल गुलाब का?
मस्तक मेरा बोझ न सह
पाता अलसाये ख्वाब का?

"अब तुम यहां से चले जाओ बेटा," मान्यूलिखा ने घबराकर मुझे मेज से परे धकेल दिया। "हम जैसे अजनबी लोगों के घर में तुम्हारा उठना-बैठना ठीक नहीं लगता। मेहरबानी करके अब अपना रास्ता पकड़ो।"

वह इतनी ज्यादा घबरा उठी थी कि मेरी आस्तीन पकड़कर मुझे दरवाजे की ओर धकेलने लगी। उसका चेहरा भय से पीला पड़ गया था।

झोपड़ी के पास आकर गीत का स्वर अचानक टूट गया। लोहे की कुंडी बज उठी और फटाक से दरवाजा खुल गया। मैंने देखा कि झोपड़ी की देहरी पर एक लम्बे कद की लड़की खड़ी हंस रही है। उसने बड़ी सावधानी से अपने दोनों हाथों में एक धारीदार रुमाल पकड़ रखा था, जिसके भीतर से तीन छोटे-छोटे पक्षियों की लाल गर्दनें और काले मोतियों सी आंखें बाहर झांक रही थीं।

"दादी मां, जरा इन नन्हे-मुन्ने परिन्दों को तो देखो, मुझसे कैसे चिपट गये हैं।" उसने खिलखिला कर हंसते हुए कहा। "समझ में नहीं आता कि क्या करूं? भूख के मारे अधमरे से हो रहे हैं बेचारे। मेरे पास रोटी भी नहीं थी जो एक-दो टुकड़े इन्हें खिला देती।"

अचानक उसकी आंखें मेरी ओर मुड़ गयीं। मुझे देखते ही उसका चेहरा लज्जा से लाल हो उठा। उसने अपनी काली भौंहें सिकोड़ लीं, मानो उसे मेरी उपस्थिति अत्यंत अरुचिकर लगी हो। वह प्रश्नसूचक दृष्टि से मान्यूलिखा को देखने लगी।

"यह महाशय रास्ता पूछने के लिए यहां आये थे।" बुढ़िया ने उस लड़की को मेरी उपस्थिति का कारण समझाते हुए कहा। फिर वह मेरी ओर मुड़कर दृढ़ स्वर में बोली, "हुजूर, आप यहां बेकार अपना समय नष्ट कर रहे हैं। आप ने अपनी प्यास बुझा ली, जो बातें पूछनी थीं, सो पूछ लीं, अब आप यहां बैठकर क्या करेंगे? हमारा और आपका क्या संग?"

"ऐ सुन्दरी, क्या तुम मेरी मदद नहीं करोगी?" मैंने उस लड़की की ओर उन्मुख होकर कहा। "मैं रास्ता भूल गया हूं। मुझे इरीनोवो रोड जाना है, किन्तु मुझे भय है कि मैं अकेला इस दलदल को पार करके वहां नहीं पहुंच सकूंगा। क्या तुम मेरे संग चल सकोगी?"

मुझे लगा कि मेरे कोमल, अभ्यर्थना-भरे स्वर को सुनकर वह बहुत अधिक प्रभावित हो गयी है। वह जिन परिन्दों को अपने संग लायी थी, उन्हें उसने बहुत सावधानी से मैनाओं के पास रख दिया, फिर कोट उतार कर बेंच पर फेंक दिया और चुपचाप झोपड़ी के बाहर चली आयी।

मैं उसके पीछे-पीछे चलने लगा।

"क्या ये परिन्दे पालतू हैं?" मैं आगे बढ़कर उसके संग चलने लगा।

"हां," बिना मेरी ओर आंखें उठाये वह रुखाई से बोली। कुछ दूर चलकर पेड़ की टहनियों से बनी मेड़ के सामने वह खड़ी हो गयी। "वह पगडंडी देखते हो—वही, जो चीड़ के पेड़ों के बीच से गुजरती है ?"

"हां !"

"बस उस पगडंडी पर सीधे चले जाओ। बीच में जहां बलूत का लट्ठा पड़ा मिले, वहां से बायीं ओर मुड़ जाना। फिर जगल के बीचोंबीच सीधे चलते जाना। आगे तुम्हें इरीनोवो रोड मिल जाएगी।"

जब वह दायां हाथ उठाकर मुझे रास्ता दिखलाने लगी, तो मैं मंत्रमुग्ध सा होकर उसके अपूर्व, विलक्षण सौन्दर्य को निहारता रह गया। वह गांव की अन्य बालाओं से सर्वथा भिन्न थी। वे ऊपर से अपना माथा और नीचे से ठुड्डी और मुंह को रुमाल से ढके रहती थीं, जो देखने में बहुत ही भोंडा और भद्दा जान पड़ता था। उनके चेहरों का भाव हमेशा एक जैसा होता, और आंखें मानो भय से फैली रहतीं। किन्तु यह भूरे बालों वाली लड़की, जो मेरे पास खड़ी थी, सहज सौन्दर्य की साक्षात प्रतिमा सी दिखलायी देती थी। उसका कद लम्बा था, आयु बीस और पच्चीस वर्ष के बीच रही होगी। उसके उदीयमान यौवन का प्रतीक उसका सुडौल मांसल वक्षस्थल, सफेद, चौड़े ब्लाऊज के नीचे ढंका था। उसके चेहरे के असाधारण सौन्दर्य को एक बार देखकर भूल जाना असंभव था। वह एक ऐसा अनिर्वचनीय सौन्दर्य था, जिसे बार-बार देखने के बाद भी शब्दों में व्यक्त कर पाना सम्भव नहीं होता। तनिक मुड़े हुए उसके हठीले होंठ, चेहरे का गेहुआं रंग, जिस पर दो गुलाबी धब्बे छिटक आये थे, पतली बीच में कटी हुई भौंहें जो उसकी बड़ी-बड़ी चमकती हुई श्यामल आंखों में चातुर्य, ढिठाई और भोलेपन का रहस्यमय भाव भर देती थीं—उसके अंग-प्रत्यग से एक विचित्र आकर्षण छलकता था।

"इस उजड़े वीरान जंगल में अकेले रहते तुम्हें कभी डर नहीं लगता ?" मेड़ के पास ठिठक कर मैंने उससे पूछा।

उसने उदासीन भाव से कंधे हिला दिये।

"डर क्यों लगेगा ? भेड़िये इस तरफ कभी नहीं आते।"

"मेरा मतलब सिर्फ भेड़ियों से नहीं था। बर्फ का तूफान आ सकता है, आग लग सकती है, यहां सब कुछ हो सकता है। इस निर्जन स्थान में तुम अकेली रहती हो, मुसीबत पड़ने पर कोई भी तुम्हारी सहायता करने नहीं आ सकता।"

"हमारे लिए यही अच्छा है। काश, वे लोग मुझे और दादी मां को अकेला छोड़ सकते ! किन्तु..."

"किन्तु क्या ?"

"बहुत अक्ल बढ़ाने की कोशिश न कीजिए, वरना टांट गंजी हो जायेगी, जनाब !" उसने तुनक कर कहा। "क्या मैं जान सकती हूं कि आप कौन हैं ?" उसका स्वर परेशान हो उठा।

मुझे कुछ ऐसा लगा कि उसे और उसकी दादी मां को हमेशा यह खटका लगा रहता है कि कहीं पुलिस के अधिकारी उन्हें तंग करने न आ पहुंचें।

"घबड़ाओ नहीं, मैं पुलिस का अफसर नहीं हूं," उसे आश्वासन देते हुए मैंने कहा। "मैं कोई क्लर्क या चुंगी वसूल करने वाला कर्मचारी भी नहीं। सरकारी अधिकारियों से मेरा दूर का भी सम्बंध नहीं है।"

"क्या यह बात सच्ची है ?"

"मैं तुम्हें अपना वचन देता हूं कि जो कुछ मैं कह रहा हूं, उसमें रत्ती भर भी झूठ नहीं है। विश्वास करो, यहां मैं एक अजनबी की तरह रहता हूं। कुछ महीने यहां ठहरकर मैं वापिस चला जाऊंगा। अगर तुम चाहो तो मैं किसी को यह बात नहीं बतलाऊंगा कि मैं यहां आया था और तुम लोगों से मिला था। क्या अब भी तुम मुझ पर विश्वास नहीं करोगी ?"

उसका चेहरा कुछ खिल गया।

"अच्छा तो ठीक है। अगर तुम झूठ नहीं बोल रहे, तो जरूर सच बोल रहे होगे। लेकिन यह तो बताओ कि तुमने पहले कभी हमारे बारे में कुछ सुन रखा था या अचानक ही यहां आ पहुंचे ?"

"समझ में नहीं आता, क्या कहूं ! यह बात नहीं है कि मैंने तुम्हारे सम्बंध में कुछ सुना न हो। मैंने मन-ही-मन यह निश्चय भी कर लिया था कि किसी दिन मैं तुम लोगों को देखने आऊंगा। किन्तु आज तो मैं संयोगवश यहां आ पहुंचा। अगर रास्ता न भूलता तो यहां तक कभी न पहुंच पाता। अच्छा, यह तो बताओ कि तुम लोगों से इतना डरती क्यों रहती हो ? वे तुम्हें क्या नुकसान पहुंचाते हैं ?"

अविश्वास से भरी उसकी आंखें कुछ देर तक मुझे तोलती-परखती रहीं। मेरे भीतर कोई दुराव-छिपाव नहीं था, इसलिये मैं भी अपलक, एकटक उसे देखता रहा। कुछ देर बाद वह उत्तेजित होकर बोली :

"लोग हमें चैन से नहीं रहने देते। यह ठीक है कि मामूली लोग हमें ज्यादा परेशान नहीं करते, किन्तु पुलिस के अफसरों की बात मत पूछिये। गांव का पुलिस-अफसर, जिले का कमिश्नर और दूसरे अधिकारी हमें तंग करने प्रायः हमारे घर आ धमकते हैं। जब तक हम उपहारों या रुपये से उनकी मुट्ठी गर्म नहीं कर देते, वे हमारे दरवाजे से टलने का नाम नहीं लेते। लेकिन बात यहीं खत्म नहीं हो जाती। दादी मां को चुड़ैल, कुलटा, सजायाफ्ता कुतिया और न

जाने कितनी गन्दी और गलीज गालियां दी जाती हैं। लेकिन छोड़िये, मैं नाहक आपके सामने अपनी तकलीफों का पचड़ा लेकर बैठ गयी!"

"क्या वे लोग कभी तुम से भी छेड़-छाड़ करने की जुर्रत करते हैं?" मुझे अपना प्रश्न अशिष्ट और अनुचित सा जान पड़ा, किन्तु क्या करता, मुंह से निकली हुई बात को वापिस लौटाना असंभव था।

गर्व और आत्मविश्वास से उसने अपना सिर हिला दिया। उसकी आंखें सिकुड़ गयीं और उनमें विजयोल्लास की मुसकान चमक उठी।

"नहीं। एक बार जमीन की जांच-पड़ताल करने वाले एक अफसर ने मुझ से छेड़छाड़ करने की हिम्मत की थी। वह मुझ से प्रेम करना चाहता था, समझे आप? मैंने भी उसे प्रेम का ऐसा सबक सिखाया कि बच्चू आजतक याद करता होगा।"

उसके स्वर में व्यंग्य, अभिमान और आत्मनिर्भरता के भाव भरे थे। "यह लड़की पौलेस्ये के जंगलों के स्वतंत्र वातावरण में खेल-कूद कर बड़ी हुई है, इसके संग खिलवाड़ करना खतरे से खाली नहीं है।" मैंने मन-ही-मन सोचा।

"हम लोग किसी को कोई नुकसान नहीं पहुंचाते।" मुझ पर उसका विश्वास धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा था। "हम किसी से मिलना-जुलना भी पसन्द नहीं करते। साल में केवल एकबार नमक और साबुन खरीदने मुझे शहर जाना पड़ता है। दादी मां को चाय बहुत भाती है, इसलिये कभी-कभी अपने संग चाय भी ले आती हूं। अगर इन चीजों की जरूरत न पड़े तो शायद किसी से भी मिलना न हो।"

"मुझे मालूम है कि तुम और तुम्हारी दादी अतिथियों को ज्यादा मुंह नहीं लगातीं। किन्तु अगर मैं किसी दिन कुछ देर के लिए तुम्हारे घर चला आऊं तो क्या तुम्हें बहुत बुरा लगेगा?"

वह हंस पड़ी। मुझे लगा कि अचानक उसके सुन्दर चेहरे में एक विचित्र परिवर्तन हो गया है। पहले जो कठोरता थी, उसका अब चिन्ह-मात्र भी शेष न रहा था। एक नन्हे से बच्चे की तरह उसका लज्जाशील चेहरा खिल उठा था।

"किन्तु तुम हमारे घर आकर करोगे क्या? हम बहुत नीरस लोग हैं, कुछ ही देर में तुम्हारा मन ऊब जाएगा। हां, अगर तुम नेक आदमी हो तो हमारे घर के दरवाजे तुम्हारे लिए हमेशा खुले हैं। लेकिन अब कभी आओ तो अपनी बन्दूक घर छोड़ कर आना।"

"क्या तुम्हें डर लगता है?"

"डरूंगी क्यों ? मुझे किसी चीज से डर नहीं लगता।" उसके दृढ़ स्वर से यह स्पष्ट झलक रहा था कि उसे अपनी शक्ति में कितना अटूट विश्वास है। "लेकिन मुझे यह कुछ अच्छा नहीं लगता। भला परिन्दों और खरगोशों ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है जो तुम बन्दूक लिये उनके पीछे घूमते हो ? हमारी तरह उन्हें क्या जीने का मोह नहीं होता ? न जाने मुझे ये छोटे-छोटे नासमझ जीव-जन्तु क्यों इतने प्यारे लगते हैं। अच्छा, अब मुझे जाना चाहिए, देर होने पर दादी मा खफा होंगी। अच्छा, फिर मुलाकात होगी आपसे, श्रीमान ... अरे, मैं तो आपका नाम भी नहीं जानती।" इतना कह कर वह चल दी।

"एक मिनट ठहरो।" मैं जोर से चिल्लाया। "अपना नाम तो बताती जाओ। अभी तो ठीक ढंग से हमारा एक दूसरे से परिचय भी नहीं हुआ।"

उसने पीछे मुड़कर क्षण भर के लिए मुझे देखा।

"मेरा नाम अल्योना है—किन्तु यहां सब मुझे ओलेस्या कहकर पुकारते हैं।"

मैंने बन्दूक कंधे पर रख ली और उसके बताये हुए रास्ते पर पांव बढ़ा दिये। सामने एक छोटी सी पहाड़ी थी, जहां से एक छोटी सी जंगली पगडंडी नीचे की ओर उतर गयी थी। पहाड़ी के शिखर पर पहुंचकर मैंने मुड़कर पीछे देखा। बर्फ की सफेद, चमचमाती पृष्ठभूमि में हवा में फरफराती ओलेस्या की स्कर्ट एक लाल धब्बे की तरह चमक रही थी।

मेरे घर आने के एक घंटे बाद यर्मोला वापिस लौटा। बेकार की बातों में उसे कोई दिलचस्पी नहीं थी, इसलिये उसने इस सम्बंध में मुझ से एक प्रश्न भी नहीं पूछा कि मैं कहां और कैसे रास्ता भूल गया था। कुछ देर चुप रहने के बाद उसने लापरवाही से कहा :

"वह खरगोश उधर रसोई में पड़ा है। अगर आप उसे किसी और के पास भेजने का इरादा नहीं रखते तो मैं उसे अभी भून डालता हूं।"

"यर्मोला, क्या तुम जानते हो आज मैं कहां गया था ? तुम बिलकुल विश्वास नहीं कर पाओगे।"

"उन चुड़ैलों के पास गये होंगे। क्या मैं इतना भी नहीं जानता ?" उसने गुर्राते हुए कहा।

"तुम्हें कैसे पता चला ?"

"इसमें मुश्किल क्या था ? आपने मेरी आवाज का कोई उत्तर नहीं दिया, इसलिये मैं आपके पैरों के निशान देखता हुआ आगे चलता गया। हजूर, वहां जाने से पाप चढ़ता है। आपको उनसे बचकर रहना चाहिये।" उसने तनिक कुढ़कर खीज भरे स्वर में कहा।

चार

उस वर्ष वसन्त का आगमन अपने समय से पहले ही हो गया। किन्तु पोलेस्ये में यह कोई असाधारण घटना नहीं थी। उस प्रदेश में हर ऋतु बिना कोई सूचना दिये अचानक आ धमकती थी। मटमैले पानी के तेज तर्रार नाले, रास्ते में पत्थरों से टकराते, अपनी रपेट में लकड़ी के तख्तों और कलहंसों को समेटते हुए गांव की गलियों के बीचों-बीच बहे जा रहे थे। गन्दे पानी के बड़े-बड़े पोखरों से नीले आकाश और उस पर चक्कर लगाते गोल-मटोल सफेद बादलों की छायाएं झांकती रहती थीं। छतों की नालियों से पानी की बूंदें टपाटप गिरती रहा करती थीं। सड़क के किनारे पर लगे पेड़ों के झुरमुट से परिन्दों का हर्षोन्मादित कलरव अन्य सब आवाजों को अपने में डुबो देता था। हर जगह एक नयी उल्लासपूर्ण जिन्दगी अंगड़ाई लेती सी जान पड़ती थी।

बर्फ पिघलने लगी थी। किन्तु झाड़ियों और वृक्षों के खोखलों में मैले स्पंज से बर्फ के टुकड़े अभी जमे हुए थे। बर्फ पिघलने के कारण सीलन भरी गर्म धरती की निरावृत्त देह में नयी शक्ति हिलोरें मार रही थी। शिशिर ऋतु में उसने भी जी भर कर विश्राम किया था। अब उसमें मातृत्व की अभिलाषा पुनः जागृत हो आयी थी। काले खेतों पर हल्का झीना भाप का परदा लटक आया था। पिघलती बर्फ के नीचे धरती से एक विचित्र सी गन्ध उठ कर हवा में घुल रही थी—वसन्त की स्वप्निल, नशीली, ताजी गन्ध, जिससे गांव वाले भली भांति परिचित हैं, किन्तु जो शहर की हजार मिली-जुली गन्धों में भी आसानी से पहचानी जा सकती है। उस वासन्ती सौरभ के संग न जाने कितनी धुंधली, कोमल, मीठी व उदास आशाएं एवं विचित्र सम्भावनाएं मेरी आत्मा में तिरतीं चली आतीं। वसन्त के दिन ही कुछ ऐसे होते हैं, जब भावाकुल आंखों को हर स्त्री सुन्दर दिखायी देती है और रह-रह कर पुरानी स्मृतियों का धुंधला सा अवसाद उमड़-उमड़ आता है। रातें गर्म हो चली थीं। ऐसा जान पड़ता था मानो घनी उमस से भरे अंधियारे में प्रकृति अपने अदृश्य, सृजनात्मक श्रम में निरन्तर जुटी हुई है।

वसन्त के उन दिनों में ओलेस्या की छवि मेरे मस्तिष्क में हर घड़ी मंडराती रहती। जब कभी मैं अकेला होता तो लेट कर आंखें बन्द कर लेता, और तब समूचा ध्यान ओलेस्या के चेहरे पर केन्द्रित हो जाता। मुझे उसका कठोर अथवा क्रुद्ध भाव स्मरण हो आता, किन्तु दूसरे ही क्षण स्नेह भरी कोमल मुस्कान उसके चेहरे पर बिखर आती। मेरी आंखों के सामने देवदार के अल्पायु वृक्ष सी उसकी कोमल, भरी-भरी सी देह, जो उस पुराने जंगल के स्वतंत्र वातावरण में पल्लवित हुई थी, घूम जाती। मेरे कानों में उसका असाधारण रूप से

धीमा, ताजा और कोमल स्वर बार-बार गूंज उठता। मुझे लगता कि उसकी प्रत्येक हरकत में, उसके मुंह से निकले हर शब्द में, एक सात्विक — यदि हम इस साधारण शब्द को उसके श्रेष्ठ अर्थ में ग्रहण करें — जन्मजात, प्रांजल गरिमा निहित है। ओलेस्या के प्रति आकृष्ट होने का एक और भी कारण था। जंगल की झाड़ियों और दल-दल से घिरा उसका निवास-स्थान और उसकी डायन दादी के सम्बंध में लोगों के अंधविश्वास ने उसके इर्द-गिर्द रहस्य का एक रोमांचकारी प्रभामंडल बुन दिया था। किन्तु जिस बात ने मुझे विशेष-रूप से प्रभावित किया, वह था ओलेस्या का अपनी शक्ति में अदम्य, अटूट विश्वास, जो उस दिन उसकी बातों से मेरे हृदय पर पत्थर की लकीर सा अंकित हो गया था।

यही कारण था कि ज्यों ही जंगल की पगडंडियां थोड़ी-बहुत सूखने लगीं, तो मैं उस डायन की झोपड़ी की ओर जाने का लोभ संवरण न कर सका। जरूरत पड़ने पर उस बदमिजाज बुढ़िया को खुश करने के लिए मैं अपने संग आधा पौंड चाय और तीन-चार मुट्ठी चीनी लेता गया।

जब मैं वहां पहुंचा, तो दोनों स्त्रियां झोपड़ी में ही बैठी थीं। मान्यूलिखा चूल्हे की आग जलाने में व्यस्त थी और ओलेस्या ऊंची बेंच पर बैठी हुई पटुआ कात रही थी। मेरे कदमों की आहट सुन कर वह पीछे मुड़ी। मुझे देखते ही उसके हाथ का धागा टूट गया और चरखे की तकली लुढ़क कर नीचे आ गिरी।

बुढ़िया अपने झुर्रियों भरे चेहरे को आग की गर्मी से बचाने के लिए हथेलियों का ओट करती हुई क्रुद्ध भाव से कुछ देर तक मुझे घूरती रही।

"दादी मां, नमस्ते!" मैंने अपना स्वर तनिक ऊंचा करके उल्लसित भाव से कहा। "मुझे नहीं पहचाना? अभी एक महीने पहले की ही तो बात है जब मैं रास्ता पूछने तुम्हारे पास चला आया था। तुमने मेरे भविष्य के बारे में भी कई बातें बतलायी थीं। कुछ याद आया?"

"महाशय, मुझे कुछ याद नहीं आता।" बुढ़िया ने झुंझला कर सिर हिला दिया। "आपके यहां आने का क्या प्रयोजन है, मुझे यह बात भी समझ में नहीं आती। हमसे बातचीत करके भला आप को क्या मिलेगा? हम सीधे-सादे, नासमझ लोग हैं। आपका यहां आना कोई माने नहीं रखता। इतना बड़ा जंगल है, आप कहीं और जाकर सैर क्यों नहीं करते?"

उसके इस रूखे व्यवहार को देख कर मैं सन्नाटे में आ गया। किंकर्तव्य-विमूढ़ सा मैं वहां खड़ा रहा। मुझे समझ में नहीं आ रहा था कि मैं उसकी इस अशिष्टता को मजाक में टाल दूं, गुस्से में तमक कर उसे झिड़क दूं, या बिना कोई शब्द मुंह से निकाले चुपचाप उलटे पांव लौट जाऊं। आखिर विवश होकर मैंने ओलेस्या की ओर देखा। नटखट भाव से भरी स्तिमित-हास की रेखा उसके

अधरों पर थिरक गयी। चरखे को एक तरफ खिसका कर वह उठी और दादी मां के सामने जाकर खड़ी हो गयी।

"दादी मां, यह सज्जन पुरुष हैं। इनसे डरने की कोई जरूरत नहीं।" उसने दादी मां को समझाते हुए कहा। "यह हमारा बुरा नहीं चाहते। आप तशरीफ रखिए।" बुढ़िया बुड़बुड़ाती जा रही थी, किन्तु ओलेस्या ने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया और सामने के कोने में रखी हुई बेंच पर मुझे बैठने का संकेत देकर मुड़ गयी।

ओलेस्या के इन शब्दों से प्रोत्साहित होकर मैं येन-केन प्रकारेण बुढ़िया का हृदय-परिवर्तन करने की चेष्टा करने लगा।

"दादी मां, न जाने तुम मुझ से क्यों खार खाए बैठी हो? किसी भले-मानुष अतिथि ने तुम्हारी ड्योढ़ी पर पैर रखा नहीं, कि तुम लाल-पीली होने लगती हो। जरा देखो तो सही, मैं तुम्हारे लिए उपहार लाया हूं!" मैंने अपने थैले से दो छोटी-छोटी पोटलियां बाहर निकाल ली।

मान्यूलिखा ने कनखियों से पोटलियों को देखा और फिर चूल्हे की ओर मुंह मोड़ लिया।

"मुझे आपके उपहार नहीं चाहिएं!" वह चिमटे से कोयलों को कुरेदती हुई जोर-जोर से बुड़बुड़ाने लगी। "मैं आप जैसे लोगों की रग-रग पहचानती हूं। सीधे-सादे आदमियों को फुसलाने के लिए आपको चिकनी-चुपड़ी बातें बनानी खूब आती हैं, और फिर बाद में—उस छोटे से थैले में क्या है?" उसने मेरी ओर घूम कर अचानक पूछा।

मैंने चाय और चीनी की पोटलियां बुढ़िया के हाथों में थमा दीं। मुझे उसका क्रोध तनिक शान्त होता सा जान पड़ा। बुड़बुड़ा वह अब भी रही थी, किन्तु उसका स्वर अब पहले का सा कड़ा न था। ओलेस्या पूर्ववत् चरखा कातने में व्यस्त हो गयी थी। मैं उसके पास एक छोटी टूट-फूटी बेंच पर बैठ गया। वह अपने बायें हाथ से बड़ी तेजी से रेशम से मुलायम सफेद रुई में बल देती जा रही थी और दायें हाथ को हल्के से हवा में घुमाकर चरखे की तकली को नीचे फर्श तक छोड़ देती थी, फिर उसे झटके से पकड़कर अपनी चपल, चुस्त अंगुलियों से पुनः घुमाने लगती थी। ऊपर से उसका यह काम बहुत सहज-साधारण सा जान पड़ता था, किन्तु वास्तव में इस पेचीदा और कठिन काम को स्फूर्ति से करने के लिए जिस दक्षता और सक्षमता की आवश्यकता है, वह लम्बे अभ्यास के बाद ही प्राप्त की जा सकती है। ओलेस्या के हाथ सहज, निर्विघ्न गति से चल रहे थे। मेरी आंखें बरबस उन हाथों पर टिक गयीं। घरेलू काम-काज करने के कारण वे काले और खुरदुरे हो गये थे, किन्तु इसके बावजूद वे

नन्हे-मुन्ने हाथ इतने सुन्दर और सुडौल थे कि कुलीन घराने की कोई भी भद्र-महिला उन्हें देखकर ओलेस्या से ईर्ष्या किये बिना न रहती।

"तुमने पिछली बार मुझे यह क्यों नहीं बताया कि दादी मां ने तुम्हारे भविष्य के बारे में बातें बतलायीं थीं?" ओलेस्या ने पूछा। मैंने डरते हुए पीछे मुड़कर बुढ़िया को देखा। "डरो नहीं, वह जरा ऊंचा सुनती हैं, इसलिये तुम्हारी बातें उन्हें सुनायी नहीं देंगी। मेरे मुंह से निकले हुए शब्दों को ही वह समझ पाती हैं।" ओलेस्या ने कहा।

मैं कुछ आश्वस्त हुआ। "... हां, तुम्हारी दादी मां ने मेरी किस्मत बतायी थी। लेकिन तुम यह प्रश्न क्यों पूछ रही हो?"

"यूं ही। क्या तुम इन सब बातों में विश्वास करते हो?" उसने छिप कर कनखियों से मेरी ओर देखा।

"किन बातों में? तुम्हारी दादी मां ने जो बातें मुझे बतलायी हैं उसमें या सामान्य-रूप से ज्योतिष-विद्या में?"

"मेरा मतलब ज्योतिष-विद्या से ही था," ओलेस्या ने कहा।

"कुछ भी कहना कठिन है। वैसे तो मैं विश्वास नहीं करता। किन्तु निश्चित-रूप से मैं कुछ नहीं कह सकता। अनेक लोगों का विचार है कि ज्योतिष विद्या कभी-कभी बिल्कुल सच निकल आती है। बड़े-बड़े विद्वानों ने इस विषय पर पोथे-पर-पोथे लिख डाले हैं। किन्तु जो कुछ तुम्हारी दादी मां ने मेरे भविष्य के बारे में कहा है, उस पर मैं कतई विश्वास नहीं करता। गंवई-गांव की कोई भी स्त्री ऐसी घिसी-पिटी बातें कह सकती है।"

ओलेस्या मुस्कराने लगी।

"हां, यह सही है कि दादी मा अब इसके योग्य नहीं रहीं। एक तो वह बूढ़ी हो गयी हैं, दूसरे उन्हें डर भी लगता है। लेकिन ताश के पत्तों से तुम्हें अपने भाग्य और भविष्य के बारे में कुछ-न-कुछ तो पता चला ही होगा?"

"कोई खास दिलचस्प बात नहीं। मुझे तो अब कुछ याद भी नहीं रहा। कोई नयी बात नहीं थी, एक लम्बी यात्रा करूंगा, चिड़ी के पत्तों की सहायता से मुझे लाभ पहुंचेगा, और भी कुछ ऐसी ही बातें कही थीं जो अब दिमाग से सफाचट हो गयी हैं।"

"तुम ठीक कहते हो। दादी मां को ज्योतिष-विद्या के सम्बंध में जो कुछ आता था, वह इस उम्र में सब चौपट हो गया है। बुढ़ापे के कारण वह बहुत से शब्द भी भूल गयी हैं। इसके अलावा उन्हें डर भी लगा रहता है। हां, अगर उन्हें कोई रुपया-पैसा दे तो आज भी वह कभी-कभी अपनी विद्या की करामात दिखलाने से नहीं चूकतीं।"

"किन्तु वह डरतीं किससे हैं भला?"

"सरकारी अफसरों से। और वह भला किसी से क्यों डरेंगी ? जब कभी गांव का पुलिस-अफसर यहां आता है, अपनी धमकियों से हमारी नाक में दम कर देता है। कहता है, 'मैं तुम्हें किसी दिन भी जेलखाने भिजवा सकता हूं। जानती हो, जादू-टोना करने वाली तुम जैसी डायनों को मखालिन टापू में जीवन भर मशक्कत करने की सजा दी जा सकती है ?' क्या यह बात सच है ?"

"हां, थोड़ा-बहुत सत्य तो उसकी बात में जरूर है—इस तरह का काम गैर-कानूनी समझा जाता है। लेकिन सजा इतनी कड़ी नहीं होती। अच्छा ओलेस्या, क्या तुम लोगों का भविष्य बता सकती हो ?"

वह कुछ झिझकी—किन्तु केवल एक क्षण के लिये।

"हां, लेकिन पैसों की खातिर नहीं।" उसने कहा।

"अगर मैं तुमसे कहूं कि तुम ताश के पत्ते खोलकर मेरे भविष्य के सम्बंध में कुछ बातें बतलाओ, तो क्या तुम्हें कोई आपत्ति होगी ?"

"हां ! जरूर होगी।" उसने कोमल किन्तु दृढ़ स्वर में कहा।

"भला क्यों ? अगर इस समय तुम्हारा जी नहीं चाह रहा तो किसी और दिन सही। मुझे लगता है कि जो कुछ तुम बतलाओगी, वह जरूर सच होगा।"

"लेकिन मैं कुछ नहीं बतलाऊंगी; चाहे कुछ भी हो जाए।"

"मेरी प्रार्थना को इस तरह से ठुकरा देना क्या तुम्हें शोभा देता है, ओलेस्या ? मैं अब तुम्हारे लिए कोई अजनबी नहीं रह गया हूं। तुम मुझे अच्छी तरह जानती-पहचानती हो, फिर क्यों मेरी बात को टाल रही हो ?"

"पिछली बार तुम्हारे जाने के बाद मैंने तुम्हारे नाम पर ताश के पत्ते खोले थे। इसीलिए अब मैं उन्हें दुबारा खोलना पसन्द नहीं करूंगी, समझे ?"

"पसन्द नहीं करोगी ? भला क्यों ? मुझे तुम्हारी बात कुछ समझ में नहीं आ रही।"

"नहीं ! ऐसा करना ठीक नहीं होगा।" उसने दबे होंठों से कहा। किसी अंधविश्वास के अज्ञात भय से उसका चेहरा पीला पड़ गया। "भाग्य को बार-बार अपना रहस्य बतलाने के लिए मजबूर नहीं करना चाहिये। हमारे यहां इस बात को अशुभ माना जाता है। भाग्य यहीं आस-पास खड़ा होकर चोरी-चुपके से हमारी बात सुन सकता है। उससे यदि बार-बार जवाब-तलब किया जाय तो वह बिगड़ उठता है। यही कारण है कि किस्मत और भविष्य का पता चलानेवाले हम जैसे लोगों को जिन्दगी में कभी सुख प्राप्त नहीं होता।"

मैं ओलेस्या की बात का उत्तर मजाक में देना चाहता था, किन्तु मुझ से कुछ न बोला गया और मैं चुप बैठा रहा। उसके स्वर और शब्दों में ईमानदारी

और सहज विश्वास का इतना गहरा पुट था कि "भाग्य" का उल्लेख करते हुए जब उसने डरकर दरवाजे की ओर देखा, तो मेरी आंखें भी अनायास उस ओर उठ गयीं।

"अच्छा, अगर दुबारा ताश के पत्ते नहीं खोलना चाहो तो न खोलो। किन्तु यह तो बता दो कि पहली बार उन्होंने मेरे भाग्य और भविष्य के सम्बंध में क्या कहा था ?"

"बेहतर यही होगा कि मैं उसे गुप्त ही रहने दूं," उसने अचानक तकली फेंक दी और अपने हाथ से मेरा हाथ छू लिया। उसकी निरीह आंखों में याचना-भरा भाव छलछला उठा।

"कृपया यह मत पूछो — कहने के लिए मेरे पास कोई अच्छी बात नहीं है, इसलिए जानकर भी क्या करोगे ?"

किन्तु मैं अपनी जिद पर अड़ा रहा। उसका बार-बार इन्कार करना, भाग्य के सम्बंध में उसके रहस्यमय संकेत — क्या महज एक किस्मत बताने वाली की पेशावर अदाएं हैं अथवा उसे सचमुच अपने शब्दों में विश्वास है ? जो भी हो, उसकी बातों ने मेरे हृदय में खलबली सी मचा दी। एक विचित्र सा भय मेरे दिल को कचोटने लगा।

"अच्छा, मैं तुम्हें सब कुछ बतला दूंगी।" ओलेस्या आखिर मान ही गयी। "किन्तु एक शर्त पर। अगर तुम्हें कुछ बातें अच्छी न लगें तो तुम बुरा न मनाना। ताश के पत्तों ने तुम्हारे चरित्र के बारे में कहा है कि तुम एक सहृदय व्यक्ति हो किन्तु तुम्हारा दिल बहुत कमजोर है। तुम्हारी सुजनता किसी काम की नहीं, क्योंकि वह तुम्हारे दिल से उत्पन्न नहीं होती। तुम जो कहते हो, सो करते नहीं। तुम हर जगह अपना पांव ऊंचा रखना चाहते हो, किन्तु तुम में साहस की कमी है, इसलिए अक्सर तुम अपनी इच्छा के विरुद्ध दूसरे लोगों के रोब में आ जाते हो। तुम्हें शराब और... क्या करूं, कुछ कहते नहीं बनता, लेकिन अब शुरू किया है तो कोई बात छिपाकर नहीं रखूंगी। हां, तो मैं कह रही थी कि तुम्हें शराब और औरतें बहुत पसन्द हैं, जिसके कारण तुम्हें जिन्दगी में अनेक मुसीबतों का सामना करना पड़ेगा। तुम रुपये की जरा भी चिन्ता नहीं करते, और न उसका सदुपयोग ही करना जानते हो। तुम्हारे पास कभी धन जमा नहीं हो सकेगा। बस करूं या और सुनोगे ?"

"जो कुछ तुम जानती हो, सब कह डालो," मैंने कहा।

"तुम अपने जीवन में कभी सुखी नहीं हो सकोगे।" ओलेस्या ने अपनी बात जारी रखते हुए कहा। "तुम सच्चे हृदय से किसी को भी अपना प्रेम नहीं दे सकोगे — अपनी निष्क्रियता और निर्ममता के कारण। तुम से प्रेम करनेवाले व्यक्ति के भाग्य में जीवन भर कष्ट भोगना लिखा है। तुम आजीवन अविवाहित

रहोगे। तुम्हें कभी सुख नसीब नहीं होगा और तुम निरन्तर कठिनाइयों से जूझते रहोगे। एक ऐसी घड़ी भी आएगी जब तुम सचमुच आत्महत्या करने के लिए तत्पर हो जाओगे। बड़ा भारी कष्ट लेकर आएगी यह घड़ी—किन्तु तुम उसे झेल लोगे और आत्महत्या करने का साहस नहीं करोगे। तुम हमेशा जरूरतमन्द रहोगे, किन्तु जीवन के अन्तिम वर्षों में अपने किसी प्रिय मित्र की अप्रत्याशित मृत्यु के कारण तुम्हारे भाग्य का पांसा पलट जाएगा। किन्तु यह तो बहुत दूर की बात है। इस वर्ष, शायद इसी महीने, एक बहुत महत्वपूर्ण घटना होने वाली है। यह निश्चित-रूप से नहीं कहा जा सकता कि यह घटना कब घटेगी, किन्तु ताश के पत्तों के अनुसार बहुत शीघ्र ही ..." वह बोलते-बोलते हठात बीच में रुक गयी।

"क्या होगा इस वर्ष ?" मैंने पूछा।

"सचमुच कुछ कहते नहीं बनता। चिड़ी की बेगम का प्रेम तुम्हें मिलेगा। वह कुंवारी है या विवाहित—इस सम्बंध में कोई निश्चित-रूप से अनुमान नहीं लगाया जा सकता। किन्तु इतना जानती हूं कि वह कोई काले बालों वाली लड़की है ..."

मैंने सरसरी निगाह से उसके बालों की ओर देखा।

"तुम इस तरह मुझे क्यों देख रहे हो ?" उसका चेहरा लज्जारक्त हो आया। कुछ स्त्रियों की भाति उसमें भी वह अन्तर्दृष्टि थी जिसके द्वारा वे दूसरों के मनोभावों को झट भांप जाती हैं।

"हां, उसके मेरे जैसे ही बाल होंगे," वह अपने हाथों से बालों को यन्त्रवत सहलाने लगी। उसके चेहरे की ललाई क्षण-प्रति-क्षण गहरी होती जा रही थी।

"चिड़ी की बेगम का प्रेम ... अच्छा ?" मैंने मजाक करते हुए कहा।

"देखो, मेरा मजाक मत बनाओ। मैं जो कुछ कह रही हूं, वह बिलकुल सच है।" उसने गम्भीर और कड़े स्वर में मुझे झिड़कते हुए कहा।

"अच्छा भई, मजाक नहीं करूंगा। अब पूरी बात तो कहो।"

"यह प्रेम उस बेचारी चिड़ी की बेगम के लिए घातक सिद्ध होगा—मृत्यु से भी अधिक दुःखदायी ! तुम्हारी खातिर उसे सारी दुनिया में लांछित होना पड़ेगा और वह इस यातना को जीवन भर अपने संग ढोती रहेगी। किन्तु उसके प्रेम से तुम पर कोई आंच नहीं आएगी।"

"ओलेस्या, क्या तुम्हारे पत्तों ने तुम्हें गुमराह तो नहीं कर दिया ?" मैंने छूटते ही कहा। "चिड़ी की बेगम को भला मैं क्यों सताने लगा, उस बेचारी ने मेरा क्या बिगाड़ा है ? मैं सीधा-सादा, साधारण आदमी हूं और तुम हो कि न जाने दुनिया भर के कौन-कौन से पाप मेरे मत्थे मढ़े जा रही हो।"

"मैं क्या जानू ? जो है, सो तो हुई है। हां, एक बात है। चिड़ी की बेगम को तुम खुद दुःख नहीं दोगे, बल्कि तुम्हारे कारण उसे दुःख झेलना पड़ेगा। मेरे शब्दों की सच्चाई तुम्हें बाद में पता चलेगी।"

"ओलेस्या, सच बताओ, क्या तुम्हें ये सब बातें महज ताश के पत्तों से पता चली हैं ?"

वह कुछ देर तक मेरे प्रश्न को लेकर चुप बैठी रही।

"हां — सब कुछ नहीं तो बहुत कुछ।" उसने अनमने भाव से मेरे प्रश्न को टालते हुए कहा। "किन्तु मैं बहुत सी बातें बिना ताश के पत्तों के भी केवल आदमी के चेहरे को देखकर जान जाती हूं। यदि भयानक परिस्थितियों में शीघ्र ही किसी आदमी की मृत्यु होनेवाली हो, तो उसका चेहरा देखकर मुझे झट पता चल जाता है। उससे बात किये बिना केवल उसके चेहरे को देखने भर से ही मुझे भविष्य में होने वाली दुर्घटना की झलक मिल जाती है।"

"क्या देख लेती हो चेहरे पर ?"

"मैं स्वयं नहीं जानती। मैं उसे देखकर एकदम आतंकित सी रह जाती हूं, मानो उसके स्थान पर उसकी लाश खड़ी हो। दादी मां से पूछ लो, वह मेरी बात की गवाही देंगी। पिछले वर्ष चक्कीवाला ओफिम अपने चक्कीघर की शहतीर से गले में फांसी का फंदा डालकर झूल गया। उस दुर्घटना के दो दिन पहले ही वह हमारे घर आया था। उसे देखते ही मैंने दादी मां से तुरन्त कह दिया था, 'दादी मां, मेरी बात को गिरह में बांध लो। कुछ ही दिनों में किन्हीं भयानक परिस्थितियों में ओफिम की मृत्यु होने वाली है।' और हुआ भी वही, जो मैंने कहा था। पिछले वर्ष क्रिसमस में याश्का — जो घोड़ों की चोरी किया करता था — दादी मां के पास अपने भाग्य के सम्बंध में पूछताछ करने आया था। दादी मां उसके सामने ताश के पत्ते लेकर बैठ गयी। याश्का ने बातों-ही-बातों में मजाक करते हुए दादी मां से पूछा, 'दादी मां, जरा यह तो बतलाओ कि मैं कैसी मौत मरूंगा ?' वह हंस रहा था, किन्तु उसके चेहरे को देखते ही मेरा खून सूख गया। मुझे लगा मानो उसका चेहरा एकदम हरा हो गया हो और उस पर मौत की छाया मंडरा रही हो। उसकी आंखें मुंदी हुई थीं और होंठ काले पड़ गये थे। एक सप्ताह बाद हमने सुना कि किसानों ने याश्का को घोड़े चुराते हुए पकड़ लिया और उसे रात भर भयंकर यातनाएं देते रहे। इस इलाके के लोग बहुत ही क्रूर और निर्दयी हैं। हमें पता चला कि उन्होंने याश्का के पैरों में कील जड़ दिये और डंडों की बौछार से उसकी पसलियां चूर-चूर कर दीं। सुबह होते-होते उसकी मौत का परवान आ पहुंचा।"

"किन्तु जब तुम्हें मालूम था कि उस पर विपत्ति आने वाली है तो तुमने उसे पहले से चेतावनी क्यों नहीं दे दी ?"

"चेतावनी देने वाली मैं कौन होती हूं ?" उसने उत्तर दिया। "जो भाग्य में लिखा है, उसे कौन मिटा सकता है ? वह जीवन के अन्तिम दिनों में नाहक परेशान हो जाता। कभी-कभी तो मुझे अपनी यह शक्ति जहर सी मालूम होती है और मैं अपने से घृणा करने लगती हूं। किन्तु इस पर मेरा वश ही क्या है ? अपने भाग्य को कोसने से क्या मिलेगा ? दादी मां जब छोटी थीं, तो वह भी मौत के बारे में सही-सही भविष्यवाणी कर सकती थीं। मेरी मां और दादी मां को यह असाधारण शक्ति अपने पुरखों से विरासत में मिली थी। यह हमारा दोष नहीं है—यह तो हमारे खून में ही मौजूद है।"

उसने चरखा चलाना बन्द कर दिया था। उसका सिर झुका हुआ था और वह गोद में अपने हाथ समेटकर चुपचाप बैठी थी। उसकी आंखों की पुतलियां किसी अज्ञात भय की छाया में फैल गयी थीं। ओलेस्या को देखकर लगता था मानो कोई अज्ञात रहस्यमयी शक्ति और एक विचित्र अलौकिक-ज्ञान उसकी आत्मा को ग्रसते जा रहे हैं और वह विवश-भाव से उनके सम्मुख धीरे-धीरे झुकती जा रही है।

पांच

उसी समय मान्यूलिखा ने एक साफ तौलिया, जिसके किनारों पर कसीदा काढ़ा गया था—मेज पर बिछा दिया। फिर उसने एक गर्म बर्तन, जिसके भीतर से भाप निकल रही थी, मेज पर रख दिया।

"ओलेस्या, खाना मेज पर रख दिया है," उसने अपनी पोती से कहा। फिर कुछ हिचकिचाती हुई वह मुझ से बोली : "आप भी हमारे संग खाएंगे न ? हम जैसे गरीब लोगों का भोजन शायद आपको पसन्द नहीं आएगा। सादे शोरबे के अलावा और कुछ भी नहीं है।"

बुढ़िया ने भोजन के लिए मुझ से अधिक अनुरोध नहीं किया। मैं मना करने ही वाला था कि ओलेस्या ने इतनी आकर्षक सहजता के संग अपने होंठों पर स्निग्ध मुस्कान बिखेरते हुए मुझे आमंत्रित किया कि उसकी बात को टालना मेरे लिए असंभव हो गया। उसने स्वयं अपने हाथों से मेरी तश्तरी पर ढेर सा मोथी का शोरबा, सुअर का भुना हुआ मांस, प्याज-आलू और मुर्ग-मुसल्लम परस दिया। भोजन सचमुच ही बहुत पौष्टिक और स्वादिष्ट था। दादी और पोती में से किसी ने भी भोजन करने से पहले सलीब का चिन्ह नहीं बनाया। मैं उन दोनों स्त्रियों को भोजन के समय बड़े गौर से देखता रहा, क्योंकि मेरा यह विश्वास रहा है कि लोगों के खाना खाने के ढंग को देखकर उनके चरित्र के सम्बंध में बहुत सी बातें पता चलायी जा सकती हैं। मान्यूलिखा चबर-चबर

करके अपने जबड़ों को चलाती, ललचायी मुद्रा में हर चीज तेजी से हड़पती जा रही थी। रोटी के मोटे-मोटे गस्से वह मुंह में डालती जाती थी, जिसके कारण उसके ढीले-ढाले गाल गुब्बारे से फूल जाते थे। दूसरी ओर ओलेस्या को देखकर लगता था मानो अभिजात वर्ग की शालीनता उसमें कूट-कूट कर भरी हो।

भोजन करने के एक घंटे बाद मैंने 'डायनों की झोपड़ी' में रहने वाले उन दोनों मेजबानों से विदा मांगी।

"कुछ दूर तक मैं तुम्हारे साथ चलूं?" ओलेस्या ने पूछा।

"क्या करेगी उनके संग जाकर? तुझ से तो एक मिनट भी निचले नहीं बैठा जा सकता," बुढ़िया ने तमक कर कहा।

किन्तु ओलेस्या ने उसकी ओर कोई ध्यान न देकर कश्मीरी शॉल ओढ़ ली। फिर वह भागती हुई अपनी दादी मां के पास गयी और उसके गले में दोनों हाथ डालकर उसे जोर से चूम लिया।

"दादी मां, मेरी अपनी दादी मां! मुझे एक मिनट भी नहीं लगेगा। अभी चुटकी मारते ही वापिस लौट आती हूं।"

"अच्छा, अच्छा!" बुढ़िया ने हल्का-सा प्रतिवाद किया। "आप इसकी बातों पर ध्यान मत दीजियेगा। यह तो अभी बच्ची है।" उसने मेरी ओर उन्मुख होकर कहा।

एक छोटी सी पगडंडी पर चलते हुए हम जंगल की बड़ी सड़क पर आ पहुंचे, जो कीचड़ से बिलकुल काली हो गयी थी। उस पर घोड़ों के खुरों और छकड़ा गाड़ियों के पहियों के निशान अंकित हो रहे थे। पानी के गड्ढों पर सूर्यास्त का रक्तिम आलोक झिलमिला रहा था। हम सड़क के किनारे पर चल रहे थे, जहां पिछले वर्ष के भूरे-पीले पत्ते—जो बर्फ के नीचे दबे रहने के कारण अब भी गीले थे—चारों ओर बिखरे हुए थे। कहीं कहीं पोलेस्ये में सबसे पहले प्रस्फुटित होने वाले बड़े-बड़े कम्पानुला फूल पीले पत्तों के बीच में से सिर निकाले बाहर झांक रहे थे।

"देखो, ओलेस्या, मैं तुम से एक बात पूछना चाहता हूं, किन्तु मुझे डर है कि कहीं तुम खफा न हो जाओ। क्या तुम्हारी दादी मां ... समझ में नहीं आता कि कैसे कहूं ..."

"डायन है?" ओलेस्या ने शान्त-भाव से मेरा वाक्य पूरा कर दिया।

"नहीं, डायन नहीं," मैं हकलाने सा लगा। "अच्छा डायन ही कह लो ... न जाने लोग उनके सम्बंध में कैसी अनाप-शनाप बातें बकते हैं। यदि तुम्हारी दादी जड़ी-बूटी या झाड़-फूंक की विद्या जानती हैं, तो भला इसमें इतना हो-हल्ला मचाने की क्या जरूरत है? यदि तुम कुछ न बतलाना चाहो तो मैं तुम पर जोर नहीं डालूंगा।"

"नहीं, बताने में मुझे कोई हिचक नहीं है," ओलेस्या ने सहज स्वर में कहा। "हां वह डायन हैं। किन्तु अब वह बूढ़ी हो गयी हैं। जो कुछ पहले करती थीं, अब नहीं कर सकतीं।"

"पहले वह क्या कर सकती थीं ?" मैंने उत्सुक होकर पूछा।

"बहुत कुछ। बीमार लोगों की बीमारी पल-छिन में छू-मन्तर कर देती थीं, खून का बहना रोक देती थीं, दांत का दर्द ठीक कर देती थीं, सांप या पागल कुत्ते के काटे हुए जख्म का इलाज कर देती थीं, छिपे हुए खजाने ढूंढ़ निकालती थीं। देखा जाय तो ऐसी कोई बात न थी, जो वह न कर सकती हों।"

"ओलेस्या, शायद तुम्हें बुरा लगे, किन्तु मुझे तुम्हारी बातों में विश्वास नहीं होता। तुम मुझे सच बतलाओ, क्या ये सब बातें लोगों की आंखों में धूल झोंकने के लिए नहीं हैं ?"

ओलेस्या ने अपने कंधे सिकोड़ लिए।

"आप जो चाहे समझ लें। माना कि किसी देहाती गंवार स्त्री की आंखों में धूल झोंकी जा सकती है, लेकिन आपको धोखा देने की कल्पना तो मैं सपने में भी नहीं कर सकती।"

"तो तुम सचमुच जादू-टोने में विश्वास करती हो ?"

"बेशक ... हमारे परिवार के सब लोग यही काम करते आए हैं। मैं खुद बहुत से चमत्कार दिखला सकती हूं।"

"ओलेस्या, काश, तुम मेरी उत्सुकता जान पातीं। क्या कोई चमत्कार मेरी आंखों के सामने नहीं कर सकती हो ?"

"क्यों नहीं," उसने बेझिझक उत्तर दिया। "क्या तुम अभी देखना चाहते हो ?"

"हां, अगर तुम्हें कोई आपत्ति न हो तो अभी सही।"

"डरोगे तो नहीं ?"

"कैसी बात करती हो ? अभी तो रात भी नहीं हुई, डर क्यों लगेगा ?"

"अच्छा। मुझे जरा अपना हाथ दो।"

मैंने हाथ आगे बढ़ा दिया। उसने तेजी से मेरे ओवरकोट की आस्तीन ऊपर चढ़ा दी और कमीज की आस्तीन के बटन खोल दिये। फिर उसने अपनी जेब से पांच इंच लम्बी कटार निकाली और उसे चमड़े की मियान से बाहर खींच लिया।

"तुम्हारा इरादा क्या है ?" मेरे मन को एक छिछोरा सा भय छू गया।

"जरा सब्र करो। तुमने कहा था कि तुम डरोगे नहीं !"

अचानक उसका हाथ तेजी से हवा में घूम गया। कटार की तेज धार मेरी कलाई की नब्ज को छू गयी। घाव से खून का फव्वारा सा बह निकला और कलाई से चू कर बूंदें टपाटप धरती पर गिरने लगीं। बरबस मेरे मुंह से एक हल्की सी चीख निकल गयी। मेरा चेहरा पीला पड़ गया।

'डरो नहीं, तुम मर नहीं जाओगे।" ओलेस्या खड़ी-खड़ी हंस रही थी। उसने घाव के ऊपर मेरी बांह को पकड़ लिया और अपना सर नीचे झुका कर तेजी से कुछ फुसफुसाने लगी। उसकी गर्म सांसें मेरी खाल को झुलसा रही थीं। कुछ देर बाद वह सीधी खड़ी हो गयी। उसने मेरी बांह छोड़ दी थी। मैंने देखा कि जहां पहले घाव था, वहां अब केवल लाल हल्की सी खरोंच बाकी रह गयी है।

"क्यों, अब तो विश्वास हो गया?" उसके होठों पर एक भेद भरी मुस्कान खिल उठी। कटार को म्यान में रखते हुए उसने पूछा, "या अभी कुछ और देखना चाहते हो?"

"हां ... लेकिन मुझे इतना भयानक सबूत नहीं चाहिए। कोई ऐसा चमत्कार दिखलाओ, जिसमें रक्तपात की सम्भावना न हो!"

"क्या दिखाऊं तुम्हें?" उसने कुछ सोचते हुए अपने से ही पूछा। "अच्छा, तुम सड़क पर सीधे जाओ। लेकिन पीछे मुड़ कर मत देखना।"

"देखो ओलेस्या, कोई खतरनाक बात न कर बैठना," मैंने मुस्कराने की चेष्टा करते हुए कहा। किसी अप्रत्याशित आशंका से मैं भयाक्रान्त हो उठा था।

"चिन्ता मत करो। चलो, आगे बढ़ो।"

मैं चलने लगा। उत्सुकता और कौतूहल से मेरा दिल धुक-धुक कर रहा था। हर क्षण मुझे यह महसूस हो रहा था कि ओलेस्या की तीक्ष्ण आंखें मेरी पीठ पर चिपकी हुई हैं। किन्तु बीस कदम चलने के बाद साफ, समतल भूमि पर अचानक मेरे पांव लड़खड़ा गये और मैं मुंह के बल गिर पड़ा।

"चलते जाओ, रुको नहीं।" ओलेस्या पीछे से चिल्ला रही थी। "घबराओ नहीं, तुम्हें चोट नहीं लगेगी। पीछे मुड़कर मत देखना। गिरने पर धरती को मजबूती से पकड़े रहो।"

मैं उठ खड़ा हुआ और सीधा चलने लगा। दस कदम चलने के बाद मैं दुबारा धरती पर लोट रहा था।

ओलेस्या ताली बजाती हुई हंसी के ठहाके लगा रही थी।

"क्यों, अब तो मन भर गया या अभी कुछ और देखने की तमन्ना बची है?" उसके सफेद दांत चमक रहे थे। "अब तो विश्वास हो गया न? चलो, अच्छा ही हुआ, तुम नीचे ही गिरे, ऊपर नहीं उड़ गये।"

"सच बताओ — यह कैसे हुआ ?" अपने कपड़ों से घास के सूखे तिनके और छोटी-छोटी टहनियां झाड़ते हुए मैंने आश्चर्य से पूछा। "कोई ऐसा भेद तो नहीं है, जिसे तुम छिपा कर रखना चाहती हो ?"

"भेद-वेद कुछ नहीं है, मैं तुम्हें सब कुछ बता दूंगी। लेकिन मुझे डर है कि तुम मेरी बातों को समझोगे नहीं। मैं शायद तुम्हें अच्छी तरह से समझा भी नहीं पाऊंगी।"

उसने ठीक ही कहा था। जो कुछ उसने मुझसे कहा, वह मैं पूरी तरह नहीं समझ पाया। जो कुछ मैं समझ पाया—सही या गलत—वह केवल इतना था कि वह मेरे कदमों पर कदम रखती हुई धीरे-धीरे मेरे पीछे चलती आयी थी। उसकी आंखें बराबर मेरी पीठ पर जमी हुई थीं और वह मेरी चाल-ढाल, हाव-भाव, यहां तक कि हर छोटी-से-छोटी हरकत और भाव-भंगिमा की नकल उतारती जा रही थी, ताकि उसके और मेरे बीच कोई भेद-व्यवधान न रह जाय। दूसरे शब्दों में वह अपने व्यक्तित्व को मिटा कर हम दोनों के बीच पूर्ण-रूप से ऐकात्म्य स्थापित करने की चेष्टा कर रही थी। कुछ कदम चलकर उसने कल्पना की कि मुझसे थोड़ी दूर जमीन से दस इंच ऊपर एक रस्सी बंधी है। आगे चल कर जब मेरे पांव उस कल्पित रस्सी से टकराये, तो ओलेस्या ने अचानक गिरने का अभिनय किया। कोई व्यक्ति कितना ही ताकतवर क्यों न हो (ओलेस्या ने मुझे बताया), उस क्षण वह गिरे बिना नहीं रह सकता। इस घटना के अनेक वर्षों बाद मुझे डा. चारकोट की पुस्तक को पढ़ने का मौका मिला। साल्पेत्रियर की वातोन्माद से पीड़ित दो पेशेवर जादूगरनियों का इलाज करते समय डा. चारकोट को जो अनुभव प्राप्त हुए, उस पुस्तक में उनका वृत्तान्त पढ़ते हुए मुझे ओलेस्या की उलझी हुई अस्पष्ट बातों का अभिप्राय समझ में आ गया। मुझे यह जान कर बड़ा आश्चर्य हुआ कि फ्रेंच जादूगरनियों के करतबों और कारनामों के पीछे वही भेद छिपा था, जिसका उल्लेख पौलेस्ये की सुन्दर जादूगरनी ने मुझसे किया था।

"मैं तुम्हें कुछ और चमत्कार दिखला सकती हूं।" ओलेस्या ने दावे के साथ कहा। "कहो तो तुम्हें डरा दूं।"

"क्या मतलब ?"

"मैं अगर चाहूं तो तुम्हें इतना ज्यादा डरा सकती हूं, कि तुम्हारे होश-हवास गुम हो जाएंगे। किसी दिन शाम के समय जब तुम अपने कमरे में बैठे होगे, अचानक तुम भय से पीले पड़ जाओगे। तुम्हारे पांव जूतों के भीतर ही थर-थर कांपने लगेंगे। तुममें इतना भी साहस न होगा कि पीछे मुड़ कर देख सको। लेकिन ऐसा करने के लिए यह जानना जरूरी है कि तुम कहां रहते हो। एक बार तुम्हारा कमरा भी देखना होगा।"

"मैं तुम्हारी चाल समझ गया," मैंने उसका मजाक उड़ाते हुए कहा। "तुम किसी दिन बाहर से मेरे कमरे की खिड़की खटखटा दोगी या जोर से चीखने लगोगी।"

'नहीं, नहीं। मैं यहां जंगल में अपनी झोपड़ी से एक कदम भी बाहर नहीं रखूंगी। किन्तु यहां बैठे-बैठे सोचती रहूंगी कि सड़क पार करके मैं तुम्हारे घर में घुस गयी हूं, तुम्हारे कमरे का दरवाजा खोल कर धीरे-धीरे दबे पांवों से भीतर चली आयी हूं। तुम शायद अपनी मेज के सामने बैठे होगे। मैं चुपके से तुम्हारे पीछे चली आऊंगी—तुम्हें मेरी आहट भी नहीं मिलेगी। फिर अपने हाथों से तुम्हारा कंधा दबोचने लगूंगी, जोर से, बहुत जोर से, और मैं बराबर तुम्हें घूरती रहूंगी। ऐसे, देखो, ऐसे—"

उसने अचानक अपनी पतली भौंहें सिकोड़ लीं और अपनी आंखें मुझ पर गड़ा दीं। उन आंखों में एक भयानक, अमोघ सम्मोहन घिर आया था। आंखों की पुतलियां फैलकर नीली हो गई थीं। बहुत पहले मास्को के त्रेत्याकोव कला-भवन में किसी कलाकार का चित्र 'मेदूसा की छवि' देखा था। कलाकार का नाम अब याद नहीं रहा, किन्तु उस क्षण ओलेस्या की मुख-मुद्रा देखकर अचानक मेरी आंखों के सामने वह चित्र घूम गया। वह अमानुषिक नेत्रों से मुझे एकटक देख रही थी। मुझे लगा मानो एक रहस्यमयी अलौकिक शक्ति ने अपनी फौलादी अंगुलियों से मुझे जकड़ लिया हो।

"ओलेस्या, कृपया इस तरह मत देखो," मैंने जबरदस्ती हंसते हुए कहा। "जब तुम मुस्कराती हो, तब तुम्हारा चेहरा बच्चों सा अबोध और आकर्षक हो जाता है। तुम्हारी वही भाव-मुद्रा मुझे अच्छी लगती है।"

हम चलने लगे। मुझे यह सोचकर बहुत आश्चर्य हो रहा था कि अशिक्षित होने के बावजूद ओलेस्या बोलचाल में कितनी सुसंस्कृत और गरिमा-सम्पन्न है। "ओलेस्या," मैंने कहा, "तुम्हारी एक बात मुझे सदा हैरत में डाल देती है। तुम्हारा लालन-पालन इस सूने, वीरान जंगल में हुआ है, किसी से तुम मिलती-जुलती भी नहीं हो, और जहां तक मैं सोच पाता हूं तुम अधिक पढ़ी-लिखी भी नहीं हो।"

"मैं बिलकुल अपढ़ हूं।" ओलेस्या ने कहा।

"हां, लेकिन बोलचाल में तुम किसी भी भद्र महिला से अंगुल भर भी कम नहीं हो। इसका क्या कारण है? क्या तुमने मेरे सवाल को समझ लिया?"

"हां समझती हूं। इसका सारा श्रेय दादी मां को है। उनके चेहरे-मुहरे को देखकर अक्सर लोगों को उनके बारे में गलतफहमी हो जाती है। जब वह तुम्हें जानने-पहचानने लगेंगी तो किसी दिन तुमसे जी खोलकर बात करेंगी। उस दिन तुम उनका लोहा मान जाओगे। तुम चाहे जिस विषय पर उनसे

पूछना, वह तुम्हें उसके बारे में सब कुछ बता देंगी। वह सब कुछ जानती हैं ... लेकिन अब वह बहुत बूढ़ी हो गयी हैं।"

"तब तो उन्हें जीवन का बहुत गहरा अनुभव होगा। वह इस इलाके में कहां से आयी हैं, पहले कहां रहती थीं ?"

ओलेस्या ने मेरे प्रश्नों का उत्तर एकदम नहीं दिया। मुझे लगा कि उसको मेरी यह पूछताछ कुछ अरुचिकर सी प्रतीत हुई।

"मुझे कुछ पता नहीं," उसने अनमने स्वर में बात टालते हुए कहा। "दादी मां इस विषय में मुझे कभी कुछ नहीं बतलातीं। जब कभी भूली-भटकी दो-चार बातें उनके मुंह से निकल जाती हैं, तो एकदम कड़ी हिदायत दे देती हैं कि मैं उन्हें भूल जाऊं और कभी किसी पराये व्यक्ति के कानों में उनकी भिनक न पड़ने दूं। अब मुझे वापिस चलना चाहिए वरना दादी मां नाराज होंगी ?" उसने कहा। "अच्छा, नमस्ते। मुझे खेद है कि मै अब तक तुम्हारा नाम नहीं जानती।"

मैंने अपना नाम बतला दिया।

"इवान तिमोफेविच ? अच्छा, नमस्ते इवान तिमोफेविच ! हमारे घर को भूल मत जाना, कभी-कभी जरूर दर्शन देते रहना।"

मैंने अपना हाथ आगे बढ़ाया। उसने बड़ी खुशी से अपने छोटे और मजबूत हाथ से मेरा हाथ पकड़ लिया।

छः

उस दिन के बाद मैं अक्सर उस डायन की झोपड़ी में जाने लगा। ओलेस्या पहले की तरह शील और मर्यादा की मूर्ति बनी कोने में चुपचाप बैठी रहती। किन्तु मुझे देखकर उस पर जो सहज, स्वाभाविक प्रतिक्रिया होती, उससे मैं समझ जाता कि मेरे आने पर उसे खुशी होती है। मान्यूलिखा को मेरी उपस्थिति अब भी अखरती थी और मुझे देखकर वह दबे होठों से बुड़-बुड़ाने लगती थी, किन्तु अब मेरे प्रति उसका व्यवहार पहले जैसा अशिष्ट और कठोर नहीं था। मुझे लगता था कि मेरी अनुपस्थिति में ओलेस्या ने उसके सम्मुख मेरे पक्ष में पैरवी की होगी। इसके अलावा मैं उसके लिए जो उपहार लाता था — गर्म शाल, मुरब्बे का डिब्बा, चेरी की शराब की बोतल, आदि — उन्होंने अवश्य ही उसके दिल को पिघला दिया होगा। जब मैं उनसे विदा लेकर जाने लगता तो ओलेस्या — एक मूक समझौते के अनुसार — मुझे इरीनोवो रोड तक छोड़ने चली आती। हर बार वापिस लौटते हुए हम दोनों के बीच कोई रोचक और मजेदार बहस छिड़ जाती, हमारी चाल अनायास धीमी पड़

जाती और हम काफी देर तक जंगल के रास्तों पर एक संग घूमते रहते। इरीनोवो रोड पहुंचने पर मैं पीछे मुड़ कर आधे मील तक उसके संग चलता रहता और एक दूसरे से जुदा होने से पहले हम बहुत देर तक चीड़ की घनी सुवासित छाया तले खड़े होकर बातें करते रहते।

क्या केवल ओलेस्या का सौंदर्य मुझे अपनी ओर आकर्षित करता था? शायद नहीं। उसका चरित्र-बल और विशिष्ट तथा स्वतंत्र व्यक्तित्व, उसका मस्तिष्क, जो सुलझा हुआ होने के बावजूद अपने पुरखों के अडिग अन्धविश्वासों से भरा था, जो बच्चों के मन सा निर्दोष होने पर भी एक नवयौवना सुन्दरी के मादक चुहलपन से अछूता न था --- ओलेस्या के सौंदर्य के अलावा उसके इन सब गुणों ने भी मुझे मंत्रमुग्ध सा कर दिया। उसके आदिम, कल्पनाशील मस्तिष्क में उठने वाले प्रश्नों का कोई अन्त नहीं था, और मुझे अनेक बार उसके विचित्र प्रश्नों का विस्तारपूर्वक उत्तर देना पड़ता था। दुनिया के विभिन्न देश और उनके निवासी, प्राकृतिक शक्तियां, विश्व और पृथ्वी की रूप-रचना, विद्वान पुरुष, बड़े शहर — हर सम्भव विषय को लेकर वह मुझ पर प्रश्नों की बौछार करती रहती। बहुत सी वस्तुएं तो उसे अत्यधिक आश्चर्य-जनक, अद्भुत और असम्भव सी जान पड़तीं। जो कुछ वह पूछती, मैं बहुत सीधे-सादे, साफ-सुलझे ढंग से समझा देता। शायद मेरी इस ईमानदारी और निश्छलता ने उसे इतना अधिक प्रभावित कर दिया, कि जो कुछ मेरे मुख से निकल जाता, उसे वह निर्विवाद रूप से ब्रह्म वाक्य समझ कर स्वीकार करती। जब कभी मुझे लगता कि कोई बात इतनी पेचीदा है कि उसके अर्ध-आदिम मस्तिष्क में ठीक से नहीं बैठेगी अथवा जब वह कोई ऐसा प्रश्न पूछ लेती जिसका उत्तर देने में मैं स्वयं अपने को असमर्थ पाता, तो मैं स्पष्ट-रूप से, बिना किसी लाग-लपेट के उससे कह देता, "देखो ओलेस्या, मैं तुम्हें इस प्रश्न का उत्तर ठीक से नहीं दे पाऊंगा। मुझे डर है कि तुम शायद अभी इसे नहीं समझ सकोगी।"

मेरी बात सुन कर उसका आग्रह बढ़ जाता। "तुम मुझे बतला दो, मैं स्वयं समझ जाऊंगी। नहीं समझूंगी तो भी भला बतलाने में क्या हर्ज है!" वह अनुरोध भरे स्वर में कहती।

कभी-कभी उसे कोई बात समझाने के लिए मुझे अद्भुत उदाहरणों का सहारा लेना पड़ता था, असाधारण मिसालें देनी पड़ती थीं। बोलने के दौरान में जब कभी मैं किसी उपयुक्त शब्द को टटोलने की चेष्टा करने लगता, तो वह मुझे प्रोत्साहित करने के लिए अधीर होकर प्रश्नों की बोछार करने लगती। ऐसे क्षणों में मेरी अवस्था उस हकलाने वाले व्यक्ति की तरह हो जाती, जो बेचारा किसी शब्द पर अटक गया हो और दूसरे लोग अपनी सहानुभूति प्रकट करने के लिए उसे प्रोत्साहित कर रहे हों। अन्त में उसकी तीक्ष्ण और सर्वतोमुखी बुद्धि

तथा पारदर्शी कल्पना मुझ जैसे नौसिखये शिक्षक पर विजय पा लेती। मुझे यह मानना पड़ा कि जिस वातावरण में ओलेस्या का लालन-पालन हुआ था, जहां शिक्षा प्राप्त करने की सुविधाओं का सर्वथा अभाव था, उसे देखते हुए उसकी बुद्धि और प्रतिभा सचमुच विलक्षण थी।

एक बार बातचीत करते हुए मैंने पीटर्सबर्ग का जिक्र छेड़ दिया। छूटते ही उसने मुझ से पूछा, "पीटर्सबर्ग ? क्या वह कोई छोटा सा कस्बा है ?"

"नहीं, पीटर्सबर्ग छोटा सा कस्बा नहीं है। वह रूस का सबसे बड़ा शहर है।" मैंने कहा।

"सबसे बड़ा ? तुम्हारा मतलब है कि वह सब शहरों से बड़ा है ? क्या उससे बड़ा कोई और शहर नहीं है ?" उसने अबोध भाव से पूछा।

"नहीं, बड़े-बड़े आदमी सब वहीं रहते हैं। वहां लकड़ी का मकान एक भी नहीं है। सब मकान पत्थर के बने हैं।"

"तब तो शायद वह हमारे स्तेपान से भी बड़ा होगा — क्यों ?" उसने विश्वास के साथ पूछा।

"हां, उससे जरा ही बड़ा है — समझ लो कि लगभग पांच सौ गुना बड़ा होगा ! सारे स्तेपान में जितने लोग रहते हैं, उससे दुगने आदमी पीटर्सबर्ग के कुछ मकानों में समा जाते हैं।"

"हाय री मां ! कैसे होते होंगे वे मकान ?" उसने आतंकित होकर पूछा।

हमेशा की तरह मुझे फिर तुलना करने की आवश्यकता पड़ी। "अरे उन मकानों की ऊंचाई देख कर तो आंखें खुल जायें ! पांच या छः या कहीं-कहीं सात मंजिलें होती हैं उन मकानों में। तुम उन चीड़ के वृक्षों को देख रही हो न ?"

"वे सबसे ऊंचे पेड़ ? हां, देख रही हूं।"

"वे मकान भी इन पेड़ों जितने ऊंचे हैं। ऊपर से नीचे तक लोगों से ठसाठस भरे हुए। पिंजरे में बन्द परिन्दों की तरह वे लोग इन मकानों में रहते हैं — एक-एक कमरे में लगभग बारह-बारह आदमी — सांस लेना भी मुश्किल हो जाता है। कुछ लोग धरती के नीचे सर्दी और सीलन में ठिठुर-ठिठुर कर जीवन बिताते हैं। सर्दी हो या गरमी, उन्हें वर्ष भर धूप के दर्शन नहीं होते।"

"कैसा है तुम्हारा यह शहर ! मैं तो उसके लिए किसी मूल्य पर भी अपना जंगल न छोड़ूं।" ओलेस्या ने सिर हिलाते हुए कहा। "जब कभी मुझे सौदा लेने बाजार जाना पड़ता है, तो मुझे स्तेपान से भी घृणा होने लगती है। चारों ओर भीड़-भक्कड़, शोर-शराबा और धक्कम-धुक्का देख कर मेरा सिर

चकराने लगता है। ऐसा जी करता है, कि सब कुछ छोड़ कर वापिस अपने जंगल की ओर भाग जाऊं। मैं तो एक दिन भी शहर में नहीं रह सकती।"

"किन्तु यदि तुम्हारा पति शहरी आदमी हो, तो तुम क्या करोगी?" मैंने मुस्कराते हुए पूछा।

उसने अपना मुंह सिकोड़ लिया। उसके नथुने फड़कने लगे। "छि!" उसने तिरिस्कार-पूर्ण भाव में कहा। "मुझे कोई पति नहीं चाहिए।"

"ओलेस्या, विवाह से पहले सब लड़कियां यही कहती हैं, और फिर सबका विवाह हो जाता है। तुम्हारा किसी से प्रेम हुआ नहीं कि तुम — शहर की बात तो छोड़ो — अपने प्रेमी के पीछे दुनिया के दूसरे छोर तक जाने के लिए प्रस्तुत हो जाओगी।"

"कृपया इस विषय पर कोई बात न कीजिए," उसने खीज भरे स्वर में अनुरोध किया। "इन बातों में रखा ही क्या है?"

"ओलेस्या, तुम भी अजीब लड़की हो। क्या तुम सचमुच यह सोचती हो कि तुम जीवन में किसी पुरुष से प्रेम नहीं करोगी? तुम जैसी सुन्दर, स्वस्थ व जवान लड़की के मुंह से यह बात कुछ विचित्र सी लगती है। एक बार तुम्हारे खून में उबाल आया नहीं कि तुम्हारी प्रतिज्ञा धरी की धरी रह जायेगी।"

"अच्छा, प्रेम होगा सो होगा, किसी से पूछ कर तो प्रेम करूंगी नहीं!" उसने तुनक कर कहा।

"प्रेम करोगी, तो विवाह भी करना पड़ेगा!" मैंने चिढ़ाते हुए कहा।

"तुम्हारा अभिप्राय उस विवाह से है, जो गिरजे में किया जाता है?"

"बेशक। बड़े पादरी के संग तुम 'लैक्टर्न' (गिरजे की बड़ी मेज) के इर्द-गिर्द चक्कर लगाओगी और छोटा पादरी 'इसायाह, खुशी मनाओ' वाला भजन गायेगा। गिरजे में विवाह के शुभ अवसर पर तुम्हारे सिर पर ताज रखा जायेगा।"

ओलेस्या ने अपनी पलकें झुका लीं। उसके होठों पर फीकी सी मुस्कराहट सिमट आयी थी और वह अपना सर हिला रही थी।

"नहीं मेरे मित्र, यह सब कुछ भी नहीं होगा। तुम्हें शायद यह सुनकर बुरा लगे कि हमारे कुल में किसी का विवाह गिरजे में नहीं होता। मेरी मां और दादी को भी विवाह के लिए गिरजे में नहीं जाना पड़ा। विवाह की बात तो दूर रही, हम गिरजे के भीतर पैर भी नहीं रख सकते।"

"क्या इसलिए कि तुम लोग जादू-टोना करते हो?"

"हां, तुम्हारा अनुमान ठीक है।" उसने शान्त-भाव से उत्तर दिया। जन्म होते ही मेरी आत्मा शैतान के हाथों में बेची जा चुकी है। क्या इसके बाद भी मैं गिरजे में पांव रखने का दुस्साहस कर सकती हूं?"

"प्यारी ओलेस्या, तुम अपने आपको धोखा दे रही हो। मेरा विश्वास करो, तुम जो कुछ कह रही हो, वह एक हास्यास्पद बात है। उसमें लेश-मात्र भी सत्य नहीं हो सकता।"

एक रहस्यमयी नियति की वेदी पर अपने को अर्पण करने का विचित्र भाव उसके चेहरे पर घिर आया, जो एक बार मैं पहले भी देख चुका था।

"नहीं, तुम नहीं समझ सकते। जो मैं यहां महसूस करती हूं," उसने अपना हाथ अपनी छाती से चिपका लिया, "जो मेरा दिल कहता है, वह कभी झूठ नहीं हो सकता। हमारा कुल सदा से अभिशाप-ग्रस्त रहा है। तुम्हीं बतलाओ, उसके अलावा हमारी कौन सहायता कर सकता है? मुझ जैसी साधारण लड़की के हाथों में चमत्कार करने की शक्ति कहां से आयी? हम लोग अपनी दैवी शक्ति उसके द्वारा ही तो प्राप्त करते हैं।"

जब हम कभी इस असाधारण विषय की चर्चा करते, तो हमेशा हमारी बातचीत इस स्थल पर आकर रुक जाती। उसकी इन भ्रान्तिमूलक धारणाओं की निरर्थकता साबित करने के लिए मैं बहुत हाथ-पैर मारता, सीधे-सादे शब्दों में उसे मोह-निद्रा ('हिप्नोटिज्म'), स्वप्रेरित-शक्तियों, झाड़-फूंक करने वाले ओझाओं, और हिन्दुस्तानी फकीरों के सम्बंध में विस्तार-पूर्वक बातें बतलाता, किन्तु उसके अन्ध-विश्वास के आगे मेरे सब तर्क परास्त हो जाते। मैंने उसे बताया कि वह अपने जिन चमत्कारों में दैवी-शक्ति का हाथ देखती है, उनका भेद आसानी से शरीर-विज्ञान द्वारा उद्घाटित किया जा सकता है। मिसाल के तौर पर दक्ष हाथों से नाड़ी दबाने पर रक्त-स्राव बन्द किया जा सकता है। किन्तु मेरे इन तर्कों का उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वह अन्य बातों पर तो मेरा विश्वास अवश्य करती थी, किन्तु इस विषय पर उसे अपने विश्वास से डिगाना असम्भव था।

"अच्छा, जहां तक रक्त-स्राव बन्द करने का सवाल है, मैं तुम्हारी बात मान लेती हूं। लेकिन मैं और भी तो बहुत कुछ कर सकती हूं। उसके लिए मेरे पास शक्ति कहां से आती है?" वह ऊंची आवाज में मुझ से बहस करने लगती। "मैं केवल रक्त-स्राव रोकना ही नहीं जानती। कहो तो एक दिन तुम्हारे घर के कोनों में छिपे सब चूहों और कनखजूरों को बाहर भगा दूं? अगर तुम चाहो तो मैं किसी मरीज को खराब से खराब बुखार से मुक्ति दिलवा दूं, चाहे सब डॉक्टर उसका इलाज करने में अपनी असमर्थता प्रकट कर चुके हों। अगर मैं चाहूं, तो तुम किसी शब्द को बिलकुल भूल जाओगे। मैं सपनों का अर्थ कैसे जान लेती हूं, यह कैसे पता चला लेती हूं कि भविष्य में क्या होने वाला है? बताओ, मुझ में यह शक्ति कहां से आती है?"

हम दोनों झगड़ा समाप्त करने की खातिर अक्सर विषय बदल देते, किन्तु एक-दूसरे के प्रति हमारा रोष भीतर-ही-भीतर घुमड़ता रहता। उसके काले जादू की अनेक बातें मेरी अल्प-बुद्धि की सीमा से बाहर थीं। निर्विवाद-रूप से यह कहना भी असम्भव था कि जिन चमत्कारों के सम्बंध में वह इतने आत्मविश्वास के संग अपना ज्ञान जतलाती थी, वास्तव में उनमें से आधे चमत्कारों को भी दिखलाने की उसमें सामर्थ्य थी या नहीं। किन्तु उसके सम्पर्क में रह कर मुझे इस बात का दृढ़ विश्वास हो गया था कि उसके भीतर कहीं आत्मानुभूत, धुंधला और विचित्र ज्ञान छिपा है, जो छिटपुट अनुभवों द्वारा धीरे-धीरे पनपता रहा है। अपढ़, अशिक्षित जनता की इस विचित्र ज्ञान-निधि में सत्य के वे तत्व शामिल होते हैं, जिन्हें वैज्ञानिक शताब्दियों बाद ही पकड़ पाते हैं। कभी-कभी तो यह देख कर बड़ा आश्चर्य होता है कि अनेकानेक हास्यास्पद और अद्भुत अंधविश्वासों में लिपटे हुए ज्ञान के ये तत्व किस प्रकार गुप्त धरोहर के रूप में पीढ़ी-दर-पीढ़ी चले आये हैं।

इस विषय पर यद्यपि हम दोनों के बीच तीव्र मतभेद था, फिर भी ओलेस्या और मेरा सामीप्य बढ़ता गया। अब तक हमने प्रेम का एक भी शब्द एक दूसरे से नहीं कहा था, किन्तु हमें एक दूसरे का अभाव बेहद अखरता था। जब हम एक दूसरे के संग होते तो कभी-कभी ऐसे मूक क्षण भी आ जाते जब अनायास हमारी आंखें चार हो जातीं। ऐसे क्षणों में ओलेस्या की आंखों पर हल्की नमी सी घिर जाती और उसकी कनपटी की पतली नीली नस तेजी से फड़कने लगती।

किन्तु यर्मोला के संग मेरे सम्बंध सदा के लिए बिगड़ गये। डायन की झोपड़ी में मेरा आना-जाना और ओलेस्या के संग मेरी शाम की सैर का भेद उससे छिपा न रह सका। यह एक आश्चर्यजनक बात थी कि उसके जंगल में होने वाली प्रत्येक घटना के बारे में वह पूरी खोज-खबर रखता था। वह अब मुझसे कतराने लगा था। जब कभी मैं जंगल का रास्ता पकड़ने के लिए घर से बाहर निकलता, मुझे लगता कि दूर से उसकी अप्रसन्न, शिकायत-भरी दृष्टि मुझ पर जमी है, यद्यपि मेरी उपस्थिति में वह उलाहने का एक भी शब्द मुंह से न निकालता। हंसी-विनोद में मैंने उसे पढ़ाने का जो कार्यक्रम बनाया था, वह अधिक दिनों तक नहीं चल सका। जब कभी किसी शाम को अवकाश के समय मैं उसे पढ़ने-लिखने के लिए बुलाता, तो वह लापरवाही से हाथ हिला कर मेरी बात को टाल देता।

"पढ़-लिख कर क्या करना है, हजूर? महज वक्त बरबाद करने के अलावा और क्या हाथ लगेगा?" तिरस्कार-पूर्ण भाव से आलस भरे स्वर में वह कहता।

अब हम शिकार खेलने भी नहीं जाते थे। जब कभी मैं यर्मोला से शिकार का जिक्र छेड़ता तो वह कोई-न-कोई बहाना बनाकर बात को टाल देता। कभी कहता कि बन्दूक खराब है, कभी समय का अभाव होता, और कभी अचानक कुत्ता बीमार पड़ जाता।

"हुजूर, अभी तो सारे खेत जोतने हैं, शिकार के लिए कहां से वक्त निकालूं ?"

यह कह कर वह अवसर मेरे निमंत्रण को अस्वीकार कर देता। मुझे मालूम था कि खेत जोतना तो महज एक बहाना है। वह दिन भर शराबखाने के इर्द-गिर्द चक्कर काटता रहेगा, इस आशा में, कि शायद कोई मुफ्त में उसे शराब पिला दे। उसके हृदय में मेरे प्रति जो प्रच्छन्न-रूप से विरोध सुलगता रहता था, उसे आखिर मैं कब तक बरदाश्त कर पाता ? मैं शीघ्र ही किसी ऐसे अवसर की खोज में था, जब उसे जवाब दे सकूं। किन्तु उसके भूखे-नंगे परिवार की कल्पना करते ही मेरा इरादा ढीला पड़ जाता। उसके जीवन-निर्वाह का एकमात्र आधार वे चार रूबल थे, जो मैं यर्मोला को वेतन-स्वरूप दिया करता था।

सात

एक दिन, हमेशा की तरह, सूर्यास्त होने से पूर्व जब मैं डायन की झोपड़ी में पहुंचा तो देखा कि दोनों स्त्रियों के चेहरे मुर्झाये हुए हैं। मान्यूलिखा बिस्तर पर पाव पसारे, पीठ झुकाए इधर-उधर झूमती दबे होंठों से कुछ बुड़बुड़ाती जा रही थी। उसने अपना सिर हाथों में थाम रखा था। मेरे अभिवादन का उसने कोई उत्तर नहीं दिया। ओलेस्या ने अपनी आदत के अनुसार स्नेह-भाव से मेरा स्वागत किया, किन्तु हमारे बीच बातचीत का कोई सिलसिला नहीं बंध सका। उसका मन रह-रह कर भटकने लगता था और वह मेरे प्रश्नों को बिना सुने ही, जो मन में आता, बोल देती थी। किसी अज्ञात चिन्ता की छाया से उसका सुन्दर चेहरा म्लान हो उठा था।

"ओलेस्या, मुझे लगता है कि तुम्हें कोई चिन्ता घुन की तरह खाये जा रही है," मैंने बेंच पर पड़े उसके हाथ को धीरे से छुआ।

वह चुपचाप सिर मोड़ कर खिड़की के बाहर देखने लगी। वह शान्त रहने का भरसक उपक्रम कर रही थी, किन्तु उसकी सिकुड़ी हुई भौहें कांप उठती थीं, होठ दांतों के नीचे भिचे हुए थे।

"कुछ भी बात तो नहीं है," उसने निष्प्राण सी आवाज में कहा। "सब ठीक चल रहा है।"

"ओलेस्या, क्या तुम मुझे अपने मन की बात नहीं बतलाओगी ? अपने मित्र से छिपाव-दुराव रखना तुम्हें क्या शोभा देता है ?"

"सच, कोई ऐसी-वैसी बात नहीं है। फिर तुम से अपनी छोटी-मोटी परेशानियों के बारे में क्या कहूं, वे तो हमारी जिन्दगी के संग लगी रहती हैं।"

"नहीं ओलेस्या। कोई और बात है। अगर सिर्फ छोटी-मोटी परेशानी होती तो तुम इतनी चिन्तित क्यों नजर आतीं ?"

"यह तुम्हारा भ्रम है।"

"ओलेस्या, दिल खोल कर मुझ से सारी बात साफ-साफ कह डालो। अगर मैं तुम्हारी कोई सहायता न कर सका तो भी तुम मुझ से सलाह-मशविरा तो कर ही सकती हो, यह न हो, तो अपने दिल का दुख कह डालने से मन तो हल्का हो ही जाता है।"

"मैं सच कह रही हूं। तुम्हें बतलाने से कुछ भी लाभ न होगा। तुम किसी तरह भी हमारी सहायता नहीं कर सकते।"

अचानक बुढ़िया उसकी बात काट कर गुस्से में चीख उठी। "बच्चों की सी बातें क्यों करती हो ? यह महानुभाव हमारे फायदे की बात कर रहे हैं और तू है कि घमन्ड के मारे उनकी बात ही नहीं सुनती। अपने जैसा अक्लमन्द तो तू दुनिया में किसी को नहीं समझती। देखिए महाशय, सारी बात यह है," उसने मेरी ओर उन्मुख होकर बोलना शुरू कर दिया।

उसकी बातों को सुन कर मुझे परिस्तिथि काफी चिन्ताजनक नजर आयी। अभिमानी ओलेस्या के हाव-भाव और अस्पष्ट संकेतों से उसकी गम्भीरता का सही अनुमान न लग सकता था। गांव का पुलिस-इंसपेक्टर कल रात उनके घर आया था।

"शुरू में तो वह बहुत अच्छी तरह पेश आया। कुर्सी पर बैठ कर उसने हमसे वोद्का पीने की इच्छा प्रकट की।" मान्यूलिखा कह रही थी। "कुछ देर बाद उसका असली रूप सामने आया। 'तुम चौबीस घंटों के भीतर अपना बोरिया-बिस्तर उठा कर यहां से चली जाओ,' उसने हमसे कहा। 'अगर मैंने तुम्हें दुबारा यहां देखा तो याद रखो, तुम्हें देश निकाले की सजा दिलवा कर ही दम लूंगा। दो सिपाहियों को तुम्हारे संग कर दूंगा, जो तुम्हें जबरदस्ती उस स्थान पर ले जायेंगे, जहां से तुम आयी हो। मेरी बात को गिरह में बांध कर रख लो।' हजूर, अब आप ही बताइये, अमचैंक्स का कस्बा, जहां कभी हमारा घर था, यहां से कोसों दूर है। वहां जाकर हम क्या करेंगी ? हमें अब वहां कोई नहीं जानता। इसके अलावा हमारे पासपोर्ट भी बहुत अर्से से पुराने पड़ गये हैं। शुरू में ही वे कौन से ठीक थे ? समझ में नहीं आता, क्या करें, कहां जाएं !"

"लेकिन तुम तो यहां काफी लम्बे अर्से से रहती आयी हो। अगर उसे तुम्हारे यहां रहने पर पहले कोई एतराज नहीं था, तो अब तुम्हें वह क्यों तंग कर रहा है ?" मैंने पूछा।

"यही तो हमारी समझ में नहीं आता। उसने इस सिलसिले में कुछ कहा था, लेकिन मैं उसका मतलब नहीं समझ पायी। असल में यह झोपड़ी हमारी नहीं है। हम इसके मालिक को किराया देकर यहां रहते है। पहले हम गांव में रहा करते थे, किन्तु ..."

"मैं जानता हूं, दादी मां। गांव के किसान तुमसे नाराज हो गये थे।"

"हां भाई, यही बात थी। गांव से निकल कर मैं बूढ़े जमींदार मिस्टर अबरासिमोव के सामने जाकर खूब रोयी-चिल्लायी। आख़िर उसने मुझ पर रहम करके यह झोपड़ी दे दी। किन्तु अब मुझे पता चला कि किसी दूसरे जमींदार ने इस जंगल को खरीद लिया है और वह इस दलदल को साफ करवाने की फिक्र में है। लेकिन मैं समझ नहीं पाती कि वह हमें इस झोपड़ी से क्यों निकलवाना चाहता है।"

"दादी मां, हो सकता है कि पुलिस-इंसपेक्टर ने तुम्हें डराने के लिए यह मन-घढ़न्त किस्सा छेड दिया हो।" मैंने कहा। "वह तुमसे कुछ रुपये ऐंठने की फिराक में होगा।"

"मैंने तो यह भी कर के देख लिया भाई, किन्तु वह तो टस-से-मस नहीं होता। मैंने उसे पचीस रूबल दिये, किन्तु उसने उन्हें लेने से साफ इन्कार कर दिया। वह तो ऐसा लाल-पीला हो रहा था कि मेरे तो डर के मारे होश-हवास ही गुम हो गये। वह तो बस एक ही बात की रट लगाये था : 'तुम यहां से चली जाओ!' हमारा कोई सहारा नहीं। समझ में नहीं आता कि क्या करें, कहां जायें ? हुजूर, अगर आप उस लालची कुत्ते को समझा-बुझा सकें तो हम जीवन भर आपका गुणगान करेंगे।"

"दादी मां!" ओलेस्या के स्वर में उलाहना भरा था।

"दादी मां क्या ?" बुढ़िया का स्वर तीखा हो उठा। "तुझे अपनी दादी मां के संग रहते आज चौबीस बरस होने को आ गये। इस उम्र में अब हम क्या दर-दर भीख मांगते फिरेंगे ? हुजूर इसकी बात पर ध्यान न दें। अगर किसी तरह आप हमें इस संकट से उबार सकें तो हम आपके आभारी रहेंगे।"

मैं ढिलमिल सा वादा करके चला आया, किन्तु उनके लिए मैं कुछ कर पाऊंगा, इसकी आशा बहुत कम थी। अगर पुलिस इंसपेक्टर ने घूस लेने से इन्कार कर दिया है, तो मामला अवश्य गम्भीर होगा। उस शाम ओलेस्या ने विरक्त-भाव से मुझे घर से ही विदाई दे दी और हमेशा की तरह मेरे संग बाहर नहीं आयी।

मुझे लगा कि उसे अपने घरेलू मामले में मेरा हस्तक्षेप अच्छा नहीं लगा। उसकी दादी मां ने जिस प्रकार गिड़गिड़ा कर मुझसे याचना की थी, उससे उसके आत्म-सम्मान को गहरी ठेस लगी थी।

आठ

उस दिन सुबह से ही कुछ गर्मी थी। आकाश बादलों से घिरा था। कभी-कभी मोतियों सी बड़ी-बड़ी बूंदें धरती पर बिखेरता हुआ श्यामल आकाश बरस पड़ता था। वसन्त की इस जीवनदायिनी वर्षा में देखते-ही-देखते घास उगने लगती है, नयी कोपलें फूटने लगती हैं। मेह की हर बौछार के बाद सूरज की उल्लसित किरणें बादलों की ओट से बाहर झांकने लगतीं। मेरे घर के सामने वाटिका में फूल लगे थे। मेह से भीगे उनके कोमल पत्ते क्षण भर के लिए उजली धूप में चमचमा उठते थे। मेरे मकान के पीछे, फूलों की क्यारियों पर पक्षी गर्व से सिर उठाये इधर-उधर उड़ते हुए चहचहा रहे थे। चिनार की भूरी लिसलिसी कलियों की उत्तेजक सुगंध हवा में उड़ रही थी। जब यर्मोला मेरे पास आया, उस समय मैं एक वन-कुटीर का स्केच बना रहा था।

"पुलिस-इंसपेक्टर आए हैं," उसने मुंह फुला कर कहा।

"मैं इस बात को बिलकुल भूल चुका था कि दो दिन पहले मैंने यर्मोला से कहा था कि अगर उसे पुलिस-इंसपेक्टर गांव में कहीं दिखायी दे, तो फौरन मुझे इतला कर दे। इसलिए जब यर्मोला ने मुझे पुलिस-इंसपेक्टर के आगमन की सूचना दी, तो मैं आश्चर्य-चकित होकर उसकी ओर देखने लगा। "सरकारी अफसर को भला मुझ से क्या काम हो सकता है ?" मैं सोचने लगा।

"क्यों, क्या बात है ?" विस्मित होकर मैंने यर्मोला से प्रश्न किया।

"मैंने आपसे कहा न कि पुलिस-इंसपेक्टर गांव में पधारे हैं।" यर्मोला ने विद्वेष-भाव से कहा। पिछले कुछ दिनों से वह मुझ से ऐसे तीखे स्वर में ही बात किया करता था। "मैंने एक मिनट पहले उसे नदी के बांध के पास देखा था। वह इसी रास्ते से होकर आगे जायेगा।" यर्मोला ने कहा।

मुझे बाहर पहियों की गड़गड़ाहट सुनाई दी। मैंने भाग कर झटपट कमरे की खिड़की खोल दी। चॉकलेट रंग का एक पतला-दुबला घोड़ा, जिसका सिर झुका हुआ था और जबड़ा लटक रहा था, क्लान्त मुद्रा में एक ऊंची, जीर्ण जर्जरित छकड़ा बग्गी घसीटता हुआ मन्द गति से दौड़ रहा था। बग्गी का एक बम गायब था, उसके स्थान पर एक मोटी सी रस्सी बंधी हुई थी। गांव के बातूनी लोग कहा करते थे कि पुलिस-इंसपेक्टर जान-बूझ कर इस छकड़ा बग्गी का इस्तेमाल करता है ताकि वह उन अफवाहों को झूठ साबित कर सके, जो

उसकी रिश्वतखोरी के सम्बंध में गांव भर में फैल रही थीं। पुलिस-इंसपेक्टर के भीमकाय शरीर ने बग्गी की दोनों सीटों को घेर रखा था। कीमती खाकी कपड़े का लम्बा कोट पहन कर वह स्वयं बग्गी चला रहा था।

"नमस्कार, यैव्पसिखी अफ्रिकानोविच !" खिडकी से सिर बाहर निकाल कर मैं चिल्लाया।

"नमस्कार, कैसे हालचाल हैं ?" उसने प्रसन्न मुद्रा में भारी, दहाड़ती, बड़प्पन भरी आवाज में उत्तर दिया।

उसने घोड़े की लगाम खींच ली और अत्यधिक सौजन्य के संग नीचे झुक कर मुझे प्रणाम किया।

"क्या आप एक सैकन्ड के लिए भीतर पधारेंगे ? मुझे आपसे थोड़ा सा काम था।"

उसने अपना सिर हिला दिया।

"असम्भव। मैं ड्यूटी पर जा रहा हूं। वोलोशा में एक आदमी डूब कर मर गया है। उसकी लाश का मुआयना करना है।"

किन्तु मैं उसकी कमजोरियों से परिचित था। लापरवाही का भाव जतलाते हुए मैंने कहा, "अगर रुक जाते तो अच्छा ही था। अभी-अभी काउन्ट वोर्टजल की जागीर से बढ़िया किस्म की शराब की दो बोतलें आयीं हैं। मैंने सोचा था ..."

"मैं नहीं रुक सकता। तुम जानते हो, ड्यूटी आखिर ड्यूटी ही है।"

"वह आदमी मेरा पुराना वाकिफ था, जिससे मैंने यह शराब खरीदी है। उसने इसे अपनी कोठरी में ऐसे छिपा रखा था मानो यह शराब न होकर पुरखों का कोई खजाना हो। मेरी बात मानों तो जरा सी देर के लिए रुक जाओ। घोड़े के लिए भी जई का इन्तजाम हो जायगा।" मैंने उसे फुसलाते हुए कहा।

"ज्यादा इसरार न करो भाई।" उसने कहा। "मेरे लिए सबसे पहले अपनी ड्यूटी है, बाकी सबकुछ बाद में। यह तो बताओ, उन बोतलों में है क्या ? आलूबुखारों की ब्रांडी ?"

"आलूबुखारों की ब्रांडी ! कैसी बात करते हैं आप भी ! पुरानी वोद्का है जनाब ! ऐसी कि चखते ही सरूर आ जाय !"

"आपसे क्या छिपाऊं, मैं तो घर से ही पी कर चला था।" वह अफसोस जाहिर करते हुए अपने गाल खुजलाने लगा।

"हो सकता है, वह आदमी झूठ बोल रहा हो, किन्तु उसने दावे के संग कहा था कि यह शराब दो सौ वर्ष पुरानी है। कोन्याक (एक किस्म की फ्रांसीसी ब्रांडी) की सी सुगन्ध आती है उसमें से, और रंग चीड़ की राल की तरह पीला है।"

"तुम भी बस कमाल की बातें करते हो ! आखिर मुझे फुसला ही लिया न ?" उसने तनिक उदास होने का अभिनय किया, मानो मेरी बात मानने के अलावा उसके पास कोई दूसरा चारा नहीं था ।

"अच्छा, मेरे घोड़े को कौन संभालेगा ?" उसने बग्गी से नीचे उतरते हुए कहा ।

मेरे पास पुरानी वोद्का की कई बोतलें रखी थीं । यह सच है कि वे उतनी पुरानी नहीं थीं, जितनी मैंने उनके सम्बंध में डींग मारी थी, किन्तु यदि थोड़ी सी अतिशयोक्ति के द्वारा दूसरे आदमी को आकर्षित किया जा सके तो इसमें हानि ही क्या है ? यदि मेरे उस पुराने जानकार की सम्पत्ति लुट न गयी होती तो शायद वह यह वोद्का कभी न बेचता । उसे इस पर बहुत गर्व था, और होता भी क्यों न ? वह पुरानी और असली देशी वोद्का थी, जिसका असर बिजली की तरह होता था । पुलिस-इंसपेक्टर का जन्म एक पादरी के परिवार में हुआ था । कमरे में आते ही उसने वोद्का की एक बोतल हथिया ली, और बोला, "सर्दी के बुखार से बचने के लिए मैं इसे दवा की तरह पियूंगा ।" वोद्का के अलावा ताजी मूलियां और हाल में ही मथा हुआ मक्खन भी मैंने उसके सामने रख दिया । वह चटखारे ले लेकर खाने लगा ।

"अच्छा, आपको मुझसे क्या काम था ?" पांचवां गिलास पीकर उसने मुझ से पूछा । वह आराम-कुर्सी के सिरहाने पर सिर टिका कर मजे से बैठ गया । उसकी भारी-भरकम देह के बोझ तले बेचारी कुर्सी कराह उठी ।

मैंने उसका ध्यान बुढ़िया की विवशता और उसकी दुःखी, दयनीय अवस्था की ओर आकर्षित किया और बात ही बात में इशारे से यह भी कह दिया कि कुछ कानूनों को नजरंदाज भी किया जा सकता है । वह सिर झुकाये मेरी बात सुन रहा था और मूलियों को उनकी जड़ों से अलग करके मस्त होकर चबाता जा रहा था । कभी-कभी वह अपनी भावहीन, धुंधली, नीली और कौड़ियों जैसी छोटी-छोटी आंखें ऊपर उठा कर मेरी ओर देख लेता था, किन्तु उसके लाल चौड़े चेहरे पर मुझे सहानुभूति या विरोध के कोई भी चिन्ह न दिखायी दिये ।

"तो फिर तुम मुझसे क्या चाहते हो ?" मेरे चुप होने पर उसने पूछा ।

"मैं क्या चाहता हूं ?" मैंने उत्तेजित होकर उत्तर दिया । "आप खुद उन लोगों की मजबूरी देख सकते हैं । दो गरीब असहाय स्त्रियां ..."

"जिनमें एक गुलाब की कली सी खूबसूरत है !" उसने व्यंगात्मक स्वर में कहा ।

"हो सकता है, लेकिन मेरी बात का उससे कोई ताल्लुक नहीं । मैं आपसे सिर्फ यह पूछना चाहता हूं कि क्या आप उन पर थोड़ी सी भी दया नहीं कर

सकते ? समझ में नहीं आता कि आप उन्हें झोपड़ी से इतनी जल्दी क्यों निकालना चाहते हैं ? कम-से-कम आपको इतनी मुहलत तो देनी चाहिए कि मैं उनकी ओर से जमींदार के संग कुछ बातचीत कर सकूं। अगर आप एक महीना ठहर जायेंगे, तो कौन सा बड़ा खतरा मोल लेंगे ?"

"कौन सा खतरा ?" वह आरामकुर्सी से उछल पड़ा। "आप जानते नहीं, मुझ पर कितनी बड़ी आफत आ सकती है ! हो सकता है कि अपनी नौकरी ही गंवा बैठूं। भगवान जाने, यह नये जमींदार श्री इल्याशेविच कैसे हैं ? सम्भव है वह उन आदमियों में से हों जिन्हें दूसरों की चुगली करने में ही आनन्द मिलता है, जो नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते। जरा सी कोई बात हुई, और दबादब पीटर्सबर्ग में शिकायतों से भरी चिट्ठियां भेजने लगते हैं। यहां ऐसे लोगों की कमी नहीं है जनाब !"

मैं पुलिस-इंसपेक्टर के क्रोध को शान्त करने की चेष्टा करने लगा।

"अरे छोड़ो भी यैव्पसिखी अफ्रिकानोविच। आप तो तिल का ताड़ बना रहे हैं। जरा सा खतरा उठा भी लिया तो क्या हुआ ? जरा सोचो वे लोग आपके कितने कृतज्ञ रहेंगे !"

"खाक कृतज्ञ रहेंगे !" अपनी चौड़ी पतलून की जेबों में हाथ ठूंस कर वह जोर से चिल्लाया। "क्या तुम समझते हो कि उनके पच्चीस रूबलों के पीछे मैं अपनी नौकरी को खतरे में डालूंगा ? नहीं, जनाब ! अगर आप मेरे बारे में ऐसा सोचते हैं तो आपको सख्त गलतफहमी है !"

"कैसी बात करते हो यैव्पसिखी अफ्रिकानोविच ! यहां रुपये का सवाल कहां पैदा होता है ! आप तो उनकी मदद करके एक पुन्य काम करेंगे। मानवीय प्रेम भी तो कोई चीज है।"

"मा-न-वी-य प्रे-म ?" उसने खूब चबा-चबा कर प्रत्येक अक्षर का उच्चारण किया। "तुम्हारा मानवीय-प्रेम तो मेरे गले का फंदा बन बैठेगा।' उसने अपनी गर्दन पर हाथ फेरते हुए कहा।

"यैव्पसिखी अफ्रिकानोविच, मेरे खयाल से तुम सीधी सी बात को बहुत बढ़ा-चढ़ा कर देख रहे हो।"

"बिलकुल नहीं। सुप्रसिद्ध कहानीकार श्री क्रिलोव ने एक स्थान पर "संघातक रोग" के मुहावरे का इस्तेमाल किया है। ये दोनों स्त्रियां सचमुच संघातक रोग की तरह हैं। क्या आपने हिज हाइनेस प्रिंस उरूसोव की शानदार पुस्तक 'पुलिस-अफसर' पढ़ी है ?"

"नहीं, मैंने नहीं पढ़ी।"

"वाह जनाब, उसे नहीं पढ़ा तो क्या पढ़ा। वह एक बहुत बढ़िया और ज्ञानवर्धक किताब है। जब आपको कभी समय मिले तो उसे जरूर पढ़िये।"

"अच्छी बात है, मैं बहुत खुशी से वह किताब पढ़ूंगा। किन्तु अभी तक मुझे यह समझ में नहीं आया कि उन दो स्त्रियों का इस किताब से क्या सम्बंध है ?"

"तुम पूछते हो क्या सम्बंध है ? मैं कहता हूं, बहुत गहरा सम्बंध है। पहली बात ..." उसने अपने बायें हाथ की बालों से भरी मोटी अंगुली को मोड़ते हुए गिनाया, " 'पुलिस अफसर को बड़ी सतर्कता से यह बात देखनी चाहिए कि सब लोग नियमित रूप से प्रार्थना-गृह में जाते हैं या नहीं। कोई ऐसा व्यक्ति तो नहीं है जो इस कर्तव्य का पालन केवल भार-स्वरूप समझकर करता है और ईश्वर में उसकी निष्ठा नहीं है ?' मैं आप से यह जानना चाहता हूं कि वह औरत—मान्यूलिखा ही नाम है न उसका ?—क्या कभी गिरजे में जाती है ?"

मैं चुप रहा। मुझे स्वप्न में भी आशंका नहीं थी कि हमारी बातचीत का रुख इस तरह अचानक बदल जायेगा। उसने विजयोल्लास से चमकती आंखों से मुझे देखा और अपनी बिचली अंगुली मोड़कर कहने लगा, "दूसरी बात : 'झूठी भविष्यवाणी करना या झूठे शकुन विचारना निषिद्ध है।' देखा आपने ? तीसरी बात : 'बाजीगरी, जादूगरी या छल-फरेब से भरे इस तरह के व्यवसाय कानून द्वारा निषिद्ध हैं।' देख लिया आपने ? अगर किसी दिन अचानक इन लोगों की कलई खुल गई या किसी ऐसी-वैसी बात की भिनक बड़े अफसरों के कानों में पड़ गयी, तो किसके मत्थे दोष मढ़ा जायगा ? मेरे। नौकरी से हाथ किसे धोना पड़ेगा ? मुझे। अब आपकी कुछ समझ में आया ?"

वह पुनः कुर्सी पर बैठ गया। अपनी अंगुलियों से मेज को जोर-जोर से थपथपाता हुआ वह भावशून्य आंखों से दीवारों को देखने लगा।

"यैव्पसिखी अफ्रिकानोविच, मैं जानता हूं कि आप हमेशा कितने जटिल और पेचीदा कामों में उलझे रहते हैं," मैंने खुशामदी लहजे में कहना शुरू किया। "किन्तु मैं यह भी जानता हूं कि आप जैसे कोमल, दयालु स्वभाव के व्यक्ति विरले ही होते हैं। मैं आपका बहुत अहसानमन्द रहूंगा अगर आप उन स्त्रियों को तंग करना छोड़ दें। आपके लिए यह कोई कठिन काम नहीं है।"

पुलिस इंसपेक्टर की आंखें मेरे सिर के ऊपर किसी विशेष स्थान के इर्द-गिर्द चक्कर काट रही थीं।

"बड़ी उम्दा बन्दूक रखी है तुमने अपने पास," उसने मेज पर हाथ थपथपाते हुए लापरवाही भरी मुद्रा में कहा। "बहुत ही बढ़िया बन्दूक है। पिछली बार जब मैं आया, तुम घर पर नहीं थे। उस समय भी मैं तुम्हारे कमरे में बैठा-बैठा मन-ही-मन इस बन्दूक की तारीफ करता रहा। एकदम लाजवाब चीज है।"

मैं सिर उठाकर बन्दूक को देखने लगा।

"काफी अच्छी बन्दूक है।" मैं भी बन्दूक की प्रशंसा करने लगा।
"पुरानी चीज है। यूरोप में बनकर तैयार हुई थी। पिछले साल इसकी मरम्मत करवायी थी। जरा इसकी नलियों को देखिये।"

"नलियां ही तो हैं, जो मुझे सबसे ज्यादा पसन्द आयी हैं। शानदार चीज है—मैं तो इसे एक अमूल्य निधि समझता हूं।"

हम दोनों की आंखें चार हुईं। मैंने देखा उसके होठों पर एक अर्थपूर्ण मुस्कान खेल रही है। मैं दीवार से बन्दूक उतार कर उसके निकट चला आया।

"सर्केशियन लोगों की एक सुन्दर प्रथा है। वे उस वस्तु को उपहार-स्वरूप अपने मेहमान को भेंट कर देते हैं, जो उसके मन को भा जाती है।" मैंने मीठे स्वर में कहा। "यैव्पसिखी अफ्रिकानोविच! हम में से कोई भी सर्केशियन नहीं है, किन्तु मेरी आपसे विनम्र प्रार्थना है कि आप इस बन्दूक को मेरा स्मृति-चिन्ह समझ कर अपने पास रख लें।"

उसने ऐसा मुंह बनाया मानो गहरे संकोच में पड़ गया हो।

"यह ठीक नहीं है। मैं तुमसे इतनी सुन्दर वस्तु नहीं ले सकूंगा। यह प्रथा चाहे कितनी अच्छी हो, किन्तु तुम्हें यह काफी मंहगी साबित होगी!"

किन्तु मुझे ज्यादा जोर नहीं डालना पड़ा। उसने मुझसे बन्दूक लेकर उसे अपने घुटनों के बीच खड़ा कर दिया और उसके घोड़े पर जमी हुई धूल को अपने साफ रुमाल से पोंछने लगा। वह बन्दूक चलाने में दक्ष प्रतीत होता था और मुझे यह देखकर खुशी हुई कि जो कुछ भी हो, मेरी बन्दूक किसी नौसिखिये के हाथों में नहीं गयी।

पुलिस इंसपेक्टर बन्दूक स्वीकार करने के बाद तुरन्त उठ खड़ा हुआ।

"मैंने यहां गप्पों में इतना वक्त बरबाद कर दिया और जरूरी काम बीच में ही लटका रह गया है! अब मुझे आज्ञा दो।" उसने फर्श पर पांव थपथपाते हुए लम्बे जूतों को पहन लिया। "जब तुम कभी हमारी तरफ आओ, तो मेरे घर आना मत भूलना।"

"जनाब, मान्यूलिखा के बारे में फिर क्या तय हुआ है?"

मैंने उसे याद दिलाते हुए कहा।

"देखा जायेगा," उसने अनिश्चत भाव से कहा। "हां सुनो, मैं तुम से एक बात बहुत देर से कहना चाह रहा था। तुम्हारी मूलियां बहुत बढ़िया हैं।"

"मैंने खुद उन्हें उगाया है।"

"बड़ा उम्दा स्वाद है तुम्हारी मूलियों का। मेरी पत्नी को हर किस्म की सब्जियों का शौक है। मैं सोच रहा था... क्या तुम्हारे लिए यह संभव होगा कि मूलियों की एक गड्डी.. मेरा मतलब है सिर्फ एक गड्डी..."

"बड़ी खुशी से, यैब्पसिखी अफ्रिकानोविच ! इसे मैं अपना सौभाग्य समझूंगा। आज ही अपने आदमी के संग, टोकरी में मूलियां भरवाकर आपके पास भिजवा दूंगा। और अगर आपको आपत्ति न हो तो थोड़ा सा मक्खन भी ... मेरे पास बहुत बढ़िया किस्म का मक्खन है।"

"अच्छा, थोड़ा मक्खन भी भिजवा देना।" उसने कुछ इस ढंग से कहा मानो वह मुझ पर कोई अहसान कर रहा हो। "उन औरतों से तुम कह देना कि कुछ अर्से तक मैं उन्हें परेशान नहीं करूंगा। किन्तु उन्हें यह बात साफ-तौर से समझ लेनी चाहिए, कि महज मुझे धन्यवाद देने से ही उन्हें छुटकारा नहीं मिल जायेगा।" वह अपनी आवाज ऊंची करके जोर से चिल्लाया। "अच्छा अब मैं चलता हूं। तुमने मेरी जो इतनी आवभगत की, उसके लिए और सुन्दर बहुमूल्य तोहफे के लिए मैं तुम्हें एक बार फिर धन्यवाद देता हूं।"

उसने फौजी ढंग से एड़ियां खटखटायीं और एक हृष्ट-पुष्ट, प्रभावशाली व्यक्ति की तरह छाती फुलाता अपनी बग्गी की ओर चल पड़ा, जहां गांव का पुलिसमैन, चौधरी और यर्मोला टोपियां हाथ में लिए उसके सम्मान में खड़े थे।

नौ

पुलिस इंसपेक्टर ने अपने वचन का पालन किया और कुछ अर्से तक जंगल की झोपड़ी में रहनेवाली स्त्रियों को तंग नहीं किया। किन्तु न जाने क्यों, मेरे और ओलेस्या के बीच एक व्यवधान सा आ खड़ा हुआ, हमारे सम्बंधों में एक ऐसा विचित्र, अप्रत्याशित परिवर्तन हो गया, जो मुझे दिन-प्रतिदिन घुन की तरह खाने लगा। मेरे प्रति उसके व्यवहार में जो अकृत्रिम सौहार्द और सहज विश्वास की स्नेहसिक्त भावना थी, अब उसका अभाव मुझे बुरी तरह खटकने लगा। उसमें एक सुन्दर लड़की का चंचल चुहलपन और एक शैतान लड़के की जिन्दादिली का जो आकर्षक सम्मिश्रण था, उसका अब चिन्ह-मात्र भी शेष न रहा। एक दूसरे से बातचीत करते समय हमारे बीच संकोच की एक अदृश्य दीवार खड़ी हो जाती थी, जिसे हम दोनों में से कोई भी नहीं लांघ पाता था। ओलेस्या अब डरते-डरते उन सब दिलचस्प विषयों को टाल देती थी जो कभी हमारे असीम कौतूहल का केन्द्र रह चुके थे।

मेरी उपस्थिति में वह एकाग्र चित्त होकर अपने काम में जुट जाती थी और अपना सारा ध्यान उस पर इस तरह केन्द्रित कर देती थी मानो उसे दीन-दुनिया की कोई खबर ही नहीं। किन्तु इसके बावजूद ऐसे लमहे भी आते थे जब वह अपने हाथों को गोद में ढीला छोड़कर बराबर फर्श की ओर ताकती रहती थी। यदि ऐसे क्षणों में मैं उसका नाम लेकर उसे बुलाता या जानबूझ-

कर उससे कोई प्रश्न पूछ बैठता, तो वह हड़बड़ाकर चौंक उठती और अपना भयभीत चेहरा उठाकर मेरी ओर इस तरह देखती मानो मेरे शब्दों का अर्थ समझने का प्रयास कर रही हो। कभी-कभी मुझे लगता कि मुझे देखकर वह झुंझला सी उठती है और अपनी झोपड़ी में मेरी उपस्थिति उसे अखरने सी लगी है। कुछ अर्सा पहले तक मेरे मुंह से निकले प्रत्येक शब्द को वह जिस गहरी रुचि के संग सुनती थी, उसे देखते हुए मुझे उसका रूखा व्यवहार काफी विचित्र सा प्रतीत होता था। मेरा अनुमान था कि पुलिस-इंसपेक्टर से प्रार्थना करके मैंने उन्हें जो सहायता पहुंचायी थी, वह बात दिन-रात उसकी आंखों में रोड़े की तरह खटकती रहती थी। उनका संरक्षक होकर मैंने अनजाने में उसकी स्वातंत्र्य-भावना को ठेस पहुंचा दी थी। किन्तु कभी-कभी मैं अपने अनुमान पर ही शंका करने लगता। एक सीधी-सादी लड़की, जिसका पालन-पोषण सभ्यता से कोसों दूर जंगल में हुआ है, क्या अपने आत्म-सम्मान को इतना अधिक गौरव और महत्व दे सकती है? इसी उधेड़बुन में फंसा हुआ मैं कोई भी निश्चय न कर पाता।

मैं अपनी शंका का समाधान ओलेस्या से करवाना चाहता था, किन्तु वह मौका ही न आने देती थी कि मैं अपने दिल की बात खोलकर उससे कह सकूं। अब हम शाम को सैर करने नहीं जाते थे। हर रोज उनके घर से जाते समय जब मैं अभ्यर्थना-भरी दृष्टि से उसकी ओर देखता तो वह आंखें फेर लेती, मानो कुछ भी न समझती हो। दूसरी ओर झोपड़ी में बुढ़िया की उपस्थिति अब मुझे बेहद अखरने लगी थी, हालांकि वह बहरी थी।

बिला नागा हर रोज ओलेस्या के घर जाने की मेरी जो आदत सी बन गयी थी, उस पर भी कभी-कभी मैं झुंझला उठता था। मुझे उस समय उन अदृश्य डोरों का कोई आभास नहीं मिला था, जिन्होंने मेरे हृदय को उस आकर्षक, अद्भुत लड़की के मोह-जाल में उलझा दिया था। उसके प्रति प्रेम का विचार अभी मेरे मन में नहीं उठा था, किन्तु वह एक ऐसा दौर था, जो प्रेम उदित होने से पूर्व हर व्यक्ति के जीवन में आता है। एक अजीब सी आकुलता और कसमसाहट से भरा दिल हर दम छटपटाता रहता। अस्पष्ट और उदास अनुभूतियां दिन-रात हृदय को मथती रहतीं। कुछ भी करूं, कहीं भी जाऊं, मन सदा भटकता रहता। हर दम ओलेस्या का चेहरा मेरी आंखों के आगे नाचता रहता। मुझे अपना समूचा व्यक्तित्व ओलेस्या के बिना अधूरा सा लगता। उसके शब्द—चाहे वे कितने निरर्थक और महत्वहीन क्यों न हों—उसकी प्रत्येक हरकत, उसकी मुस्कराहट का स्मरण होते ही मन में एक कोमल, मीठा सा दर्द उमड़ने लगता। शाम घिर आती और मेरे पांव खुद-ब-खुद उसकी झोपड़ी की ओर बढ़ जाते। मैं उसके पास उस छोटी-सी टूटी-फूटी बेंच पर बैठा

रहता। मुझे अपने ऊपर खीज आती — भय और संकोच से आक्रान्त मैं उसके सम्मुख सिटपिटाया सा क्यों बैठा रहता हूं ?

एक बार मैं ओलेस्या के पास दिन भर इसी तरह चुपचाप बैठा रहा। सुबह से ही मेरी तबीयत कुछ खराब थी, किन्तु मुझे उसका कोई कारण समझ में नहीं आ रहा था। शाम होते-होते मेरी अवस्था और भी ज्यादा बिगड़ गयी। मेरा सिर भारी हो रहा था, कानों में सीटियां बज रही थीं और सिर के पीछे निरन्तर धीमा-धीमा सा दर्द हो रहा था, मानो कोई अपने कोमल और मजबूत हाथों से उसे जोर-जोर से दबा रहा हो। मेरा मुंह बार-बार सूख जाता था, अंग-प्रत्यंग में आलस और थकान का उनींदा सा भाव सिमटता आ रहा था और मैं बार-बार उबासियां और अंगड़ाइयां ले रहा था। मेरी आंखें पीड़ा से जल रही थीं, मानो किसी चमचमाती चीज को देखकर वे चौंधिया गयी हों।

उस रात जब मैं वापिस घर लौट रहा था, तो बीच रास्ते में अचानक मेरे शरीर में कंपकंपी सी दौड़ने लगी। मेरे दांत जोर-जोर से बजने लगे। मुझे रास्ते का कोई ज्ञान न रहा और एक शराबी की तरह लड़खड़ाता हुआ मैं न जाने कब तक जंगल में भटकता रहा।

मैं आज तक नहीं जानता कि उस रात मैं अपने घर कैसे पहुंच पाया। पोलेस्ये के भयानक बुखार में मैं पूरे छः दिनों तक बराबर तड़पता रहा। दिन के समय बुखार कुछ कम हो जाता था और मैं होश में आ जाता था। उस बीमारी ने मुझे अपाहिज बना दिया। चल-फिर न सकने के कारण मुझे अपने दुखते, कमजोर घुटनों के बल रेंगना पड़ता था। मैं इतना दुर्बल हो गया था कि शरीर पर जरा सा जोर पड़ते ही मेरे सिर की रक्त-नाड़ियां फूल कर गर्म हो उठती थीं और मेरी आंखों तले अंधेरा छा जाता था। किन्तु शाम होते ही — सात बजे के करीब — बुखार एक डरावने शत्रु की तरह मुझे आ दबोचता। रात के समय पीड़ा असह्य हो जाती, बेचैन होकर मैं करवटें बदलता रहता। मुझे लगता मानो पूरी रात एक लम्बी शताब्दी है, जो कभी समाप्त न होगी। कभी मैं कम्बलों के नीचे सर्दी से कांपता और कभी बुखार की गर्मी मेरे शरीर को भूनने लगती। जब कभी कुछ देर के लिए आंख लग जाती तो अनेक भयावह और विचित्र दुःस्वप्न मेरे उत्तप्त मस्तिष्क को झिंझोड़ने लगते। छोटी-छोटी बातों का तांता सा लग जाता और फिर एक-दूसरे पर गिरते-पड़ते वे एक विशाल ढेर में परिणत हो जाते। लगता कि मेरे सामने रंग-बिरंगे, बेडौल बक्सों का ढेर पड़ा है। मैं बड़े बक्सों के भीतर से छोटे बक्सों को निकाल रहा हूं और उनके भीतर से उनसे भी छोटे बक्सों को निकाल रहा हूं। मैं इस काम से बेहद परेशान हो गया हूं, फिर भी बराबर बक्सों को छांटता जाता हूं। उसके बाद लम्बे रंगीन वाल-पेपर फड़फड़ाते हुए मेरी आंखों के सामने से

गुजरने लगते। मुझे लगता कि उन रंगीन कागजों पर बेल-बूटों के स्थान पर विचित्र किस्म की मालाएं लटक रही हैं, जिनमें फूलों के बजाय इन्सानी चेहरों को एक-दूसरे के संग जोड़ दिया गया है। उनमें से कुछ चेहरे सुन्दर, आकर्षक, दयावान और मुस्कराते हुए होते। किन्तु कुछ चेहरों की वीभत्स मुद्राओं को देखकर कलेजा मुंह को आने लगता—बड़े-बड़े भयानक दांत, बाहर निकली हुई लपलपाती जिह्वाएं, मोटी-मोटी घूमती हुई आंखों की पुतलियां! कभी लगता कि मैं यर्मोला के संग किसी बहुत ही पेचीदा और उलझे हुए विषय पर सैद्धान्तिक बहस कर रहा हूं। हम दोनों अपने-अपने पक्ष में बड़े बारीक और गम्भीर तर्क प्रस्तुत कर रहे हैं। कुछ शब्द और अक्षर अद्भुत और ज्ञानातीत अर्थ ग्रहण कर लेते हैं। मुझे लगता कि एक अज्ञात, दैवी शक्ति मुझे क्षण-प्रतिक्षण आतंकित करती जा रही थी और उसके निर्देशन पर मेरे उद्भ्रान्त मस्तिष्क से अनेक ऊल-जलूल मिथ्यावादी बातें बाहर निकल रही हैं। मुझे इस तर्क-जाल से घृणा होने लगी थी, किन्तु कोई रहस्यमयी शक्ति थी, जो मुझे मेरी इच्छा के विरुद्ध उसमें और भी ज्यादा उलझाती जा रही थी।

मुझे लगता मानो मैं एक भंवर में फंस गया हूं—मेरे चारों ओर मानवीय और पाशविक चेहरे, विलक्षण और अद्भुत रंगों और आकृतियों के प्राकृतिक-दृश्य और विभिन्न किस्मों के भौतिक पदार्थ एक लम्बे जलूस की शक्ल में तेजी से घूम रहे हैं। मेरे सम्मुख हवा में कुछ ऐसे शब्द और मुहावरे तिरते जा रहे हैं जिनके अर्थ को मैं अपनी सम्पूर्ण इन्द्रियों से अनुभव कर सकता हूं। आश्चर्य की बात थी कि उस समय इन सब वस्तुओं के संग मैं प्रकाश का एक गोला भी देख रहा था—वह मेरे नीले, झुलसे हुए शेड से ढके लैंप से उठकर छत पर टिमक आया था। मुझे उस शान्त गोले की धुंधली आलोक-रेखा को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो उसके बीच मेरे दुःस्वप्नों से कहीं अधिक भयावह और रौद्र रूप लिए एक वीभत्स और डरावना जीव भटक रहा है।

तब मैं जाग जाता अथवा अपने-आपको जागृतावस्था में पाता। मेरी चेतना वापिस लौट आती। धीरे-धीरे मुझे अपनी स्थिति का ज्ञान होता। मुझे पता चल जाता कि मैं बिस्तरे पर बीमार पड़ा हूं और कुछ देर पहले मुझ पर सन्निपात का आक्रमण हुआ था। किन्तु चेतनावस्था में आने के बावजूद मुझे काफी देर तक काली दीवार पर टिमकते हुए प्रकाश के उस गोले से डर लगता रहता। कांपते दुर्बल हाथों से घड़ी उठाकर समय देखता और यह जानकर विक्षुब्ध और विस्मित हो जाता कि मेरे भयावह दुःस्वप्नों का अन्तहीन सिलसिला दो-तीन मिनटों से अधिक नहीं चला है। "भगवान, सुबह कब होगी!" गर्म तकियों पर अपना सर पटकते हुए मैं सोचता। अपने ही गर्म सांसों के स्पर्श को

मैं अपने उत्तप्त होठों पर महसूस करता। हल्की भीनी सी नींद मेरे मस्तिष्क को दुबारा अपने में ओढ़ लेती, एक बार फिर अनर्गल दुःस्वप्न मेरी सांसों से खेलने लगते और दो मिनट बाद फिर मैं असह्य पीड़ा से कराहता हुआ जाग जाता।

मेरे बलिष्ठ शरीर ने कुनीन और केले के सत की सहायता से छः दिनों में ही बुखार को काबू में कर लिया। जब रोग से छुटकारा पाकर मैं बिस्तरे से उठा तो कमजोरी के कारण मेरे हाथ-पांव लड़खड़ा रहे थे। उस कम्बख्त बुखार ने मेरी देह का सारा खून चूस लिया था। किन्तु स्वस्थ होने में मुझे देर नहीं लगी। मेरा सिर हल्का हो गया था, मानो छः दिनों के भीषण ज्वर और मानसिक सन्निपात ने मेरे मस्तिष्क को विचारों से मुक्त कर दिया हो। मेरी भूख पहले से दुगुनी हो गयी। मेरी देह का अणु-अणु हर घड़ी स्वास्थ्य और जीवन के आनन्द को अपने में अनुस्यूत करता जा रहा था। जंगल की उस एकाकी और टूटी-फूटी झोपड़ी में जाने के लिए मेरा मन विकल हो उठा। बीमारी के कारण मैं अभी तक अपनी पुरानी शक्ति नहीं बटोर पाया था। ओलेस्या का चेहरा और स्वर याद आते ही मेरा मन उद्वेलित सा हो उठता—कहीं भीतर आंसुओं की बाढ़ उमड़ने लगती।

दस

पांच दिन बाद जब मैं डायन की झोपड़ी में गया तो मुझे जरा भी थकान महसूस नहीं हुई। दहलीज पर पांव रखते ही मेरा हृदय भय से कांपने लगा। ओलेस्या को देखे एक पखवाड़ा बीत चुका था। ओलेस्या मुझे कितनी प्रिय थी, इस सत्य का आभास मुझे बीमारी के दौरान में असंदिग्ध रूप से हो चुका था। दरवाजे की कुंडी पर हाथ रखे, मैं कुछ क्षणों तक असमंजस में खड़ा रहा। दरवाजे को धक्का देने से पूर्व मैंने सांस रोक कर आंखें मूंद लीं।

मेरे कोठरी में प्रवेश करते ही दोनों स्त्रियों पर क्या प्रतिक्रिया हुई, इसको बयान करना काफी कठिन है। लम्बे अर्से बाद जब मां और पुत्र, पति-पत्नी अथवा दो प्रेमियों की मुलाकात होती है, तब शुरू में उनके बीच जो छिटपुट शब्द कहे जाते हैं, क्या उन्हें स्मरण रखना सम्भव है? वे अपने में इतने साधारण होते हैं कि यदि बाद में उन्हें याद किया जाये तो सचमुच अत्यन्त हास्यास्पद प्रतीत होंगे। किन्तु अपने प्रियजनों के मुख से कहे गये वे शब्द साधारण होने के बावजूद कितने उपयुक्त और बहुमूल्य होते हैं, इस तथ्य को भला कौन नहीं स्वीकारेगा?

मुझे याद है, अच्छी तरह से याद है, कि मेरी आहट पाते ही ओलेस्या का पीला चेहरा अचानक मेरी ओर मुड़ा था—क्षण भर में ही उसके मोहक

चेहरे पर विस्मय, भय और स्निग्ध कोमलता से भरे भाव एक साथ खेल गये थे। बुढ़िया ने बुदबुदाते हुए शायद मेरा अभिवादन किया था, जिसे मैं सुन नहीं सका। ओलेस्या की सुरीली आवाज मधुर-संगीत सी मेरे कानों में गूंज गयी।

"क्या हो गया था तुम्हें ? क्या तुम बीमार थे ? इतने कमजोर हो गये हो कि चेहरा पहचाना नहीं जाता।"

काफी देर तक मैं उसके प्रश्न का उत्तर नहीं दे सका। हम दोनों एक दूसरे का हाथ पकड़ कर उल्लसित मुद्रा में एक दूसरे की आंखों में आंखें डाले निश्चल खड़े रहे। वे मौन-क्षण कदाचित् मेरे जीवन के सबसे मधुर क्षण थे; उतना विराट, पवित्र और अनिर्वचनीय आनन्द मैंने उससे पहले अथवा उसके बाद आज तक महसूस नहीं किया। ओलेस्या की बड़ी-बड़ी काली आंखों में मैंने अनेक बदलते हुए भाव पढ़ डाले। मुझ से मिलने पर भावनाओं की उथल-पुथल, लम्बे अर्से की अनुपस्थिति के लिए उलहना, प्रेम की भावोन्मादित अभिव्यक्ति ! निस्संकोच रूप से — बिना किसी शर्त के — उसने आंखों ही आंखों में अपना सब कुछ मुझ पर सहर्ष समर्पित कर दिया था।

ओलेस्या ने अपनी पलकों को धीमे से हिला कर मान्यूलिखा की ओर संकेत किया। हम दोनों ने एक दूसरे के हाथ छोड़ दिये और उस क्षण का जादुई-सम्मोहन टूट गया। हम एक दूसरे के निकट बैठ गये। उसकी ओर से प्रश्नों की बौछार शुरू हो गयी — बुखार कैसे चढ़ा, कौन सी दवाइयां लीं, डॉक्टर — जो शहर से दो बार मुझे देखने आया था — ने बुखार के सम्बंध में मुझे क्या बतलाया ? इत्यादि। डॉक्टर के सम्बंध में उसने मुझ से कई प्रश्न पूछे। मुझे लगा कि जब मैं डॉक्टर का उल्लेख करता था, तो उसके होठों पर एक व्यंगात्मक मुस्कान सिमट आती है।

"तुमने अपनी बीमारी की खबर मुझे क्यों नहीं दी ?" उसने खीज भरे स्वर में कहा। "मैं एक दिन में ही तुम्हें बिस्तर से उठा देती। तुम उन लोगों पर कैसे विश्वास कर लेते हो, जिन्हें कुछ भी ज्ञान नहीं है — रत्ती भर ज्ञान नहीं है ? तुमने मुझे क्यों नहीं बुला भेजा ?"

मैं गहरे असमंजस में पड़ गया। "बुखार अचानक आ गया ओलेस्या, तुम्हें बुलाने का समय ही कहां मिला ? नाहक तुम्हें परेशान करने को भी मन नहीं हुआ। पिछले कुछ दिनों से तुम्हारे व्यवहार में अजीब परिवर्तन आ गया था, लगता था मानो तुम मुझसे किसी बात पर नाराज हो या बिलकुल ऊब गयी हो मुझ से। ओलेस्या, सुनो," मैंने अपना स्वर धीमा करते हुए कहा। "मुझे तुमसे बहुत सी बातें करनी हैं, लेकिन किसी ऐसे स्थान पर, जहां हम दोनों के अलावा और कोई न हो। तुम मेरा मतलब समझ गयी होगी ..."

उसने सहमति में आंखें नीचे झुका लीं। फिर डरते-डरते दादी को देखते हुए दबे होंठों से कहा, "मैं भी यही चाहती थी, किन्तु अभी नहीं — बाद में, किसी और समय।"

सूर्यास्त होते ही उसने मुझे घर वापिस लौट जाने के लिए कहा।

"जल्दी करो, वरना सरदी खाकर दुबारा बीमार पड़ जाओगे।" उसने मेरा हाथ खींचते हुए कहा।

"ओलेस्या, तुम कहां जा रही हो?" मान्यूलिखा ने जब अपनी पोती को भूरे रंग की ऊनी शाल कंधों पर डालते देखा, तो चिल्ला उठी।

"कुछ दूर तक इनके संग जाऊंगी।" ओलेस्या ने खिड़की से बाहर देखते हुए लापरवाही भरे स्वर में कहा। वह जानबूझ कर मान्यूलिखा से आंखें चुरा रही थी। मुझे उसके स्वर में हल्की सी खीज का आभास मिला।

"आखिर तुम जा रही हो?" बुढ़िया ने ऊंचे स्वर में कहा।

ओलेस्या ने प्रज्ज्वलित नेत्रों से मान्यूलिखा की ओर देखा।

"हां, मैं जा रही हूं!" उसने उद्यत होकर कहा। "हमने इस विषय पर काफी बातचीत कर ली है। अब फिर बखेड़ा खड़ा करने से क्या फायदा? यह मेरी अपनी बात है और इसका नतीजा भी मैं खुद भुगत लूंगी।"

"अच्छा, सो यह बात है!" मान्यूलिखा ने खीज और शिकायत भरे स्वर में कहा।

वह कुछ और कहने जा रही थी, किन्तु न जाने क्या सोच कर चुप रह गयी। उसने निराशा भरे भाव से अपना हाथ हवा में हिला दिया और लड़खड़ाती हुई कमरे के कोने में जाकर टोकरी बनाने में व्यस्त हो गयी।

मैं जान गया कि मान्यूलिखा और ओलेस्या के बीच यह विद्वेषपूर्ण वार्तालाप आपसी झगड़ों की एक लम्बी शृंखला की कड़ी है।

"तुम्हारी दादी को शायद मेरे संग तुम्हारा बाहर आना बुरा लगता है?" जंगल की ओर उतरते हुए मैंने ओलेस्या से पूछा।

उसने झुंझलाहट में कंधे बिचका दिये।

"हां, लेकिन तुम इसकी कोई चिन्ता न करो। मैं उनकी इच्छा की गुलाम नहीं हूं। जो मेरे मन में आएगा, वही करूंगी।

पिछले दिनों में उसका मेरे प्रति जो रूखा व्यवहार रहा था, उसकी आलोचना किये बिना मैं नहीं रह सका।

"अच्छा, तो मेरी बीमारी से पहले तुमने अपनी इच्छा से ही मेरा साथ छोड़ दिया था! उन दिनों मेरा हृदय जिस बुरी तरह व्याकुल रहता था, उसे तुम शायद कभी नहीं जान पाओगी। हर शाम मैं इस बात की आस लगाये रहता कि तुम मेरे संग बाहर आओगी, किन्तु तुम गुमसुम सी मुंह फुलाए बैठी

रहतीं। काश तुम समझ पातीं कि तुमने अनजाने में मुझे कितना कष्ट पहुंचाया है ओलेस्या !"

"कृपया उन बातों को भूल जाओ ! उनका जिक्र मत करो !" उसने अनुरोध किया। उसके स्वर में क्षमा-याचना का विनीत भाव भरा था।

"मैं तुम्हें दोष नहीं दे रहा हूं। यूं ही मेरे मुंह से यह बात निकल गयी। खैर, अब मैं कारण जान गया हूं, किन्तु उन दिनों मैंने जो अनुमान लगाया था, अब उसे सोच कर हंसी आती है। मुझे लगा था कि पुलिस-इंसपेक्टर की बात को लेकर तुम मुझसे रूठ गयी हो। मैंने सोचा कि तुम मुझे पराया समझती हो, जिसकी सहायता और सहानुभूति तुम्हें स्वीकार नहीं ! इससे मुझे कितना गहरा मानसिक क्लेश पहुंचा, इसकी तुम कल्पना भी नहीं कर सकतीं। तब मुझे क्या मालूम था कि तुम दादी मां के कारण ही मुझ से दूर-दूर रहती हो।"

अचानक ओलेस्या का चेहरा लाल हो उठा।

"नहीं, दादी मां ने मुझे नहीं रोका था। मैं स्वयं तुम से दूर रहना चाहती थी।" उसका स्वर सहसा कठोर हो उठा।

मैं ओलेस्या की बगल में खड़ा था और मुझे उसके तनिक झुके हुए चेहरे की कोमल, कांतिमान रूप-रेखा दिखायी दे रही थी। मुझे लगा कि पिछले दिनों उसकी देह भी काफी दुबली हो गयी है और उसकी आंखों के नीचे नीली छायाएं उभर आयी हैं। उसे पता चल गया कि मैं उसके चेहरे को एकाग्र चित्त होकर निहार रहा हूं। उसने अपना चेहरा उठाया, मेरी ओर देखा, और फिर शरमा कर मुस्कराते हुए अपनी आंखें दूसरी ओर फेर लीं।

"ओलेस्या, तुम मुझ से दूर रहना चाहती थीं ? भला क्यों ?" मैंने भर्राये स्वर में पूछा और उसका हाथ पकड़ कर उसे वहीं रोक लिया।

हम एक लम्बी, संकरी, तीर की तरह सीधी पगडंडी के बीचों-बीच खड़े थे। पगडंडी के दोनों ओर पतले, लम्बे चीड़ के वृक्ष दूर तक चले गये थे। उनकी लम्बी, सुगन्धित और एक दूसरे से उलझी शाखों ने पगडंडी के ऊपर शामियाना-सा तान दिया था। सूर्यास्त की महीन, रक्तिम किरनें चीड़ के नंगे तनों पर झिलमिला रही थीं।

"क्यों, ओलेस्या, क्यों ?" दबे स्वर में मैं बार-बार उससे पूछ रहा था। उसके हाथ पर मेरी गिरफ्त मजबूत होती जा रही थी।

"मैं डरती थी ... अपने भाग्य से !" उसके होंठ फड़फड़ाए। "सोचती थी, तुमसे दूर रह कर मैं अपनी नियति से छुटकारा पा लूंगी। किन्तु अब ..."

सहसा उसकी सांस तेज हो गयी। अचानक उसने अपनी बाहें मेरे गले में डाल दीं और मुझे अपने बाहु-पाश में जकड़ लिया। मुझे लगा मेरे होठों पर उसके कांपते शब्दों की गर्म मिठास घुल रही है।

"अब मुझे कोई चिन्ता नहीं है क्योंकि ... क्योंकि मैं तुमसे प्यार करती हूं ! मेरे सर्वस्व ... मेरे प्राण ... मेरी खुशी !"

वह मुझ से लिपटती जा रही थी। उसकी स्वस्थ गर्म देह मेरी बाहों में पत्ते के समान कांप रही थी। उसका दिल धौंकनी की तरह मेरी छाती पर धड़क रहा था। उसके प्रेमोन्मादित चुम्बन तेज शराब की तरह मुझे उन्मत्त बना रहे थे। एक तो बुखार की कमजोरी पूरी तरह मिटी नहीं थी, ऊपर से ओलेस्या का यह प्रेमोन्मादपूर्ण व्यवहार ! मैं विचलित हो उठा। मेरा सिर चकराने लगा, आत्म-संयम की डोर हाथों से छूटने लगी।

"क्या कर रही हो ओलेस्या ? ईश्वर के लिए मुझे छोड़ दो ! जाने दो मुझे !" उसकी बाहों को छुड़ाने की चेष्टा करता हुआ मैं बोला। "अब मुझे भी डर लग रहा है—खुद अपने से ! मुझे जाने दो, ओलेस्या !"

उसने अपना चेहरा ऊपर उठाया—एक अलस मुस्कान उस पर खेल रही थी।

"डरो नहीं, मेरे प्यारे।" उसकी मूक आंखों से अद्भुत साहस और असीम स्नेह छलक रहा था। "मैं तुमसे कभी कुढ़ूंगी नहीं, न कभी किसी बात पर तुम्हें उलहना दूंगी। मैं तो बस इतना जानना चाहती हूं कि तुम मुझ से प्यार करते हो या नहीं।"

"हां ओलेस्या, एक लम्बे अर्से से तुम्हारे प्यार ने मुझे पागल सा बना दिया है, किन्तु—देखो, मुझे और मत चूमो। मैं अभी बहुत कमजोर हूं और मेरा सिर चकरा रहा है। मुझे अपने पर विश्वास नहीं है ..."

एक बार फिर उसके होठों ने मेरे होठों को एक लम्बे मधुर चुम्बन में ओढ़ लिया। मैंने सुना नहीं, किन्तु उस क्षण मुझे लगा मानो वह होठों ही होठों में कह रही है, "तो फिर डरो नहीं। सब चिन्ताएं त्याग दो। यह दिन हमारा है, इसे कोई हमसे नहीं छीन सकता।"

....

वह रात परियों की कहानी सी सुन्दर और मोहक थी। चांदनी के विचित्र और रहस्यमय रंगों में सारा जंगल नहा रहा था। पीले और नीले आलोक के धब्बे कटे-फटे ठूठों, टेढ़ी-मेढ़ी शाखाओं और काई के कोमल, नर्म कालीन पर झिलमिला रहे थे। भोजपत्र के वृक्षों के पतले, सफेद तनों की रूपरेखा अंधकार और चांदनी के बीच स्पष्ट-रूप से दिखायी दे रही थीं। उनके पत्तों को देखकर लगता था मानो किसी ने धवल चांदी की जाली में उन्हें लपेट दिया हो। जहां कहीं चांदनी चीड़ की घनी शाखाओं को भेदने में असमर्थ थी, वहां निबिड़, निर्भेद्य अंधकार का साम्राज्य फैला था। किन्तु कुछ ऐसे तिमिराच्छादित स्थल

भी थे, जहां कोई भूली-भटकी आलोक-रेखा वृक्षों के झुरमुटों को काटती हुई किसी छोटी सी पगडंडी को प्रकाशमान कर देती थी। चांदनी से आलोकित वह सुन्दर पगडंडी छायादार वृक्षों से घिरी एक सड़क सी जान पड़ती थी, जिस पर मानो 'ओबरोव और तितानिया' का आगमन होने वाला हो और जिसे यक्षों ने झाड़-बुहार कर साफ कर दिया हो। हम दोनों हाथ में हाथ डाले चुपचाप, उस स्वप्न-लोक के जीवन्त और उल्लास-पूर्ण वातावरण में चले जा रहे थे। जंगल की मायावी निस्तब्धता तथा एक अद्वितीय, अलौकिक आनन्द ने हम दोनों को अपने में समेट लिया था।

"अरे, मैं तो भूल ही गयी कि तुम्हें जल्दी घर लौटना है!" ओलेस्या को अचानक याद आया। "कितनी स्वार्थी हूं मैं भी। तुम अभी बुखार से उठे हो और मैं हूं कि इतनी देर तक तुम्हें जंगल में रोक रखा है।"

मैंने उसे अपनी बाहों में भर लिया और उसके घने, काले बालों से शॉल को हटा दिया।

"ओलेस्या, तुम्हें दुःख तो नहीं है?" मैंने धीरे से उसके कान में कहा। "तुम अब पछता तो नहीं रहीं?"

उसने धीरे से अपना सिर हिला दिया।

"नहीं। मुझे कोई दुःख नहीं है, भविष्य में चाहे जो कुछ भी हो। कितनी सुखी हूं मैं!"

"क्या होगा भविष्य में?"

उसकी आंखों में एक रहस्यपूर्ण भय घिर आया, जिसे मैं एकबार पहले भी देख चुका था।

"कुछ अवश्य होगा। याद है वह बात, जो मैंने चिड़ी की बेगम के सम्बंध में तुम्हें बतायी थी? मैं ही वह बेगम हूं। ताश के पत्तों ने जिस विपत्ति के सम्बंध में भविष्यवाणी की थी, वह मेरे भाग्य में ही लिखी है। जानते हो, मैंने यह निश्चय कर लिया था कि मैं तुम्हें अपने घर आने से बिलकुल मना कर दूंगी। किन्तु उसी समय तुम बीमार पड़ गये और मैं पन्द्रह दिनों तक तुम से न मिल पायी। उन दिनों तुम्हारी अनुपस्थिति में मैंने अपने को इतना अकेला और उदास पाया कि कुछ कहते नहीं बनता। मैंने सोचा था कि यदि केवल एक क्षण तुम्हें देख पाऊं तो उसके एवज में अपना सर्वस्व न्यौछावर करने में भी मैं नहीं हिचकूंगी। इस विचार ने ही मेरे निश्चय को दृढ़ कर दिया। 'चाहे जो विपत्ति आए,' मैंने मन में सोचा, 'अपनी आत्मा के सुख को मैं किसी हालत में नहीं छोड़ सकूंगी।'"

"ओलेस्या, तुम ठीक कहती हो। मैंने भी यही सोचा था।" उसकी कनपटियों को अपने होठों से छूते हुए मैंने कहा। "तुमसे अलग होकर ही मैं

तुम्हारे प्रति अपने प्रेम के सत्य को पहचान पाया। किसी ने सच कहा है कि प्रेम के लिए जुदाई उसी तरह है जिस तरह आग के लिए हवा। क्षुद्र प्रेम को वह बुझा देती है और सच्चे प्रेम को और भी अधिक भड़का देती है।"

"क्या कहा तुमने? एक बार और कहो," ओलेस्या ने उत्सुकता भरे स्वर में कहा। मैंने वह कहावत दुहरा दी। ध्यानमग्ना सी ओलेस्या चुप हो गयी। उसके हिलते हुए होठों को देखकर मैं समझ गया कि वह मन-ही-मन उन शब्दों को दुहरा रही है।

मैं उसके उठे हुए पीले चेहरे को ध्यान से देखता रहा। उसकी बड़ी-बड़ी काली आंखों में चांदनी का उज्ज्वल आलोक झिलमिला रहा था। उसी क्षण भावी अनिष्ट की अस्पष्ट आशंका ने सहसा मेरे हृदय को कचोट दिया।

ग्यारह

कैसे सरस दिन थे वे! परीदेश की कल्पना सा, मादक-सम्मोहन से भरा हमारा अबोध, निश्छल प्रेम एक महीने तक चलता रहा था। आज जब कभी ओलेस्या की छवि मैं याद करता हूं तो उससे सम्बद्ध अनेक सुन्दर स्मृतियां — सूर्यास्त का अरुण रश्मि-जाल, घाटी के मधु और फूलों की सुगन्ध से महकती, शबनम में भीगी ऊषाएं, मदमस्त ताजगी लिए, पक्षियों के कलरव से गूंजता वातावरण, जून की गर्म, उनींदी, अलसायी सी दुपहरें—बरबस मेरे मस्तिष्क में उमड़ आती हैं। एक अजीब सा नशा था, जिसमें मैं ऊब, थकान, घुमक्कड़ी का शौक — सब कुछ भूल गया। किसी आदि-देवता या स्वस्थ और जवान जन्तु की भांति मैं प्रकाश और गरमाई, जीवन की सरसता और शान्त, स्वस्थ प्रेम के इन्द्रिय-सुख का रस भोग रहा था।

मेरी बीमारी के बाद मान्यूलिखा मुझ से जली-भुनी रहने लगी। मेरे प्रति उसकी घृणा ने इतना भयंकर रूप धारण कर लिया कि अब वह उसे दबाने-छिपाने का उपक्रम भी नहीं करती थी। जब मैं झोपड़ी में होता, वह मेरे प्रति अपना रोष प्रकट करने के लिए चूल्हे में बर्तनों को इतनी जोर से खड़खड़ाती कि आखिर उससे तंग आकर मैं और ओलेस्या एक दूसरे से जंगल में ही मिलने लगे। हरे पत्तों से लदे चीड़ के भव्य वृक्षों की पृष्ठभूमि में हमारा प्रगाढ़ प्रेम और भी अधिक खिल उठा।

हर रोज मैं विस्मय और कौतूहल से ओलेस्या के नये गुणों को देखता रह जाता। अनेक कामों में उसकी विलक्षण सूझबूझ और मृदुल शालीनता को देख कर विश्वास नहीं होता था कि वह बिलकुल अशिक्षित है और उसका पालन-पोषण जंगल में हुआ है। प्रेम के कुछ ऐसे बाध्य और विकृत लक्षण होते

हैं, जो कोमल, भावुक व्यक्तियों को हमेशा लज्जित और पीड़ित कर देते हैं। किन्तु ओलेस्या के स्वच्छ आचरण और सद्व्यवहार ने हमारे प्रेम की पवित्रता को कलुषित होने से हमेशा बचाए रखा। उस पर उसने एक क्षण के लिए भी सस्ती और सतही भावनाओं की छाया न पड़ने दी।

और धीरे-धीरे वह दिन पास आने लगा जब मुझे गांव छोड़ कर चले जाना था। वास्तव में पेरीब्रोद में मेरा काम समाप्त हो चुका था, किन्तु मैं जानबूझ कर अपने प्रस्थान की तिथि आगे ठेलता जा रहा था। अभी तक इस सम्बंध में मैंने ओलेस्या से एक शब्द भी नहीं कहा था। मेरी बिदाई का समाचार सुन कर उस पर कैसी प्रतिक्रिया होगी, इसकी कल्पना करते ही मेरा दिल कांप उठता था। मैं एक अजीब दुविधा में फंस गया। अपनी दिनचर्या का मैं इतना अभ्यस्त हो गया था कि उसे अचानक छोड़ कर चल देना मुझे असंभव सा प्रतीत होता था। प्रतिदिन ओलेस्या से मिलना, उसकी खिलखिलाती हंसी और सुरीली आवाज को सुनना, उसके हाथों के कोमल, सुखद स्पर्श को महसूस करना मेरे लिए आवश्यक ही नहीं, अनिवार्य बन गया था। बारिश के कारण जब कभी मैं उससे मिलने नहीं जाता था, उस समय मैं अपने को इतना असहाय और एकाकी पाता, मानों किसी ने मेरी कोई अमूल्य निधि छीन ली हो। मुझे अपना काम नीरस और निरर्थक सा प्रतीत होता, किसी कार्य में मन नहीं लगता और मेरी आत्मा जंगल के वातावरण, उसकी गरमायी और आलोक के लिए और ओलेस्या के मधुर परिचित चेहरे को देखने के लिए तड़पने लगती।

मेरे मन में अनेक बार ओलेस्या से विवाह करने का विचार उठा था। पहले-पहल यह विचार मेरे मस्तिष्क में कभी-कभार आता था और मैं सोचता था कि ईमान का सौदा यही है कि हमारे सम्बंध की अन्तिम परिणति विवाह में हो। केवल एक बात मेरे रास्ते पर बाधा बन कर खड़ी थी। मैं इस बात की कल्पना भी नहीं कर सकता था कि विवाह के बाद ओलेस्या भड़कीली पोशाक पहने हुए ड्राइंग-रूम में बैठ कर मेरे मित्रों की पत्नियों के संग बातचीत करेगी। ओलेस्या के संग उस पुराने जंगल का मोहक वातावरण, उसकी प्रचलित किंवदन्तियां और रहस्यपूर्ण भेद इतने अविच्छिन्न-रूप से जुड़े हुए थे कि उसे उनसे अलग करके देखना मुझे असंभव सा प्रतीत होता था।

किन्तु ज्यों-ज्यों मेरे प्रस्थान का दिन निकट आने लगा, मेरा हृदय एक मर्मान्तक व्यथा और निपट एकाकीपन के भय से आक्रान्त हो उठा। यही कारण था कि ओलेस्या से विवाह करने का मेरा निश्चय दृढ़तर होता गया। पहले मैं डरता था कि ओलेस्या से विवाह करना समाज को एक दम्भपूर्ण चुनौती देना होगा। किन्तु अब मेरे मन में यह डर मिटने लगा था। "हमारे समाज में ऐसे अनेक सदाचारी और विद्वान पुरुष विद्यमान हैं जिन्होंने अपनी दर्जिनों और

नौकरानियों से विवाह किया है।" मैं यह सोचकर अपने दिल को आश्वासन देता। "ऐसे दम्पतियों का वैवाहिक-जीवन इतने आनन्द से गुजरता है कि वे अपने जीवन की अन्तिम घड़ी तक अपनी नियति की सराहना करते हैं, जिसने उन्हें ऐसा निर्णय करने के लिए उत्प्रेरित किया। मुझे आशा करनी चाहिए कि मेरा भाग्य भी उन लोगों के सौभाग्य से भिन्न नहीं होगा।"

जून का आधा महीना बीत चुका था। एक दिन रोज की तरह मैं जंगल की उस पगडंडी के मोड़ पर खड़ा हुआ ओलेस्या की प्रतीक्षा कर रहा था, जो नागफनी की खिलती हुई झाड़ियों के बीच टेढ़ा-मेढ़ा रास्ता बनाती हुई जाती थी। दूर से ही मैंने उसकी हल्की, तेजी से निकट आती हुई पदचाप को पहचान लिया।

"मेरे प्रियतम," ओलेस्या ने हांफते हुए कहा और अपनी बाहें मेरे गले में डाल दीं। "क्या तुम्हें बहुत देर तक मेरी प्रतीक्षा करनी पड़ी ? मैं आज बड़ी मुश्किल से आ सकी हूं, दादी मां से झगड़ा हो गया था।"

"क्या वह अब भी तुमसे नाराज हैं ?"

'क्यों नहीं। 'उसके कारण तू बर्बाद हो जायगी।' वह अक्सर मुझसे कहती हैं। 'तेरे संग खेल-खिलवाड़ करने और तेरा जी भर कर रस लूटने के बाद वह तुझे गुठली की तरह फेंक कर खुद नौ दो ग्यारह हो जायगा। वह तुझ से रत्ती भर भी प्रेम नहीं करता।' झगड़े में वह अक्सर मुझ से ऐसी बातें करती हैं।"

"क्या उनका संकेत मेरी ओर है ?"

"हां, लेकिन मैं उनकी एक बात का भी विश्वास नहीं करती।"

"क्या वह सब कुछ जानती हैं ?"

"निश्चित रूप से मैं कुछ नहीं कह सकती। मेरे विचार में वह सब कुछ जानती हैं। मैं उनसे इस सम्बंध में कभी कोई चर्चा नहीं उठाती, वह स्वयं अपना अनुमान लगाती हैं। लेकिन चिन्ता करने की कोई बात नहीं — आओ चलें !"

उसने नागफनी के वृक्ष से एक छोटी सी टहनी, जिस पर सफेद कलियों का एक गुच्छा लटक रहा था, तोड़ कर अपने बालों में खोंस ली। हम उस पगडंडी पर — जहां दुपहर की हल्की गुलाबी धूप छिटक रही थी — धीरे-धीरे चलने लगे।

पिछली रात मैंने दिल पक्का करके यह निश्चय कर लिया था कि जो भी हो, आज शाम मैं उसे सबकुछ बतला दूंगा। किन्तु उस क्षण उसके सम्मुख घबराहट के कारण मेरी जुबान तालू से चिपक गयी और अनिश्चय और असमंजस में उलझा हुआ मैं चुपचाप खड़ा रहा। जब मैं उसे अपने प्रस्थान और

उसके साथ विवाह करने के अपने निश्चय के बारे में बताऊंगा, तो क्या वह मेरा विश्वास करेगी ? कहीं वह यह तो न समझेगी कि प्रस्थान के समाचार से उसके हृदय पर जो गहरा आघात पहुंचेगा, उसकी पीड़ा को कम करने के लिए ही मैं विवाह का प्रस्ताव रख रहा हूं ? कुछ फासले पर एक वल्कल-मंडित छतनार वृक्ष खड़ा था। मैंने निश्चय कर लिया कि उस वृक्ष के पास पहुंचकर मैं ओलेस्या से अपने दिल की बात कह दूंगा। वृक्ष के पास पहुंचते ही मेरा दिल जोर-जोर से धड़कने लगा, घबड़ाहट के कारण चेहरा पीला पड़ गया और मुंह सूख गया। मैंने बोलने के लिए अपनी सांस ऊपर खींच ली किन्तु मुंह से एक शब्द भी बाहर न निकला। ऐन मौके पर मेरा साहस टूट गया। "सत्ताईस मेरा भाग्य-अंक है," कुछ मिनटों बाद मैंने सोचा। "मैं सत्ताईस तक गिनूंगा और फिर —" मैं मन-ही-मन गिनता रहा, किन्तु जब सत्ताईस पर आया तो पता चला कि मेरा मन पहले की तरह अनिश्चय में टंगा है। "मैं साठ तक गिनूंगा — पूरा एक मिनट — और उसके बाद मैं अवश्य ही ओलेस्या से अपने दिल की बात कह दूंगा।"

"क्या बात है, आज तुम इतने उद्विग्न क्यों दिखायी दे रहे हो ?" ओलेस्या ने अचानक मुझ से पूछा। "लगता है, कोई चीज तुम्हें कोंच रही है। मुझे नहीं बतलाओगे ?"

हां, तब मैं बोला था — एक कृत्रिम, अस्वभाविक, लापरवाही भरे स्वर में, मानो मैं किसी बहुत ही क्षुद्र और महत्वहीन विषय का उल्लेख कर रहा हूं। उस क्षण मुझे अपने स्वर से, अपने शब्दों से घृणा हो रही थी।

"ओलेस्या, तुम्हारा अनुमान ठीक है। मैं सचमुच परेशान हूं। बात यह है कि इस गांव में मेरा काम समाप्त हो गया है। मेरे अफसर अब मुझे वापिस अपने शहर भेज रहे हैं।"

मैंने कनखियों से ओलेस्या को देखा। उसके चेहरे का रंग उड़ गया था और होंठ कांपने लगे थे। किन्तु उत्तर में उसने एक शब्द भी न कहा। कुछ मिनटों तक मैं उसके साथ चलता रहा। झींगुर जोर-जोर से टर्रा रहे थे। कभी कभी दूर से किसी पक्षी के चहचहाने का अलसाया-सा स्वर सुनायी दे जाता था।

"ओलेस्या, तुम जानती हो कि हमेशा के लिए यहां रहना सम्भव नहीं। स्थायी-रूप से यहां ठहरने के लिए कोई व्यवस्था भी नहीं हो सकती। इसके अलावा मेरे ऊपर काम की जिम्मेदारी है, जिसकी उपेक्षा करना उचित नहीं।"

"तुम ठीक कहते हो। मैं भी यही सोचती हूं।" ओलेस्या ने कहा। "सबसे पहले अपना कर्त्तव्य है — पीछे कुछ और। तुम्हें अवश्य जाना चाहिये।" उसके भावहीन स्वर में कुछ ऐसी शून्यता भरी थी कि मैं भयभीत सा हो गया।

वह एक पेड़ का सहारा लेकर खड़ी हो गयी। उसका चेहरा हल्दी सा पीला हो गया था, निर्जीव, निष्प्राण सी बाहें नीचे लटक आयी थीं और उसके होठों पर अवसाद और व्यथा से भरी फीकी सी मुस्कराहट सिमट आयी थी। उसके चेहरे के पीलेपन को देखकर मैं भयाकुल हो उठा। तेजी से लपककर मैंने उसके हाथ पकड़ लिये।

"प्यारी ओलेस्या, तुम्हें क्या हो गया है ?"

"कुछ नहीं ... मैं ठीक हूं ... घबराओ नहीं ... जरा सिर में चक्कर आ गया था।"

वह पांव बढ़ा कर आगे चलने को उद्यत हुई। अपना हाथ उसने मेरे हाथ में पड़ा रहने दिया।

"न जाने अभी तुम्हारे मन में मेरे प्रति कितने बुरे विचार आए होंगे," मैंने उलहना भरे स्वर में कहा। "छिः ओलेस्या, क्या तुम भी यह सोचती हो कि मैं तुम्हें छोड़कर चला जाऊंगा ? क्या यह कभी संभव है, प्यारी ओलेस्या ? आज रात को ही मैं तुम्हारी दादी मां से कहने वाला हूं कि तुम मेरी पत्नी बनने जा रही हो।"

मुझे यह देखकर गहरा आश्चर्य हुआ कि वह मेरी बात को सुनकर तनिक भी विस्मित न हुई।

"तुम्हारी पत्नी ?" उदास होकर धीरे से उसने अपना सर हिला दिया। "नहीं, प्यारे वान्या, यह असंभव है।"

"किन्तु क्यों, अलोस्या, क्यों ?"

"नहीं ... कभी नहीं। इसकी कल्पना करना भी मूर्खता है, यह बात तुम भी दिल में महसूस करते हो। क्या मैं तुम्हारी पत्नी होने योग्य हूं ? तुम एक भद्र पुरुष हो — शिक्षित और बुद्धिमान, और मैं ? एक अपढ़ गंवार औरत, जिसे लोगों के संग उठने-बैठने का भी शऊर नहीं। मुझे अपनी पत्नी बनाकर शर्म से तुम अपना सिर भी नहीं उठा सकोगे।"

"कैसी बेकार की बातें करती हो तुम भी, ओलेस्या !" मैंने उत्तेजित होकर उसका प्रतिवाद किया। "छः महीने के भीतर तुम इतनी बदल जाओगी कि स्वयं तुम्हें अपने को पहचानना मुश्किल हो जाएगा। तुम नहीं जानती कि तुम कितनी चतुर और प्रवीण हो। हम दोनों मिलकर बहुत सी सुन्दर पुस्तकें पढ़ेंगे, सहृदय और बुद्धिमान लोगों से मिलेंगे, सारी दुनिया की सैर करेंगे। ओलेस्या, जैसे हम आज हैं, वैसे ही जिन्दगी भर एक दूसरे के संग रहेंगे। तुम पर मुझे शर्म आएगी ? छिः ओलेस्या, कैसी बात करती हो। तुम से बढ़कर मुझे और किस पर गर्व होगा ? मैं जीवन भर तुम्हारे प्रति कृतज्ञ रहूंगा, ओलेस्या !"

मेरे मर्मस्पर्शी भाषण के उत्तर में ओलेस्या ने भावाकुल होकर मेरा हाथ दबा दिया, किन्तु अपने निश्चय पर वह अडिग रही।

"कुछ और भी बातें हैं, जिन्हें तुम नहीं जानते। मैंने आज तक तुम्हें नहीं बताया कि मेरे पिता नहीं हैं। मै जारज सन्तान हूं।"

"ओलेस्या, मुझ से ये सब बातें मत कहो। मुझे इनमें कोई दिलचस्पी नहीं है। मेरे लिए सबसे बड़ी बात है—तुम्हारा प्रेम। तुम्हारे मां-बाप चाहे जो भी हों, मुझे उनसे कोई मतलब नहीं। मुझे अन्य बातों की कोई चिन्ता नहीं, क्योंकि तुम मुझे मेरे माता-पिता और सारी दुनिया से भी कहीं अधिक प्रिय हो। इस तरह के बहाने बनाकर मुझे मत टालो!"

उसने कोमल-विनीत भाव से अपने कंधे मेरे कंधों से सटा लिए।

"अच्छा होता कि तुम इस चर्चा को न छेड़ते। तुम अभी जवान हो, स्वतंत्र हो, तुम्हारे हाथ-पांव बांधकर तुम्हें अपने पास रखे रहना क्या उचित और सम्भव होगा? हो सकता है कि तुम किसी दूसरी स्त्री से प्रेम करने लगो। उस समय मैं तुम्हें मार्ग का रोड़ा जान पड़ूंगी। तुम मुझ से घृणा करने लगोगे और उस घड़ी को कोसोगे जब मैं तुमसे विवाह करने पर रजामन्द हो गयी थी। क्या तुम नाराज हो गये?" मेरे चेहरे पर व्यथा का भाव देखकर उसने अभ्यर्थना भरे स्वर में कहा। "मैं तो केवल तुम्हारे सुख की बात सोच रही हूं। तुम्हें अपनी बातों से पीड़ित करना मेरा मकसद नहीं है। फिर इसके अलावा दादी मां का क्या होगा? तुम ही सोचो, क्या यह उचित होगा कि मैं उन्हें अकेली, निराश्रित-अवस्था में छोड़ कर चली जाऊं?"

"उनके रहने का भी कहीं इंतजाम हो जाएगा," मैंने कहा। ओलेस्या की दादी का विचार सचमुच अभी तक मेरे मस्तिष्क में नहीं आया था। "यदि वह हमारे संग न रहना चाहें तो किसी भी शहर के 'भिक्षा-गृह' में रह सकती हैं, जिसमें उन जैसी बूढ़ी स्त्रियों की सुख-सुविधा के लिए पूरी व्यवस्था की जाती है।"

"नहीं, ऐसा कभी संभव न होगा। वह जंगल से कहीं बाहर जाना पसन्द न करेंगी। पराये आदमियों से उन्हें डर लगता है।"

"ओलेस्या, आखिर इसका निर्णय तो केवल तुम्हें ही करना पड़ेगा। दादी मां और मेरे बीच तुम्हें किसी एक को चुनना होगा। केवल इतना ध्यान रखना कि तुम्हारे बिना मुझे अपना जीवन एक भारी बोझ सा प्रतीत होगा।"

"मेरे प्रियतम," उसने भावोच्छ्वासित होकर स्नेह-सिक्त स्वर में कहा। "मैं कृतज्ञ हूं—तुम्हारे इन शब्दों के लिए। तुमने मेरी आत्मा को कितनी शान्ति पहुंचायी है! किन्तु मैं तुमसे विवाह न कर सकूंगी। जैसी मैं आज हूं, वैसे ही—अगर तुम्हें कोई आपत्ति न हो—मैं आजीवन तुम्हारे संग रहने के

लिए प्रस्तुत हूं। किन्तु जल्दी मत करो। सोच-विचार कर ही कोई कदम उठाना उचित होगा। फिर इस सम्बंध में दादी मां से भी बातचीत करनी पड़ेगी।"

"ओलेस्या, सुनो," बिजली की तेजी से एक नया विचार मेरे मस्तिष्क में कौंध गया। "विवाह के लिए जो तुम आनाकानी कर रही हो, वह क्या इसलिये तो नहीं कि तुम्हें गिरजे में जाने से डर लगता है?"

वास्तव में मुझे विवाह की चर्चा इसी विषय को लेकर आरम्भ करनी चाहिए थी। इस सम्बंध में मैं ओलेस्या से प्रायः हर रोज बहस किया करता था। मैंने उसे अनेक बार समझाया था कि उसका यह भय बिलकुल निराधार और निरर्थक है कि जादू-टोना करने के कारण उसका कुल अभिशाप-ग्रस्त हो गया है। रूस में प्रायः प्रत्येक बुद्धिजीवी ज्ञान-प्रचारक होता है। पिछली दशाब्दियों के रूसी-साहित्य ने यह तत्व हमारे रक्त में घोल दिया है। यदि ओलेस्या कट्टर-धार्मिक विचारों की स्त्री होती, बिला नागा उपवास रखती, नियमित-रूप से गिरजे में जाती, तो मैं उसके धार्मिक-विचारों पर हल्का सा कटाक्ष ("हल्का सा" इसलिये, क्योंकि मैं स्वयं धर्म में विश्वास रखता हूं।) करने से कभी न चूकता और हर दम उसकी बौद्धिक जिज्ञासा और चेतना को जागृत करने के प्रयास में जुटा रहता। किन्तु ओलेस्या ने मुझ से कभी अपने मन की बात नहीं छिपायी। उसका यह अबोध और दृढ़ विश्वास था कि उसके कुल के लोगों ने ईश्वर से नाता तोड़कर पैशाचिक-शक्तियों के संग अपना सम्बंध जोड़ लिया है। वह भगवान का नाम लेने में भी हिचकती थी।

मेरे कहने-सुनने के बावजूद अन्ध-विश्वासों में उसकी अडिग आस्था ज्यों-की-त्यों बनी रही। मेरे सब तर्क और व्यंग्य—जो कभी-कभी बहुत कठोर और क्रूर भी हो जाते थे—एक रहस्यमयी और दैवाधीन नियति पर उसके विनम्र विश्वास के सामने चूर-चूर हो जाते थे।

"ओलेस्या, क्या तुम्हें गिरजे से डर लगता है?" मैंने दुबारा पूछा। उसने चुपचाप अपना सर झुका दिया।

"तुम सोचती हो कि भगवान तुम्हें स्वीकारेगा नहीं?" मैं उत्तेजित होकर बोलता जा रहा था। "तुम सोचती हो कि वह तुम्हें अपनी दया से वंचित रखेगा? लाखों देवदूत जिसके अधीन हैं, धरती पर अवतरित होकर मानव-कल्याण के लिए जिसने अपमानजनक और भयानक मृत्यु को गले लगाया, क्या वह तुम्हें क्षमा नहीं करेगा? तुम उस परमात्मा में विश्वास नहीं कर पातीं जिसने डाकू और हत्यारे जैसे पापियों को स्वर्ग में स्थान दिया, जिसने एक पतित, पथभ्रष्ट नारी के पश्चाताप को गौरव दिया था?"

ओलेस्या के लिए ये बातें नयी नहीं थीं—अनेक बार हम इस सम्बंध में बातचीत कर चुके थे। किन्तु इस बार उसने मेरी एक न सुनी। उसने जल्दी से

अपनी शॉल· उतार डाली और उसे मरोड़-सिकोड़कर मेरे मुंह पर दे मारा। फिर क्या था, हम दोनों गुत्थम-गुत्था हो गये। मैं उसके बालों से नागफनी का फूल खींचने की चेष्टा करने लगा। खींच-तान में वह गिर पड़ी और गिरते-गिरते उसने मुझे भी अपने संग घसीट लिया। हम दोनों खुशी से हंसते जा रहे थे। उसने अपने गर्म, मधुर होंठ — जो हाफने के कारण तनिक खुल गये थे — मेरे होठों पर रख दिये।

उस रात एक दूसरे से विदा लेकर जब हम अपने-अपने घर की ओर चल पड़े, तो कुछ फासला तय करने के बाद मुझे ओलेस्या की आवाज सुनायी दी।

"वान्या, जरा रुक जाओ। मैंने तुमसे एक बात कहनी है।"

उससे मिलने के लिए मैंने अपने पांव वापिस मोड़ लिए। वह मेरी ओर तेजी से भागती आ रही थी। आकाश में हंसिया-चांद उग आया था, जिसके फीके आलोक में ओलेस्या की आंखें आंसुओं से चमक रही थीं।

"ओलेस्या, क्या बात है?" मैंने चिन्तित होकर पूछा।

उसने मेरे दोनों हाथ पकड़ लिए और बारी-बारी से उन्हें चूमने लगी।

"वान्या, तुम कितने अच्छे, कितने दयाशील हो।" उसने कांपते स्वर में कहा। "मैं अभी सोच रही थी कि तुम मुझे कितना चाहते हो। मेरी हार्दिक इच्छा है कि किसी तरह मैं तुम्हारे काम आ सकूं, किसी तरह तुम्हें बहुत खुश कर सकूं।"

"ओलेस्या ... मेरी प्यारी बच्ची! इस तरह अपने को परेशान मत करो ..."

"अच्छा, सुनो," वह कह रही थी, "अगर किसी दिन मैं गिरजे में चली जाऊं तो क्या तुम बहुत खुश होगे? अपने दिल की बात कहना। मैं तुम्हारे मुंह से झूठ नहीं सुनूंगी।"

मैं सोचने लगा। मेरे दिल में एक विचित्र सा वहम उठ रहा था। क्या गिरजे में उसका जाना अनिष्टकर तो नहीं होगा?

"तुम चुप क्यों हो गये? बोलो, क्या तुम खुश होगे? या तुम इसको कोई महत्व नहीं दोगे?"

"ओलेस्या, समझ में नहीं आता, क्या कहूं।" मैं हकला रहा था। "खुश क्यों नहीं हूंगा? क्या मैंने स्वयं तुम से अनेक बार यह बात नहीं कही कि पुरुष चाहे धर्म और परमात्मा पर विश्वास न करे, चाहे वह उनका मजाक ही क्यों न उड़ाए, किन्तु स्त्रियों की बात अलग है। धर्म में उनकी श्रद्धा और आस्था होना आवश्यक है। स्त्रियों में नारीत्व की सुन्दर, पुनीत अभिव्यक्ति उसी समय होती है जब वे परमात्मा के आश्रय को अपनी सहज, मधुर आस्था के संग स्वीकार कर लें।"

मैं चुप हो गया। ओलेस्या ने चुपचाप अपना सिर मेरी छाती पर रख दिया।

"किन्तु तुमने मुझ से यह प्रश्न पूछा क्यों ?"

ओलेस्या चौंक गयी।

"कुछ नहीं। मैं सिर्फ जानना चाहती थी। भूल जाओ इस बात को। अच्छा अब मैं चली। कल अवश्य आना।"

और वह चली गयी। मैं देर तक अंधेरे में आंखें फाड़ता हुआ खड़ा रहा। उसकी पदचाप क्षण प्रति क्षण धीमी होती गयी। सहसा एक भयंकर अनिष्ट की आशंका मेरी आत्मा को झिंझोड़ गयी। मेरे मन में एक अदम्य प्रेरणा उठी कि मैं ओलेस्या के पीछे भागकर बीच रास्ते में उसे रोक लूं और उससे अनुनय-विनय करूं, प्रार्थना करूं कि वह गिरजे में न जाए। यदि वह मेरा अनुरोध न माने तो जबरदस्ती उससे वचन ले लूं। किन्तु मैंने अपनी इच्छा को दबा दिया और घर वापिस लौटते हुए खुद अपना मजाक उड़ाने लगा।

"प्यारे वान्या — तुम खुद अंधविश्वासों के शिकार बनते जा रहे हो।"

हे भगवान ! उस दिन मैंने अपने अन्तर्मन की पुकार क्यों नहीं सुनी ? आज मेरा दृढ़ विश्वास हो गया है कि हृत्-प्रेरणा — चाहे वह कितनी ही धुंधली, अस्पष्ट और रहस्यमयी क्यों न हो — कभी मिथ्या नहीं होती।

बारह

जिस दिन हमारी मुलाकात हुई थी, उसके अगले दिन ट्रिन्टी (ईसाई धर्म के अनुसार परमात्मा का वह स्वरूप, जिसमें परमपिता, परमपुत्र और धर्म-आत्मा समाहित होते हैं) रविवार था। धार्मिक-पर्व का भोज उस वर्ष शहीद टिमाठी-दिवस पर होना निश्चित हुआ था। जन-श्रुति के अनुसार उस दिन फसल के खराब होने के चिन्ह प्रकट होते हैं। पेरीब्रोद के गांव में गिरजा तो था, लेकिन गिरजे का पादरी नहीं था। लैंट और अन्य धार्मिक भोजों के प्रमुख अवसरों पर वोल्चये गांव का पादरी ही यहां प्रार्थना करने आता था।

उस दिन मुझे किसी काम से निकटवर्ती कस्बे में जाना था। सुबह आठ बजे ही ठंडे-ठंडे में घोड़े पर सवार होकर रवाना हो गया। आस-पास के गांवों में दौरे पर जाने के लिए मैंने छः सात वर्ष की आयु का एक घोड़ा खरीद लिया था। घोड़ा स्थानीय-नस्ल का था, किन्तु उसके भूतपूर्व मालिक ने — जो भूमि-पर्यवेक्षक थे — बड़ी होशियारी से उसका पालन-पोषण किया था। घोड़े का नाम तारन्चिक था। मुझे वह बहुत पसन्द आया था — उसकी मजबूत सुघड़ टांगें, माथे पर झुके हुए घने बाल जिसके नीचे क्रुद्ध, शंकित आंखें चमकती रहती थीं, और उसके जोर से भिंचे हुए होंठ मुझे बहुत आकर्षक लगते थे। उसका रंग भी

अजीबोगरीब था — चूहे का मटियाला सलेटी रंग, किन्तु उसकी देह के पिछले हिस्से पर सफेद और काले धब्बे पड़े हुए थे।

मुझे गांव के एक सिरे से दूसरे सिरे तक जाना पड़ा। गिरजे और शराब खाने के बीच का चौकोर हरा-भरा मैदान छकड़ा-गाड़ियों से भर गया था, जिनमें वोलोशा, जुलन्या और पैचालोवका आदि समीपवर्ती गावों के किसान अपने बीवी-बच्चों के संग भोज में सम्मिलित होने आये थे। छकड़ों के इर्द-गिर्द बड़ी चहल-पहल थी। सुबह से ही लोग — कड़ी पाबन्दियों के बावजूद — शराब पीने में मस्त थे (धार्मिक-त्योहारों पर और रात के समय शराब पीना निशिद्ध था, किन्तु लोग लुक-छिप कर शराबखाने के भूतपूर्व मालिक स्रूल से वोद्का खरीद लाते थे)। हवा बन्द थी और सुबह से ही गर्मी की घुटन महसूस होने लगी थी। जब सुबह इतनी उमस थी तो दुपहर में गर्मी का क्या हाल होगा, इसका अनुमान लगाना कठिन नहीं था। गर्म, तपा हुआ आकाश, जिसमें बादल का एक भी टुकड़ा दिखाई न देता था, चांदी सी चमचमाती सफेद धूल से ढका था।

शहर में अपना काम समाप्त करने के बाद मैं भोजन करने के लिए सराय में गया। यहूदियों के ढंग से पकायी गई पाइक मछली को जल्दी-जल्दी निगलने के बाद बहुत ही रद्दी, मटियाले रंग की बियर पीकर मैं घर की ओर चल पड़ा। रास्ते में लुहार की दुकान दिखाई दी तो याद आया कि कुछ दिनों से तारन्चिक की अगली बाईं टांग की नाल ढीली हो गयी है। उसे बदलवाने के लिए मैं वहीं रुक गया। डेढ़ घंटा वहीं लग गया। पेरीब्रोद पहुंचते-पहुंचते शाम के लगभग साढ़े चार-पांच का समय हो चुका था।

मैदान में नशे में धुत लोगों के झुंड के झुंड शोर मचाते, हंसते-बोलते घूम रहे थे। शराबखाने का आगन और गलियारा धक्कम-धुक्का करते गाहकों की अपार भीड़ से खचाखच भरा था। पेरीब्रोद के निवासी भी पास-पड़ोस के गांवों से आये हुए उन किसानों में मिल गये थे, जो अपने छकड़ों की छाया तले बैठ कर विश्राम कर रहे थे। हर जगह पीछे मुड़े हुए सिर और हवा में उठी हुई बोतलें दिखायी दे रही थीं। उस भीड में एक भी व्यक्ति ऐसा नहीं था, जिसके होश-हवास दुरुस्त हों। लोगों का नशा एक ऐसी चोटी पर पहुंच चुका था, जहां हर किसान छाती ठोंक कर गर्वोन्नत भाव से अपने पियक्कड़पन की कहानियां बढ़ा-चढ़ा कर सुनाने लगता है, भारी कदमो से लड़खड़ाता हुआ चलता है, सिर हिलाते ही उसकी जांघें डगमगा जाती हैं, घुटने झुक जाते हैं और वह सहसा अपना संतुलन खो कर पीछे की ओर गिरने लगता है। घोड़े उदासीन भाव से भूसा खा रहे थे और उनके इर्द-गिर्द बच्चे उछलते-कूदते शोर मचा रहे थे। कहीं कोई रोती-कराहती स्त्री नशे में धुत,

अपने पति पर गालियों की वर्षा कर रही थी और उसे उसकी आस्तीन से पकड़ कर घसीटती हुई घर की ओर खींचे ले जा रही थी। एक मेड़ की छाया में बीस-पच्चीस स्त्री-पुरुष एक अंधे गायक को घेर कर बैठे थे, जो बाजा बजाता हुआ गा रहा था। गाने के संग वह कांपती आवाज में गुनगुनाता भी जाता था। उसका तीखा, खरखराता स्वर भीड़ के कोलाहल को चीरता हुआ चारों ओर गूंज जाता था। वह एक पुराना, चिर-परिचित लोक गीत गा रहा था :

सांझ का सूरज डूब गया हो,
रात अंधेरी घिर आई।
तुरुक लुटेरे टूट पड़े हो,
जहन्नुमी बदली छायी!

इस लोक-गीत में आगे कहा गया है कि जब तुर्की सेनाएं 'पोचायेव मठ' पर अधिकार न जमा सकीं तो उन्होंने छल-कपट का रास्ता अपनाया। उन्होंने मठ में एक मोमबत्ती उपहार के रूप में भेजी, जिसमें बारूद भरा हुआ था। बैलों की बारह जोड़ियों द्वारा वह मोमबत्ती मठ में पहुंचायी गयी। मोमबत्ती को देख कर मठ के पुजारी फूले नहीं समाए। वे पोचायेव की देवी के सामने उसे जलाने चले, किन्तु भगवान ने इस भयंकर अपराध से उन्हें बचा लिया :

मठाधीश ने सपना देखा,
सपने में प्रभु का ऐलान :
खंड-खंड कर दो खंजर से,
लेजा मोमबत्ती मैदान!

पुजारियों ने यही किया :

खंड-खंड खंजर से कर दी,
लेजा मोमबत्ती मैदान!
फेंक दिये सब गोली-गोले,
संतों ने चहुं ओर निदान!

मैदान की गर्म हवा वोद्का, प्याज, भेड़ के खाल के कोटों, घर पर बने तेज तम्बाकू और धूल भरे आदमियों के पसीने की दुर्गन्ध से बोझिल हो उठी थी। भीड़ के कोलाहल से डर कर तारन्चिक बार-बार बिदक रहा था। बड़ी सावधानी से उसे मनाता पुचकारता हुआ मैं जमघट के बीच रास्ता बना कर आगे बढ़ने लगा। लोग चुपचाप एक तरफ खड़े होकर मुझे क्रुद्ध, अशिष्ट और कौतूहल भरे भाव से देख रहे थे। गांव की पुरानी प्रथा की उपेक्षा करते हुए

उनमें से किसी ने भी मुझे देख कर सिर से टोपी नहीं उतारी। किन्तु एक बात अवश्य हुई — मैदान में मुझे जाते देख कर भीड़ का शोर-शराबा काफी कम हो गया। अचानक भीड़ में से नशे में झूमता हुआ कोई व्यक्ति जोर से चिल्लाया। मैं उसके शब्द नहीं सुन पाया, किन्तु बहुत से लोग उसे सुनकर जोर से ठहाका लगा कर हंसने लगे। एक भयभीत स्त्री ने चिल्लाने वाले उस व्यक्ति को बीच में ही रोकने की चेष्टा की।

"चुप भी हो जा मूर्ख, गला फाड़-फाड़ कर चिल्ला रहा है! अगर उसने सुन लिया तो?"

"सुन लेगा तो मेरा क्या बिगाड़ेगा?" उस आदमी ने निडर होकर जोर से कहा। "क्या वह मेरा अफ़सर है? यह कोई जंगल थोड़े ही है कि जब मन चाहा अपनी ..."

एक लम्बा, अश्लील और भयानक वाक्य हवा में गूंज गया, जिसे सुनकर भीड़ के लोग जोर-जोर से कहकहे लगाने लगे। मैंने तेजी से अपना घोड़ा मोड़ लिया और अपने हाथ में चाबुक पकड़ ली। उस समय मैं गुस्से में पागल हो गया था — मेरे हृदय में वह प्रचंड क्रोधाग्नि जलने लगी थी, जिसमें भय और और तर्क जल कर राख हो जाते है। अचानक मेरे मन में एक विचित्र, विषाद-पूर्ण विचार उठा: "यह सब कुछ मेरे जीवन में पहले कभी हो चुका है।" मुझे लगा मानो मैंने यह दृश्य पहले — अनेक वर्ष पहले कहीं देखा था। आज की तरह तेज, चुनचुनाती धूप फैली थी। मैं एक चौड़े मैदान में भीड़ के बीच खड़ा था और आज की ही भांति लोग उत्तेजित स्वरों में जोर-जोर से चीख-चिल्ला रहे थे। गुस्से में उबलता हुआ मैं पीछे मुड़ गया था — बिलकुल आज की तरह। "किन्तु कहां? यह घटना कहां घटी थी? यह दृश्य मैंने कब देखा था?" मैंने चाबुक झुका ली और घोड़े को अपने घर की ओर दौड़ाने लगा।

यर्मोला धीरे से रसोई के बाहर आया। घोड़े की लगाम मेरे हाथ से लेते हुए वह रूखे स्वर में बोला, "मारीनोवका की जागीर का कारिन्दा आया है। कमरे में बैठा आपकी इन्तजार कर रहा है।"

मुझे लगा मानो एक बहुत ही कड़वी और महत्वपूर्ण बात उसके होठों पर आकर रुक गयी हो। एक विद्वेषपूर्ण, व्यंगात्मक मुस्कान की हलकी सी छाया उसके चेहरे पर खिंच आयी थी। मैं कुछ देर तक जानबूझ कर दहलीज में ठिठका खड़ा रहा। कमरे में जाने से पूर्व मैंने सिर घुमा कर, उद्धत-भाव से यर्मोला को देखा, किन्तु वह अपना मुंह दूसरी तरफ फेर कर घोड़े को अस्तबल की ओर ले जा रहा था। तारन्चिक अपनी गरदन ऊपर उठा कर उसके पीछे-पीछे अनमने भाव से घिसटता चला जा रहा था।

मेरे कमरे में समीपवर्ती जागीर का कारिन्दा निकिता मिशचेंको बैठा हुआ था। उसने भूरे रंग की छोटी बास्कट — जिस पर कत्थई रंग की धारियां पड़ी हुई थीं — तंग नीली पतलून और भड़कीली टाई पहन रखी थी, अपने तेल से सने बालों के बीचोंबीच मांग निकाली हुई थी और उसके कपड़ों से "ईरानी इत्र" की खुशबू आ रही थी। मुझे देखते ही वह कुर्सी से उछल पड़ा और प्रणाम करने के लिए अपनी कमर दुहरी करके झुक गया। वह दांत निपोर कर मुस्करा रहा था, जिससे उसके दोनों जबड़ों के पीले मसूड़े दिखायी दे रहे थे।

"नमस्कार," प्रसन्न-भाव से उसने चहचहाना शुरू कर दिया। "आपसे मिल कर बहुत खुशी हुई। प्रार्थना समाप्त होने के बाद मैं यहां चला आया था और तब से आपकी प्रतीक्षा कर रहा हूं। आपसे मिले मुद्दत गुजर गयी। आज मन में आया — चलो, लगे हाथों आपके दर्शन भी कर आऊं। क्या बात है, आजकल आपने उस तरफ जाना बिलकुल छोड़ दिया। युवतियां आपको लेकर हंसी-मजाक करती हैं।"

अचानक उसे कुछ याद आया और वह कहकहे लगाता हुआ हंसने लगा।

"आज बड़ा दिलचस्प तमाशा हुआ ... मैं तो हंसते-हंसते लोट-पोट हो गया ... हा-हा-हा!" हंसी के मारे वह बेहाल हुआ जा रहा था।

"कैसा तमाशा? बात खोल कर कहो!" मैंने उसे बीच में टोकते हुए पूछा और अपनी झुंझलाहट को छुपाने की कोई चेष्टा नहीं की।

"आज यहां प्रार्थना के बाद हो-हल्ला मच गया।" हंसी के कारण उसके वाक्य बीच-बीच में टूट जाते थे। "पेरीब्रोद की कुछ लड़कियों ने...हा-हा-हा... क्या करूं, हंसी के मारे बोला नहीं जा रहा ... हां, तो मैं कह रहा था कि आज पेरीब्रोद की कुछ लड़कियों ने मैदान में एक डायन को पकड़ लिया — मेरा कहने का मतलब है कि वे मूर्ख, गंवार औरतें उसे डायन समझ बैठीं। बस, फिर क्या था! उन्होंने उसकी बुरी गत बना दी। अरे, वे तो उसका मुंह कोलतार से काला करने जा रही थीं, किन्तु वह उन्हें चकमा देकर भाग निकली!"

उसके यह कहने की देर थी कि एक भयानक विचार मेरे मस्तिष्क में बिजली सा कौंध गया। मैं घबरा उठा और झपट कर उस क्लर्क का कंधा पकड़ लिया।

"क्या कह रहे हो?" क्रोध में उबलता हुआ मैं जोर से चिल्ला उठा। "दांत क्यों फाड़ रहे हो? जल्दी बताओ, डायन से तुम्हारा क्या मतलब है? कौन सी डायन? वह कौन थी? तुम किस डायन की बात कर रहे हो?"

उसकी हंसी गायब हो गयी। भयभीत आंखों से मेरी ओर देखते हुए वह बोला, "मैं ... मैं कुछ नहीं जानता हजूर।" घबराहट के कारण वह हकलाने

लगा था। "उसका नाम साम्यूलिखा या शायद मान्यूलिखा है—हां, याद आया, वह शायद मान्यूलिखा की बेटी है। उसके बारे में गांव वाले बातें कर रहे थे, किन्तु अब मुझे कुछ याद नहीं रहा ... झूठ नहीं बोल रहा हूं, हुजूर !"

जो कुछ उसने देखा-सुना था, उसका शुरू से आखीर तक पूरा विवरण मैंने उसके मुंह से सुन लिया। वह बड़े भोंड़े और बेढंगे रूप से सब बातें बतला रहा था। घटनाओं के तरतीब को वह बीच-बीच में गड़बड़ कर देता था, शुरू की बात अन्त में और अन्त की बात शुरू में कह डालता था। मैं खोद-खोद कर उससे प्रश्न पूछ रहा था और कभी-कभी तो उसके विवरण की असंगतियों को देखकर इतना अधिक झुंझला उठता था कि होठों तक गाली आकर रुक जाती थी। उसके विवरण से मुझे बहुत कम बातें पता चल सकीं। दो महीने बाद लकड़हारे की पत्नी ने — जो प्रार्थना के समय मौजूद थी — मुझे पूरे विस्तार के संग उस घटना का ब्यौरा दिया था, जिसके आधार पर मैं इस दुर्घटना के सब पहलुओं के सम्बंध में समुचित रूप से जानकारी हासिल कर सका। अनिष्ट की वह आशंका, जो उस शाम ओलेस्या के जाने के बाद मेरे मन में उठी थी, आखिर सच निकली।

ओलेस्या अपने भय पर काबू पाकर दूसरे दिन गिरजा घर में गयी थी। जब उसने गिरजा घर में प्रवेश किया, उस समय आधी प्रार्थना समाप्त हो चुकी थी। वह चुपचाप पीछे की पांत में आकर खड़ी हो गयी, किन्तु कुछ किसानों की नजर उस पर पड़ गयी। प्रार्थना के दौरान में औरतें आपस में कानाफूसी कर रही थीं और पीछे मुड़-मुड़कर ओलेस्या को देखती जा रही थीं।

इसके बावजूद ओलेस्या अपना सारा साहस बटोर कर प्रार्थना की समाप्ति तक गिरजे में खड़ी रही। कदाचित् वह उन औरतों की विद्वेष-पूर्ण निगाहों का अर्थ न समझ सकी, या शायद समझ कर भी अभिमान-वश उसने उन्हें नजर-अन्दाज कर दिया था। प्रार्थना समाप्त होने पर जब ओलेस्या गिरजे से बाहर आयी तो स्त्रियों के एक झुंड ने उसे घेर लिया और आंखें फाड़-फाड़ कर उसे देखने लगीं। ओलेस्या भयग्रस्त हिरनी की तरह असहाय सी उनके बीच खड़ी रही। उसी समय एक बवंडर सा उठ खड़ा हुआ। चारों ओर से ओलेस्या पर क्रूर कटाक्षों, कुत्सित आरोपों, गन्दी गालियों और हंसी के वीभत्स ठहाकों की बौछार होने लगी। औरतों का क्रोध क्षण-प्रति-क्षण बढ़ता गया और उन्होंने अपने व्यंग-बाणों से बेचारी ओलेस्या को छलनी सा कर दिया। चिल्लाती-चिंघाड़ती स्त्रियों के घेरे को तोड़ कर बाहर निकलने के लिए उसने अनेक विफल प्रयास किये, किन्तु हर बार उसे धक्के देकर बीच में ठेल दिया जाता था। "रांड का मुंह कोलतार से काला कर दो, तब इसकी अक्ल ठिकाने आएगी !" एक बूढ़ी स्त्री पीछे से चिल्लायी (यूक्रेन में कोलतार घृणा का सूचक समझा

जाता था। किसी लड़की को बदनाम और अपमानित करने के लिए इतना ही काफी था कि उसके घर के दरवाजे पर कोलतार लगा दिया जाय)। बुढ़िया का यह कहना था कि उसी समय कोलतार का कनस्तर और ब्रुश आ पहुंचा। स्त्रियां शीघ्रता से इन चीजों को एक-दूसरे के हाथों में देने लगीं ताकि जल्द-से-जल्द ओलेस्या का मुंह कोलतार से लेप दिया जाए।

ओलेस्या से अब और अधिक न सहा गया। क्रुद्ध शेरनी की तरह वह पास खड़ी एक स्त्री पर झपट पड़ी और उसे नीचे गिरा दिया। फिर क्या था! घूंसे-मुक्के चलने लगे, धक्कम धुक्के में अनेक स्त्रियां धरती पर लोटने लगीं। इसे एक विचित्र चमत्कार ही समझना चाहिए कि ओलेस्या अन्त में उन पागल स्त्रियों के चंगुल से निकलने में सफल हो गयी। बदहवास सी होकर वह सड़क पर भागने लगी, उसका रूमाल नीचे गिर गया, कपड़े फट गये, उधड़ी हुई थिगलियों के बाहर उसके शरीर का नंगा मांस झांकने लगा। पूरा एक जमघट सा लग गया। हंसी के ठहाकों, गालियों और अपमान जनक फिकरों के साथ-साथ उन पर पत्थरों की बौछार भी की जाने लगी। कुछ लोगों ने उसका पीछा भी किया, किन्तु कुछ दूर चलकर वे वापिस लौट आए। लगभग पचास फीट भागने के बाद ओलेस्या अचानक रुक गयी और अपना पीला, खरोंचों से भरा, खून से लथपथ चेहरा भीड़ की ओर मोड़ कर जोर से चिल्लायी, "तुम भी याद रखोगे! एक दिन आयेगा जब रोते-रोते तुम्हारी आंखें फूट जायेंगी!" उसके अभिशाप का एक-एक शब्द मैदान में गूंज गया।

लकड़हारे की पत्नी ने मुझे बतलाया कि ओलेस्या की धमकी में भविष्य वाणी का जहरीला सत्य ध्वनित हो रहा था। उसके प्रत्येक शब्द में ऐसी तीखी और प्रचण्ड घृणा भरी थी कि मैदान में खड़ा हर व्यक्ति किसी भावी-अनिष्ट की आशंका से भयाक्रान्त हो गया, किन्तु दूसरे क्षण ही उन्होंने दुबारा ओलेस्या पर गालियों की बौछार करनी शुरू कर दी।

मैं एक बार पुनः इस बात को दुहरा दूं कि इस दुर्घटना का विस्तृत ब्यौरा मुझे बाद में ही मालूम हुआ। मिशचैन्को की कहानी को अन्त तक सुनने की न तो मुझ में शक्ति ही रह गयी थी और न धैर्य ही। मैं हड़बड़ा कर आगन की ओर दौड़ा। कदाचित अभी यर्मोला ने घोड़े की काठी-लगाम नहीं उतारी होगी, मैंने सोचा। क्लर्क से मैंने एक शब्द भी न कहा और वह हक्का-बक्का सा मुझे देखता रहा। मेरा अनुमान सही निकला — यर्मोला अभी तारन्चिक को खावें में ही घुमा रहा था। मैंने घोड़े पर लगाम डाली, काठी कसी और उसे जंगल की ओर सरपट दौड़ाने लगा। ओलेस्या के घर पहुंचने के लिए मैंने लम्बा रास्ता चुना, ताकि शराबियों की भीड़ का दुबारा सामना न करना पड़े।

तेरह

घोड़े को दौड़ाते हुए मेरे मस्तिष्क में जो विचार भनभना रहे थे उनका वर्णन असंभव है। कभी-कभी तो मैं यह भी भूल जाता था कि मैं कहां जा रहा हूं, क्यों जा रहा हूं। मुझे लग रहा था मानो मैं एक भयानक दुःस्वप्न देख रहा हूं—एक विचित्र, अर्थहीन, अथाह भय के भंवर में फंस गया हूं, केवल यह धुंधली सी चेतना शेष रह गयी है कि कहीं कुछ ऐसा अनर्थ हो गया है, जो अमिट और अमोचनीय है। न जाने क्यों मजमे के उस अंधे गायक की ये पंक्तियां घोड़े की टापों से ताल मिलाती हुई बार-बार मेरे मस्तिष्क में घूम जाती थीं :

तुरुक लुटेरे टूट पड़े हों, जहन्नुमी बदली छायी !

मान्यूलिखा की झोपड़ी की ओर जाने वाली पगडंडी पर पहुंचते ही मैं तारन्चिक से नीचे उतर गया और उसकी लगाम पकड़ कर पैदल चलने लगा। काठी के नीचे लटकता हुआ कपड़ा और घोड़े के वे अंग जो जीन से ढके हुए थे, सफेद झाग में लतपथ हो रहे थे। इतनी प्रचण्ड गर्मी में घोड़ा दौड़ाने के कारण मेरे सिर की नाड़ियों में रक्त की पिचकारिया सी छूट रही थीं।

मैंने घोड़े को जंगले से बांध दिया और सीधा मान्यूलिखा की झोपड़ी में घुस गया। "ओलेस्या शायद यहां नहीं है !" यह विचार आते ही मैं डर से कांप गया। किन्तु एक क्षण बाद ही मैंने उसे पलंग पर लेटे पाया। वह तकिये पर सिर रखे दीवार की ओर मुंह मोड़कर लेटी थी। जब मैंने दरवाजा खोला तो उसने सिर मोड़कर मेरी ओर नहीं देखा, पहले की तरह दीवार की ओर मुंह किये पड़ी रही।

पलंग के पास ही फर्श पर मान्यूलिखा बैठी थी। मुझे देखते ही वह उछल कर खड़ी हो गयी और जोर-जोर से मेरी ओर हाथ हिलाने लगी।

"आ गये मुंह दिखाने ! नाश हो तुम्हारा !" दबे होठों से वह फुत्कार उठी और धीरे-धीरे मेरे निकट खिसक आयी। क्रोध में जलती उसकी फीकी, कठोर आंखें सीधी मुझ पर जम गयीं। "देख लिया ? तुम्हारे कारण हमारी जो दुरगत हुई, उससे तुम्हें शान्ति मिल गयी ?"

"देखो, दादी मां !" मैंने तनिक सख्त लहजे में कहा। "यह वक्त गड़े मुर्दे उखाड़ने का नहीं है। पहले यह बताओ ओलेस्या कैसी है ?"

"हिश ! धीरे बोलो। वह बेहोश पड़ी है। यह सब तुम्हारी कारस्तानी है। हम दोनों सुख-शान्ति से रहते थे। अगर तुम हमारे घरेलू मामलों में अपनी टांग न अड़ाते तो हमें आज यह दिन क्यों देखना पड़ता ? तुमने अपनी बेहूदा बातों से इस लड़की का सिर फिरा दिया, जिसका फल हम आज भुगत रहे हैं।

तुम्हें क्या दोष दूं, बेवकूफ तो मैं ही थी, जो आंखों पर पट्टी बांधे बैठी रही। पहले दिन जब तुम जोर-जबरदस्ती करके हमारे घर घुस आए थे, उसी दिन से मेरे मन में डर बैठ गया था। मैं जानती थी कि किसी न किसी दिन जरूर कोई विपत्ति हमारे ऊपर आएगी। सच बताओ, क्या तुमने ही उसे गिरजे में जाने के लिये नहीं फुसलाया ?" अचानक वह जोर से भभक उठी। क्रोध से उसका चेहरा विकृत हो आया। "हां, मैं तुम से पूछ रही हूं। तुम एक निठल्ले, आवारागर्द शख्स हो। बेशर्म कुत्ते ! तुमने ही उसे फुसलाया था ! लोमड़ी की तरह बगले मत झांको, सच बताओ, उसे तुमने गिरजे में जाने के लिए क्यों कहा ?"

"दादी मां, मैं सौगन्ध खा कर कहता हूं कि मैंने उसे कभी गिरजे में जाने के लिए नहीं कहा। वह खुद जाना चाहती थी।"

"हे भगवान !" उसने अपने हाथ मसलते हुए कहा। "जब वह गिरजे से भागती हुई आयी तो उसकी शक्ल देखकर मुझे अपनी आंखों पर एकाएक विश्वास न हुआ। बुरा हाल था उसका। ब्लाऊज फटकर चिथड़ा-चिथड़ा हो गया था, रूमाल का कहीं पता न था। कभी रोती थी, कभी हंसती थी, मानो पागल हो गयी हो। फिर वह बिस्तरे पर लेट गयी और रोते-रोते उसकी आंख लग गयी। उसे सोते देखकर मैंने चैन की सांस ली। मेरी अक्ल पर तो पत्थर पड़ गये हैं, तभी तो सोचने लगी कि सोकर उसका जी हल्का हो जाएगा। मैंने देखा कि उसका हाथ पलंग से नीचे लटक रहा है। 'हाथ उठाकर पलंग पर रख दूं, वरना अकड़ जायेगा।' मैंने सोचा। किन्तु उसके हाथ को छूते ही पता चला कि वह बुखार से जल रही है। एक घंटे तक वह बुखार में प्रलाप करती रही। उसकी बातों को सुनकर मेरा कलेजा मुंह को आने लगता था। अभी अभी तो चुप हुई है। देख लिया अपनी करतूत का नतीजा ? तुम्हारे कारण, हां, सिर्फ तुम्हारे ही कारण उसकी यह दुरगत हुई है।" क्षोभ और व्यथा की एक नयी लहर ने उसके स्वर को कुंठित कर दिया।

अचानक वह फूट पड़ी। रोने के कारण उसका चेहरा विकृत और वीभत्स हो गया। उसके होंठ के कोने फैलकर नीचे की ओर झुक आए थे, उसके चेहरे की तनी हुई मांस-पेशियां कांप रही थीं, भौंहें ऊपर चढ़ गयी थी, माथे पर सलवटें उलझ गयीं थीं और आंखों से मटर के दानों से गोल-गोल आंसू टपाटप गिर रहे थे। वह हाथों से अपना सर पकड़ कर, कुहनियों को मेज पर टिकाए बैठी थी। उसका शरीर पत्ते की तरह कांप रहा था।

"मेरी नन्ही बच्ची ...! मेरी प्यारी बच्ची ...! हाय — मेरे तो भाग्य फूट गये ..." वह जोर जोर से रिरियाने लगी।

"यह 'हाय-हाय' बन्द करो !" मैंने झिड़क कर उसे बीच में ही टोक दिया। "तुम उसे जगा डालोगी।"

वह चुप हो गयी। किन्तु उसकी देह अब भी रह रह कर कांप उठती थी, चेहरे पर वही बीभत्स मुद्रा विराजमान थी और आंखों से पहले की तरह आंसू बह कर मेज पर टपकते जाते थे। इसी तरह लगभग दस मिनट बीत गये। मैं मान्यूलिखा के पास बैठा-बैठा अवसन्न-भाव से खिड़की के शीशे पर उड़ती हुई मक्खी की भनभनाहट का ऊबा, उकताया सा स्वर सुनता रहा।

"दादी मां," अचानक ओलेस्या कुछ बुदबुदाने लगी। उसका स्वर इतना धीमा था कि हमें वह मुश्किल से ही सुनायी दिया। "दादी-मां, यहां कौन बैठा है ?"

मान्यूलिखा लड़खड़ाते कदमों से चल कर पलंग के पैताने पर बैठ गयी और सिसकने लगी।

"मेरी बच्ची ! हाय मेरी बच्ची ! मेरे तो करम फूट गये ..क्या करूं ? हम तो मुंह दिखाने लायक नहीं रहे !"

"दादी मां, चुप हो जाओ !" ओलेस्या ने दयनीय भाव से अभ्यर्थना की। उसका स्वर एक गहरी व्यथा में डूबा था।

मैं झिझकता हुआ ओलेस्या के पलंग के पास सरक आया। किसी बीमार व्यक्ति के सम्मुख अपने स्वस्थ शरीर के प्रति जो लज्जा उत्पन्न होती है, वही मैं भी महसूस कर रहा था। संकोच में गड़ा हुआ मैं बेवकूफ सा उसके सामने खड़ा रहा।

"ओलेस्या, देखो, मैं हूं," मैंने धीमे स्वर से कहा। 'अभी सीधा गांव से आ रहा हूं। सुबह शहर चला गया था। कैसी तबियत है, ओलेस्या ?" अपना मुंह तकिये से उठाये बिना उसने अपनी बांह पीछे की ओर पसार दी, मानो वह हवा में कुछ टटोल रही हो। मैं उसका भाव समझ गया और उसका गर्म हाथ अपने दोनों हाथों में समेट लिया। दो बड़े-बड़े नीले दाग—एक कलाई के ऊपर और दूसरा कुहनी के ऊपर—उसकी सफेद कोमल त्वचा पर चमक रहे थे।

"प्यारे ..." ओलेस्या के शब्द बड़ी कठिनाई से बाहर निकल रहे थे। "मैं तुम्हें देखना चाहती हूं ... किन्तु देख नहीं पाती। उन्होंने मेरा चेहरा ... बिगाड़ दिया है। वही चेहरा—जो तुम्हें अच्छा लगता था। अच्छा लगता था न ? मुझे यह बात हमेशा सुख पहुंचाती थी। किन्तु अब ... अब तुम मुझे देखकर नफरत से नाक सिकोड़ लोगे ... इसीलिए ... मैं ... नहीं चाहती कि अब तुम मेरा मुंह कभी देखो ...।"

"ओलेस्या, मुझे माफ कर दो।" मैंने झुक कर उसके कान में कहा।

उसने बुखार में तपते अपने हाथ से मेरा हाथ जोर से पकड़ लिया।

"कैसी बात करते हो प्यारे ... क्या कभी ऐसे कहा जाता है ? तुम्हें इस तरह की बात सोचते हुए शर्म भी नहीं आती ! क्या यह तुम्हारा दोष है ? मूर्ख तो मैं हूं जो अपने हाथों से यह आफत मोल ले ली। नहीं प्यारे, तुम नाहक अपने को दोष मत दो।"

"ओलेस्या, एक बात कहूं ? किन्तु पहले वचन दो कि जो मैं कहूंगा, वह मानोगी।"

"वचन देती हूं ... तुम्हारी बात सर आंखों पर ..."

"मुझे डॉक्टर को बुलाने के लिए अपनी अनुमति दे दो। तुम चाहे उसकी बात न मानना, किन्तु तुम 'हां' कर दो। अगर तुम्हारा मन न हो तो मेरी खातिर ही सही ..."

"मुझे अपनी चाल में फंसा लिया न ? नहीं प्यारे ... मैं ऐसा नहीं कर सकती। मुझे अपना वचन वापिस लेने दो। अगर मैं मौत के किनारे भी बैठी हूं, तो भी डॉक्टर को अपने पास न फटकने दूंगी। किन्तु मुझे तो कोई बीमारी ही नहीं है—बेकार डॉक्टर को बुलाने से क्या लाभ ? जरा डर गयी थी, और कोई बात नहीं है। रात तक ठीक हो जाऊंगी। अगर ठीक न भी हुई, तो दादी घाटी के फूलों का सत या चाय में रसभरी घोल कर दे देंगी, उससे ठीक हो जाऊंगी। डॉक्टर आकर क्या करेगा ? तुम्हीं तो मेरे सबसे बड़े डॉक्टर हो। देखो, तुम्हारे यहां आने से ही मेरी पीड़ा कम हो गयी है। केवल मन में एक साध बाकी है, तुम्हें एक नजर देख लूं। लेकिन डर लगता है ..."

धीरे से मैंने उसका सिर तकिये से उठाया। बुखार में उसका चेहरा तप रहा था, काली आंखों में एक अस्वभाविक सी चमक थी, सूखे पपड़ाये होंठ कांप रहे थे। उसके चेहरे और गले पर चोट के लाल निशान उभर आये थे। आंखों के नीचे और माथे पर काले घाव दिखायी दे रहे थे।

"मेरी ओर मत देखो। इस भद्दे चेहरे को देखकर क्या करोगे !" उसने याचना भरे स्वर में मुझसे कहा और अपने हाथों से मेरी आंखों को बन्द करने की चेष्टा करने लगी।

मेरा हृदय करुणा से छलछला उठा। मैंने अपने होंठ उसके हाथ पर, जो कम्बल पर निर्जीव, निढ़ाल सा पड़ा था, रख दिये और उसे अपने चुम्बनों से ढंक दिया। पहले जब कभी मैं उसके हाथों को चूमने लगता था, तो वह शरमा कर उन्हें खींच लेती थी। किन्तु अब उसने अपने हाथ को मेरे होठों से नहीं हटाया और दूसरे हाथ से वह धीरे-धीरे मेरे गाल सहलाने लगी।

"क्या तुम्हें सब पता चल गया ?" उसने दबे स्वर में मुझसे पूछा।

मैंने 'हां' कह कर सिर हिला दिया। मिशचेन्को ने मुझे सब बातें नहीं बतायी थीं, किन्तु ओलेस्या के मुंह से उस दुर्घटना के सम्बंध में कुछ भी कहल-

वाने से उसे कितनी पीड़ा पहुंचेगी, यह मैं जानता था। किन्तु उसके अपमान की बात याद आते ही मेरा खून खौलने लगा।

"काश, उस वक्त मैं वहां मौजूद होता! अगर मैं वहां होता तो... तो..." मैं मुट्ठियां तान कर जोर-जोर से चिल्लाया। "ऐसा मत कहो। सब ठीक हो जायगा। क्रोध मत करो, प्यारे!" ओलेस्या ने विनीत भाव से मुझे बीच में ही टोक दिया।

मेरा गला रुंध आया। आंसुओं से आंखें जलने लगीं। उसके कंधों में सिर छिपा कर मैं फफक-फफक कर रोने लगा। हिचकियों से मेरा सारा शरीर कांप उठता था।

"तुम रो रहे हो?" उसका स्वर विस्मय, करुणा और सहानुभूति से भर उठा। "प्यारे, नाहक अपना जी छोटा न करो। अपने को पीड़ा देने से क्या लाभ? हम दोनों को ये चन्द आखिरी दिन हंसी-खुशी में बिता देने चाहिएं—तब हमें एक-दूसरे से बिदा लेने में दुःख नहीं होगा।"

मैंने आश्चर्य में अपना सिर ऊपर उठाया। एक विचित्र सी आशंका ने मुझे आ दबोचा।

"आखिरी दिन ... आखिरी क्यों? भला हम एक दूसरे से जुदा क्यों होंगे?"

कुछ देर तक आंखें मूंदे वह चुपचाप लेटी रही।

"हमें जुदा होना ही पड़ेगा, वान्या!" उसके स्वर में संशय की कोई छाया नहीं थी। "हम ज्यादा दिन यहां नहीं ठहर सकते। जब मैं स्वस्थ हो जाऊंगी तो हम यहां से चल पड़ेंगे।"

"क्या तुम्हें किसी का डर है?"

"नहीं प्यारे वान्या, मैं आज तक किसी से नहीं डरी और न कभी डरूंगी। किन्तु हम लोगों को अपराध करने का मौका क्यों दें? तुम्हें शायद मालूम नहीं—उन लोगों के व्यवहार ने मुझे इतना क्रुद्ध बना दिया था कि मैं गुस्से में उन्हें शाप दे बैठी। अब यदि उन पर कोई विपत्ति पड़ेगी, तो वे हमें ही दोष देंगे। मवेशी मरेंगे, तो हमारा दोष, कहीं आग लग जाय, तो हमारा दोष! जरा-जरा सी बात पर वे हमें लाञ्छित करेंगे। क्यों, यह बात ठीक है न, दादी मां?" उसने अपनी आवाज तनिक ऊंची करके कहा।

"क्या कहा बेटी, मैं सुन नहीं सकी?" मान्यूलिखा पास खिसक आयी, हथेली को गोल करके कान पर रख दिया और प्रश्नयुक्त दृष्टि से ओलेस्या की ओर देखने लगी।

"मैं कह रही थी दादी मां, कि अब गांव में जरा सी भी कोई बात हो जाए, दोष हमारे मत्थे ही मढ़ा जायेगा।"

"यह तो होगा ही बेटी। गरीबों पर तो उंगली सब ही उठाते हैं। ये मूर्ख हमें शान्ति से थोड़े ही रहने देंगे—कोई न कोई उपद्रव खड़ा करते रहेंगे। मुझे गांव से भी तो इसी तरह बाहर निकाला था—याद नहीं? मैंने एक खरदिमाग औरत को जरा सी धमकी दे दी। बात आयी-गयी हो गयी। संयोग-वश उसके बच्चे की मृत्यु हो गयी। भगवान जानता है, उसकी मृत्यु का मेरी धमकी से कोई सम्बंध नहीं था। लेकिन इतनी अक्ल कहां है उन लोगों में? मार-मार कर मुझे गांव से बाहर खदेड़ कर ही दम लिया। नासपीटे कहीं के! उन्होंने मुझ पर पत्थर बरसाने शुरू कर दिये। उन दिनों तुम दूध पीती बच्ची थीं। 'मुझे चाहे कितने पत्थर मार लो, किन्तु बेचारी बच्ची ने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है?' मैंने मन-ही-मन सोचा। तुम नहीं जानती कि तुम्हें बचाने के लिए मुझे कितनी तकलीफ उठानी पड़ी। ये लोग सब-के-सब जंगली और बर्बर हैं—दया-धर्म तो इन्हें छू तक नहीं गया है। इनमें से हर आदमी को फांसी पर चढ़ा देना चाहिए, तब इन्हें पता चलेगा!"

"किन्तु तुम जाओगी कहां? कहीं भी तुम्हारे सगे-सम्बंधी नहीं हैं, जो तुम्हें आश्रय दे सकें। इसके अलावा किसी नयी जगह पर घर बसाने के लिए काफी रुपया चाहिए।" मैंने कहा।

"कुछ न कुछ इन्तजाम हो ही जायेगा," ओलेस्या ने मेरी आपत्तियों पर कोई ध्यान नहीं दिया। "दादी मां ने जरूर कुछ धन जोड़ा होगा। इसी दिन के लिए तो वह काम आयेगा।"

"उसे तुम धन कहती हो?" मान्यूलिखा का स्वर कटुता से भर गया। वह ओलेस्या के पलंग से उठ कर वापिस अपनी जगह जा बैठी। "धन-वन कुछ नहीं है बेटी, आंसुओं से भीगे हुए मुट्ठी भर कोपेक हैं, वही हमारी सम्पत्ति है, हमारा सर्वस्व है।"

"ओलेस्या, तुम्हें मेरी कोई चिन्ता नहीं। तुमने यह कभी नहीं सोचा कि मैं तुम्हारे बिना क्या करूंगा?" यह क्रूर और कटु उलाहना मेरे मुंह से अनायास निकल गया।

वह बिस्तर पर बैठ गयी। मान्यूलिखा की उपस्थिति की कोई चिन्ता किये बिना उसने मेरा सर अपनी बांहों में घेर लिया और मेरे माथे और गालों को बार-बार चूमने लगी।

"प्यारे, सब से भारी चिन्ता तो तुम्हारी है। किन्तु भाग्य ने हमारे रास्ते एक-दूसरे से अलग कर रखे हैं, जो शायद कभी न मिल सकेंगे। याद है, मैंने तुम्हारे भाग्य के नाम पर ताश के पत्ते खोले थे? जैसा उन्होंने मुझे बताया था, हू-ब-हू वही बातें एक के बाद एक सच होती गयीं। हमारे भाग्य में यह नहीं

लिखा है कि एक-दूसरे के संग रहकर हम सुखी हो सकें। क्या तुम नहीं जानते कि यदि मुझे इसका बोध न होता तो भला मैं किसी से डरने वाली थी ?"

"तुम फिर भाग्य का पचड़ा ले बैठीं !" मैं अपना धैर्य खो बैठा। "मैंने न कभी भाग्य पर विश्वास किया है, और न कभी करूंगा !"

"देखो, मैं हाथ जोड़ती हूं, ऐसे अपशब्द मुंह से न निकालो !" उसने धीरे से बुदबुदाते हुए कहा। "मुझे अपनी चिन्ता नहीं है, तुम्हारे ऊपर कोई संकट न आ जाए, इसकी आशंका हर दम बनी रहती है। खैर, छोड़ो अब इस बात को।"

मैंने उसे बहुतेरा समझाया-बुझाया, किन्तु उसने मेरी एक न सुनी। मैंने उसे विश्वास दिलाया कि भाग्य अथवा निर्दयी व्यक्तियों की क्रूरता से हमारा बाल भी बांका न होगा, पर वह मेरी बातों को न सुनकर केवल सिर हिलाती जाती थी और बार-बार मेरे हाथों को चूमती जाती थी।

"नहीं, मैं सब जानती हूं। हमें दुःख के अलावा और कुछ नहीं मिलेगा।" वह अपनी बात पर अड़ी रही।

अंधविश्वासों के कारण उसके मन में जो भय और वहम उत्पन्न हो गया था, उसे देखकर मैं स्तम्भित सा रह गया।

"क्या तुम मुझे यह नहीं बताओगी कि तुमने कौन से दिन जाने का निश्चय किया है ?" हताश होकर मैंने उससे पूछा।

वह कुछ चिन्ता-मग्न सी हो गयी। कुछ देर बाद एक फीकी-सी मुस्करा-हट उसके होठों पर खिंच आयी।

"मैं तुम्हें एक छोटी सी कहानी सुनाने जा रही हूं। एक दिन जंगल में एक भेड़िये ने खरगोश को देखा। 'मैं तुम्हें अभी खा जाऊंगा।' भेडिये ने खरगोश से कहा। 'मुझे प्राण-दान दीजिए, मैं जीवन भर आपका कृतज्ञ रहूंगा। मैं जिन्दा रहना चाहता हूं। मेरे बच्चे घर पर मेरा इंतजार कर रहे होंगे।' खरगोश ने गिड़गिड़ा कर याचना की। किन्तु भेड़िये ने उसकी एक न सुनी और अपनी जिद पर अड़ा रहा। 'अच्छा, मुझे तीन दिन की मुहलत दे दीजिए, उसके बाद आप मुझे खुशी से खा लीजियेगा।' खरगोश ने कहा। भेड़िये ने उसकी प्रार्थना स्वीकार कर ली। तीन दिन तक वह खरगोश पर अपनी निगरानी रखता रहा। पहला दिन बीता, दूसरा दिन आया और आखिर तीसरे दिन भेड़िये ने खरगोश को बुलाकर कहा : 'अब तुम मरने के लिए तैयार हो जाओ। मैं तुम्हें खानेवाला हूं !' भेड़िये की यह बात सुनकर खरगोश फूट-फूटकर रोने लगा। 'तुम्हें मुझे एकदम खा लेना चाहिए था। ये तीन दिन तक कितनी भारी यातना सहकर मैंने गुजारे हैं, वह केवल मैं ही जानता हूं।

शायद यह यातना मृत्यु से भी अधिक भयंकर थी।' प्यारे, तुम इस बात को तो मानोगे कि खरगोश की बात में एक बहुत बड़ा सत्य छिपा था ?"

मैं कुछ नहीं बोला। ओलेस्या के बिना मेरा जीवन कितना सूना और एकाकी रह जायगा, इसकी सिर्फ कल्पना करने से ही मन उदास हो गया था। ओलेस्या पलंग पर बैठ गयी। वह बहुत गम्भीर दिखायी दे रही थी।

"वान्या, एक बात पूछूं ?" उसने कहा। "क्या तुम्हें इन क्षणों में---जब हम एक-दूसरे के संग होते थे — कभी सुख मिला था ?"

"ओलेस्या, यह कैसा प्रश्न है ?"

"जरा ठहरो। क्या तुम्हें कभी यह सोचकर दुःख हुआ था कि तुम मुझ से मिले ही क्यों ? मेरे संग रहते हुए तुमने कभी किसी अन्य स्त्री का अभाव महसूस किया था ?"

"एक पल के लिए भी नहीं। न केवल तुम्हारे संग, बल्कि जब मैं अकेला होता था, तो भी मैं किसी और की बात नहीं सोच पाता था — सिवाय तुम्हारे !"

"क्या कभी तुमने मेरे प्रति द्वेष-भावना महसूस की है ? क्या तुमने मेरी किसी बात को कभी नापसंद किया है ? क्या कभी तुम मेरे संसर्ग से ऊबे हो ?"

"कभी नहीं, ओलेस्या !"

उसने अपने हाथ मेरे कंधों पर रख दिये। वह मेरी आंखों को देख रही थी — अपनी उन आखों से, जिनमें अनिर्वचनीय प्यार भरा था।

"अब मुझे पक्का विश्वास हो गया कि कभी तुम्हारे हृदय में मेरे प्रति क्रोध अथवा रोष की भावना उत्पन्न नहीं होगी।" उसने ऐसे दृढ़ और असंदिग्ध स्वर में कहा मानो वह मेरा भविष्य मेरी आंखों में पढ़ रही हो। "मुझ से जुदा होने के बाद तुम कुछ दिनों तक बहुत उदास रहोगे, तुम्हें अपना दुःख असह्य लगेगा। तुम रोओगे, आंसू बहाओगे, फिर भी तुम्हारी आत्मा को शान्ति नहीं मिलेगी। किन्तु कुछ समय बाद मेरी स्मृति धुंधली होती जायगी और तुम मुझे धीरे-धीरे भूलने लगोगे। फिर एक ऐसा समय भी आयेगा जब तुम कोई दुःख महसूस किये बिना मुझे याद कर सकोगे और मेरी स्मृति तुम्हारे हृदय में हल्की सी खुशी भर देगी।"

उसने अपना सिर नीचे झुकाकर तकिये पर टिका लिया।

"अब तुम जाओ, प्यारे," उसने धीमे स्वर में कहा। "अपने घर लौट जाओ। मैं जरा थक गयी हूं। जरा ठहरो, जाने से पहले एक बार मुझे चूमोगे नहीं ? यहां ... पास आओ। घबराओ नहीं, दादी मां कुछ न कहेंगी। क्यों दादी मां, तुम बुरा तो नहीं मानोगी ?"

"अच्छा, ... अच्छा ... अच्छी तरह से विदा ले लो, मुझे भला क्यों एत-राज होने लगा ? मुझ से छिपाने से क्या लाभ ? मैं तो बहुत दिनों से जानती थी !" दादी ने कहा।

"यहां चूमो, यहां, और यहां ..." ओलेस्या अंगुली से अपनी आंखों, गालों और मुंह की ओर इशारा कर रही थी।

"ओलेस्या, तुम तो मुझ से ऐसे विदा ले रही हो जैसे तुम मुझ से अन्तिम बार मिल रही हो और फिर कभी मिलोगी ही नहीं !" मैं ओलेस्या के विचित्र व्यवहार को देखकर भयभीत सा हो गया था।

"प्यारे, मैं नहीं जानती। मैं कुछ नहीं जानती। अच्छा, अब तुम शान्ति से घर लौट सकते हो। किन्तु नहीं.. एक पल ठहरो। जरा सुनो। जानते हो मैं किसलिए दुखी हूं ?" उसने बहुत ही हौले से कहा। "मैं तुम्हारे बच्चे की मां न बन सकी। काश, यदि ऐसा हो पाता ..."

मैं मान्यूलिखा के संग झोपड़ी से बाहर आ गया। ऊपर देखा — आधे आकाश को कटे-फटे किनारों वाले एक विशालकाय बादल ने घेर लिया था, किन्तु पश्चिम में डूबता हुआ सूर्य अब भी चमक रहा था। विरला अंधकार, बुझी-बुझी सी धूप, आलोक और अंधकार का उदास, विषादपूर्ण सा मेल ... लगता था मानो इस शान्ति के पीछे एक बहुत ही भयावह और डरावनी छाया छिपी है। बुढ़िया ने आंखों पर हाथ की छाया देकर आकाश की ओर देखा और भेदभरी मुद्रा में सिर हिलाने लगी।

"आज पेरीब्रोद पर मूसलाधार बारिश पड़ेगी।" उसने विश्वास के साथ कहा। "ओले भी पड़ सकते हैं। ईश्वर ही बचाए !"

चौदह

पेरीब्रोद पहुंचते देर न हुई कि हवा का तूफानी झक्कड़ चल पड़ा। धूल के बादल सड़क पर उड़ने लगे। बारिश की पहली बौछार के भारी थपेड़ों से धरती सिहरने लगी।

मान्यूलिखा का अनुमान सही निकला। गर्मी के उस झुलसते-उमसते दिन सुबह से आकाश में जो श्यामल मेघ घिरते रहे थे, शाम होते ही वे अचानक पेरीब्रोद पर पूरे गर्जन-तर्जन के संग फट पड़े। आकाश बार-बार बिजली से चमक उठता था। बादलों की कर्णभेदी गड़गड़ाहट मेरे कमरे की खिड़कियों को झनझना जाती थी। रात के आठ बजे के करीब तूफान की प्रचण्डता तनिक कम हुई। किन्तु कुछ देर बाद वह नये जोश खरोश के साथ चलने लगा। अचानक मेरे पुराने घर की छत और दीवारों को कोई जोर जोर से खटखटाने

लगा। मैं कारण जानने के लिए खिड़की की ओर भागा। अखरोटों जितने बड़े-बड़े ओले धरती से टकरा कर ऊपर की ओर उछल रहे थे। मेरे घर के सामने ही शहतूत का वृक्ष नंगी शाखाएं फैलाए खड़ा था। ओलों की तेज बौछार से उसके सारे पत्ते एक-एक करके झड़ गये थे। यर्मोला की काली छाया नीचे दिखलायी दी। वह रसोई से बाहर निकल कर खिड़कियां बन्द कर रहा था। ओलों से अपने को बचाने के लिए उसने कोट से अपने सिर और कंधों को ढक लिया था। किन्तु यर्मोला देर से आया था। बर्फ के एक बड़े लोंदे के भयंकर आघात से खिड़की के शीशे टूटकर चूर-चूर हो गये थे और उसके कुछ टुकड़े मेरे कमरे के फर्श पर बिखर आए थे।

थकान के मारे मेरा सारा शरीर टूट रहा था। कमरे में घुसते ही बिना कपड़े उतारे मैं पलंग पर लेट गया। मुझे मालूम था कि मैं सो नहीं सकूंगा। बेचैनी से सारी रात बिस्तर पर करवटें लेते हुए बिता दूंगा। मैंने यह सोचकर अपने कपड़े भी नहीं उतारे कि रात को नींद न आने पर मैं समय काटने के लिए कमरे में चहल कदमी करता रहूंगा। किन्तु एक बड़ी विचित्र बात हुई। मैंने क्षण भर के लिए ही आंखें मूंदी होंगी, किन्तु जागने पर देखा कि खिड़की पर सूरज की किरणें चमक रही हैं और धूल के अनगिनत सुनहरे कण धूप में झिलमिला रहे हैं।

यर्मोला मेरे सिरहाने खड़ा था। वह शायद काफी देर से बड़ी अधीरता से मेरे जागने की प्रतीक्षा कर रहा था। उसका चेहरा एक गहरी चिन्ता में डूबा था।

"हजूर," उसने संत्रस्त भाव से कहा। "हजूर, आपको यहां से फौरन चल देना चाहिए।"

मैंने अपने पांव पलंग से नीचे रख दिये और चकित-मुद्रा में उसकी ओर देखने लगा।

"चला जाऊं? कहां चला जाऊं? क्यों? यर्मोला, तुम्हारे होश-हवास तो ठीक हैं?"

"हां, बिल्कुल ठीक हैं हजूर," वह क्रोध में गुर्राया। "आपको मालूम है, कल रात ओलों ने कितना नुकसान किया? आधी से ज्यादा फसल बिलकुल बरबाद हो गयी है—देखकर लगता है मानो कोई उसे रौंदकर चला गया है। कानामैविसम, कोजयोल, मुट, प्रोकोपयुक्त, गोर्डी ओलफिर—कोई ऐसा किसान नहीं है जिसकी फसल बची रह गयी हो। आखिर यह उस बदमाश डायन की ही तो कारस्तानी है! भगवान करे, उसका सत्यानास हो!"

अचानक मुझे पिछले दिन की घटना स्मरण हो आयी। ओलेस्या ने कल गिरजे के पास जो धमकी दी थी, यर्मोला का संकेत उसी ओर था।

"गांव वाले गुस्से में पागल हो रहे हैं," यर्मोला ने कहा। "सुबह से वे शराब पी रहे हैं और नशे में धुत होकर जोर-जोर से चिल्ला रहे हैं। हजूर, उन्होंने आपके बारे में भी कुछ बुरी-भली बातें कही हैं। हमारे गांव के लोगों को तो आप जानते ही हैं। डायनों को वे जो भी सजा दें, अच्छा है। किन्तु इससे पहले कि वे आपके ऊपर अंगुली उठाएं, आपको यहां से जल्द से जल्द चल देना चाहिए।"

ओलेस्या का भय आखिर निराधार नहीं था। उसे और मान्यूलिखा को इस खतरे की चेतावनी मुझे तुरन्त दे देनी चाहिए, वरना न जाने गांव के ये लोग क्या कर बैठें ? मैंने शीघ्रता से कपड़े पहने, मुंह पर पानी छिड़क लिया और आध घंटे बाद तेजी से घोड़ा दौड़ाता हुआ 'पिशाच-कुटी' की ओर चल पड़ा।

ज्यों ज्यों झोपड़ी निकट आने लगी, मेरा दिल एक अनिश्चित भय और चिन्ता से धड़कने लगा। मुझे लग रहा था मानो कोई नया, अप्रत्याशित दुख का पहाड़ मुझ पर गिरने वाला है। रेतीली ढलान पर उतरता हुआ मैं भागने लगा और झोपड़ी तक पहुंचकर ही दम लिया। झोपड़ी की खिड़कियां खुली हुई थीं और अधखुले दरवाजे से उसके भीतर का भाग दिखायी दे रहा था।

"हे भगवान, यह मैं क्या देख रहा हूं!" मैं धीरे से बुदबुदाया। मेरा दिल डूबने लगा।

झोपड़ी खाली पड़ी थी। भीतर के कमरे में कूड़ा-कचरा बिखरा हुआ था, जिसे देखकर लगता था मानो उन्हें अचानक—बहुत जल्दी में—वहां से प्रस्थान करना पड़ा था। फर्श पर फटे चीथड़ों का ढेर लगा था। लकड़ी का पलंग एक कोने में खड़ा हुआ था।

मेरा दिल भारी हो गया। आंसू उमड़ उमड़ कर आने लगे। झोपड़ी से बाहर जाने ही वाला था कि मेरी आंखें अचानक एक चमकीली सी चीज पर जा पड़ीं, जो खिड़की के एक कोने से लटक रही थी। लगता था मानो उसे जानबूझ कर वहां लटकाया गया हो। वह सस्ते लाल दानों की एक माला थी। पोलेस्ये में ये दाने "मूंगा" कहलाते थे। ओलेस्या और उसके कोमल, उदार प्रेम की जो एकमात्र निशानी मेरे पास बची रह गयी, वह थी यह लाल मूंगों की माला...

१८९८

रात की ड्यूटी

नम्बर आठ कम्पनी की बैरको मे काफी देर पहले हाजरी ली जा चुकी थी। प्रार्थना समाप्त हुए भी काफी समय बीत चुका था। दस बज चुके थे, किन्तु किसी को भी कपडे बदलने की जल्दी नही थी। अगले दिन रविवार था और ड्यूटी पर तैनात लोगो के अलावा रविवार के दिन बाकी सब लोग घटे भर बाद उठते थे।

अभी कुछ देर पहले सैनिक लूका मर्कूलोव अपनी ड्यूटी बजाने गया था। ओवरकोट और टोपी पहने, एक तरफ सगीन लटकाए, रात के दो बजे तक उसे बैरकों के चक्कर काटने थे। ड्यूटी पर होने के नाते उसे सब चीजो की देख-भाल करनी पडती थी — कही कोई वस्तु चुरा तो नही ली गयी, कोई आदमी महज जांगिया-बनियान पहनकर ही तो बाहर नही चला गया अथवा बाहर का कोई आदमी बैरको मे तो नही घुस आया, आदि। यदि गश्त लगाते हुए कोई अफसर सामने पड़ जाए तो उसे कैम्प की गति-विधि की सारी रिपोर्ट और उन सब घटनाओं का ब्योरा देना पड़ता था जो उस रात कैम्प में घटी थी।

उस रात उसकी बारी नहीं थी। किन्तु सजा के तौर पर उसे यह रात की ड्यूटी ढोनी पड़ रही थी। उसका अपराध केवल इतना था कि पिछले सोमवार को चांदमारी का अभ्यास करने के लिए वह अपने कोट पर पेटी के स्थान पर एक रस्सी बांधकर चला आया था। उसकी पेटी कोई चुरा ले गया था। पांच दिनों के अन्दर-अन्दर तीसरी बार पहरे की यह ड्यूटी उसके मत्थे मढ़ दी गयी थी। दुर्भाग्यवश हमेशा रात की ड्यूटी ही उसके पल्ले पड़ती थी, जो और भी अधिक कष्टप्रद थी।

परेड के मैदान में कवायद करते समय उसकी हालत काफी पतली हो जाया करती थी — इसलिए नहीं कि वह आलसी या लापरवाह था। अपनी ओर से कोई कोर-कसर न छोड़ने पर भी दरअसल बात यह थी कि मार्च करते हुए पैर की अंगुलियों को नीचे रखना, सारे शरीर को झटके से आगे धकेलना, बन्दूक का घोड़ा दबाते समय ऐन मौके पर सांस रोक लेना, आदि सैनिक कवायद के दुःसाध्य करतबों को सीखना उसके बलबूते के बाहर था। किन्तु इसके बावजूद सब लोग उसके चरित्र की गम्भीरता से भली भांति परिचित थे। उसकी वरदी हमेशा साफ-सुथरी रहा करती, उसके मुंह से मुश्किल से ही कभी कोई अपशब्द निकलता, कभी किसी ने उसे वोदका पीते नहीं देखा था। हां, कभी-कभार किसी महोत्सव के दिन जब सबको वोदका बांटी जाती, तो वह अवश्य पीता। अवकाश के समय वह जूते बनाता था। धीरे-धीरे, बड़ी मेहनत से वह काम करता, और एक जोड़ी जूता बनाने में उसे पूरा एक महीना लग जाता। किन्तु जूते भी ऐसे होते कि दांतों तले अंगुली दबानी पड़ती — ऊंचे, भारी और मजबूत ! सारी कम्पनी में वे 'मर्कूलोव के जूते' के नाम से प्रसिद्ध हो गये थे।

उसके चेहरे का भूरा सा खुरदरापन उसके ओवरकोट के रंग से मिलता-जुलता था। उस पर पीलेपन की मैली-मटियाली सी छाया घिरी रहती। ऐसी छाया, जो अक्सर उन किसानों के चेहरों पर दिखलायी देती है, जिन्होंने अपनी जिन्दगी का कुछ भाग अस्पताल, जेलखाने या बैरकों में बिताया हो। उसके चेहरे पर जो चीज सबसे अद्भुत और विचित्र प्रतीत होती थी वह बाहर की ओर उभरी हुई उसकी आंखें थीं — इतनी कोमल और स्वच्छ कि देखने वाला हैरत में पड़ जाता था। बच्चों की सी वे स्निग्ध आंखें एक उज्ज्वल, निर्मल आभा से चमकती रहतीं। उसके मोटे होठों से इस बात का साफ पता चल जाता कि वह एक बहुत ही सीधा-सादा व्यक्ति है। उसके ऊपरी होंठ पर दूर-दूर छितरे हुए भूरे बाल इस कदर आराम से सिमटे पड़े थे, मानो किसी ने उन्हें पानी से भिगो दिया हो।

बैरकों में शोर-गुल मच रहा था। प्रत्येक प्लैटून के क्वार्टर की दीवार पर टीन की लालटैनें टंगी थीं, जिनका धुएं से भरा, फीका, धुंधला आलोक पास

पास सटे हुए चारों लम्बे कमरों में पड़ रहा था। कमरों के बीचोंबीच लकड़ी के तख्तों की दो लम्बी कतारें थीं, जिन पर घास-फूस की चटाइयों के बिस्तर बिछा दिये गये थे। दीवारों पर लिपाई-पुताई की गयी थी और उनका निचला भाग भूरे रंग में रंगा हुआ था। लकड़ी के कठरों में दीवारों के सहारे रायफलों की सुघड़, लम्बी कतारें लगी थीं। उनके ऊपर फ्रेम में जड़े हुए कुछ चित्र और फोटो लगे थे, जो एक सैनिक के सम्पूर्ण ज्ञान और अनुभव के अत्यन्त भद्दे और भोंडे परिचायक थे।

मर्कूलोव धीरे-धीरे, मन्दगति से प्रत्येक प्लैटून के चक्कर लगा रहा था। नींद से उसकी आंखें बोझिल थीं और इतने गुल-गपाड़े के बीच भी वह अपने को बिल्कुल अकेला पा रहा था। उन लोगों के प्रति उसे ईर्ष्या होने लगी जो बैरकों के घुटे, उदास वातावरण में भी एक दूसरे से हंस-बोल रहे थे। सोने के लिए उनके पास सारी रात पड़ी थी, इसलिए वे निश्चिन्त होकर नींद के कुछ लमहे पीछे धकेल सकते थे। किन्तु यह बात रह-रह कर उसे चुभ जाती थी कि आध घंटे में ही सारी कम्पनी एक निस्तब्ध गहरी निद्रा में डूब जायेगी, कोई अपार्थिव, रहस्यमयी शक्ति कम्पनी के उन सौ आदमियों को उसके बीच से उठाकर एक अज्ञात लोक में उड़ा कर ले जायेगी, केवल एक वही जागता रह जायगा — जर्जरित, उपेक्षित, निपट अकेला।

नं० २ प्लैटून में लगभग एक दर्जन सैनिक एक-दूसरे से सटे हुए बैठे थे। लकड़ी के तख्तों से बनी हुई चारपाइयों पर वे लोग आपस में इतने घुले-मिले से पास-पास बैठे या लेटे थे कि उन्हें देखकर यकायक यह बतलाना असम्भव था कि कौन सी बांह और टांग का सम्बंध किस सिर अथवा पीठ से जुड़ा है। कभी-कभी हाथ की बनी सिगरेट का सुलगता हुआ लाल धब्बा अंधेरे में चमक उठता था। सिपाहियों के उस दल के बीचोंबीच सैनिक जामोशनिकोव, जो कम्पनी में चाचा जामोशनिकोव के नाम से प्रसिद्ध था, पांव पर पाव धरे बैठा हुआ दिखलाई दे रहा था। वह एक नाटे कद का, हंसमुख, जिंदादिल, पुराना सिपाही था। कम्पनी के सब लोग उसे बहुत चाहते थे। गाने में वह हमेशा आगे रहता और लोगों का मनोरंजन करने का कोई अवसर हाथ से नहीं जाने देता। इस समय वह कोई मनगढ़न्त कहानी सुना रहा था और आगे-पीछे डोलता हुआ हथेलियों से अपने घुटनों को मल रहा था। उसका स्वर सहज और संयत था। वह जानबूझ कर बहुत ही धीमे स्वर में बोला करता था। उसके स्वर में सदा विस्मय का भाव झलकता रहता। सिपाही स्तब्ध होकर कहानी सुन रहे थे। कभी उनमें से कोई सिपाही कहानी की किसी घटना से इतना अधिक उद्वेलित हो उठता कि बरबस उसके मुंह से प्रशंसा के शब्द फूट पड़ते।

मर्कूलोव भी उस दल के पास आकर ठहर गया और उदासीन भाव से कहानी सुनने लगा।

"अच्छा तो फिर तुर्की सुलतान ने एक बड़े कनस्तर में पौपी के बीज भर कर उसके पास भेज दिये। साथ में पत्र भी लिखा : 'महाप्रतापी जनरल स्कोवलेव, मैं आपको तीन दिन और तीन रातों की मुहलत देता हूं, जिसके दौरान में आप कनस्तर में रखे हुए सब बीजों को गिन लें। मैं आपको बतला दूं कि मेरी सेना के सैनिकों की संख्या कनस्तर में रखे हुए बीजों के बराबर है।' स्कोवलेव ने पत्र पढ़ा, लेकिन उसके चेहरे पर जरा सी भी शिकन नहीं आयी। जवाब में उसने तुर्की सुलतान को मुट्ठी भर मिर्च की फलियां भेज दीं। 'आपके पास जितने सैनिक हैं, उसके आधे भी मेरे पास नहीं,' उसने लिखा, 'उनकी संख्या इन मुट्ठी भर मिर्च की फलियों से अधिक नहीं, किन्तु जरा इन्हें चबाकर तो देखो!'"

"वाह, कैसा उस्ताद निकला!" जामोशनिकोव के पीछे से एक आवाज आयी।

दूसरे श्रोतागण भी चटखारे लेने लगे।

"हां, तो उसने कहा—जरा इन्हें चबा कर तो देखो!" जामोशनिकोव ने वही वाक्य पुनः दुहराया, मानो उस वाक्य को पीछे छोड़कर आगे बढ़ने में उसे काफी दुःख हो रहा हो। "देखा आपने—सुल्तान ने पौपी के बीजों का कनस्तर भेजा और उसके जवाब में जनरल ने मुट्ठी भर मिर्च की फलियां उसके पास भेज दीं। 'जरा इन्हें चबाकर तो देखो!' उसने कहा। हमारे जनरल स्कोवलेव ने तुर्की के उस सुल्तान से हूबहू यही बात कही थी। 'मेरे पास केवल मुट्ठी भर सिपाही हैं,' उसने कहा, 'किन्तु जरा इन्हें चबा कर तो देखो!'"

"क्या कहानी समाप्त हो गयी, जामोशनिकोव चाचा?" श्रोताओं में से किसी ने अधीर होकर डरते-डरते पूछा।

"तुझे जल्दी काहे की पड़ी है रे छोकरे?" जामोशनिकोव ने झुंझला कर कहा। "बुरा न मानना, लेकिन मैं धीरे-धीरे ही कहानी सुनाऊंगा। कहानी कहना कोई मक्खी मारने का काम थोड़े ही है!" वह कुछ देर तक चुप रहा। फिर किंचित प्रकृतस्थ होकर उसने कहानी का सूत्र आगे बढ़ाया : "हां, तो मैं कह रहा था, 'हैं तो केवल ये मुट्ठी भर, किन्तु जरा इन्हें चबा कर तो देखो!' जनरल ने कहा। तुर्की सुल्तान ने स्कोवलेव का पत्र पढ़ा और उसके उत्तर में एक और पत्र लिखा। 'आपका कल्याण इसी में है कि आप जल्द से जल्द अपनी सेना मेरे देश से हटा लें।' उसने लिखा। 'वरना मैं अपने प्रत्येक सिपाही को वोद्का का एक-एक गिलास दे दूंगा, जिसे पीकर उनके क्रोध की ज्वाला भड़क उठेगी और वे तीन दिन में ही तुर्किस्तान से आपकी सेना को बाहर खदेड़

देंगे।' किन्तु स्कोवलेव के पास इसका जवाब पहले से ही मौजूद था : 'हे, तुर्किस्तान के गौरवशाली, महाप्रतापी सुल्तान ! ऐसा पत्र लिखने की तुझे कैसे जुर्रत हुई — मुंह जले तुरुक ! क्या तू यह सोचता है कि मैं तेरी गीदड़ भभकियों में आ जाऊंगा ? क्या कहा ? वोद्का का एक एक गिलास अपने सिपाहियों को दूंगा ? अच्छा चल, मैं भी देखूंगा। मैं भी अपने सिपाहियों को तीन दिन तक भूखा रखूंगा। फिर देखना बेटा, वे तुझे तेरी सारी सेना समेत जिन्दा ही निगल जायेंगे। कुत्ते, सुअर के बच्चे — एक बार तुझे खाकर कोई तुझे बाहर निकालने का भी कष्ट नहीं करेगा। सब लोग यही समझेंगे कि कहीं लापता हो गया है !' यह सुनते ही तुर्की के सुल्तान के होश-हवास उड़ गये। वह गिड़गिड़ाता हुआ घुटनों पर गिर पड़ा और संधि की प्रार्थना करने लगा। 'आप अपनी सेना के संग वापिस लौट जाइये। मैं आपकी सेवा में दस लाख रूबल की नगद पूंजी भेंट करता हूं। कृपया एक भलेमानुस की हैसियत से मेरी इस भेंट को स्वीकार कीजिए और मुझे छोड़ दीजिए।"

जामोशनिकोव ने कुछ देर चुप रहने के बाद संक्षेप में कहा, "बस भाई, कहानी यहां खत्म होती है।" श्रोतागणों में मानो किसी ने नया जीवन फूंक दिया। सैनिकों के उस दल में हलचल की हलकी सी लहर दौड़ गयी। चारों ओर से कहानी की प्रशंसा में टीका-टिप्पणियां सुनाई देने लगीं।

"खूब मजा चखाया ..."

"बच्चू को आटे-दाल का भाव पता चल गया होगा।"

"क्या पते की बात कही, 'तीन दिन तक मैं अपने सिपाहियों को भोजन नहीं दूंगा, और वे तुझे जिन्दा ही निगल जाएंगे ! कुत्ता कहीं का ...' चाचा जामोशनिकोव, हमारे जनरल ने यही कहा था न ? क्यों ठीक है न, चाचा जामोशनिकोव ?"

जामोशनिकोव ने बड़ी तत्परता से जनरल का कथन अक्षरशः दुहरा दिया।

"अरे, हमारे सामने वे कभी नहीं टिक सकते।" घमन्ड से भरी कुछ आवाजें आयीं।

"रूसी तो उनके नाकों चने चबा देंगे।"

"खूब अच्छी तरह सोच लो भाई, हमारे संग लड़ना हंसी-खेल नहीं है !"

"हां — फिर बाद में कुछ मत कहना। हमारे खिलाफ मैदान में उतरने से पहले भरपेट भोजन कर लेना और भगवान का नाम जप लेना।"

जामोशनिकोव के पास बैठा हुआ कोई सिपाही सिगरेट पी रहा था। जामोशनिकोव ने हाथ बढ़ाकर लापरवाही से कहा, "जरा एक कश इधर भी ... बिना सिगरेट के जान निकली जा रही है।"

वह एक के बाद एक गहरे कश लेता हुआ जोर से अपने दोनों नथुनों के बाहर सीधी लकीर में धुआं छोड़ने लगा। प्रत्येक कश के संग सिगरेट की लाल बिन्दी सुलग उठती, जिसके प्रकाश में उसका चेहरा — विशेषकर उसकी ठुड्डी और होंठ — एक क्षण के लिए आलोकित हो उठता और फिर एकदम अंधेरे में गायब हो जाता। अंधेरे में एक हाथ उसके मुंह में दबी हुई सिगरेट की ओर बढ़ा और किसी ने याचना भरे स्वर में कहा, "चाचा जामोशनिकोव, बहुत हो गया, अब थोड़ी सी सिगरेट मेरे लिए भी छोड़ दो न!"

"कुछ सिगरेट पीने का काम करेंगे, कुछ थूकने का — मेहनत का सही बंटवारा होना चाहिए, समझे!" जामोशनिकोव ने कड़े स्वर में उत्तर दिया।

सिपाही हंसने लगे।

"यह जामोशनिकोव भी एक नम्बर का हाजिर जवाब है!" जामोशनिकोव दूने उत्साह से हंसी-मजाक करने लगा।

"जानते हो आजकल सिगरेट कैसे पिलाई जाती है? तम्बाकू लपेटने के लिए कागज तुम दो, और तम्बाकू भी तुम्हारा ही ठीक रहेगा। फिर हम दोनों सिगरेट पियेंगे, समझ गये ?"

यह कह कर उसने सिगरेट का टोटा उस सिपाही को दे दिया जिसने सिगरेट के लिए हाथ बढ़ाया था, फिर एक तरफ मुड़ कर उसने थूका और एक सिपाही की पीठ का सहारा लेकर बैठ गया। "छोकरों! मुझे एक और कहानी याद आ रही है," उसने कहा। "शायद आपने सुनी हो। इस कहानी में एक सिपाही लोहे के पंजे पहन कर एक राजकुमारी से मिलने के लिए किले के बुर्ज पर चढ़ जाता है। आपने अगर पहले से ही यह कहानी सुन रखी हो, तो मैं नहीं सुनाऊंगा।"

"एकदम सुना डालो भाई! हम में से किसी ने नहीं सुनी है।"

"अच्छा तो सुनो ... कहानी इस तरह शुरू होती है। बहुत अर्सा पहले याशका नाम का एक सैनिक रहा करता था। बड़ा अद्भुत आदमी था यह याशका ..."

थका-मांदा सा मर्कूलोव आगे बढ़ गया। कोई और दिन होता तो वह भी बड़ी खुशी से जामोशनिकोव की कहानियों को सुनता, किन्तु उस रात सब लोगों को इतनी उत्सुकता से जामोशनिकोव की नीरस और मनगढ़न्त कहानियों को सुनते देख उसे काफी आश्चर्य हुआ।

"इस तरह बैठे हैं, मानो यह भूल गये हों कि उन्हें सोना भी है — हरामी कहीं के!" मर्कूलोव क्रोध में भुनभुनाने लगा। "ठीक भी है, खर्राटे लेने के लिए सारी रात जो पड़ी है।"

वह खिड़की के सामने आ खड़ा हुआ। खिड़की के शीशों पर धुंध जम गयी थी और कभी-कभी पानी की बूंदे नीचे टपक पड़ती थीं। अपनी कोट की बांह से उसने शीशे को पोंछ दिया और अपना माथा उस पर टिकाकर दोनों हाथों से अपनी आंखें भींच लीं ताकि लैम्प की रोशनी उन पर न पड़े। वह पतझड़ की एक अंधेरी, बरसाती रात थी। खिड़की से बाहर झांकती प्रकाश की शहतीर ने एक लम्बा टेढ़ा-मेढ़ा सा समकोण चतुर्भुज खींच डाला था, जिसके बीचोंबीच गन्दे पानी के गड्ढे पर हल्की फुलकी उर्मियां उठ रहीं थीं। कहीं बहुत दूर नीचे की ओर एक छोटे से कस्बे की बत्तियों का मद्धिम आलोक झिलमिला उठता था; लगता था, मानो पृथ्वी के अन्तिम छोर पर ये बत्तियां जल रही हों। बारिश की उस अंधेरी रात में उसकी आंखें इससे अधिक और कुछ भी नहीं देख पा रहीं थीं।

खिड़की के पास कुछ देर खड़ा रह कर मर्कूलोव प्लैटून ४ का चक्कर लगाने निकल पड़ा और बैरकों के दूसरी ओर खिड़कियों के सामने मन्द-गति से चहलकदमी करने लगा। उसने देखा कि लकड़ी के तख्तों से बने पलंगों की लम्बी कतार के एक कोने में दो सैनिक — पन्चुक और कोवल — बैठे हुए अपने पांव हिला रहे थे। उनके सामने एक बक्सा रखा हुआ था, जिसके कुन्डों पर लगा हुआ एक ताला नीचे लटक रहा था। बक्से पर जौ की रोटी के भारी-भरकम टुकड़े, प्याज की पांच गांठें, भुना हुआ सुअर का मांस और एक साफ चीथड़े पर मोटा कुटा हुआ नमक रखा था। पन्चुक और कोवल दोनों ही खाने में हातिम थे —शायद यही कारण था कि मित्रता की एक मूक और विचित्र कड़ी उन दोनों को एक दूसरे से बांधे रखती थी। प्रत्येक सैनिक को तीन पाउण्ड रोटी का राशन मिलता था, किन्तु उससे शायद उनकी तृप्ति नहीं होती थी। कोई दिन ऐसा न जाता था जब वे अपने राशन के अलावा दूसरे सैनिकों से कुछ और रोटियां न खरीद लें। अक्सर शाम को वे एक संग बैठ जाया करते थे और चुपचाप, बिना एक दूसरे से कोई बातचीत किये, इन रोटियों को खाया करते थे। दोनों ही खाते-पीते सम्पन्न घरानों से आए थे और हर महीने एक या कभी-कभी दो रूबल घर से उनके नाम आ जाया करते थे।

वे चाकू से सुअर के मांस को सिगरेट के कागजों की तरह पतले महीन कतलों में काट रहे थे। चाकू काफी छोटा था और उसकी धार को शायद इतनी बार तेज किया गया था कि वह अब बिल्कुल मुड़ गयी थी। गोश्त के टुकड़ों पर नमक छिड़क दिया गया था और रोटी के दो टुकड़ों के बीच उन्हें दबाकर 'सैन्डविच' बना ली गयी थी, जिसे वे चुपचाप, धीरे-धीरे, मजे से पांव हिलाते हुए चबा रहे थे।

मर्कूलोव उनके सामने आकर ठिठक गया और विरक्त भाव से उन दोनों को देखने लगा। सुअर के भुने हुए मांस को देख कर उसके मुंह में पानी भर आया, किन्तु मांगने का साहस नहीं हुआ। वह जानता था कि वे साफ इन्कार कर देंगे और उसकी खिल्ली उड़ाने में भी नहीं चूकेंगे। फिर भी उससे न रहा गया और कांपते हुए अभ्यर्थना भरे स्वर में उसने कहा, "जी भर के खाओ, दोस्तो!"

"खाएंगे क्यों नहीं—किसी का दिया हुआ तो खा नहीं रहे। तुम खड़े-ताकते रहो।" कोवल ने उत्तर दिया। उसके स्वर में व्यंग्य का तनिक भी आभास नहीं था। बिना मर्कूलोव की ओर आंखें उठाए उसने चाकू से प्याज का छिलका उतार कर चार भागों में काट दिया और एक टुकड़े को नमक में डुबो कर चटखारे ले ले कर चबाने लगा। पन्चुक ने कुछ नहीं कहा, सिर्फ मर्कूलोव के चेहरे को अपनी अलसायी, भावहीन आंखों से देखता रहा। वह चबड़-चबड़ करता हुआ मुंह हिला रहा था। उसकी मांस-पेशियां तनी हुई थीं और गालों की भारी, विशालकाय हड्डियों पर उलझी हुई नसों की गांठें उभर आयी थीं।

कुछ मिनटों तक तीनों खामोश रहे। आखिर कुछ देर बाद पन्चुक ने मुंह का कौर निगल कर भारी उदासीन स्वर में पूछा, "ड्यूटी पर हो, क्यों?"

उसे अच्छी तरह मालूम था कि मर्कूलोव ड्यूटी पर है, फिर भी उसने यह निरर्थक प्रश्न पूछ लिया। उसके स्वर में लेश-मात्र भी जिज्ञासा नहीं थी मर्कूलोव ने वैसे ही उदासीन, विरक्त भाव से उत्तर दिया। उत्तर क्या दिया गालियों की झड़ी लगा दी। यह पता चलाना कठिन था कि इन गालियों का भागीदार कौन था—वे दोनों सैनिक जो चटखारे ले ले कर रोटी और गोश्त से अपनी पेट-पूजा कर रहे थे अथवा उसका कमांडिंग अफसर, जिसने उसपर यह ड्यूटी थोप दी थी!

वे दोनों मित्र निश्चिन्त, शान्त भाव से धीरे-धीरे खाते रहे और मर्कूलोव उन्हें पीछे छोड़कर आगे बढ़ गया। शीघ्र ही उन सीलन भरे बैरकों का वातावरण सैनिकों की सांसों से गर्म हो उठा। मर्कूलोक को अपने कोट के भीतर गर्मी महसूस होने लगी। वह प्रत्येक प्लैटून का कई बार चक्कर लगा चुका था और हर बार उसने ऊबे-उकताए मन से सैनिकों की बातचीत, हंसी ठहाके और गाना-बजाना सुना था। उसे लगा था मानो इस शोर-शराबे का कभी अन्त नहीं होगा। हालांकि सैनिकों की बातचीत में अब उसकी कोई दिलचस्पी नहीं रह गयी थी, किन्तु मन-ही-मन वह चाह रहा था कि यह शोर और कोलाहल देर रात तक, सम्भव हो तो सुबह तक होता रहे, ताकि नींद में डूबे हुए बैरकों के भांय-भांय करते सन्नाटे में वह निपट अकेला न रह जाय।

नं. १ प्लैटून के दूसरे सिरे पर मर्कूलोव के अफसर वारंट आफिसर नोगा का पलंग बिछा था। नोगा अपने दम्भ और छैलापन के लिए सारी कम्पनी में बदनाम था। स्त्रियां इस पर जान देती थीं। वह बातें बनाने में बड़ा चतुर था और उसके रहन-सहन का स्तर भी काफी ऊंचा था। उसके पलंग पर बिछी हुई घास-फूस की चटाई पर एक बढ़िया कम्बल रखा हुआ था, जिस पर नाना प्रकार के रंग-बिरंगे त्रिकोण और चौकोर बने हुए थे। पलंग के सिरहाने लगे हुए तख्ते पर आटे की लेई से एक छोटा सा गोल आइना चिपका हुआ था, जिसके बीचोंबीच एक दरार पड़ी हुई थी। अपने जूते और वर्दी उतारकर नोगा अपने कीमती कम्बल पर पांव पसारे लेटा था। उसने अपने हाथ सिर के नीचे रखे हुए थे, एक पांव दीवार के सहारे उठा रखा था और दूसरा उसपर पसरा हुआ पड़ा था। उसके मुंह के एक कोने से बांस का सिगरेट-होल्डर बाहर निकला हुआ था, जिसमें सिगरेट सुलग रही थी। उसके सामने उसकी प्लैटून का एक सैनिक — कामा फुतदिनोव — खड़ा था जो दूर से एक बड़ा भीमकाय लंगूर सा दिखाई दे रहा था। वह एक बहुत ही गन्दा मूर्ख तातार था। उसके चेहरे पर हमेशा पीलापन छाया रहता। सेना में भर्ती हुए उसे तीन वर्ष हो चुके थे, किन्तु अब तक वह रूसी भाषा का एक अक्षर भी नहीं सीख पाया था। सारी कम्पनी उस पर हंसा करती थी। जब कभी इंसपेक्शन-परेड होती, तो उसे देखकर सब का सिर शर्म से नीचे झुक जाता।

नोगा को नींद नहीं आ रही थी, इसलिये वह कामा फुतदिनोव को लेकर बैठ गया और उसे पढ़ाने लगा। बेचारे तातार को देखकर जान पड़ता था कि उसके मगज पर काफी जोर पड़ रहा है। उसकी कनपटियों और नाक से पसीना टपक रहा था। वह बार-बार जेब से मैला-कुचैला कपड़ा निकाल कर अपनी पीप से भरी, फूले वाली आंखों को पोंछ लेता था।

"अरे ओ भोंदू तुर्क," नोगा झल्ला रहा था, "घनचक्कर कहीं के, बता, मैंने तुझ से क्या पूछा था? मछली की तरह मुंह बाये क्या देख रहा है? बता, मैंने तुझ से क्या पूछा था?"

कामा फुतदिनोव ने कोई उत्तर नहीं दिया।

"कलमुहे बन्दर! बता, रायफल को क्या कहते हैं... हां, यह जो तेरी रायफल है, उसे क्या कहते हैं? बता तातारी जानवर, बता!" कामा फुतदिनोव कभी एक पैर पर खड़ा होता कभी दूसरे पर और अपनी दुखती हुई आंखों को पोंछता जाता। किन्तु उसके मुंह से एक भी शब्द नहीं निकला।

"नामाकूल कहीं का... कुछ समझ में नहीं आता, क्या करूं। अच्छा, देख, जो मैं बोलूं मेरे पीछे वही दुहराता जा।" नोगा स्पष्ट-स्वरों में प्रत्येक शब्द का जोर-जोर से उच्चारण करने लगा। "स्मॉल बोर — क्विक फायरिंग —"

"इस्मॉल-बूर किक-फाइ"—कामा फुतदिनोव छूटते ही बड़ी तेजी से बोला।

"मूर्ख! इतनी जल्दी क्या पड़ी है? दुबारा कहो : स्माल बोर—क्विक फायरिंग—"

"सिमॉल बौर-किविक फायरी"

"तातार बन्दर!" नोगा ने उसे बुरी तरह डांट पिलायी। 'खैर, चलो, आगे बोलो :

"पैदल सेना की रायफल—"

"पैदा सेन की रिफिल"

"स्लायडिंग बोल्ट युक्त—"

"सेलिडिनबूल्ट युक—"

"बर्दान टाईप, नम्बर दो।"

"बीर्दान साइप, नम्बा दो"

"अच्छा, अब शुरू से कहो।"

कामा फुतदिनोव ने जेब से फिर वही चीथड़ा निकाल लिया और बगले झांकने लगा।

"हां कहो? अरे तुम बोलते क्यों नहीं? तुम्हें क्या सांप सूंघ गया है?"

"इस्मॉलबूर, विसेलिडिन—" कामा फुतदिनोव के दिमाग में जो कुछ आया, वही उसने उगल दिया।

"विसेलिडिन—" नोगा बीच में ही चिल्ला उठा। "विसेलिडिन तुम्हारा सर। मैं इस वक्त उठने का कष्ट नहीं करना चाहता, वरना तुम्हारे मुंह की ऐसी मरम्मत करता कि जिन्दगी भर याद रखते। तुम मेरी प्लैटून की इज्जत मिट्टी में मिला कर रहोगे। क्या तुम नहीं जानते कि सिर्फ तुम्हारे कारण मुझे दूसरों से कितनी खरी-खोटी बातें सुननी पड़ती हैं? अच्छा, फिर से बोलो; "स्मॉल बोर, क्विक फायरिंग—"

प्लैटून नं. १ के दूसरे सिरे पर लोहे की अंगीठी के पास तीन बूढ़े सैनिक अपने बिस्तरों पर सिर-से-सिर मिलाए लेटे हुए थे। तीनों ही दबे स्वर में अपने गांव का कोई देहाती गीत धीरे-धीरे गा रहे थे। गीत के पीछे एक गहरी अनुभूति छिपी थी, किन्तु उनके स्वरों से हर्ष और उलास उमड़ा पड़ता था। पहले गायक ने ऊंचे किन्तु कोमल स्वर में उदासी भरी एक धुन छेड़ दी थी। वह बीच के शब्दों को छोड़कर नये स्वरों को जोड़ देता था, जिससे गीत की मधुरता और लयात्मकता और अधिक बढ़ जाती थी। दूसरे सिपाही का गला जरा भारी था, किन्तु उसके स्वर का पका हुआ सोंधापन बरबस अपनी ओर खींच लेता था—लगता था मानो उसके स्वर से एक हल्की सी झंकार उठ रही हो।

तीसरे सिपाही का स्वर पहले की अपेक्षा जरा धीमा था — सपाट और बेलोच कभी कभी वह गाते-गाते सहसा चुप हो जाता था — और फिर कुछ देर बाद बीच की कड़ियों को लांघ कर अपने साथियों के सुरों के साथ अपना सुर मिला कर पुनः गाने लगता था।

विदा, अलविदा, मेरी प्यारी ! ओ सपनों की रानी, रे !
हाय, न थम सकता अब इन आंखों से बहता पानी, रे !
तरस जायेंगे तेरी खातिर मेरे व्याकुल नैना, रे !
ओ मेरे ! अरे ओ मेरे ! हां - आं - आं ...

पहले दो आवाजें परस्पर गुम्फित होकर गा उठीं और तीसरी आवाज जो "व्याकुल नैना रे" के बाद चुप हो गयी थी, पुनः सशक्त और असंदिग्ध भाव से पिछली दो आवाजों के संग मिलकर गूंजने लगी।

...ओ मेरे मन की मैना, रे !

और फिर तीनों संग गाने लगे :

अब न लौट कर आयेगी इस घर को मेरी बुलबुल, रे !
प्रीति-प्यार की बगिया में अब नहीं खिलेंगे वे गुल, रे !

गीत की धुन छेड़ने वाले पहले गायक ने गीत का एक पद गा लेने के बाद सहसा एक बहुत ऊंचा सुर छेड़ दिया, और उसे खींचता ले गया। उसका मुंह एक बड़े ढक्कन की तरह खुल गया, आंखें मुंद गयीं और नाक सिकुड़ती चली गयी। फिर अचानक एक झटके से वह रुक गया और एकदम इतना खामोश हो रहा मानो जो कुछ उसे गाना था सो वह गा चुका, अब कुछ शेष नहीं रहा है। किन्तु कुछ देर बाद उसने खंखार कर गला साफ किया और फिर नये सिरे से गाना शुरू कर दिया।

रात-रात भर अंखियां मेरी अंसुआ-धार बहायें, रे!
कलपत सारी रैन कटे, निंदिया न भटक कर आये, रे !
नहीं भूल पाता बैरी मन, तेरी प्रेम कहानी, रे !

"जी हां, नहीं भूल पाता !" बीच में ही अचानक तीसरे सैनिक की ऊंची सधी आवाज गूंज उठी। फिर तीनों गाने लगे :

नैना तेरे बड़े कटीले, चितवन प्यारी-प्यारी, रे !
मीठे बैना बोल-बोल जादू की डोरी डाली, रे !
उलझ गया मेरा भोला मन... कर बैठा नादानी, रे !

मर्कूलोव बड़े ध्यान से गीत सुनने लगा। एक अरसा पहले उसने यह गीत अपने गांव में सुना था। काश, इस समय वह अपनी वरदी उतार कर आराम से लेटा होता, अपने ओवरकोट में कानों तक सारे शरीर को लपेट कर लेटा लेटा अपने गांव और पुराने चिर-परिचित लोगों के बारे में सोचता रहता, और सोचते-सोचते नींद अपने स्निग्ध, सहलाते स्पर्श से उसकी थकी हुई आंखों को ढंक लेती!

उन तीन सैनिकों ने गाना बन्द कर दिया। मर्कूलोव काफी देर तक इस प्रतीक्षा में खड़ा रहा कि वे फिर अपनी तान छेड़ेंगे। उसे इन दर्द भरे गीतों की धुनें बहुत अच्छी लगती थीं। लगता था मानों एक बुझी बुझी सी धुंधली उदासी और करुणा का भीगा सा भाव उस पर घिरता जा रहा है। किन्तु वे तीनों सैनिक सिर से सिर मिलाये पेट के बल सीधे, निश्चल लेटे थे। कदाचित् गीत की उदास धुन ने उन्हें भी एक गहरी निस्तब्ध व्यथा में डुबो दिया था। मर्कूलोव ने एक गहरी सांस भरी; उसके चेहरे पर पीड़ा का भाव उभर आया और वह अपनी छाती को जोर-जोर से खुजलाता हुआ उन गाने वाले सैनिकों को पीछे छोड़ कर आगे बढ़ गया।

धीरे-धीरे बैरकों में सन्नाटा छाने लगा। केवल प्लैटून नं० २ से हंसी-ठहाकों का स्वर अब तक आ रहा था। जामोशनिकोव लौह पंजों वाले सैनिक की कथा समाप्त कर चुका था और अब "नाटक" खेलने में मग्न था। वह नकल और अभिनय करने में पूरा उस्ताद था। इस समय वह रेजीमेंट का निरीक्षण करते हुए "जनरल जामोशनिकोव" की नकल उतार रहा था। फिर वह बारी बारी से अनेक पात्रों की भूमिकाएं अदा करने लगा—दमा रोग से पीड़ित एक भारी-भरकम जनरल, रेजीमेन्ट का कमान्डर, छोटे कप्तान ग्लाजुनोव, सार्जेन्ट मेजर तारास गाव्रिलोविच, यूक्रेन की एक देहाती बुढ़िया, जो गांव से शहर आयी थी और जिसने अठारह वर्षों से मोसकल (यूक्रेनी लोग व्यंग्य में रूसियों को इसी नाम से पुकारते थे) नहीं देखा था, टेढ़ी टांगों और बहंगी आंखों वाला सैनिक त्वरदोखलेब, एक रोता हुआ बच्चा, गोद में कुत्ता उठाये क्रोध में भरी हुई एक भद्र महिला, तातार कामा फुतदिनोव, पूरी एक बटेलियन, पीतल के वाद्य-यंत्रों का एक बैंड और रेजीमेन्ट का सर्जन। दर्शकों की उस भीड़ में कोई ऐसा व्यक्ति नहीं होगा, जिसने कम-से-कम एक दर्जन बार जामोशनिकोव का 'अभिनय' न देखा हो, किन्तु उनका कौतूहल कभी कम न होने पाता था। हर बार जामोशनिकोव पुरानी बातों में भी एक नयी जान सी फूंक देता, कोई चुभती हुई तुकबन्दी, कोई भड़कता हुआ मजाक बीच-बीच में छोड़ता जाता। लोग देखते और दंग रह जाते। उसका हर मजाक नया होता और अपनी अशिष्टता और अश्लीलता में पिछले सब मजाकों से बाजी ले जाता।

जामोशनिकोव का यह अभिनय खिड़कियों और चारपाइयों की कतार के बीच की जगह पर हो रहा था। दर्शक बिस्तरों पर लेटे या बैठे हुए तमाशे का आनन्द उठा रहे थे।

"अरे ओ गाने-बजाने वालो, आगे बढ़ो!" उसने सिर पीछे करके और आवश्यकता से अधिक चौड़ा मुंह खोल कर भर्रायी आवाज में आदेश दिया। उसने जानबूझ कर अपना फटता स्वर मद्धिम बना लिया था। जोर से चिल्लाने में उसे स्वाभाविक रूप से डर लग रहा था, इसलिए केवल हाथ-मुंह के मूक संकेतों और हाव-भाव द्वारा ही वह रेजीमेन्ट के कमान्डर की गगन-भेदी चीखों की नकल उतार रहा था। "रे–जीमेन्ट! अटेन–शन! हथियार–उठाओ! बैन्ड–बजाओ! ..ट्राम-पा-पिम-ता-ती-रा-राम!"

जामोशनिकोव बैन्ड बजाता हुआ 'मार्च' करने लगा। उसने अपने दोनों गाल फुला लिए और ढोल की तरह उन पर अपने हाथों से थपकियां देने लगा। फिर उसने चहकना शुरू कर दिया:

"देखिये, आपके सामने महाप्रतापी जनरल जामोशनिकोव सफेद घोड़े पर आ रहे हैं। आंखें उनकी चील से भी अधिक तेज हैं, और उनका गर्वोन्नत भाल आकाश को चुनौती दे रहा है। उपाधियों पदकों और तमगों से विभूषित होकर वह इधर पधार रहे हैं। उन्हें देख कर आपकी आंखें चुंधिया जायेंगी। 'बहादुर जवानो, मैं तुम्हें सलाम करता हूं!' 'महामहिम, हम आपको सलाम करते हैं।' 'तुम्हारे करिश्मों से मैं प्रसन्न हूं!' 'महामहिम, अपनी तरफ से हम कोई कसर नहीं छोड़ते!' लो, देखो, अब रेजीमेन्ट का कमांडर जनरल जामोशनिकोव के सम्मुख रिपोर्ट प्रस्तुत करने आ रहा है: 'महामहिम, महा प्रतापी, गौरवशाली जनरल जामोशनिकोव, मुझे आपके समक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत करने में बड़ा गर्व महसूस हो रहा है। निजनी-लोम रेजीमेन्ट में सब काम नियमानुसार, सुचारु ढग से होता है। रेजीमेन्ट की फेहरिस्त में एक हजार सैनिकों के नाम दर्ज हैं, जिनमें से सौ सैनिक बीमार होने के कारण बिस्तरों पर पड़े हैं। सौ सैनिक ज्यादा पी जाने के कारण अधमरे से नशे में धुत्त पड़े हैं। लगभग इतने ही सैनिक रेजीमेन्ट छोड़कर भाग गये हैं। पचास आदमी टूटी हुई चहारदीवारी की मरम्मत में जुटे हैं, पचास आदमियों को नियम उल्लंघन करने के अपराध में पकड़ लिया गया है। और अगर झूठ न बुलवाओ, तो पचास ऐसे आदमी हैं, जो शराब पी कर होश-हवास खो बैठे हैं। दो सौ आदमी बाहर भीख मागकर पेट पालते हैं, जो बाकी बचे हैं, वे अधमरे से हो रहे हैं। एक लम्बे अरसे से उन्होंने हजामत नहीं बनवायी, उनके सिर और चेहरे भालू की तरह बालों से भरे हैं। उनका मुंह घावों और खरोचों से सूज गया है और उन्हें देखते ही दिल दहल जाता है। उन्होंने पूरे साल भर खाना नहीं खाया। बस, लड़कियों के संग बाहर सैर-सपाटा करते

हैं और मजे लूटते हैं। हमारी रेजीमेन्ट के क्या कहने ! दुनिया में शायद ही कोई रेजीमेन्ट मिले, जो इतनी सुखी और खुशहाल हो।' 'बस यही तो मैं चाहता हूं। धन्यवाद दिलेर जवानों, धन्यवाद !' 'आपकी कृपा दृष्टि बनी रहे, महा-महिम ! अपनी तरफ से हम कोई कसर नहीं छोड़ते !' 'कोई शिकायत तो नहीं ?' 'कोई शिकायत नहीं, महा महिम !' 'खूराक तो काफी मिल जाती है न ?' 'खुराक के क्या कहने हुजूर ! इतनी ज्यादा मिलती है कि जुबान उमठने लगती है और पेट फटने लगता है !' 'जिन्दा रहो दोस्तो ! बस इसी रास्ते पर चलते रहो, सब कुछ ठीक हो जायेगा। जवानो ! गाओ, पूरा जोर लगाकर गाओ, हमेशा अपना सीना तान कर चलो। खाने-पीने की चिन्ता मत करो ! हरेक सिपाही को वोद्का की एक बोतल, एक पौंड तम्बाखू और ऊपर से आधा रूबल दिया जायगा।' 'हमारा हार्दिक धन्यवाद स्वीकार कीजिए, महामहिम !'

"रेजीमेन्टल कमांडर घोड़े पर सवार हो गये और आदेश दिया : 'रेजी-मेन्ट की कम्पनियां दो-दो प्लैटून के फासले पर कदम से कदम मिला कर चलेंगी। नं० एक कम्पनी, आगे बढ़ो ! संगीत... धम-धमाधम-धम, लेफ्ट राइट, लेफ्ट राइट—चलते चलो !' और फिर सहसा यह आदेश सुनायी दिया, 'हाल्ट ! रुक जाओ। जैसे खड़े हो, वैसे खड़े रहो !' 'माजरा क्या है ?' 'कर्नल, यह कौन सी कम्पनी है ?' 'आठवीं पियक्कड़, जनाब !' 'सैनिकों की पांत में वह मुंह लटकाये कौवे सा कौन खड़ा है ?' 'प्राइवेट खरदोखलेव, जनाब !' 'इसे परेड से अलग कर दिया जाये और पचास कोड़ों से इसकी खातिर की जाये !'"

आस-पास बैठे सैनिक ठहाका मार कर हंस पड़े। कुछ सैनिक मजाक में प्राइवेट खरदोखलेव के पेट में गुदगुदी करने लगे और वह हंसते-हंसते लोट-पोट हो गया। फिर वह कथा दुहराई गयी कि किस प्रकार "जनरल जामोशनिकोव" ने रेजीमेन्ट के कमांडर के साथ बैठ कर भोजन किया।

"'महामहिम, आपको गोभी दूं या आलुओं का शोरवा ?' 'दोनों ! दोनों चीजें ढ़ेर सारी परोस दो।' 'थोड़ी सी वोद्का भी चखिये, महाराज ?' 'हां, बस थोडी सी ... गिलास पूरा भर दीजिए !' उसके बाद बहुत ही शिष्ट स्तर पर कर्नल की पुत्री के संग वार्तालाप होने लगा। 'नन्ही मुन्नी, एक चुम्बन तो दे जाओ !' 'छिः, देखते नहीं, पिता जी सामने बैठे हैं ! देख लिया तो क्या कहेंगे ?' 'तो फिर तुम नहीं दोगी ?' 'ना .. यह तो बिलकुल असंभव है !' 'अच्छा ! फिर अपना यह नन्हा सा हाथ ही मेरे हाथ में दे दो।' 'हां, इसमें कोई डर नहीं।'"

किन्तु जामोशनिकोव को अपना 'नाटक' पूरा करने का अवसर नहीं मिल सका। दरवाजा अचानक भड़भड़ा कर खुल गया। देहरी पर खड़े थे

सार्जेन्ट मेजर तारास गावरिलोविच—नंग-धड़ग शरीर पर केवल एक जांगिये के अलावा कुछ नहीं था, पैरों में चप्पल थी और नाक पर ऐनक लगी थी।

"भला यह भी कोई बात है? अस्तबल के घोड़ों की तरह हिनहिना रहे हैं!" उस क्रुद्ध बूढ़े आदमी की आवाज बिजली की तरह कड़क उठी। "कब तक यह गुल-गपाड़ा मचता रहेगा? कहो तो एक-एक को घूंसे मार-मारकर सुला दूं? चलो, सब अपने-अपने बिस्तरे पर जाकर लेटो। और देखो, अब कोई आवाज न सुनायी दे!"

धीरे-धीरे अनमने भाव से सब सैनिक तितर-बितर होने लगे। पांच मिनट भी न बीते होंगे कि बैरकों पर मौत का सा सन्नाटा छा गया। कोई हौले-हौले होठों में ही प्रार्थना बुदबुदा रहा था: "हे प्रभु, यसु मसीह! ईश्वर-पुत्र, हम पर दया करो! परम पिता, परम पुत्र और परमात्मा, हम पर दया करो।" किसी ने सीमेंट की फर्श पर अपने दोनों ऊंचे जूते एक-एक करके फेंके। एक सैनिक गहरी घरघराती आवाज में खांस उठा, सुनकर लगता था मानो कोई भेड़ खंखार रही हो। फिर सहसा वातावरण निश्चल और निस्तब्ध हो गया।

मर्कूलोव पूर्ववत् बैरकों की परिक्रमा करता रहा। दीवारों से सटा हुआ वह आगे सरकता जाता, कभी-कभार अचानक ठिठक जाता और अपने अंगूठे के नाखून से यूं ही दीवार का पलस्तर कुरेदने लगता। सैनिकों ने अपने ऊपर ओवर-कोट डाल लिये थे और वे एक दूसरे से सटे हुए तख्तों पर लेटे थे। सोते हुए सिपाहियों की आकृतियां लैम्प के मद्धिम, धुंधले आलोक में मिट सी गयी थीं। लगता था मानो जीते-जागते इन्सानों के स्थान पर भूरे रंग के निर्जीव, निश्चल कोटों की अन्तहीन कतार दूर तक चली गयी हो।

किसी तरह वक्त काटना था, सो मर्कूलोव चारों ओर सोते हुए आदमियों को देखने लगा। एक सैनिक पीठ के बल लेटा हुआ घुटनों को हवा में फैलाए सो रहा था और आधा मुंह खुला छोड़कर नियमित रूप से खूब गहरी सांस ले रहा था। उसके निश्चल चेहरे पर एक विचित्र बोदा सा भाव उभर आया था। एक दूसरा सैनिक नीचे की ओर मुंह लटका कर लेटा था, उसका सिर उसके बाएं बाजू पर टिका था और शरीर के आर-पार पसरे हुए दाएं हाथ की मुट्ठियां बन्द थीं। उसके नंगे पांव ओवरकोट से बाहर झांक रहे थे, जांघों की पिन्डलियां तनी हुई थीं और पांव की अंगुलियां सिकुड़कर ऐंठ सी गयीं थीं। दूसरी ओर प्राइवेट येस्तीफयेव की बेढंगी सी टेढ़ी-मेढी देह पड़ी थी। वह मर्कूलोव के गांव का आदमी था और परेड करते समय वह और मर्कूलोव एक ही पंक्ति में खड़े होते थे। इस समय वह एक विचित्र भद्दे और भोंडे ढंग से लेटा था। उसने अपना सिर तेल से चिकने लाल दरेज के तकिये में ठूंस रखा था और घुटनों को

अपनी ठुड्डी तक खींच लाया था। जाहिर है, ऐसी अवस्था में रक्त सिर में अवश्य चढ़ गया होगा। तकिये के नीचे से उसका पीड़ा से भरा स्वर आ रहा था।

मर्कूलोव के भीतर कहीं झुरझुरी सी दौड़ गयी। उसका दम घुटने लगा। यही लोग थे जो अभी कुछ देर पहले तक हंस-बोल रहे थे, इधर से उधर कुलांचें मारते फिर रहे थे, आपस में लड़-झगड़ रहे थे और अब सब निश्चल, निश्चेष्ट से पड़े हैं। कोई दर्द से कराह रहा है तो कोई गहरी नींद में सब कुछ भूल कर खर्राटे मार रहा है; लगता है मानो किसी अज्ञात और रहस्यमय लोक की अदृश्य शक्ति ने उन्हें वशीभूत करके अपने में समेट लिया है — उनके लिए अब सब चीजें अपना अर्थ खो चुकी थीं — अब वे सब सुध-बुध खोकर सो रहे थे और कभी कभी दूसरे की छाती पर टिकाया हुआ अपना सिर बेचैनी से हिला देते थे। बस केवल बचा रह गया था मर्कूलोव, निपट अकेला, जो अपने दर्द को अपने से ही चिपकाए भटक रहा था। अचानक मर्कूलोव भयाक्रान्त सा हो उठा। डर के मारे उसके बाल खड़े हो गये और एक सर्द, बर्फीली झुरझुरी उसकी रीढ़ के आर-पार लहरा गयी।

वह नम्बर ३ प्लैटून की बैरक के सामने आकर रुक गया और लालटेन के नीचे टंगी हुई घड़ी को देखने लगा। घड़ी देखकर समय का पता चलाना उसके लिए टेढ़ी खीर थी। किन्तु उससे पहले जो आदमी ड्यूटी पर था, उसने बड़े धैर्य से विस्तारपूर्वक मर्कूलोव को यह बात समझा दी थी कि जब घड़ी की बड़ी सुई सीधी खड़ी हो जाए और छोटी सुई उसके संग ९०° का कोण बना ले तो उसकी छुट्टी का समय हो जाएगा। साधारण सी घड़ी थी, मूल्य दो रूबल से अधिक न रहा होगा। सफेद चौकोर डायल था, जिसके चारों कोनों में गुलाब के छोटे-छोटे फूल बने थे। घड़ी के दोनों ओर पीतल के दो बट्टे लगे थे, जिनमें से एक को लोहे की एक छड़ी के साथ धागे से बांधा हुआ था। घड़ी के बीचों-बीच एक घिसा-पिटा, जीर्ण-जर्जरित पेन्डुलम लटक रहा था, जिसे देखकर ऐसा लगता था मानो किसी ने उसे दांतों से चबाकर छोड़ दिया हो।

"टिक-टौक, टिक-टौक," करता हुआ पैन्डुलम अंधकार की घनी नीरवता को तोड़ रहा था। मर्कूलोव बड़े ध्यान से एकाग्रचित्त हो कर घड़ी की 'टिक-टौक' सुनने लगा। पहली 'टिक' मद्धिम किन्तु स्पष्ट थी, दूसरी चेष्टा से, ऊबी सी उठती हुई जान पड़ती, मानो भीतर ही भीतर उसे कोई दबा रहा हो। टिक-टौक और टिक-टौक के बीच जो वकफा आता था, उसमें घड़ी से रगड़ खाती हुई जंजीर का खड़खड़ाता स्वर सुनायी दे जाता था।

घड़ी की टिक-टिक के संग मर्कूलोव भी मन-ही-मन बुड़बुड़ाने लगा। "हाय री किस्मत, हाय री किस्मत!" रात की ड्यूटी पर घिसटते हुए मर्कूलोव और उस घड़ी के बीच एक विचित्र सा आध्यात्मिक सम्बंध जुड़ गया। किसी

क्रूर दैवी शक्ति से अभिशप्त दोनों ही अन्धेरी बैरकों में घोर यातना भुगत रहे थे और एक-एक क्षण गिनकर अन्तहीन एकाकीपन की लम्बी घड़ियों को काटने का प्रयत्न कर रहे थे। "हाय री किस्मत, हाय री किस्मत !"—थके, ऊबे मन से पेन्डुलम गुनगुना रहा था। बैरकों का बुझा-बुझा सा वातावरण भयावह हो उठा। लालटेनों का प्रकाश प्रतिपल फीका पड़ता जा रहा था, भद्दी बेडौल छायाएं कोनों में सिमटती जा रही थीं और नींद में ऊंघता हुआ मर्कूलोव पेन्डुलम की 'टिक-टौक' के संग रह-रहकर बुड़बुड़ा उठता था, "हाय री किस्मत, हाय री किस्मत !"

मर्कूलोव नं० १ प्लैटून के अन्तिम सिरे पर जाकर कोने में एक ऊंचे, टूटे-फूटे स्टूल पर बैठ गया, जो चूल्हे और रायफलों के ढ़ेर के बीच रखा हुआ था। चूल्हे से हल्की गरमायी आ रही थी, जिसमें कोयलों की गैस की गंध मिली हुई थी। मर्कूलोव ने अपने हाथ कोट की आस्तीनों में घुसा लिए और अपने विचारों में खो गया।

वह अपने उस पत्र के बारे में सोचने लगा, जो अभी कुछ दिन पहले उसके 'देस' से आया था। पत्र उसे पढ़ कर सुनाया गया था। सबसे पहले प्लैटून के वारंट अफसर ने वह पत्र उसे सुनाया था, उसके बाद अर्दली दफ्तर के क्लर्क ने वह पत्र उसके सामने पढ़ा था और आखिर में 'भाखा' जानने वाले उसके ग्राम निवासियों ने बारी-बारी से उसे चिट्ठी पढ़ कर सुनायी थी। मर्कूलोव को वह पत्र अब जुबानी याद हो गया था, और जब कभी कोई व्यक्ति पत्र पढ़ते-पढ़ते किसी स्थान पर अटक जाता, तो वह सही शब्द सुझा देता।

"यह खत पैदल सेना के एक सैनिक के नाम भेजा जा रहा है। यह एक बहुत जरूरी खत है। इस वर्ष, २० सितम्बर की डाक द्वारा मोकरिये वर्खी गांव से यह खत रवाना किया जा रहा है। तुम्हारे पिता की ओर से ...।

"मेरे प्यारे पुत्र, लूका मोएजयेविच, सबसे पहले हम तुम्हें अपना अशीर्वाद देते हैं और भगवान से प्रार्थना करते हैं कि तुम्हें अपने सब कामों में बिना किसी विलम्ब के पूरी सफलता प्राप्त हो और हम तुम्हें भी यह जतला देना चाहते हैं कि मैं और तुम्हारी मां लुकेर्या त्राफिमोवना ईश्वर की दया से सकुशल हैं और आशा करते हैं कि तुम भी वहां सकुशल होगे। तुम्हारी प्यारी बीबी तात्याना त्राफिमोवना भी एक नेक और वफादार पत्नी की तरह तुम्हें अपनी शुभकामनाएं और सद्भावनाएं भेज रही है और आशा करती है कि ईश्वर की दया से तुम सानन्द और सकुशल होगे। तुम्हारे प्यारे ससुर ईवान फेदोसयेविच और उनके बीबी-बच्चे भी तुम्हें अपनी शुभकामनाएं भेज रहे हैं और वे सब आशा करते हैं कि तुम्हें अपने हर काम में सफलता मिलेगी। तुम्हारा भाई

निकोलाय मोएजयेविच और उसके बीवी-बच्चे भी तुम्हें अपनी सद्भावनाएं भेजते हैं और ईश्वर से तुम्हारी कुशल-क्षेम की प्रार्थना करते हैं।

"ईश्वर की कृपा से यहां सब आनन्द-मंगल है। आशा है, तुम भी सानन्द होगे। गांव में सब-कुछ पूर्ववत् चल रहा है। 'लेडी डे' के दिवस पर निकोलाय इवानोव का बड़ी सड़क वाला मकान जल कर राख हो गया। अवश्य ही यह मात्युशका की करामात है। पुलिस का भी यही अनुमान है। प्यारे लूका—आगे मेरी अर्ज यह है कि तुम मेहरबानी करके जरा साफ अक्षरों में चिट्ठी लिखा करो। तुम्हारे पिछले खत का सिर-पैर कुछ पल्ले नहीं पड़ा। दूसरे लोग भी उसकी लिखावट नहीं पढ़ सके। और जरा यह भी बताओ कि तुमने किस आदमी से वह पत्र और पता लिखाया था। उसके लेख को समझना किसी के बस की बात न थी। थोड़ा-बहुत जो कुछ समझ में आया, वह सब कुछ इतना अर्थहीन और बेतुका था कि हम में से कोई उस पर विश्वास नहीं कर सका। तुम्हारा स्नेही पिता एम. मर्कूलोव, जिसने निरक्षर होने के कारण यह पत्र अनानी क्लीमोव से लिखवाया।"

"यह सब कुछ ठीक नहीं है, यह बिल्कुल ठीक नहीं है!" मर्कूलोव दुखी मन से सिर हिलाते हुए बुड़बुड़ाने लगा। वह सोचने लगा कि "देश के प्रति अपना कर्तव्य निभाने के लिए" उसे अभी फौज में दो वर्ष और काटने पड़ेंगे—कितना कठिन और कष्टमय है घर से दूर रहना। सोचता-सोचता वह अपनी पत्नी के बारे में सोचने लगा। "लाड-प्यार में वह पली है, और अभी जवान है। कोई आसान बात थोड़े ही है अपने पति के बगैर चार साल तक अकेले रहना! सिपाही की बीवी ... खूब जानता हूं, सिपाहियों की इन बीवियों को—भूले थोड़े ही बैठा हूं! लेफ्टीनेन्ट जावियाकिन इस बात को लेकर अक्सर मुझे छेड़ता है: 'क्यों भई, शादी-शुदा हो?' वह पूछता है। 'जी जनाब!' 'फौज की नौकरी छोड़ कर जब वापिस घर जाओगे तो देखोगे कि तुम्हारे परिवार के सदस्यों की संख्या कुछ बढ़ गयी है,' वह हंस कर कहता है। जी भर कर हंस ले, उसका क्या बनता-बिगड़ता है? मोटा आदमी है, खूब चमक-दमक से रहता है। सुबह उठ कर चाय के साथ केक खाता है। अर्दली उसके पॉलिश से चमकते हुए जूते लाता है। कवायद-कसरत के समय वह खड़ा खड़ा सिगरेट फूंकता है। और मर्कूलोव, एक तुम हो कि सारी रात आंखों में ही गुजारनी पड़ती है। यह ठीक नहीं, ना भाई ... बिल्कुल ठीक नहीं!" मर्कूलोव फिर बुड़बुड़ाने लगता है और उसका अन्तिम शब्द एक गहरी लम्बी जम्हुयाई में खो जाता है। जम्हुयाई से उसकी आंखों में आंसू आ जाते हैं।

उसे याद नहीं आता कि उसने आज से पहले कभी अपने को इतना उपक्षित, इतना एकाकी और इतना जर्जरित पाया हो। उसका मन हुआ कि वह

किसी सहृदय व्यक्ति के सामने बैठ जाए, जो चुपचाप बिना एक शब्द कहे उसकी रामकहानी सुनता जाए। वह अपनी समस्त चिन्ताओं और कष्टों की पोटली उसके सामने खोल देगा। पास बैठा वह आदमी चुपचाप एकाग्रचित्त होकर उसकी बातें सुनता जाए, अपने-आप सब कुछ समझ ले और अन्त में सहानुभूति के दो-चार शब्द कह कर उसे दिलासा दे। किन्तु ऐसा व्यक्ति कहां मिलेगा ? सब को अपनी परेशानियां, अपनी चिन्ताएं खाए जाती हैं। "कैसी अजब जिन्दगी है भाई !" मर्कूलोव सिर हिलाता रहा और सोचता रहा। फिर न जाने क्यों उन्हीं शब्दों को जोर से गाने के लहजे में उसने दोहराया : "कैसी अ-ज-ब जि-न्द-गी है..."

और फिर वह धीरे-धीरे होठों ही होठों में गुनगुनाने लगा। कोई गीत था जिसके शब्द नहीं थे। महज एक धुन थी, उदासी और निराशा से भीगा हुआ एक बिखरा सा भाव था। जो कुछ भी था, उससे उसकी आत्मा में एक कोमल और स्निग्ध सी किरण फूटने लगी। "आह... कैसी है मेरी जिन्दगी !" धीरे-धीरे शब्द बनने लगे, कोमल, मर्मस्पर्शी शब्द :

आह मेरी प्यारी मां,
मेरी अपनी प्यारी मां !

गरीब और उपेक्षित सिपाही लूका मर्कूलोव की बेचारगी पर मर्कूलोव के दिल में गहरी सहानुभूति उमड़ आयी। रूखा-सूखा खाकर दिन भर पिलो और फिर रात भर जाग कर ड्यूटी दो। ऊपर से प्लैटून कमांडर और सेक्शन लीडर की धौंस सहो। कभी-कभी तो सेक्शन लीडर उसके मुंह पर घूंसा भी जमा देता था। कवायद करते-करते पसलियां टेढ़ी हो जाती हैं। कुछ पता नहीं, किसी भी दिन वह बीमार पड़ सकता है, हाथ-पैर टूट सकते हैं, आंख के किसी रोग से अंधा हो सकता है। कम्पनी के आधे से अधिक सिपाही ऐसे है, जिनकी आंखें सूज आयी हैं। यह भी हो सकता है कि वह घर-बार से दूर यहां अकेले में मर जाए। मर्कूलोव के गले मे गोला सा अटक आया। पलकों पर सुइयां सी चुभने लगीं। संगीत की मधुर, उनींदी सी लहर दिल में उठने लगी। गीत के वे अवसाद भरे शब्द, जो कुछ देर पहले उसने गढ़े थे, उस पर अपनी करुण छाप छोड़ने लगे। वह धुन, जो मर्कूलोव अभी-अभी गुनगुना रहा था, अब उसे बहुत ही सुन्दर और मर्मस्पर्शी जान पड़ी।

आह मेरी मां, प्यारी मां
मुझे कफन में लिटा दे !
चिनार और चीड़ का कफन हो
मुझे ठंडी, बहुत ठंडी धरती पर लिटा दे !

बैरकों के वायुमंडल में एक घुटा-घुटा सा भारीपन घिर आया। वातावरण अत्यन्त बोझिल हो उठा। लगा जैसे कोई स्नानागार हो, जहां बध और भाप के धुंए में कालिख से पुती लालटेनों का मैला, मद्धिम प्रकाश टपक रहा हो। मर्कूलोव दुहरी पीठ किये सिर झुका कर बैठा था, उसके पैर स्टूल की टेढ़ी-तिरछी लड़की पर मुड़े हुए थे, उसके हाथ कोट की आस्तीनों में जाकर गुम हो गये थे। कोट के भीतर उसे गरमी महसूस होने लगी और सारा शरीर सिकुड़ कर ऐंठ सा गया। कोट का कॉलर गले में चुभ रहा था और बटनों के काज रह-रह कर उसका मांस खुरच डालते थे। सोने के लिए उसका मन व्याकुल हो उठा। नींद से पलकें भारी हो गयी थीं। लगता था मानो कोई धीमे से उन्हें खुजला जाता हो। कानों में अनवरत एक सोई, दबी सी आवाज सुनायी दे रही थी। उसे लग रहा था कि कहीं उसके भीतर, पेट में या शायद छाती में, एक खोखली चिपचिपी सी अनुभूति करवट ले रही हो। चिन्ता यही थी कि उसे कहीं नींद न आ दबोचे, किन्तु उसकी अनथक कोशिशों के बावजूद कभी ऐसे लम्हे भी आ जाते, जब कोई बहुत ही कोमल, किन्तु तेज झोंका उसके सिर को हल्के से झुला जाता। ऐसे लम्हों में उसकी आंखें धीमे से फड़फड़ा कर मुंद जातीं, दिल से वह खोखली अनुभूति अचानक गायब हो जाती। आंखों से बैरक ओझल हो जाते। रात की लम्बी घड़ियों की ऊब मिट जाती। कुछ क्षणों के लिए सब दुख धुल जाते, लगता कि वह बहुत हल्का हो गया है। उसे इस बात का बोध न होता कि उसका सिर धीरे-धीरे झटके खाता हुआ नीचे की ओर झुका जा रहा है। कुछ देर बाद अचानक वह हड़बड़ा कर उठ बैठता, आंखें खोल देता और सिर को झटक कर अपनी पीठ सीधी कर लेता। नींद के अभाव से छाती में फिर वही खोखली सी अनुभूति कुलबुलाने लगती।

कच्ची नींद के उन फिसलते पलों में जब वह अचानक ऊंघने लगा था, उसकी स्मृति पंख लगाकर उसके गांव उड़ गयी थी। वह आनन्द-विभोर सा हो उठा था। वह चाहे कुछ भी सोचे—क्या इसमें सन्देह की कोई गुंजाइश थी कि उसने अपनी आखों के सामने अपना गांव देखा था? सपने का वह गांव वास्तविकता से कहीं अधिक ठोस और स्पष्ट रूप में वह देख पाया था। उसने देखा था अपना घोड़ा, जिसका सारा तन बड़े-बड़े धब्बों और दागों से ढंका था, मानो मोथी अनाज की बालियों के चिन्ह उस पर अंकित हों। हरी घास पर वह खड़ा था, आगे दो टांगें मुड़ी हुई थीं, चमड़े की दुमची से हड्डियां बाहर झांक रही थीं, भीतर की पसलियां ऊपर उभरी पड़ती थीं। नीचे सिर झुकाए वह हताश सा निश्चल खड़ा था, लम्बे छितरे बालों से ढंका उसका निचला होंठ ढीला-ढाला सा लटक रहा था, फीके नीले रंग की उसकी आंखें सफेद पलकों से बाहर मर्कूलोव की ओर मूक आश्चर्य से देख रही थीं।

चरागाह से जरा परे चौड़ी पक्की सड़क दिखायी देती थी। मर्कूलोव को लगा कि वह शुरू बसन्त की एक शाम को गांव लौट आया है। हवा में कुनकुनी सी गर्मी फैलने लगी है। सामने की सड़क कीचड़ से सनी है—जहां-तहां घोड़ों के खुरों के निशान दिखायी दे जाते हैं। संध्या के फीके आलोक में रहट का पानी गुलाबी सा लोहित हो उठा है। छोटी संकरी सी नदी लकड़ी के पुल के नीचे से बहती सड़क के पार चली गयी है। दूर के धुंधलके में नदी की रेखा चिकने-साफ आयने की तरह चमकती है, मानो नीचे ढलान पर नीली मणियों से उज्ज्वल दो तटों के बीच उसे उत्कीर्णित कर दिया गया हो। तट पर कोमल फुज्जियों से ढंके वृक्षों के गोलाकार शिखर हरे-पीले पत्तों से लदे हैं, जिनकी कटी-छंटी छायाएं पानी पर तिर रही हैं। नदी में तटों की छाया भी झलकती है—पन्ने-मोतियों की चमक-दमक लिए, साफ-सुथरी और प्रकाशमान। दूर कहीं गिरजे के घंटाघर का लम्बा, पतला बुर्ज स्वच्छ, निर्मल आकाश की पृष्ठभूमि में सिर उठाये खड़ा है। सफेद लकड़ी के इस बुर्ज पर गुलाबी रंग की धारियां चमक रही हैं। पास ही गिरजे की हरी छत दिखलायी दे जाती है। मर्कूलोव-परिवार के घर के पिछवाड़े का बागीचा गिरजे से सटा हुआ था। बागीचे के बीचों-बीच हव्वे की झुकती सी काया को देखकर लगता था कि अब गिरा, अब गिरा। हव्वे का सिर पिता की पुरानी· टोपी से ढंका था। लम्बी बाहें गली-फटी आस्तीनों से बाहर फैली थीं। देखकर लगता था मानो वह कोई कठोर निश्चय किये खड़ा है, जहां से उसे कोई नहीं डिगा सकता।

और मर्कूलोव ने देखा कि वह घोड़े पर बैठकर कीचड़ से भरी काली सड़क पर खेत से घर की ओर चल पड़ा। उसने दोनों पांव अपने सफेद घोड़े के एक ओर लटका लिए थे, और धीरे-धीरे उन्हें हिलाता जा रहा था। हर कदम पर वह घोड़े की पीठ पर कभी आगे, कभी पीछे की ओर फिसल जाता था। घोड़े के कीचड़ से सने खुर झटके से बाहर निकलते थे। हल्की धीमी सी बयार मर्कूलोव के चेहरे को छू जाती थी। बर्फ पिघलने के दिन खत्म हो रहे थे, इसलिए हवा में हल्की सी नमी का स्पर्श था। उसमें से मिट्टी की मीठी सोंधी गंध उठ रही थी। मर्कूलोव खुश था, सुखी था। दिन भर के कठोर श्रम के बाद थकान से उसका शरीर भारी हो गया था। आज उसने तीन एकड़ जमीन जोती थी। सारा शरीर टूट रहा था, बाहों में दर्द हो रहा था। पीठ ऐंठ गयी थी, न उठती थी, न झुकती थी। तिस पर भी वह बेपरवाही से पांव हिलाता हुआ पूरी शक्ति लगाकर गा रहा था :

"वन-बगीचे मेरे हैं—हां, मेरे हैं!"

घर पहुंच कर वह अपने खलिहान की शीतल वास पर श्रान्त-क्लान्त बाहों और टांगों को पसार कर लेट जायेगा—कितने सुखद होंगे वे क्षण!

उसका सिर धीरे-धीरे नीचे की ओर लुढ़कता हुआ घुटनों तक झुक आया। उसकी आंखें खुल गयीं। उसे लगा उसकी छाती के भीतर किसी कोटर में फिर वही पीड़ा से लिसी, चिपचिपी सी अनुभूति उमड़ने लगी है।

"शायद ऊंघने लगा था," आश्चर्य में डूबा हुआ वह बुड़बुड़ाया। "ख़ैर, कोई बात नहीं!" उसे इस बात का गहरा खेद हुआ कि अब वह कुछ भी नहीं देख पा रहा था। वसन्त के दिनों की वह काली सड़क, नदी के नर्म आइने में झिलमिलाती वृक्षों की आकर्षक छायाएं—सब कुछ देखते-देखते उसकी आंखों से ओझल हो गया। अब वह धरती की ताजी सोंधी महक भी सूंघ पाने में असमर्थ था। किन्तु वह फिर कहीं न सो जाए, इस डर ने उसके पांव आगे बढ़ा दिये और वह फिर दुबारा नये सिरे से बैरकों के चक्कर काटने लगा। देर तक एक स्थान पर बैठे रहने के कारण उसके पांव सुन्न से हो गये थे। कुछ कदम आगे बढ़ाये तो लगा मानो उसके पांव हैं ही नहीं।

चलते हुए उसकी आंखें घड़ी पर पड़ गयीं। डायल पर बड़ी सुई सीधी खड़ी थी और छोटी सुई तनिक दाहिनी ओर खिसक आयी थी। "आधी रात बीत चुकी है," उसने अनुमान लगाया। सारा शरीर तानकर अंगड़ाई ली, मुंह पर हाथ रखकर जल्दी-जल्दी अनेक बार सलीब का निशान बनाया। कुछ शब्द बुड़बुड़ाने लगा, जो कदाचित् किसी प्रार्थना के शब्द रहे होंगे। "हे प्रभु, परम माता, अभी शायद ढ़ाई घंटे और बाकी हैं। हे परम पूजनीय संतो—प्योत्र, अलेक्जै, योना, फिलिप्प, तुम्हीं हमारे पूजनीय पिता हो, सच्चे बंधु हो!"

लालटेनों में तेल चुकने लगा था, धीरे-धीरे सारी बैरकें निबिड़, घनीभूत अंधकार में डूबने लगी थीं। सैनिक सब ओर विचित्र, अस्वाभाविक अवस्थाओं में सोये पड़े थे। सख्त खुरदरी दरियों पर लेटने के कारण उनके हाथ-पांव सुन्न पड़ गये थे। चारों ओर से कष्ट में कराहती हुई आवाजों, गहरी लम्बी आहों और रुग्ण, दम तोड़ते से खर्राटों का स्वर सुनायी दे रहा था। इस उदास अंधेरे वातावरण में काली, निर्जीव सी गठरियों के नीचे से आती हुई इन अमानवीय आवाजों के संग एक अतुल रहस्यमयता, एक विक्षुब्ध भावना चिपकी हुई थी, जो किसी अपशुगन की द्योतक जान पड़ती थी।

"कुछ देर के लिए बाहर हो आऊं," मर्कूलोव ने खुद अपने से कहा और मन्दगति से दरवाजे की ओर चल पड़ा।

बाहर अंधेरे में हाथ से हाथ नहीं सूझता था। बूंदाबांदी हो रही थी। आंगन से कुछ दूर परे कुछ खिड़कियों में फीकी रोशनी झिलमिला रही थी। यह प्रकाश उन बैरकों से आ रहा था, जहां आजकल छठी और सातवीं कम्पनियां टिकी हुई थीं। बारिश की बूंदों से छत और खिड़कियों के शीशे पटापट बज रहे थे। मर्कूलोव की टोपी पर भी बारिश पड़ रही थी। निकट

कहीं नाली से वर्षा का जमा हुआ जल मोटी धार बनकर गड़गड़ाता हुआ पत्थरों पर गिर रहा था। मर्कूलोव को लगा कि बारिश के शोर से अलग कुछ विचित्र आवाजें पास आ रही हैं। उसे महसूस हुआ कि कोई व्यक्ति पानी के गड्ढों को तेजी से छपाछप पार करता हुआ बैरकों की दीवार के साथ-साथ उसकी ओर बढ़ता चला आ रहा है। जब कभी मर्कूलोव उस दिशा में झांकता, छपाछप एकदम बन्द हो जाती। किन्तु ज्योंही वह दूसरी ओर मुंह करता, तेज और भारी कदमों की छपाछप पुनः सुनायी देने लगती। "शायद यह कोरा भ्रम है," मर्कूलोव ने मन ही मन कहा और टपाटप गिरती बारिश की बूंदों को देखने लगा। आकाश में एक भी तारा नहीं था।

अचानक पांचवीं कम्पनी का प्रवेश-द्वार धड़धड़ा कर खुल गया। दरवाजे की चूल अंधेरे में चीत्कार कर उठी। ड्योढ़ी की फीकी रोशनी में क्षण भर के लिए टोप और कोट पहने एक सैनिक की छाया थिरक उठी। किन्तु चिटखनी की चरमराहट के संग दरवाजा फिर खट से बन्द हो गया। अंधेरे में दरवाजे की दिशा का पता नहीं चल सका। वह सिपाही जो अभी दरवाजे से बाहर आया था, सीढ़ियों के सामने देहरी पर खड़ा था। मर्कूलोव ने अनुमान लगाया कि वह ड्योढ़ी पर खड़ा-खड़ा ठंडी हवा फांक रहा है और हाथों को जोर-जोर से मसल रहा है।

"ड्यूटी पर होगा शायद," मर्कूलोव ने सोचा। उसके दिल में उस आदमी के पास जाने की उत्कट इच्छा जागृत हो आयी। उसे यह सोचकर अजीब सी प्रसन्नता हुई कि वह अकेला नहीं है, एक और आदमी भी उसके पास खड़ा है, जो उसके संग जी रहा है, जाग रहा है। उसे लगा कि वह उस आदमी के पास जाकर उसका मुंह निहारे—कम से कम उसकी आवाज ही सुने।

"जरा सुनो भाई!" मर्कूलोव ने अंधेरे में अदृश्य उस सैनिक की ओर मुखातिब होकर कहा। "तुम्हारे पास माचिस होगी?"

"देखता हूं, शायद निकल आए।" सीढ़ियों की ओर से एक धीमी, फटी सी आवाज आयी। "जरा ठहरो।"

मर्कूलोव ने सुना, सिपाही अपनी जेबों को हाथों से थपथपा रहा है। आखिर माचिस की डब्बी की खड़खड़ाहट सुनायी दे गयी।

दोनों बैरकों के बीच रास्ते पर कुएं के पास वे दोनों एक-दूसरे के जूतों की आहट के सहारे पास आते गये। गीली काई और कीचड़ में उनके जूते लथपथ हो गये थे।

"यह लो," वह सैनिक बोला। किन्तु अंधेरे में मर्कूलोव उसका आगे बढ़ा हुआ हाथ नहीं देख सका। सिपाही ने धीरे से माचिस की डब्बी खटखटा दी।

किन्तु मर्कूलोव सिगरेट नहीं पीता था। उसे माचिस की कोई जरूरत नहीं थी। वह तो केवल क्षण भर उस आदमी के पास खड़ा रहना चाहता था, जो जाग रहा था, जो उस विचित्र और दैवी शक्ति के चंगुल से मुक्त था जिसे हम 'निद्रा' कहते हैं।

"धन्यवाद!" उसने कहा। "मुझे केवल दो-चार तीलियां चाहिएं। मैं खाली माचिस की डिबिया बैरक में छोड़ आया हूं—केवल कुछ तीलियों की जरूरत थी।"

वे कुएं के पास ऊंची छत के नीचे खड़े हो गये। मर्कूलोव रहट के भारी पहिये पर अलस भाव से धीरे-धीरे हाथ फेरने लगा। पहिया एक दर्दभरी चरमराहट के संग थका सा हौले-हौले घूमने लगा। दोनों सिपाही दीवार से सटकर खड़े हो गये और अंधेरे में ताकने लगे।

"हे भगवान, बड़ी नींद आ रही है!" मर्कूलोव ने बुड़बुड़ाते हुए जोर से जम्हुआई ली। दूसरे सिपाही ने भी तुरन्त उसका अनुकरण किया। उनकी अंगड़ाइयां और आवाजें कुएं की दीवारों से टकरा कर हवा में गूंजने लगीं।

"रात आधी से ज्यादा गुजर चुकी है," पांचवीं कम्पनी के सिपाही ने निर्विकार, उदासीन स्वर में कहा। "कब से फौज में हो?"

सिपाही के स्वर में जो अन्तर आ गया था उससे मर्कूलोव ने अनुमान लगा लिया कि वह उसकी ओर मुंह फेरकर बोल रहा है। उसने भी अपना मुंह मोड़ लिया, किन्तु अंधेरे में उसे कोई शक्ल दिखायी नही दी।

"अठारह सौ नब्बे से फौज में हूं। और तुम?"

"मैं भी उसी साल आया था। क्या तुम्हारी भी ओरेल प्रान्त की रिहायश है?"

"नहीं, मैं तो कोमी जिले का रहने वाला हूं।" मर्कूलोव ने उत्तर दिया। "मेरे गांव का नाम मोक्रिये वर्खी है। क्या कभी यह नाम सुना है?"

"नहीं भाई, हमारा देश बहुत दूर है—कहीं चेलेत्स के पास जाकर। मुझे तो यहां बड़ा सूना-सूना सा लगता है।" उसने अंगड़ाई लेते हुए कहा, इसलिए अन्तिम वाक्य के आधे शब्द उसके मुंह में ही रह गये। जो शब्द बाहर निकले वे आपस में गडमड हो गये।

कुछ देर तक दोनों मौन रहे। चेलेत्स के सिपाही ने दांतों के बीच से थूक की पिचकारी दीवार पर छोड़ दी। इसी तरह आठ-दस पल गुजर गये। एक तरफ सिर झुकाए मर्कूलोव बड़ी जिज्ञासा से कुछ सुनने में तल्लीन था। अचानक अंधेरे में 'खट' सी एक आवाज हुई—साफ और हवा में गूंजती हुई, मानो दो कंकर आपस में टकरा गये हों।

"यहीं नीचे है कुछ," चेलेत्स के निवासी ने दुबारा थूकते हुए कहा।

"पानी में थूकना पाप है। तुम्हें कभी ऐसा नहीं करना चाहिए।" मर्कूलोव ने आलोचना की। उसके तुरन्त बाद उसने भी थूक दिया।

थूकने और कुएं से बाहर आती आवाज के बीच जो लम्बा वक्फा पड़ा, वह दोनों सिपाहियों के लिए विनोद का विषय बन गया।

"फर्ज करो, अगर कोई आदमी कुएं में छलांग मार दे," चेलेत्स निवासी ने अचानक पूछा। "तो पानी तक पहुंचने से पहले उसका सिर दीवारों से अनेक बार टकराएगा—क्यों ठीक है न?"

"निस्संदेह, इसमें भी क्या कोई शक है!" मर्कूलोव ने दृढ़ विश्वास के स्वर में उत्तर दिया। "बिल्कुल भुरता बन जाएगा उसका।"

"तौबा," दूसरे सिपाही ने कहा। मर्कूलोव को लगा कि उसका साथी अपना सिर हिला रहा है।

काफी देर तक दोनों चुप बैठे रहे। फिर दुबारा दोनों ने कुएं में बारी-बारी से थूका। अचानक मर्कूलोव ने बात छेड़ दी।

"जानते हो, आज मेरे संग अजीब बात हुई। मैं बैरक में बैठा था, शायद बैठा-बैठा ऊंघने लगा था। इतने में मैंने एक बड़ा ही विचित्र सपना देखा।"

मर्कूलोव अपने स्वप्न की मधुर स्मृतियों को—अपने गांव की धरती की मोहक, सोंधी गन्ध, सुदूर अतीत में खोया सुन्दर, सहज जीवन—विस्तार से आकर्षक काव्यात्मक प्रतीकों में संजोकर सुनाना चाहता था। किन्तु उसके मुंह से जो शब्द निकले, वे उसे बहुत साधारण, फूहड़ और नीरस जान पड़े।

"सपने में मुझे लगा कि मैं फिर से अपने गांव पहुंच गया हूं। सांझ घिर आयी थी। मैं सब कुछ देख सकता था—सब कुछ इतनी अच्छी तरह देख सकता था कि मुझे पता ही न चला कि मैं सपना देख रहा हूं।"

"हां, कभी-कभी ऐसा हो जाता है," उसके साथी ने उदासीन भाव से गाल खुजलाते हुए कहा।

"और मैं अपने घोड़े पर चला जा रहा था। मेरा एक सफेद घोड़ा था—उम्र उसकी बीस बरस रही होगी। अब तक तो शायद वह मर गया हो।"

"सपने में घोड़े को देखने का मतलब है—छल-कपट। कोई आदमी तुम्हें धोखा देगा।" सिपाही बोला।

"मैं अपने घोड़े पर चला जा रहा था—और सब कुछ देख सकता था। सब कुछ पहले जैसा ही था। सचमुच, बड़ा अजीब सपना देखा मैंने ..."

"हां भई, कौन है जो सपने नहीं देखता," सिपाही ने अलसाए हुए कहा। "अफसोस है कि मैं ज्यादा देर नहीं ठहर सकता," उसने पीठ सीधी करते हुए कहा। "साला सार्जेन्ट रात भर टोह लगाता रहता है। अच्छा, गुड नाइट।"

"गुड नाइट, दोस्त ! रात भी कैसी है, हे भगवान ! हाथ से हाथ नहीं सूझता।"

बाहर की ताजी हवा के बाद बैरकों का वातावरण असह्य जान पड़ा। आदमियों के मांसल शरीरों से बाहर निकलती हुई भारी, बोझिल सांसें, सस्ते तम्बाखू का कड़वा-तीखा धुआं, पुराने कोटों की बासी बू और अधजली रोटियों की तेज दुर्गन्ध से सारी हवा दूषित हो रही थी। वे सब उसी तरह सो रहे थे, बेचैनी से करवटें लेते हुए, कराहते हुए, खर्राटे भरते हुए। लगता था मानो सांस लेते हुए उन्हें बहुत कष्ट हो रहा था। तीसरी प्लैटून के क्वाटरों से गुजरते हुए मर्कूलोव ने देखा कि एक आदमी अचानक हड़बड़ा कर बिस्तर पर बैठ गया। होठों से एक विचित्र आवाज निकालता हुआ वह हक्का-बक्का सा कुछ क्षणों तक सामने ताकता रहा। फिर एकदम पूरा जोर लगाकर पहले अपना सिर और उसके बाद अपनी छाती खुजलाने लगा। कुछ देर बाद नींद ने उसे फिर आ दबोचा और वह एक ओर लुढ़क कर पूर्ववत सोने लगा। एक दूसरा सैनिक अपनी कड़ी, फटती सी आवाज में तेजी से एक ही सांस में एक लम्बा सा वाक्य बोल गया। मर्कूलोव का दिल किसी पुराने मिथ्याविश्वास से आतंकित हो उठा। बुड़बुड़ाते हुए उस सैनिक के कुछ शब्द उसके कानों में पड़ गये—"तोड़ो नहीं इसे, तोड़ो नहीं। एक गांठ बांध दो, हां मेरी बात सुनो, एक गांठ ..." रात के मौत से सन्नाटे में जब कभी मर्कूलोव किसी सैनिक का अनर्गल प्रलाप सुनता था, तो डर से उसके शरीर में कंपकंपी सी छूटने लगती थी। उसे लगता था कि किसी अदृश्य शक्ति ने उस आदमी की आत्मा को अपने वश में कर लिया है और वह स्वयं उसके मुंह से टूटे, बिखरे से शब्द बोल रही है।

घड़ी की टिक-टिक कभी तेज, कभी मन्द हो जाती। लगता था कि उसकी सुइयां बड़ी देर से एक ही स्थान पर स्थिर खड़ी हों। मर्कूलोव के मस्तिष्क में एक बेतुका, विचित्र सा विचार दौड़ गया—शायद समय की गति अकस्मात रुक गयी है, और यह रात महीनों, वर्षों, युग-युगान्तर तक कभी समाप्त नहीं होगी। वे लोग इसी तरह गहरी लम्बी सांसें लेते हुए सोते रहेंगे, अनर्गल प्रलाप करते रहेंगे, लालटेनें हमेशा इसी तरह सांस तोड़ती हुई बुझी-बुझी सी जलती रहेंगी, पेन्डुलम सदा ऐसे ही अलस, उदासीन भाव से टिक-टिक करता रहेगा। बिजली सी यह तीव्र, अस्पष्ट अनुभूति मर्कूलोव के मस्तिष्क में कौंध गयी, जिसका अर्थ वह स्वयं न समझ सका किन्तु जिसने उसका हृदय एक अवश क्रोध से भर दिया। अंधेरे में वह घूंसा तानकर खड़ा हो गया और दांत पीसते हुए बुड़बुड़ाने लगा: "दुष्टो, जरा ठहरो ! देखो अभी मैं तुम्हें कैसा मजा चखाता हूं।"

एक बार फिर वह अपने पुराने स्थान पर, चूल्हे और रायफलों के ढेर के बीच बैठ गया। बैठते ही उसका सिर नींद की कोमल, स्नेहमयी गोद में

लुढ़क गया। "अब क्या होगा ? किसे देखूंगा ?" वह धीरे से फुसफुसाया। वह जानता था कि उसे इशारा भर करने की देर है, अतीत के परिचित, मोहक दृश्यों की रील उसके सम्मुख खुलती जाएगी। "वही नदी का किनारा... मेरा गांव ... हां, एक-एक करके तुम सब आ जाओ ... मैं तुम सब को जी भर कर देखूंगा।"

और फिर वे ही चित्र स्मृति-पटल पर आने लगे। उजली हरी घास पर बलखाती थिरकती छोटी सी नदी, जो कभी मखमली पहाड़ियों के पीछे छिप जाती है, कभी एकदम सामने आ जाती है और उसका निर्मल, उज्ज्वल वक्ष धूप में झिलमिलाने लगता है। वही पुरानी काली सड़क, जो दूर जाते हुए चौड़े रिबन सी खुलती जाती है। पिघलती बर्फ के नीचे से धरती की सोंधी सुगन्ध ऊपर हवा में तिरती आ रही है। खेतों का पानी गुलाबी हो उठा है। मुस्कराती इठलाती हवा का एक झोंका मानो एक गर्म, सहलाती सी सांस है, जो उसके गालों को छू गयी है। मर्कूलोव अपने घोड़े की गांठों-भरी पीठ पर बैठा हुआ आगे-पीछे डोल रहा है। उसके पीछे हल अपनी फार ऊपर उठाये सड़क पर घिसटता चला आ रहा है।

"बन-बागीचे मेरे हैं — हां, मेरे हैं!"

मर्कूलोव पूरी आवाज में गा रहा है — उन क्षणों की कल्पना करके वह आनन्द-विभोर हो उठता है, जब वह खलिहान में नर्म घास-फूस के ढेर पर अपना थका-मांदा शरीर पसरा कर लेट जाएगा। सड़क के दोनों ओर जुते हुए खेत हैं, जहां चिकने-चमकीले पंखों वाले काले-नीले पक्षी चुपचाप इधर-उधर फुदक रहे हैं। पानी के गड्ढों और कीचड़ से आता हुआ मेंढकों का समूह-गान कान के परदे फाड़े डालता है। मरपत के वृक्षों पर नव-प्रस्फुटित कलियों की भीनी-भीनी महक हवा में व्याप्त हो रही है।

"बन-बागीचे मेरे हैं — हां मेरे हैं!"

मर्कूलोव को तनिक आश्चर्य हुआ कि उसके घोड़े के पांव बार-बार लड़खड़ा जाते हैं, जिससे वह उसकी पीठ पर स्थिर नहीं बैठ पाता, इधर-उधर लुढ़क जाता है। एक बार तो मर्कूलोव को इतने जोर से झटका लगा कि वह नीचे गिरते-गिरते बचा। उसे काठी पर संभल कर बैठना चाहिए। उसने अपनी टांग दूसरी ओर घुमानी चाही, किन्तु वह टस से मस नहीं हुई। मानो किसी ने उस पर कोई भारी पत्थर बांध दिया हो। घोड़ा फिर हिलने-डुलने लगा।

"सीधा हो बदमाश ! नींद आ गयी है क्या ?" मर्कूलोव घोड़े की पीठ से लुढ़कता हुआ मुंह के बल जमीन पर आ गिरा। उसकी आंखें खुल गयीं।

"साला सो रहा है !" चिंघाड़ती सी एक आवाज ऊपर से सुनायी दी।

मर्कूलोव एक दम सन्नाटे में आ गया। उछल कर वह स्टूल से उठ खड़ा हुआ और किंकर्तव्यविमूढ़ सा होकर अपनी टोपी पर हाथ फेरने लगा। उसके सामने सार्जन्ट मेजर तारास गावरिलोविच खड़ा था। उसके बाल बिखरे हुए थे और उसने केवल एक जांघिया पहन रखा था। उसी ने गाल पर घूंसा जमा कर मर्कूलोव को जगाया था।

"सो रहे थे — क्यों ?" सार्जन्ट मेजर ने अपने विकृत स्वर में वही शब्द एक बार फिर दुहराये।

"... के बेटे ड्यूटी पर सो रहे हो ... क्यों ! जरा इधर आ — अभी पता चल जायगा, कैसे सोया जाता है।"

मर्कूलोव के गाल पर तड़ाक से एक घूंसा और पड़ा। उसके पांव लड़खड़ा गये। उसने सिर हिलाते हुए हौले से रुंधे स्वर में कहा, "मुझे कुछ पता ही नहीं चला, सार्जन्ट !"

"हा-हा ! पता ही नहीं चला ? क्यों ! अपनी बारी के अलावा जब दो और ड्यूटियां भुगतनी पड़ेंगी, पता तो तब लगेगा। कितने बजे तुम्हारी बदली होगी ?"

"दो बजे, सार्जन्ट।"

"बदली का वक्त तो कब का गुजर चुका — गधे ! जा, अगले आदमी को जगा दे; चल जल्दी कर।"

सार्जन्ट चला गया। मर्कूलोव भागता हुआ उस खटिया के पास आकर रुक गया, जिस पर एक बूढ़ा सिपाही रियाबोशाप्का सो रहा था। मर्कूलोव के बाद ड्यूटी देने की उसकी बारी थी। "अब मैं सोऊंगा, सोऊंगा, सोऊंगा !" हर्ष और उल्लास से भरी एक आवाज मर्कूलोव के दिल में गूंज रही थी। "दो और ड्यूटियां ? वह तो बाद की बात है। अभी से उनकी चिन्ता क्यों करूं ? अभी तो मैं सोऊंगा।"

"रियाबोशाप्का चाचा ! जरा सुनो, रियाबोशाप्का चाचा !"

सोते हुए सैनिक की टांग झिंझोड़ते हुए मर्कूलोव सहमे से स्वर में कह रहा था।

"गां ... गां ... चले जाओ !"

"उठ भी जाओ रियाबोशाप्का चाचा — बदली का वक्त हो गया है।"

"ऊं-हूं !"

रात भर चौकीदारी करने के बाद मर्कूलोव का शरीर थककर चूर हो गया था। उसमें इतना धीरज कहां बचा था कि वह रियाबोशाप्का को बैठकर जगाता रहे ? वह तेजी से अपनी खटिया के पास दौड़कर आया, जल्दी-जल्दी

कपड़े उतारे और अपने शरीर को दो पाटों के बीच सिकोड़ कर लेट गया। भारी और निर्जीव से वे दोनों पाट उसके ऊपर सिमट आए।

मर्कूलोव को एक क्षण के लिए सब कुछ स्मरण हो आया—कुआं, काली अंधेरी रात, हल्की सी बूंदाबांदी, नाली मे बाहर बहते पानी की गड़गड़ाहट और कीच में छपाछप किसी के पैरों की अदृश्य पदचाप। बाहर अंधेरे में सब कुछ कितना भयानक, सर्दीला और विक्षुब्ध लग रहा था!

उसने दोनों कुहनियों को अपने पहलुओं में कसकर दबा लिया, घुटनों को ऊपर खींच लिया, तकिये के भीतर अपना सिर धंसा लिया और धीरे से आप ही आप फुसफुसाने लगा, "और हां ... अब वह सड़क... गांव की वह सड़क..."

और एक बार फिर उसकी आंखों में खुर-चिन्हों से भरी अपने गांव की काली सड़क घूम गयी। एक बार फिर उसकी निगाहें सरपत वृक्षों की शाखाओं में खो गयीं, जिनके हरे कोमल पत्ते नदी के आइने में झांक रहे थे ... और सहसा मर्कूलोव को लगा कि एक जबरदस्त किन्तु बड़े ही लुभावने झोंके ने उसे गहन, स्निग्ध अंधकार में धकेल दिया है।

१८६६

सफेद कुत्ता

एक

वे तीनों सर्कस के खिलाड़ी थे। पहाड़ी पगडंडियों पर चलते हुए वे क्रीमिया के दक्षिणी तट पर एक ग्रीष्म-स्थान से दूसरे ग्रीष्म-स्थान का चक्कर लगाते भटक रहे थे। आर्तो अपनी लम्बी सुर्ख जुबान मुह के एक कोने में लटकाये आगे-आगे दौड़ता जाता था। वह उनका सफेद कुत्ता था, जिसके शरीर की बनावट शेर से मिलती-जुलती थी। चौराहे पर पहुंचते ही वह खडा हो जाता, और पूछ हिलाता हुआ प्रश्नयुक्त-दृष्टि से पीछे देखने लगता। इशारा पाते ही वह तुरन्त समझ जाता और सही रास्ते पर मुड़कर खुशी से कान हिलाता हुआ भागने लगता। कुत्ते के पीछे-पीछे बारह वर्ष का सर्गे आता। उसके बायें हाथ मे तह किया हुआ सर्कस का कालीन और दाये हाथ में छोटा, गन्दा सा बुलबुल का पिजरा रहता था। बुलबुल बक्से में से रंगीन कागजों के टुकड़े निकालकर भविष्य बतलाया करती थी। सबसे पीछे बूढा मार्टिन लोदिजकिन कुबडी पीठ पर हर्डी-गर्डी बाजा रखे लडखडाते कदमों पर धीरे-धीरे आता था।

हर्डी-गर्डी बहुत पुराना था। उसे बजाते ही एक अजीब सी खंखारती आवाज बाहर निकलने लगती थी। अपनी लम्बी उम्र में न जाने कितनी बार उसकी मरम्मत करवायी गयी थी। केवल दो धुनें थीं, जो हमेशा उस पर बजायी जाती थीं — दोनों धुनें तीस-चालीस वर्ष पहले बड़ी लोकप्रिय थीं, किन्तु अब कहीं कोई उनका नामलेवा भी न रह गया था। बाजे में दो परदे ऐसे थे जिन पर विश्वास नहीं किया जा सकता था — वे ऐन वक्त पर धोखा दे सकते थे। पहला तो बिलकुल नाकाम हो चुका था — उसकी बारी आते ही बाजे से तुतलाती, लंगड़ी, लड़खड़ाती हुई एक विचित्र सी ध्वनि बाहर निकलने लगती थी। दूसरी का सुर जरा नीचा था, किन्तु उसकी आवाज एकदम बन्द नहीं होती थी। कभी दनदनाने लगती, तो चुप न होती, हें-हें करता रहती। दूसरे सुरों को भी अपने नीचे दबा लेती और फिर कुछ देर बाद अचानक खामोश हो जाती। बूढ़े को भी अपने बाजे की खामियों का पता था और वह कभी-कभी मजाक में — नीचे उदासी की छाया छिपी रहती — कहने लगता :

"क्या करूं, अब यह बाजा बूढ़ा हो गया है — बेचारे को नजला-जुकाम भी रहने लगा है। जब मैं इसे बजाता हूं तो लोग कहते हैं : 'छिः ! यह भी कोई बाजा है — भद्दा और बेसुरा !' अब मैं उन्हें कैसे बताऊं कि एक जमाना था जब लोग मेरी धुनों को सुनकर वाह-वाह कह उठते थे, तारीफों के पुल बांध देते थे ! लोगों की अब वह रुचि ही न रही जो पहले जमाने के लोगों में थी। मेरे संगीत को सुनकर वे नाक-भौं न सिकोड़ेंगे तो और क्या करेंगे ? आजकल तो सब लोग 'गैशा', 'दो सरों वाली चील के नीचे' या 'परिन्दे बेचने वाले का बाज्ज' जैसी सस्ती धुनों के पीछे दीवाने रहते हैं। अब इन बांसुरियों को ही लो। कुछ दिन पहले मैं एक दुकान में इनकी मरम्मत करवाने गया था, लेकिन उन्होंने मेरे बाजे को देखते ही सर हिला दिया — कहने लगे : 'तुम्हें नयी बांसुरियां डलवानी पड़ेंगी — बेहतर तो यह हो कि तुम इस तूतिया बाजे को अजायबघर में भेज दो — अब यह उसी के लायक है।' मैं तो उनकी बातें सुन जल कर राख हो गया। बरसों से इसके सहारे रोटी जुटाते आये हैं और अब वे मुझसे कहते हैं कि इसे फेंक दूं। मेरा पक्का विश्वास है कि कुछ और अर्से तक यह हमारे काम आएगा। क्यों भाई सर्गे, क्या झूठ कहता हूं ?"

बूढ़े को उस बाजे से इतना गहरा लगाव था मानो वह कोई जीता-जागता हाड़-मास का जीव हो। वह उसे अपने एक सगे-सम्बंधी की तरह ही प्यार किया करता था। घुमक्कड़ी और आवारागर्दी की जिन्दगी में — जब कोई चीज ज्यादा देर तक संग नहीं रहती — इस बाजे ने ही सुख-दुख में बूढ़े का साथ दिया था। वह उसका इतना अभ्यस्त हो गया था कि अब वह उसमें और किसी जीवित, विचारशील व्यक्ति के बीच कोई भेद करने में असमर्थ था।

कभी उस बूढ़े को कोई रात किसी पुरानी अंधेरी सराय में ही गुजारनी पड़ती थी। बाजे को कमरे के एक कोने में खड़ा करके वह स्वयं पलंग पर लेट जाता। अचानक उस बाजे से एक धीमा सा स्वर फूट पड़ता—अजीब सा, कांपता हुआ स्वर—एक बूढ़े आदमी की उच्छ्वास सा उदास और एकाकी...। लोदिजकिन का दिल भर आता। स्नेह और प्यार से बाजे के नक्काशी किये हिस्से को थपथपाता हुआ धीरे से बुदबुदाता, "क्या बात है मेरे दोस्त? क्या जिन्दगी से ऊब गये? यह ठीक नहीं है भाई! हमें किसी हालत में भी मायूस नहीं होना चाहिए।"

उसे जितना वह बाजा प्यारा था, उतने ही या शायद उससे ज्यादा वह कुत्ता और लड़का प्यारे थे जो उसकी यात्राओं में हरदम उसके संग रहते थे। पाच साल पहले उसने यह लड़का (सर्गे) जूता बनाने वाली एक पियक्कड़ बेवा से "किराये पर" ले लिया था और हर महीने उसे दो रूबल देने का वादा किया था। किन्तु शीघ्र ही उस बेवा का देहान्त हो गया और सर्गे हमेशा के लिए बूढ़े के पास रहने लगा। दोनों को रोजमर्रा का अपना काम भाता था और एक संग रहने के कारण दोनों के बीच स्नेह और ममता के बन्धन दिन पर दिन दृढ़तर होते गये थे।

दो

वे तीनों चल रहे थे—बूढ़ा, लड़का और कुत्ता। वे सागर तट की ऊंची चढ़ाई के रास्ते पर चल रहे थे, जिस पर पुराने जैतून वृक्षों की छायाओं से ढकी टेढ़ी-मेढ़ी सड़क दूर तक चली गयी थी। पेड़ों के झुरमुट से कभी-कभी समुद्र की झलक मिल जाती थी, जो एक शान्त, शक्तिशाली दीवार की तरह दूर-दूर तक फैला हुआ था। चांदी से चमचमाते फूल-पत्तों के गुच्छों के बीच सागर और भी अधिक नीला और गहरा दिखलायी देता था। हर जगह—घास, सींगदार झाड़ियों, जंगली कांटेदार झाड़-झंकाड़ों, अंगूर की बेल-लताओं और पेड़ों से झींगुरों और टिड्डों का एकरस, कर्कश अनवरत, स्वर हवा में गूंज रहा था। हवा बन्द थी। धूप में धरती इतनी तप रही थी कि पांव उस पर रखते ही झुलस जाते थे।

सर्गे, जो हमेशा की तरह बूढ़े से जरा आगे चल रहा था, ठहर गया और उसकी प्रतीक्षा करने लगा।

"सर्गे, क्या बात है?" बूढ़े ने पास आकर पूछा।

"लोदिजकिन दादा, बड़ी गर्मी है। एक कदम आगे नहीं चला जाता। एक डुबकी क्यों न लगायी जाए?"

बूढ़े ने पीठ पर रखा बाजा सीधा किया और अपनी आस्तीन से माथे का पसीना पोंछा।

'बात तो ठीक है," उसने समुद्र के शीतल, नीले जल को देखकर ठंडी सांस भरी। "लेकिन नहाने के बाद तो और भी बुरा महसूस होगा। एक दफा किसी डॉक्टर के सहकारी ने मुझे बतलाया था कि समुद्र का नमकीन पानी शरीर को शिथिल और ढीला कर देता है।"

"शायद यह बात सच नहीं है।" सर्गे ने संदिग्ध भाव से कहा।

"सच नहीं है? लेकिन मुझसे झूठ बोलकर उसे क्या लेना था? नेक, ईमानदार आदमी है, शराब नहीं पीता और सिवास्तोपोल में उसका अपना छोटा सा घर है। खैर, उसकी बात छोड़ो। लेकिन तुम नहाओगे कैसे? यहां से कोई रास्ता समुद्र की ओर जाता नहीं दीखता। मिसखोर तक चले चलो। वहां जाकर हम अपने शरीर के पापों को अच्छी तरह धो डालेंगे। भोजन से पहले नहाना अच्छा भी होता है। उसके बाद मजे से सोएंगे। ठीक है न?"

आर्तो को जब अपने पीछे बातों की घुसुर-पुसुर सुनायी दी तो वह पीछे मुड़कर भागने लगा। उसकी हल्की-नीली आंखें सूरज की प्रखर किरणों से चकाचौंध सी हो रही थीं। तेजी से हांफने के कारण उसकी लम्बी, लपलपाती जुबान कांपने लगी थी।

"मेरे नन्हे से दोस्त—क्या तुम्हें भी गर्मी लग रही है?" बूढ़े ने कहा।

कुत्ते ने जुबान मोड़कर अंगड़ाई ली, अपनी देह को जोर से हिलाया और पतले स्वर में चूं-चूं करने लगा।

"अच्छा अब यहां तुम्हारा कोई काम नहीं है, चलो भागो। सर्गे, अगर सच पूछो तो मुझे यह धूप बहुत अच्छी लगती है। बस जरा यह बाजे का बोझ अखरता है, और कोई बात नहीं। अगर काम की चिन्ता न होती तो मैं मजे से पेट फुलाकर किसी पेड़ की छाया तले घास पर लेट जाता और वहीं पड़ा रहता। बूढ़ी हड्डियों को धूप से बढ़कर और क्या सुख चाहिए? सूरज की किरनें तो हम जैसे लोगों के लिए न्यामत हैं।"

पगडंडी नीचे जाकर एक चौड़ी चमकती पत्थर की सड़क से मिल गयी थी। यह सड़क एक भव्य, विशाल क्रीड़ावन को जाती थी, जिसका मालिक एक दौलतमन्द काउन्ट था। शीशे के मकान, सुन्दर बंगले, फूलों की क्यारियां और फव्वारे क्रीड़ावन के हरे-भरे मैदान में चारों ओर बिखरे दिखायी देते थे। लोदिजकिन इस स्थान से भली भांति परिचित था। वह हर साल उस ऋतु में यहां आया करता था, जब अंगूरों को तोड़ कर जमा किया जाता है। इन दिनों क्रीमिया में बड़ी रौनक और चहल-पहल रहती है। वैभवशाली लोग कीमती वेशभूषा में इधर-उधर घूमते दिखायी देते हैं। दक्षिणी-प्रदेश के रंग-बिरंगे फूल

पौधों को देखकर सर्गे तो उन पर लट्टू हो गया, हालांकि बूढ़ा उनसे अधिक प्रभावित नहीं हुआ। सर्गे पहले कभी इस स्थान पर नहीं आया था। चम्पा के फूलों की सफेद कलियां चौड़ी तश्तरियों सी दिखायी देती थीं और उनके सख्त, चमकते पत्तों को देख कर लगता मानों किसी ने उन पर रंग लेप दिया हो। कुछ बेल-लताएं अंगूरों के गुच्छों से लदी हुई नीचे की ओर झुकी जा रही थीं। हल्की छाल और शक्तिशाली फुनगियों वाले सदियों पुराने प्लानन वृक्ष भी यहां मौजूद थे। तम्बाखू के खेतों, झरनों-प्रपातों और सुन्दर, सुवासित गुलाब के फूलों को देख कर सर्गे स्तम्भित सा रह गया। गुलाब के फूलों की तो मानो बाढ़ आ गयी थी। हर जगह क्यारियों, मेड़ों और बंगलों की दीवारों पर वे दिखलायी दे जाते थे। इतने ढेर से सौन्दर्य को एक ही स्थान पर एक साथ देखने के कारण सर्गे के उल्लास और उत्साह की सीमा न रही। वह जोश में आकर बार-बार बूढ़े की आस्तीन खींचता और इधर-उधर इशारे करता जाता।

"दादा, फव्वारे में जरा उन मछलियों को तो देखो — वे सोने की बनी हुई हैं! सच दादा, शर्त लगा लो अगर वह सोने की न हों!" सर्गे बाग के लोहे के जंगले पर अपना चेहरा टिका कर फव्वारे को एकटक देखता हुआ कहता। "दादा देखो कितने बड़े आड़ू लगे हैं, कितने ढेर से। सारे एक ही पेड़ पर लगे हैं।" सर्गे विस्मय से चिल्लाता।

"लड़के — चलते रहो। यह नहीं कि जहां किसी चीज पर नजर पड़ी और आंखें फाड़-फाड़ कर देखने लगे।" बूढ़ा मजाक में उससे कहता और धीरे से उसे धक्का देकर आगे बढ़ा देता। "नोवोरोसिस्क के कस्बे में पहुंच कर हम दक्षिण की ओर जायेंगे। फिर तो हमें एक से एक उम्दा और खूबसूरत शहर देखने को मिलेंगे — सोची, ऐडलर, तुआप्से, सुखुम और सुदूर दक्षिण में बातुम। अभी तुम मामूली सी चीजों को इतनी आंखें फाड़-फाड़ कर देखते हो, इन शहरों को देखकर तो तुम्हारी पुतलियां ही बाहर निकल पड़ेंगी। वहीं तुम्हें ताड़ का पेड़ भी देखने को मिलेगा। उसे देखते ही तुम्हारी आंखें खुल जायेंगी। उसका तना बहुत खुरदुरा होता है और पत्ते इतने बड़े कि केवल एक पत्ता हम दोनों को ढक ले!"

"भगवान कसम?" लड़के के आश्चर्य का कोई ठिकाना न रहा।

"कुछ दिनों में जब अपनी आंखों से देख लोगे तब विश्वास करोगे। वहां बहुत सी चीजें मिलती हैं — सन्तरा और नींबू। तुमने तो अभी तक इन्हें केवल दुकानों में देखा ही होगा, क्यों?

"हां।"

"किन्तु वहां ये चीजें तुम हवा में देखोगे। जिस तरह हमारे शहर में सेब और नाशपाती पेड़ों पर लगते हैं, उसी तरह इन दक्षिणी इलाकों में नींबू और

सन्तरा भी पेड़ों पर उगते हैं। वहां के निवासी, तुर्क, ईरानी और सरकेस्सियन भी अजीब लोग हैं। उनकी वेशभूषा देख कर तुम चौंक जाओगे। हर आदमी एक लम्बा सा लबादा पहनता है और कमर में कटार बांधे रहता है। बड़े दिलेर आदमी होते हैं ये लोग। कभी-कभी वहां ईथोपियन जाति के लोग भी दिखायी दे जाते हैं। बातुम में मेरी उनसे अक्सर भेंट हुई है।"

"इथोपियन ? वही लोग न, जिनके सरों पर सींग होते हैं ?" सर्गे ने पूरे विश्वास के संग कहा।

"सींगों की बात झूठी है। वे लोग बुरे नहीं होते। हां, उनका रंग तवे सा काला होता है और उनके चेहरे बड़े चमकीले होते हैं। मोटे लाल होंठ, सफेद बड़ी-बड़ी आंखें और ऊन से मुलायम और घुंघराले बाल, जिन्हें देख कर काले बालों वाली भेड़ याद आ जाती है।"

"ये इथोपियन लोग तो बहुत भयानक होते होंगे ?"

"बेशक। यदि उनके सम्पर्क में नहीं आए, तो शुरू-शुरू में एक अजनबी की हैसियत से उनसे डर लगता ही है। किन्तु बाद में जब तुम देखते हो कि अन्य लोग भी निधड़क उनसे बोलचाल रहे हैं, तो तुम्हारा साहस भी बढ़ जाता है। इसके अलावा और भी बहुत सी अजीबोगरीब चीजें वहां देखने को मिलती हैं — जब हम वहां जाएंगे तो तुम खुद अपनी आंखों से सब देख लेना। किन्तु वहां बुखार तुम्हारा सब से बड़ा शत्रु है। चारों ओर कीचड़, दलदल और गंदगी है और बड़ी भयंकर गर्मी पड़ती है। जो लोग वहां बरसों से रहते आए हैं, वे उस जलवायु के इतने आदी हो गये हैं कि बुखार-बीमारी उन्हें ज्यादा परेशान नहीं करते। असली मुसीबत तो उन बेचारों पर पड़ती है जो अजनबी हैं और बाहर से आकर वहां ठहरे हुए हैं। अच्छा सर्गे, बातें बहुत हो गयीं। आओ, इस छोटे से दरवाजे के भीतर घुस चलें। इस बंगले में रहने वाले साहब लोग बहुत नेकदिल हैं। तुम्हें मुझसे पूछने की देर है और बस।... समझता हूं ...।"

किन्तु वह दिन उनके लिए मनहूस साबित हुआ। कुछ स्थानों में तो उन्हें भीतर ही नही घुसने दिया, बाहर से ही खदेड़ दिये गये। कई दूसरे स्थानों पर बाजे का झटके खाता हुआ घर्घराता सुर शुरू हुआ नहीं कि बाल्कनी में बैठे लोग झुंझला कर उन्हें हाथ के इशारे से आगे बढ़ जाने को कहते। कुछ घरों में नौकरों ने उन्हें यह कह कर टाल दिया कि 'मालिक' अभी घर में मौजूद नहीं है। यह सही है कि दो बंगलों में उन्होंने अपना खेल दिखलाया था, किन्तु उसका पुरस्कार उन्हें इतना कम मिला कि उनकी सारी मेहनत मिट्टी में मिल गयी। बूढ़ा कभी किसी पुरस्कार को ठुकराता नहीं था, चाहे वह कितना कम क्यों न हो। जब खेल के बाद वह सड़क पर वापिस आया तो जेब में पड़े तांबे के सिक्कों को खड़खड़ाने लगा।

"पांच कोपेक और दो कोपेक — सात कोपेक। हमें निराश नहीं होना चाहिए, सर्गे भाई। सात को सात से गुणा करो — आधा रूबल! आधे रूबल का मतलब है हम तीनों के लिए भोजन, रात को रहने के लिए कमरा और इस बूढ़े लोदिजकिन के लिए वोद्का, क्योंकि वह बेचारा बहुत सी बीमारियों का शिकार है! काश, साहब लोग इतनी सी बात समझ सकते! कंजूस इतने हैं कि बीस कोपेक हाथ से नहीं निकलते और पांच कोपेक देने में उनकी इज्जत पर बट्टा लगता है, इसलिये वे हमें दरवाजा दिखला देते हैं। वे यह मामूली सी बात कभी नहीं समझते कि कुछ भी न देने से अच्छा है कि वे तीन कोपेक ही दे दें। मुझे बुरा नहीं लगेगा। भला मैं बुरा क्यों मानूंगा?"

लोदिजकिन अत्यन्त विनम्र स्वभाव का व्यक्ति था। जब कभी कोई उसे दुरदुराकर घर से बाहर खदेड़ देता तो भी वह बुड़बुड़ाता नहीं था। किन्तु उस दिन उसके आत्म-सन्तोष की भावना को सहसा गहरी टेस लगी। वे घूमते-भटकते अपनी राह जा रहे थे कि एक स्त्री ने उन्हें अपने बंगले में बुलाया। वह एक शानदार, खूबसूरत बंगला था — जिसे एक छोटी सी वाटिका ने चारों ओर से घेर रखा था। बंगले की मालकिन अत्यन्त सुन्दर थी — गदराया हुआ स्वस्थ शरीर और चेहरे पर स्निग्ध सहृदयता का भाव अंकित था। उसने बड़े ध्यान से बाजा सुना, सर्गे की कलाबाजियों और आर्तो के चमत्कारपूर्ण करतबों को भी वह बड़े गौर से देखती रही। खेल समाप्त हो जाने के बाद उसने लड़के से बातचीत करनी शुरू कर दी — नाम और आयु के सम्बंध में सवाल पूछे। उसके प्रश्नों का सिलसिला समाप्त होने को ही नहीं आता था — सर्कस की कलाबाजियां और करतब कहां सीखे? बूढ़े का उससे क्या सम्बंध है? उसके मां-बाप क्या करते थे? इत्यादि। अपना कौतूहल शान्त करने के बाद उसने उन्हें बाहर ठहरने के लिए कहा और खुद भीतर चली गयी।

दस-पन्द्रह मिनट तक वह बाहर नहीं आयी। उसके आने में जितना अधिक विलम्ब होता जाता था, उतनी ही अधिक बूढ़े और सर्गे की आशा बढ़ती जाती थी। बूढ़ा मुंह पर हाथ रख कर सर्गे के कानों में धीरे से बुदबुदाया, "सर्गे, आज हमारा भाग्य हम पर मुस्कराने वाला है। डबल पुरस्कार मिलेगा, और उसके संग जूते और कपड़े मिलें तो भी कोई अचम्भे की बात नहीं।"

आखिर वह स्त्री घर से बाहर आयी। सर्गे ने अपना हैट आगे बढ़ा दिया। खट से एक सफेद सिक्का उसके हैट में गिरा और दूसरे क्षण ही वह स्त्री दरवाजे के भीतर गायब हो गयी। सिर्फ दस कोपेक का वह सिक्का था। दोनों ओर से उसका रंग उड़ा हुआ था और बीच में एक सुराख भी था। बूढ़ा असमंजस में खड़ा-खड़ा काफी देर तक उस सिक्के को घूरता रहा। जब वे उस बंगले से

काफी दूर सड़क पर निकल आए, तो भी वह सिक्का बूढ़े की हथेली पर रखा था। मानो वह उसे तौल रहा हो।

"बड़ी चतुर निकली वह औरत! देखा, हमारे संग कैसी चाल खेली गयी!" वह अचानक बीच रास्ते पर ठिठक गया और होठों के भीतर बुड़बुड़ाने लगा। "हम भी निरे मूर्ख निकले... उसे रिझाने के लिए हमने एड़ी-चोटी का पसीना एक कर दिया। इससे अच्छा तो वह हमें कोई बटन-वटन ही दे देती। उसे कम से कम किसी कपड़े पर लगा तो सकते हैं। लेकिन मैं इस ढेले को लेकर क्या करूं? वह शायद समझती होगी कि बूढ़ा रात के समय किसी की आंखों में धूल झोंक कर इसे चला देगा। अगर आप ऐसा सोचती हैं, मदाम, तो यह आपकी गलतफहमी है! बूढ़ा लोदिजकिन चाहे और जो कुछ करे, ऐसा काम नहीं कर सकता। हरगिज नहीं। यह रहा आपके दस कोपेक का अमूल्य पुरस्कार। इसे आप अपने पास ही रखिये।"

यह कह कर उसने अभिमान और क्रोध से उस सिक्के को हवा में फेंक दिया। खट की धीमी सी आवाज हुई और वह सिक्का सड़क की सफेद मिट्टी में धंस गया।

इस तरह बूढ़ा, बालक और कुत्ता—तीनों बंगलों के चक्कर लगाते रहे। आखिर उन्होंने सागर-तट पर जाने का निश्चय किया। किन्तु बायीं ओर एक बंगला उनके रास्ते पर पड़ता था जहां वे अभी तक नहीं जा सके थे। वह बंगला एक ऊंची सफेद दीवार की ओट में छिपा था जिसके परे धूल से सने और कृशकाय सर के वृक्षों की लंबी कतार को देखकर लगता मानो काले-सलेटी रंग की तकलियां सिर उठाये सीधी खड़ी हों। आगे लोहे का चौड़ा दरवाजा था, जिस पर कपड़े पर काढ़े गये बेल-बूटों की भांति एक पेचीदा, उलझी सी नक्काशी की गयी थी। दरवाजे के छिद्रों से रेशम सी मुलायम हरी घास के लॉन का एक कोना, फूलों की गोल क्यारियां और पीछे की ओर, अंगूरों की बेल-लताओं से ढंकी हुई एक छोटी सी पगडंडी दिखायी देती थी। लॉन के बीचों-बीच खड़ा हुआ माली एक लम्बी नली के द्वारा गुलाब के फूलों की क्यारियों में पानी छोड़ रहा था। उसने नली के मुंह पर एक उंगली लगा रखी थी, जिसके कारण फव्वारे की बूंदों में इन्द्र धनुप के सप्त-रंग झलक रहे थे।

बंगला पीछे छोड़ कर बूढ़ा आगे बढ़ा जा रहा था, किन्तु अचानक उसकी निगाहें दरवाजे के भीतर जा पड़ीं। आश्चर्य चकित होकर वह खड़ा हो गया।

"सर्गे, जरा ठहरो।" उसने लड़के को बुलाया। "मैंने बंगले के भीतर कुछ लोगों को देखा है। यह एक बड़े अचम्भे की बात है। मैं यहां से कई बार गुजरा हूं और हर बार इस बंगले को सूना-सुनसान पाया है। चलो जरा अन्दर जाकर किस्मत अजमा आएं।"

"मैत्री-कुटीर — भीतर आना मना है।" सर्गे ने दरवाजे के साथ जड़े तख्ते पर इन शब्दों को पढ़ा।

"मैत्री ?" बूढ़ा अनपढ़ आदमी था, इसलिए सर्गे ने जिन शब्दों का उच्चारण किया, बूढ़े ने बस उन्हें दुहरा भर दिया। "मैत्री — कितना सही, कितना सच्चा शब्द है। आज का दिन अच्छा नहीं गुजरा, लेकिन ऐसा लगता है कि अब हमें अपनी मेहनत का फल मिलने वाला है। शिकारी कुत्ते की तरह मैं केवल हवा सूंघने मात्र से सब कुछ जान लेता हूं। आर्तो ! कुत्ते के बच्चे, इधर आओ। सर्गे, तुम आगे-आगे अन्दर चलो। जो कुछ पूछना हो, मुझ से पूछ लेना। मुझे सब मालूम है।"

तीन

वाटिका के बीचोंबीच छोटा सा रास्ता था। पांव रखते ही बजरी चर-मरा उठती थी। सड़क के दोनों ओर गुलाबी रंग की सीपियां लगी हुई थीं। घास के रंग-बिरंगे कालीन के ऊपर फूलों से लदी क्यारियां बिछी थीं। सारा वातावरण फूलों की सुवास से महक रहा था। फव्वारों के इर्द-गिर्द स्वच्छ, निर्मल जल कलकल करता बह रहा था। पेड़ों के बीच सुन्दर गमले रखे हुए थे, जिन पर बेल-लताओं की पुष्प-मालाएं झालर सी झूल रही थीं। बंगले के संगमरमर के स्तम्भों पर गेंद से गोल दो आइने जड़े हुए थे, जिनमें भीतर आते हुए बुड्ढे, बालक और कुत्ते की छायाएं बेडौल और उलटी सी दिखलायी दे रही थीं।

बालकनी के सामने साफ, समतल मैदान पर सर्गे ने कालीन बिछा दिया। बूढ़ा अपने बाजे का सुर छेड़ने ही वाला था कि एक विचित्र, अप्रत्याशित घटना ने बीच में बाधा डाल दी।

आठ-दस वर्ष का एक बालक जोर-जोर से चिल्लाता हुआ बंगले के भीतर से निकल कर बाहर बरामदे में आ गया। वह हल्के रंग की नाविकों की पोशाक पहने हुए था — घुटने और बाहें नंगी थीं। उसके सुन्दर घुंघराले बाल लापर-वाही से कंधों पर झूल रहे थे। लड़के के पीछे स्त्री-पुरुषों का एक दल बरामदे में आता हुआ दिखायी दिया। वे सब चिन्तित मुद्रा में लड़के के पीछे-पीछे भाग रहे थे। उस दल में कुल मिलाकर छः व्यक्ति थे: हाथों में नेप्किन लिए दो स्त्रियां, लम्बा पुच्छला कोट पहने एक बूढ़ा स्थूलकाय अनुचर, जिसकी दाढ़ी-मूछ साफ थी किन्तु जिसके ऊपरी होंठ के कोनों से भूरे बाल लटक रहे थे, लाल धारियों की फ्राक पहने लाल बालों और लाल नाक वाली एक युवती, एक सुन्दर महिला जिसका चेहरा देखने में बहुत पीला और रुग्ण सा दिखायी देता

था और जिसने पीले-नीले लेस वाला ड्रेसिंग-गाऊन पहन रखा था, और अन्त में सबसे पीछे टसर का सूट पहने, सुनहरे फ्रेम का चश्मा लगाये एक हृष्ट-पुष्ट शरीर और गंजे सिर वाले सज्जन आते दिखायी दिये। वे सब एक साथ जोर-जोर से बोल रहे थे, हवा में हाथ नचा रहे थे और एक दूसरे को धक्का देकर आगे बढ़ने के लिए आतुर थे। यह स्पष्ट था कि इन लोगों की चिन्ता और उत्तेजना का कारण वही लड़का था जो कुछ देर पहले बरामदे में भाग आया था।

वह लड़का बराबर चीखे जा रहा था। वह पेट के बल पत्थर के फर्श पर लोटपोट हो रहा था और गुस्से में चिल्लाता हुआ हाथ-पांव मार रहा था। सब उसे मनाने पुचकारने में लगे हुए थे। बूढ़ा अनुचर कलफ से अकड़ी अपनी कमीज पर हाथ रखकर, गलमुच्छों को हिलाता हुआ अनुनय-विनय कर रहा था : "बाबू निकोलाय ऐपोल्लोनोविच, अपनी ममी को तंग मत कीजिए। मैं आपसे अनुरोध करता हूं कि आप दवा पी लीजिए। मैंने कहा न, बड़ी मीठी दवा है—बिलकुल शर्बत की तरह। देखिए, अब ज्यादा परेशान मत कीजिए। जल्दी से उठ जाइये और दवा पी लीजिए।"

जिन स्त्रियों के हाथों में बालक के नेप्किन थे, वे एक दूसरे से जोर-जोर से भयभीत स्वर में बातचीत कर रही थीं। लाल नाक वाली युवती दुःख भरी मुद्रा में हाथ हिला रही थी और विदेशी-भाषा में कुछ ऐसी बातें कह रही थी जो सुनने में बहुत मर्मस्पर्शी जान पड़ती थीं, किन्तु जिनका अर्थ कुछ भी पल्ले नहीं पड़ता था। सुनहरे चश्मे वाले सज्जन अपने सर को इधर-उधर हिलाते हुए अपने हाथों को ऊपर उठाकर भारी गम्भीर स्वर में बालक को डांट-डपट रहे थे। सबसे अलग खड़ी थी वह सुन्दर महिला, जिसके पीले उदास चेहरे को देख कर लगता था मानो वह बीमार हो। वह धीरे-धीरे कराह रही थी और महीन लेस के रूमाल से बार-बार अपनी आंखें पोंछ रही थी।

"ट्रिल्ली, ईश्वर के लिए कहना मान जाओ! मेरे राजा, मेरी बात भी नहीं मानोगे—अपनी ममी की बात? दवा खाने से तुम एकदम ठीक हो जाओगे। तुम्हारे पेट और सिर का दर्द चुटकी बजाते ही दूर हो जायेगा। नहीं लोगे? ट्रिल्ली, क्या तुम चाहते हो कि ममी तुम्हारे पांव पर गिर कर तुम्हारी खुशामद करे? अच्छा लो, मैं तुम्हारे पांव पड़ती हूं! अच्छा मैं तुम्हें अशर्फी दूंगी, फिर तो दवा पियोगे न? दो अशर्फियां? पांच अशर्फियां? ट्रिल्ली, क्या हम तुम्हारे लिए सचमुच का एक छोटा सा गधा ला दें? फिर तो खुश हो जाओगे न? एक छोटा सा टट्टू लोगे? डॉक्टर साहब, मेरी बात तो मानता ही नहीं। आप ही इसे जरा समझाइये।"

"ट्रिल्ली, मैं कहता हूं, आदमी बनो!" सुनहरे चश्मे वाले सज्जन दन-दनाती आवाज में चिल्लाये।

"ऊं-हूं ऊं-हूं ..." बालक फर्श पर लोटता हुआ और भी तेजी से पांव पटकने लगा।

वह किसी को अपने पास फटकने नहीं देता था। जो उसके जरा निकट जाता, बालक अपनी एड़ियों और लातों से उसकी टांगों और पेट पर प्रहार करने लगता था। वे भी उसके प्रहारों से बच निकलने की विद्या जानते थे।

सर्गे काफी देर से आश्चर्य और कौतूहल भरी आंखों से यह दृश्य देखता रहा। पास खड़े बूढ़े को कुहनी मार कर उसने कहा :

"दादा लोदिजकिन, इस लड़के पर क्या कोई भूत सवार हो गया है? क्या वे लोग उसे कोड़े से पीटने वाले हैं?"

"इसे कोड़े से पीटेंगे? वाह, क्या बात कही! अरे, यह खुद इन्हें कोड़े लगा सकता है। सिर-चढ़ा लड़का है, शायद बीमार भी है।"

"क्या तुम्हारा मतलब पागलपन की बीमारी से है?"

"हिश! मुझे क्या मालूम?"

"ऊं-हूं-ऊं-हूं ... सुअर, बेवकूफ ..." बालक का चिल्लाना क्षण प्रति क्षण बढ़ता जा रहा था।

"आओ, सर्गे! हम अपना खेल शुरू करें। मैं सारी बात समझ गया हूं।" लोदिजकिन ने अचानक बाजे का सुर छेड़ दिया।

एक पुरानी, घर्घराती, हांफती सी धुन बाजे से निकलने लगी। सारा बाग संगीत-स्वर से गूंजने लगा।

"हे ईश्वर! यह एक नयी मुसीबत आ गयी!" जिस महिला ने नीले रंग की ड्रेसिंग-गाऊन पहन रखी थी, वह रुआंसी आवाज में बोली। "इन लोगों को देखकर बच्चा और भी बिखर जायेगा। इन्हें यहां से दफा करो। अरे, उनके पास एक कुत्ता भी है। बड़ी भयानक बीमारियां इन कुत्तों से चिपटी रहती हैं! अरे इवान, तुम बुत की तरह क्या खड़े हो—यहां से निकालो इन लोगों को!"

उसने खिन्न भाव से बूढ़े और सर्गे की ओर रूमाल हिलाकर उन्हें वहां से चले जाने का संकेत किया। लाल नाक वाली युवती क्रोध में अपनी आंखें तरेरने लगी, कोई और उन्हें धमकी देता हुआ चिल्लाया। पुच्छल्ले कोट वाला अनुचर तेजी से सीढ़ियां उतर कर बूढ़े के सामने भागता हुआ आया और हवा में हाथ हिलाता हुआ उन्हें घुड़कियां देने लगा :

"इसका क्या मतलब है? तुम्हें किसने अन्दर आने के लिए कहा?" वह अपनी फटी-रुंधी आवाज में बुदबुदाया। उसका स्वर भय और क्रोध से लड़खड़ा रहा था। "एक दम यहां से निकल जाओ। फौरन ... अभी! इस तरह मकान के भीतर घुस आने के लिए तुम्हें किसने इजाजत दी?"

बाजे के भीतर से एक करुण, विवश सी सिसकी बाहर निकली और वह एकदम चुप हो गया।

"आप मेरी बात तो सुनिये, हजूर।" बूढ़े ने विनम्र भाव से कहा।

"अपनी बात अपने पास रखो। मैं कुछ नहीं सुनना चाहता। यहां से चलते-फिरते नजर आओ।" पुच्छल्ले कोट वाला शख्स फुत्कारती आवाज में जोर से चिल्लाया।

एक ही क्षण में उसका गेंद सा मुंह लाल-सुर्ख हो गया, आंखें इस कदर चौड़ी होकर फैल गयीं मानो अभी पुतलियां बाहर निकलना चाहती हैं। वह अपनी उन आंखों को छोटी-छोटी चरखियों की तरह जोर-जोर से घुमा रहा था। उसकी इस भयानक मुख-मुद्रा को देखकर बेचारा लोदिजकिन डर कर दो कदम पीछे हट गया।

"सर्गे, चलो भाई," उसने बाजे को पीठ पर रखते हुए कहा। "यहां से जितनी जल्दी बाहर निकल सकें, उतना ही अच्छा है।"

किन्तु अभी वे कुछ ही कदम आगे गये होंगे कि बाल्कनी से चीखों की एक नयी बाढ़ उमड़ आयी।

"ऊ-हूं-ऊ-हूं ... मैं वह लूंगा। उन्हें यहां बुला लाओ। जल्दी करो ..."

"लेकिन ट्रिल्ली ... हाय भगवान ... अरे कोई है, इन लोगों से वापिस आने के लिए कह दो।" वह महिला उद्वेलित होकर जोर से चिल्लायी। "कैसे बेवकूफ हो तुम सब लोग ? इवान, जल्दी करो। उन भिखमंगों को फौरन वापिस बुला लो।"

मोटा अनुचर अपने गलमुच्छे हिलाता हुआ एक गोल-मटोल गेंद की तरह उन दोनों के पीछे भागने लगा।

"अरे ओ बाजे वालो ! तुम्हें बुला रहे हैं। वापिस आ जाओ। जल्दी करो !" वह हवा में हाथ हिलाता, हांफता हुआ पूरा जोर लगाकर चिल्ला रहा था। "अरे ओ बुढ़ऊ दादा," उसने लोदिजकिन की आस्तीन खींचते हुए कहा। "मेरे संग चले आओ। साहब लोग तुम्हारा खेल देखना चाहते हैं।"

"अब मैं नहीं आऊंगा," बूढ़े लोदिजकिन ने सिर हिला कर ठंडी सांस भरी। किन्तु वह बरामदे के पास जाकर खड़ा हो गया और बाजे पर 'गैलप' की धुन फिर वहीं से शुरू कर दी, जहां से छोड़ी थी।

बाल्कनी से आता हुआ कोलाहल और शोरगुल एकाएक शान्त हो गया। महिला, बच्चा और सुनहरे चश्मे वाले सज्जन रेलिंग से सटकर खड़े हो गये, बाकी लोग आदर-भाव से पीछे खड़े रहे। बाग का माली भी बूढ़े के पास खड़ा होकर बाजा सुनने लगा। बंगले का द्वारपाल भी न जाने कहां से वहां टपक पड़ा और माली के पीछे खड़ा हो गया। उसका बहुत ही प्रभावशाली व्यक्तित्व

था — लम्बी दाढ़ी, चेहरे पर सीतला के दाग और छोटा सा माथा। उसने गुलाबी रंग की एक नयी कमीज पहन रखी थी, जिस पर काले धब्बों की तिरछी धारियां खिंची हुई थीं।

बाजे की घर्घराती खंखारती आवाज के संग सर्गे ने भी अपना काम शुरू कर दिया। उसने एक फटा-पुराना कालीन जमीन पर बिछा दिया, अपनी किर-मिच की पतलून (वह पतलून एक पुराने थैले को काट-फाड़कर बनायी गयी थी और उसके पीछे गद्दी पर एक चौकोर शक्ल का ट्रेड-मार्क अंकित था) और पुरानी वास्कट उतार दी। जांगिया और बनियान के अलावा अब उसके शरीर पर कोई तीसरा वस्त्र नहीं था। इन दोनों कपड़ों पर अनेक थिगलियां लगी हुई थीं, किन्तु उसकी चुस्त, पतली देह पर ये वस्त्र खूब फब रहे थे। सर्कस के कुशल नटों की नकल वह आसानी से उतार लेता था। कालीन की ओर दौड़ते हुए उसने अपने हाथ होठों पर रख लिए और फिर नाटकीय मुद्रा में अपनी दोनों बाहें हवा में फैला दीं, मानो अपने हाथों को होठों से चूमकर वह दर्शकों का अभिवादन कर रहा हो।

बूढ़ा लोदिजकिन एक हाथ से वाजा बजाता जा रहा था और दूसरे हाथ से बहुत सी वस्तुएं एक-एक करके फेंकता जा रहा था, जिन्हें सर्गे उछलकर बीच हवा में पकड़ लेता था। सर्गे का झोला ज्यादा बड़ा नहीं था, किन्तु सर्कस नटों की भाषा में उसके 'हाथ की सफाई' देखते ही बनती थी। उसे खुद अपने खेलों में आनन्द आता था — कम से कम उसके चेहरे को देखकर तो ऐसा ही प्रतीत होता था। वह बियर की खाली बोतल हवा में फेंक देता और कला-बाजियां खाती हुई जब वह नीचे आती तो उसे झट तश्तरी के एक कोने पर मुंह के बल टिका लेता और देर तक उसे चरखी की तरह घुमाता रहता। हाथी दांत की चार गेंदों और दो मोमबत्तियों को हवा में ऊपर उछालता और फिर एक संग उन्हें दो शमादानों की सहायता से पकड़ लेता। एक अन्य दिलचस्प खेल में वह एक संग तीन वस्तुओं — लकड़ी का सिगार, छतरी और पंखा — के साथ खेलता रहा। वे सब चीजें बिना धरती को छुए एक संग हवा में ऊपर-नीचे उछलती रहतीं, अचानक सब लोग स्तम्भित होकर देखते कि छाता सर्गे के ऊपर है, सिगार मुंह में आ गया है और पंखा इतराता हुआ हवा में डोलता उसके चेहरे को ठन्डक पहुंचा रहा है। खेल को समाप्त करने से पूर्व सर्गे कालीन पर कई बार कलाबाजियां खाता, "मेंढक" बनता, "अमरीकी गांठ" बांधता और हाथों के बल फुदकता हुआ दौड़ लगाता। जब सब चमत्कारों का झोला खाली हो जाता तो वह दर्शकों के सम्मान में पुनः अपने हाथों को होठों पर ले जाकर दो बार चूमता और बाजा बजाते हुए लोदिजकिन दादा के पास आकर खड़ा हो जाता।

सर्गे के बाद आर्तो की बारी आयी। कुत्ता पहले से ही यह जान गया था। वह उत्तेजित होकर जोर-जोर से भौंक रहा था और बार-बार बूढ़े की ओर लपकता था। बूढ़े लोदिजकिन ने उसके गले में बंधे फीते को अपने हाथ में दबोच रखा था। संभवत: वह चतुर कुत्ता कह रहा था कि इतनी गर्मी में—जब पेड़ की छाया तले भी तापमान सौ डिग्री से ऊपर हो—कलाबाजियां खाना और सर्कस के खेल दिखलाना सरासर मूर्खता है। किन्तु लोदिजकिन दादा ने अपने बाल धूप में सफेद नहीं किये थे। वह झट आर्तो के मनोभाव ताड़ गये। उन्होंने एक लम्बा चाबुक सड़ाक से बाहर निकाल लिया। "तुम यही तो करोगे। मैं पहले से ही जानता था।" आर्तो ने चाबुक देखकर सोचा। वह अपना क्रोध प्रकट करने के लिए आखिरी बार जोर से भौंका और अनमने-भाव से अपनी पिछली टांगों पर खड़ा हो कर झपकती आंखों से बूढ़े की ओर ताकने लगा।

"वाह, खूब! आर्तो!" बूढ़े ने चाबुक कुत्ते के सर पर हिलाते हुए कहा। "जरा मुड़ो। ठीक! जरा और मुड़ो—हां बस, बार-बार ऐसे ही मुड़ते जाओ। अच्छा आर्तो प्यारे, जरा अपना नाच तो दिखा दो। क्या मतलब? नाचने को मन नहीं है? आर्तो, बैठ जाओ। मैं कहता हूं बैठ जाओ। हां, अब ठीक है। अच्छा अब बाबुओं और बीबियों को सलाम करो। आर्तो! क्या बात है, फिर मचल गये?" बूढ़े ने ऊंची आवाज में जोर से डांटा।

"भौं-भौं!" कुत्ता खिन्न-मन से रिरियाने लगा। उसके बाद उसने करुण-दृष्टि से बूढ़े की ओर देखा और फिर दो बार "भौं-भौं" करके सलाम किया।

"बूढ़ा कभी मेरे मन की बात नहीं समझता," कुत्ता भौंकता हुआ मानो यही बात कह रहा था।

"हां, यह ठीक है। आर्तो, शिष्टाचार बड़ी चीज है। इसे कभी मत भूलना। अच्छा अब जरा कूदो!" बूढ़ा चाबुक को जमीन के पास हिलाता हुआ आदेश पर आदेश दिये जा रहा था। "अपनी जुबान बाहर मत निकालो। ठीक! अब फिर करो। वाह, बहुत खूब, मेरे बच्चे! घर चल कर तुझे गाजर खिलाऊंगा। क्या कहा, गाजरें तुझे अच्छी नहीं लगतीं? अरे हां, मैं तो भूल ही गया था। अच्छा तो यह मेरा हैट लो और बाबुओं और बीबियों से भिक्षा मांग लाओ। शायद वे तुझे तेरे मन की चीज दे दें।"

बूढ़े ने कुत्ते को उसकी पिछली टांगों पर खड़ा कर दिया और अपनी मैली-कुचैली टोपी, जिसे उसने मजाक में हैट कहा था—उसके मुंह में ठूंस दी।

आर्तो ने दांतों से टोपी पकड़ ली और छोटे-छोटे डग भरता हुआ बरामदे की ओर चल पड़ा। बीमार महिला के हाथों में मोतियों का एक छोटा सा बटुआ झिलमिला उठा। उसके इर्द-गिर्द खड़े स्त्री-पुरुष सद्भावना प्रकट करते हुए मुस्कराने लगे।

"देखा, मैंने क्या कहा था ?" बूढ़ा झुक कर सर्ग के कानों में बुदबुदाने लगा। "मैं पहले ही समझ गया था। देख लेना, रूबल से कम नहीं मिलेगा।"

उसी समय एक भयंकर, कर्णभेदी चीख सुनायी दी। डर के मारे आर्तो के मुंह से टोपी छूट गयी। वह पीछे मुड़ा और टांगों के बीच पूंछ दबाकर बूढ़े के पास भाग आया।

"मैं इसे लूंगा." घुंघराले बालों वाला बालक पांव पटकता हुआ पतली आवाज में चिल्लाया। "मैं इस कुत्ते को लूंगा—ट्रिल्ली इस कुत्ते को लेना चाहता है!"

एक बार फिर बरामदे में भगदड़ सी मच गयी। "हे भगवान, मैं क्या करूं! निकोलाय ऐपोल्लोनोविच, चुप हो जाओ। इस तरह नहीं चीखते। हे ईश्वर, इसे क्या हो गया है?"

"कुत्ता... मुझे वह कुत्ता चाहिए। तुम सब जानवर हो, बेवकूफ हो। मुझे कुत्ता लाकर क्यों नहीं देते?" बालक चीखे जा रहा था।

"अच्छा मेरे राजा, जो तुम कहोगे, वही होगा।" नीले ड्रेसिंग-गाऊन वाली स्त्री ने मिन्नत-आरजू करते हुए कहा। "तुम कुत्ते को प्यार करना चाहते हो? इसमें मुश्किल ही क्या है? तुम इतनी सी बात पर रो क्यों रहे हो? डाक्टर, क्या ट्रिल्ली कुत्ते को प्यार कर सकता है?"

"साधारण-रूप से मैं इसकी अनुमति नहीं दे सकता," डॉक्टर ने हताश भाव से दोनों हाथ हवा में फैला दिये। "किन्तु यदि इस कुत्ते को बोरिक एसिड या कार्बोलिक एसिड से अच्छा तरह धो दिया जाय तो मेरे विचार में..."

"मैं वह कुत्ता लूंगा—अभी, फौरन!"

"जरा ठहरो, मेरे राजा-बेटे। हां तो डॉक्टर, हम इस कुत्ते को बोरिक-एसिड से धुलवा लेंगे, फिर तो कोई खतरे की बात नहीं है? ट्रिल्ली, इतने उत्तेजित मत हो—जरा डॉक्टर साहब से बात कर लेने दो। अच्छा, ओ बूढ़े, जरा अपने कुत्ते को यहां लाओ। डरो नहीं, तुम्हें पैसे मिलेंगे। अच्छा, यह तो बताओ, इसे कोई बीमारी-शिमारी तो नहीं है? मेरा मतलब है कि तुम्हारा कुत्ता कहीं पागल तो नहीं है? इसे खुजली तो नहीं होती?"

"मैं कुत्ते को प्यार करने के लिए नहीं लेना चाहता।" ट्रिल्ली इतनी जोर से चिल्लाया कि उसके नाक और मुंह से बुलबुले निकलने लगे। "मैं इसे अपने लिए चाहता हूं। कुछ समझ में आया? तुम्हें कभी कुछ समझ में नहीं आयेगा—जानवर और बेवकूफ जो हो। मैं इस कुत्ते को हमेशा के लिए लेना चाहता हूं। मैं रोज इससे खेलूंगा। यह कुत्ता मेरा होगा—हमेशा के लिए।"

"बूढ़े बाबा, जरा सुनो, पास आ जाओ।" बालक की चीखों के नीचे उस महिला का स्वर दब सा गया। "ट्रिल्ली, तुम अपनी चीखों से ममी को

मार डालोगे। इन बाजे वालों को भीतर ही क्यों आने दिया? पास आओ, जरा और पास आओ। ट्रिल्ली बेटा रोते नहीं। जो तुम मांगोगे, तुम्हारी ममी तुम्हें वही चीज लाकर देगी। डाक्टर, बच्चे को जरा चुप करवाओ। बूढ़े बाबा, तुम्हें कितने पैसे चाहिएं ?"

बूढ़े ने अपनी टोपी उतार ली। उसका चेहरा दीन-दयनीय हो आया।

"बेगम साहबा, आप जो कुछ ठीक समझें। मैं गरीब आदमी हूं, जो कुछ भी मिलेगा उसे अहोभाग्य समझकर स्वीकार कर लूंगा। मुझे मालूम है कि आप मुझ जैसे गरीब आदमी के संग अन्याय नहीं करेंगी।"

"कैसी बेतुकी बातें कर रहे हो! ट्रिल्ली, मेरे बेटे, इस तरह चीखने से तुम्हारा गला बैठ जाएगा। हां, बूढ़े बाबा, जल्दी बतलाओ, कितना लोगे ? कुत्ता तुम्हारा है, मेरा नहीं। दस, पन्द्रह, बीस ? कितना लोगे ?"

"मुझे कुत्ता चाहिये ... ऊं-हूं-ऊं-हूं ... मैं कुत्ता लूंगा, अभी फौरन ... बालक चीखता हुआ अनुचर की फैली हुई तोंद पर लातें मार रहा था।

"आपका मतलब है ... मैं समझा नहीं बेगम साहबा!" लोदिजकिन बुरी तरह हकला रहा था। "बूढ़ा आदमी ठहरा — मुझ में इतनी अक्ल कहां है, बेगम साहबा ? एकाएक मैं कोई फैसला नहीं कर पाता। मुझे कुछ ऊंचा सुनायी देता है। आपने अभी क्या फरमाया था ? क्या आप मेरे कुत्ते का दाम पूछ रहीं थीं ?"

"तौबा! ओ बूढ़े, क्या तेरी अक्ल घास चरने गयी है ?" महिला का गुस्सा भड़क उठा। "नर्स, ट्रिल्ली को एक गिलास पानी दो — जल्दी करो। मैं तुम से एक सीधा-सादा सवाल पूछ रही हूं। कुत्ते के एवज में तुम्हें क्या चाहिए ? अब कुछ समझ में आया ? हां यही, तुम्हारा कुत्ता — कुत्ता!"

"कुत्ता — कुत्ता!" बालक पूरा जोर लगाकर गला फाड़ रहा था।

लोदिजकिन ने टोपी सर पर रख ली। उसके स्वाभिमान को ठेस पहुंची थी।

"बेमग साहबा, मेरा पेशा कुत्ते बेचना नहीं है।" उसने आत्म-सम्मान से भरे रूखे स्वर में कहा। "जहां तक इस कुत्ते का सवाल है, यह हम दोनों के लिए रोटी-कपड़ा कमाता है।" उसने अंगूठे से सर्गे की ओर संकेत करते हुए कहा, यह जतलाने के लिए कि "दोनों" में वह भी शामिल है। "इस कुत्ते को बेचने का सवाल ही पैदा नहीं होता।"

इस बीच ट्रिल्ली की चीखें इंजन की सीटी से अधिक तीखी और तेज हो उठी थीं। जब पानी का गिलास उसके सामने लाया गया तो गुस्से में उसने उसे नर्स के मुंह पर दे मारा।

"बुड्ढे, क्या तेरी बुद्धि सठिया गयी है ? कहता है कुत्ता नहीं बेचूंगा। अरे, दुनिया में कौन सी ऐसी चीज है जो बेची और खरीदी न जाती हो !" सुन्दर महिला ने अपनी दोनों कनपटियों को हथेलियों से दबाते हुए कहा। "नर्स, तुम्हारा मुंह पानी से भीग गया ? कोई बात नहीं, जल्दी से पोंछ डालो — और देखो, जरा नमक सूंघने की मेरी डिबिया तो लाना। हो सकता है तुम्हारे कुत्ते की कीमत सौ रूबल हो। या दो सौ रूबल — तीन सौ रूबल ? मुंह बाए क्या देख रहे हो ? जवाब क्यों नहीं देते ? डाक्टर, तुम्हीं इसे कुछ समझाओ। मैं तो तंग आ गयी।"

"सर्गे, आओ चलें !" लोदिजकिन बुड़बुड़ाया। "कुत्ता मांगते हैं ! यह भी खूब रही। चलो, आर्तो !"

"अरे भले आदमी, कहां चले ?" सुनहरे चश्मे वाला वह स्थूलकाय व्यक्ति जोर से दहाड़ा। "ज्यादा न उड़ो, तुम्हारा दिमाग तो सातवें आसमान पर चला गया है। मेरी सलाह मानो तो कुत्ते को दस रूबल में बेच डालो। अरे, दस रूबल में तो कुत्ते समेत तुम्हें भी खरीदा जा सकता है ! बेवकूफ, घर आयी लक्ष्मी को क्या इस तरह ठुकराया जाता है ?"

"आपका बहुत बहुत धन्यवाद !" लोदिजकिन ने बाजे को पीठ पर रखते हुए कहा। "मुझे खेद है कि मैं कुत्ता नहीं बेच सकता। कुत्तों की कमी नहीं है, आप कहीं से भी खरीद सकते हैं। चलो सर्गे आगे बढ़ो।"

"अपना पासपोर्ट तो दिखाना जरा ! मैं तुम जैसे लुच्चे-लफंगों की रग-रग पहचानता हूं।" डॉक्टर ऊंची आवाज में चिल्लाया।

"चौकीदार ! सेमयोन ! इन लोगों को फाटक के बाहर निकाल दो।" वह महिला जोर से चीख उठी। क्रोध से उसका चेहरा विकृत हो गया था।

गुलाबी कमीज पहने चौकीदार उनकी तरफ लपका। उसकी दृष्टि में एक अजीब सी क्रूरता छिपी थी। बरामदे के शोरगुल को सुनकर लगता था मानो भूचाल आ गया हो। ट्रिल्ली अपनी पूरी शक्ति लगाकर चिंघाड़ रहा था, उसकी मां सिसकियां भर रही थी, दोनों नर्सें घबराकर इधर-उधर भाग रही थीं और आपस में एक दूसरे से बहुत ऊंचे स्वर में चीख-चीख कर कुछ कह रही थीं। डॉक्टर अलग एक क्रुद्ध मधु-मक्खी की तरह भिनभिना रहा था। उस नाटक का अन्त कैसे हुआ, यह बूढ़ा और सर्गे नहीं देख सके। वे सिर पर पांव रख कर एक सांस में फाटक तक भागते चले गये। उनका कुत्ता डर के मारे रिरियाता हुआ उनके पीछे-पीछे भाग रहा था। चौकीदार बूढ़े को धक्का देता हुआ उनके पीछे चला जा रहा था।

"आवारागर्द कहीं के ! बदमाश, लुच्चे !" वह गालियां दे रहा था। "खैर मनाओ कि तुम्हारे शरीर के सब अंग साबूत बच गये। अगली दफा कभी

यहां दिखायी दिये, तो मार-मार कर कचूमर निकाल दूंगा, और बाद में पुलिस इंसपेक्टर के हवाले कर दूगा।"

बूढ़ा लोदिजकिन और सर्गे कुछ देर तक सड़क पर चुपचाप चलते रहे। फिर उन्होंने अचानक — मानो उनके बीच एक मूक-समझौता हो — एक दूसरे की ओर देखा और दोनों ही मुस्कराने लगे। पहले सर्गे ठहाका मार कर हंसा और बूढ़े ने जब उसे हंसते देखा तो तनिक संकोच भाव से वह खुद भी मुस्कराने लगा।

"लोदिजकिन दादा। तुम तो सब कुछ जानते हो — ठीक है न?" सर्गे ने शरारत भरे स्वर में उसे चिढ़ाना शुरू कर दिया।

"क्या बताएं भाई — इस बार सचमुच बड़े झमेले में पड़ गये।" बूढ़े ने सिर हिलाते हुए कहा। "वह बालक भी सचमुच शैतान का अवतार था। उन लोगों ने कैसी अजीब आदतें डाल दी हैं उसमें! जरा सोचो, कम से कम पच्चीस आदमी उसकी अंगुली के इशारे पर नाचते-फिरते हैं। मेरा बस चले, तो बच्चू को नानी याद करवा दूं।...लाट साहब को कुत्ता चाहिए! कल वह चांद के लिए रोने बिलखने लगेगा! यह भी कोई बात हुई भला? आर्तो, मेरे बच्चे, जरा इधर तो आ। हे ईश्वर, आज जो देखा, वह कभी नहीं भूल सकूंगा। हमेशा याद रहेगा यह दिन!"

'याद क्यों नहीं रहेगा। हर रोज आज की तरह खुशकिस्मत थोड़े ही हो सकते हैं! एक औरत ने हमें कपड़े दिये, दूसरी ने पूरा एक रूबल। लोदिजकिन दादा, तुम्हारा अनुमान कितना सही निकलता है। मैं तो हैरान हूं!"

"मरदूद, चुप नहीं रहेगा?" बूढ़ा मुस्कराता हुआ गुर्राया। "तुम अपनी बात भूल गये बच्चू? चौकीदार को देखते ही सारी सिट्टी-पिट्टी भूल गये — सिर पर पांव रख कर ऐसे भागे कि कुछ पता ही न चला। आखिर वह चौकीदार भी तो एक ही था — पूरा यम का रूप!"

तीनों क्रीड़ा-वन से बाहर आ गये और एक ऊबड़-खाबड़ ढलुआं रास्ते से सागर-तट की ओर चलने लगे। समुद्री चट्टानें अब काफी पीछे दिखायी देने लगीं। वे एक ऐसे छोटे से मैदान में पहुंच गये, जो छोटे-छोटे पत्थरों से भरा पड़ा था और जिसके किनारे को समुद्र की लहरें धीरे से छूकर वापिस लौट जाती थीं। किनारे से लगभग पांच सौ गज की दूरी पर डॉल्फिन (एक किस्म का समुद्र-पक्षी) पानी में गोते लगा रहे थे। एक क्षण के लिए उनकी गोल चमचमाती पीठें पानी के ऊपर दिखायी दे जाती थीं। दूर क्षितिज को देख कर लगता था मानो समुद्र के हरे रेशमी जल पर किसी ने गहरे नीले रिबन की गोट लगा दी हो। उसी दिशा में मछुओं की नावों के पाल सूरज की किरनों की छाया में हल्के गुलाबी रंग में डूबे दिखायी दे रहे थे।

"लो लोदिजकिन दादा, आखिर हम उस जगह पर आ पहुंचे, जहां हमने स्नान करने का इरादा किया था।" रास्ते में ही सर्गे ने एक टांग पर फुदकते हुए अपनी पतलून उतार ली थी। "दादा, तुम्हारी पीठ से बाजा उतार दूं?"

सर्गे ने झटपट अपने सारे कपड़े उतार फेंके और अपने नंगे शरीर को थपथपाने लगा। सूरज के प्रचण्ड ताप के कारण उसकी देह चॉकलेटी रंग की हो गयी थी। तेजी से छलांग मार कर वह जल में कूद पड़ा। उसके इर्द-गिर्द उफनती फेनिल लहरें उठने लगीं।

बूढ़े ने धीरे-धीरे अपने वस्त्र उतारे। हाथ से आंखों को छाया देकर स्नेह से मुस्कराते हुए वह पानी में नहाते सर्गे को देखने लगा।

"बड़ा ही होनहार बालक है।" उसने मन-ही-मन सोचा। "है तो काफी पतला-दुबला — इतनी दूर से भी उसकी पसलियां दिखलायी देतीं हैं। किन्तु इससे क्या? अक्ल और परिश्रम में वह किसी से कम नहीं है।"

"सर्गे, इतनी दूर मत तैरो। गहरे पानी में कोई खतरनाक मछली न हो।"

"दादा, कहीं कोई खतरनाक मछली दिखायी दे गयी, तो उसकी पूंछ पकड़ कर खींच लूंगा!"

बड़ी देर तक बूढ़ा अपनी बगलों में हाथ दबाए धूप में खड़ा रहा। फिर झिझकते हुए वह धीरे-धीरे पानी में घुसा। डुबकी लगाने से पहले उसने अपनी सुर्ख, गंजी खोपड़ी और छाती के गढ़हे को पानी से स्पर्श किया। उसके शरीर के अंग ढीले पड़ गये थे, टांगों के पतलेपन को देख कर आश्चर्य होता था। इतने वर्षों से बाजे का बोझ उठाते-उठाते उसकी पीठ झुक आयी थी और उस पर कंधों की उभरी हुई लम्बी हड्डियां दिखायी देती थीं।

"लोदिजकिन दादा, देखो!" सर्गे दूर से चिल्लाया। बूढ़े के देखते-देखते उसने पानी में कलाबाजी खायी। बूढ़े की कमर तक पानी आ गया। वह उल्लसित मन से धीरे-धीरे डुबकियां लगा रहा था। सर्गे को पानी में उछलकूद मचाते देख वह जोर से चिल्लाया, "क्या करता है गधे! आगे से इस तरह की कलाबाजियां कभी मत खाना, वरना अच्छी तरह से खबर लूंगा!"

आर्तो एकाएक उत्तेजित हो उठा था। वह समुद्र तट पर जोर-जोर से भौंकता हुआ तेजी से इधर-उधर भाग रहा था।

उसे शायद अपने मित्र की, जो समुद्र में इतनी दूर तक चला गया था, चिन्ता सता रही थी। "शान क्यों मार रहे हो?" वह भौंकता हुआ अपनी भाषा में चिल्ला रहा था। "चारों ओर इतनी सारी सूखी धरती फैली है। यहां कोई खतरा नहीं, फिर पानी में घुस कर मौत के मुंह में क्यों जाते हो?"

किन्तु वह स्वयं समुद्र में वहां तक चला आया था, जहां पानी उसके पेट तक आता था। समुद्र का खारा पानी उसे अरुचिकर लग रहा था। सागर तट

के कंकरों से टकराती हुई छोटी-छोटी लहरों को देख कर उसके मन में एक अजीब सा डर समा गया था। वह पानी से निकल कर तट पर वापिस लौट आया और सर्गे पर जोर-जोर से भौंकने लगा, मानो उससे कह रहा हो : "तुम्हारी इन कलाबाजियों में मुझे कोई दिलचस्पी नहीं। बूढ़े दादा के पास समुद्र तट पर वापिस क्यों नहीं लौट आते ? हाय ! सचमुच यह लड़का बहुत परेशान करता है !"

"अरे-ओ, सर्गे ! कब तक यहां रहोगे ? अब वापिस लौट आओ — बहुत नहाना-धोना हो चुका !" बूढ़ा चिल्लाया।

"बस एक मिनट, लोदिजकिन दादा !" सर्गे ने उत्तर दिया।

"देखो मैं बतख की तरह तैर रहा हूं ... छप-छप-छप।"

आखिर कुछ देर बाद वह किनारे पर लौट आया। किन्तु कपड़े पहनने से पूर्व वह आर्तो को लेकर समुद्र में घुस गया और उसे काफी दूर गहरे पानी में उछाल कर फेंक दिया। कुत्ते ने तुरन्त तट की ओर तैरना शुरू कर दिया। वह गुस्से में गुरगुराता हुआ आ रहा था। उसकी सारी देह पानी में डूबी थी। केवल नाक और कान पानी के ऊपर दिखलायी दे रहे थे। किनारे पर आकर उसने बहुत जोर से अपने शरीर को झंझोडा हिलाया। उसके बालों से पानी के छींटे सर्गे और बूढ़े पर जा गिरे।

"सर्गे, जरा देखो, वह कौन आदमी हमारी तरफ आ रहा है ?" लोदिजकिन ने ऊपर देखते हुए कहा।

सचमुच एक आदमी अपने हाथ हवा में हिलाता और ऊंचे स्वर में चिल्लाता हुआ ढलुवां सड़क से नीचे उतर रहा था। उसके अस्पष्ट, अनर्गल शब्दों का अर्थ किसी के पल्ले नहीं पड़ा। पास आने पर पता चला कि वह आदमी और कोई नहीं, उसी बंगले का चौकीदार है, जिसने आध घंटे पहले उन्हें इतनी बुरी तरह से बाहर खदेड़ दिया था। वह अपनी वही काले धब्बों वाली गुलाबी रंग की कमीज पहने था।

"इस आदमी को हमसे क्या काम आ पड़ा ?" बूढ़े लोदिजकिन ने हैरान होकर पूछा।

चार

चौकीदार ऊंचे स्वर में चिल्लाता उल्टे-सीधे पांव रखता हुआ उनकी ओर बढ़ा चला आ रहा था। उसकी आस्तीनें हवा में फड़फड़ा रही थीं और कमीज का अगला हिस्सा जहाज के पाल की भांति फूल गया था।

"ठहरो, रुक जाओ ..."

"जहन्नुम में जाओ !" लोदिजकिन भन्ना गया। "कहीं फिर आर्तो के लिए तो मेरा सर खाने नहीं आया ?"

"दादा, इसकी जरा अच्छी तरह से खबर लेनी चाहिए !" सर्गे एक साहसी सूरमा की तरह बोला।

"पागल मत बनो। ऐसे लोगों से ईश्वर ही बचाए !"

"सुनो भाई, जरा सुनो !" चौकीदार अभी उनके पास पहुंचा भी न था कि हांफता हुआ चिल्लाया। "खुदा के लिए कुत्ता बेच दो। छोटे मालिक उसके लिए जान-हलाकान कर रहे हैं। उनकी जुबान पर सिर्फ एक ही रट लगी है : 'कुत्ता लूंगा—कुत्ता लूंगा !' मालकिन ने मुझे तुम्हारे पास यह कहला कर भेजा है कि वह तुम्हें कुत्ते के लिए मुंह-मांगा दाम देने को तैयार हैं।"

"तुम्हारी मालकिन भी अजीब औरत हैं," लोदिजकिन ने निडर होकर कहा। बंगले के अहाते में वह भय से कांप रहा था, किन्तु यहां समुद्र तट पर उसकी जुबान खुल गयी थी और वह निधड़क होकर अपने भावों को व्यक्त कर रहा था। "मुझे तुम्हारी मालकिन से क्या लेना-देना ? मालकिन वह तुम्हारी लगती होंगी, मुझे उनकी रत्ती भर भी परवाह नहीं। खुदा के लिए हमारा पीछा छोड़ दीजिए और अपनी राह पकड़िए।"

लेकिन चौकीदार अपनी जिद पर अड़ा रहा। वह बूढ़े के सामने एक चिकनी-चौड़ी शिला पर बैठ गया और हवा में अंगुलियां नचाता हुआ बोला :

"तुम निरे मूर्ख हो, बात समझते ही नहीं !"

"मूर्ख तुम हो !" बूढ़े ने शान्त भाव से उसे झिड़क दिया।

"अरे भाई, मेरा मतलब यह थोड़े ही था। तुम तो जरा सी बात पर तुनक जाते हो, नाक पर मक्खी नहीं बैठने देते। मैं कह रहा था कि तुम कोई नया कुत्ता लेकर उसे उठना-बैठना सिखा सकते हो। आखिर कुत्ते को सधाने में देर ही कितनी लगती है ? मैं समझ नहीं पाता कि आखिर इस कुत्ते में कौन से हीरे-मोती जड़े हैं जो बेचने के नाम से ही तुम बिगड़ उठते हो।"

बूढ़ा बड़े व्यस्त भाव से अपनी पतलून पर पेटी बांध रहा था।

"भौंकते रहो," चौकीदार के प्रश्नों को लापरवाही से सुना-अनसुना करते हुए उसने कहा। "तुम चाहे जो कुछ भी कहो, मेरा उत्तर वही है, जो मैं पहले दे चुका हूं।"

"वे लोग तुम्हें मालामाल कर देंगे !" चौकीदार ने कुछ गर्म होकर कहा। "दो-तीन सौ रूबल तो तुम्हें अभी फौरन मिल जायेंगे। अपनी मेहनत के लिए कुछ थोड़ा-बहुत मुझे भी मिलेगा। लेकिन जरा सोचो—तीन सौ रूबल ! अरे भाई, इतनी पूंजी से तो तुम पंसारी की दुकान खोल सकते हो।"

इस दौरान में चौकीदार ने जेब से सॉसेज (सुअर के गोश्त की चॉप) का टुकड़ा निकाला और उसे कुत्ते के सामने फेंक दिया। आर्तो ने उसे दांतों से पकड़ लिया और मुंह में रखते ही निगल गया। फिर वह चौकीदार की ओर खुशामद भरी दृष्टि से देखता हुआ अपनी पूंछ हिलाने लगा।

"बस यही कहना था ?" लोदिजकिन ने संक्षेप में प्रश्न किया।

"मुझे ज्यादा और कुछ नहीं कहना। कुत्ता मुझे दे दो, सारा सौदा निपट जाएगा।"

"अच्छा ?" बूढ़े ने ताना मारते हुए कहा। "तुम्हारा मतलब है कि मैं कुत्ता बेच दूं — क्यों, यही कहते हो न ?"

"हां, यही कहता हूं। दरअसल हमारे छोटे मालिक का गुस्सा बहुत तेज है। कोई चीज इन्हें भा जाए तो उसे लेने के लिए जमीन-आसमान एक कर देते हैं। फिर वह किसी की नहीं सुनेंगे। जब उनके पिता बाहर होते हैं तब तो खैर कोई बात नहीं — किन्तु उनके घर वापिस लौटने पर तो छोटे मालिक तूफान बरपा कर देते हैं। कभी यह चीज चाहिए, कभी वह चीज चाहिए। उनके पिता इंजीनियर हैं। शायद तुमने उनका नाम सुना हो — श्री ओबलियानिनोव। लखपति आदमी हैं — सारे रूस में उन्होंने रेलों का जाल बिछा दिया है। छोटे मालिक उनके इकलौते पुत्र हैं। लाड़-प्यार ने उन्हें बिगाड़ दिया है। टट्टू की ओर अंगुली उठा दी, तो फौरन उनके लिए टट्टू खरीदा जाता है। कोई नाव आंखों में चढ़ गयी तो बिना नाव लिए पीछा नहीं छोड़ते। अगर वह किसी चीज के लिए अपनी इच्छा प्रकट करे तो मजाल है कि कोई इन्कार कर सके।"

"चांद के लिए भी ?"

"मैं तुम्हारी बात समझा नहीं।"

"क्या वह चांद लेने के लिए कभी अपनी इच्छा प्रकट नहीं करता ?"

"कैसी बात कर रहे हो ?" चौकीदार बूढ़े की बात सुनकर हतप्रतिभ सा हो आया। "अच्छा, अब काम की बात करो। फिर तुमने क्या फैसला किया ? सौदा मंजूर है ?"

इस बीच बूढ़े ने भूरे रंग की वास्कट पहन ली थी। वास्कट के जोड़ पुराने होने के कारण घिस-घिस कर उघड़ आये थे। कपड़े पहन कर वह अपनी कुबड़ी पीठ को जहां तक सीधा करना सम्भव हो सकता था, सीधा करके खड़ा हो गया।

"कान लगा कर सुन लो, बेटा !" बूढ़े का स्वर यकायक बहुत गम्भीर हो गया। "अगर तुम्हारा कोई मित्र या भाई होता, जिसे तुम बचपन से जानते होते ... बेकार कुत्ते को सॉसेज क्यों खिला रहे हो ? इससे तुम्हारा कोई काम

नहीं बनेगा, बेहतर है कि इसे तुम खुद खा लो। हां, तो मैं कह रहा था—अपने किसी हितैषी मित्र को, जिसे तुम बचपन से जानते हो, पराये हाथों में कितने मूल्य पर बेचने के लिए तैयार होगे ?"

"यह भी कोई मिसाल है ?"

"तुम्हीं ने पूछा था। रेलों को बनाने वाले अपने मालिक से कहना," बूढ़े का स्वर ऊंचा हो गया, "कि कुछ चीजें ऐसी हैं जो खरीदी जा सकती हैं, किन्तु बेची नहीं जातीं ! समझ गये ? अच्छा अब कुत्ते को दुलारना बन्द करो—इससे कोई लाभ नहीं होगा। आर्तो, कुत्ते के बच्चे, जरा इधर आ ! अभी तेरी अक्ल ठिकाने लगाता हूं। सर्गे, तैयार हुए ?"

"तुम्हारी बुद्धि तो सठिया गयी है, निरे बेवकूफ हो तुम !" चौकीदार गुस्से में तमक उठा।

"ठीक है, मैं बेवकूफ सही। लेकिन तुम रंगे सियार हो, छिछोरे और एक नम्बर के पाखंडी !" लांदिजकिन ने भी तेज होकर कहा। "घर जाकर अपनी बेगम साहिबा से कहना कि बूढ़े ने उनके प्रति प्रेम और सद्भावनाएं प्रकट की हैं। सर्गे, कालीन की तह कर डालो। हाय री मेरी पीठ ... चलो अब चलें !"

"तो यह बात है !" चौकीदार का स्वर सहसा रहस्यमय हो उठा।

"हां, बिलकुल यही बात है।" बूढ़े ने रुखाई से उत्तर दिया।

तीनों समुद्र तट की सड़क पर धीरे-धीरे चलने लगे। कुछ दूर चलने पर सर्गे की आंखें अचानक पीछे की ओर मुड़ गयीं—चौकीदार उसी स्थान पर खड़ा-खड़ा उन्हें देख रहा था। वह कुछ उद्विग्न और चिन्तामग्न सा दिखलायी दे रहा था। उसकी टोपी आंखों पर झुक आयी थी और वह पांचों अंगुलियों से लाल बालों से भरी अपनी गर्दन को धीरे-धीरे खुजला रहा था।

पांच

बूढ़े लोदिजकिन ने मुख्य सड़क के नीचे मिसखोर और अलुप्का के बीच एक छोटा सा कोना ढूंढ़ निकाला था, जहां वे आराम से भोजन कर सकते थे। इस समय वह अपने साथियों को इसी कोने की ओर ले जा रहा था। पास ही टेढ़े-मेढ़े बलूत वृक्षों और घनी झाड़ियों की छाया तले ठंडे पानी का झरना कल-कल करता बह रहा था। आगे चल कर इस झरने ने धरती पर एक खोखला सा कटोरा बना दिया था, जिसके बीच पारे सा चमकता, टेढ़े-मेढ़े चक्कर खाता हुआ वह एक पुल के नीचे बहते हुए गंदले, गड़गड़ाते पहाड़ी नाले से मिल जाता था। प्रतिदिन सुबह-शाम धर्म भीरु तुर्क झरने का जल पीते थे, अथवा उसके पवित्र जल से अपने शरीर को शुद्ध करने के लिए स्नान किया करते थे।

"हे प्रभु ! हमारे पाप जितने ज्यादा हैं, भोजन उतना ही कम है," बूढ़ा ठंडी सांस लेकर बलूत के झाड़ियों की घनी छाया तले आराम से बैठ गया। "सर्गे भाई, खाने की पोटली लाओ !"

किरमिच के थैले से उसने रोटी, दर्जन भर टिमाटर, बैस-अरेबियन पनीर का टुकड़ा और जैतून के तेल की एक बोतल बाहर निकाली। नमक एक मैले-कुचैले कपड़े में बंधा हुआ था। भोजन आरम्भ करने से पूर्व उसने सलीब का चिन्ह बनाया और काफी देर तक होठों को हिलाता हुआ कुछ बुदबुदाता रहा। फिर भोजन शुरू हुआ। उसने रोटी को तीन छोटे-बड़े टुकड़ों में काट दिया। सबसे बड़ा टुकड़ा सर्गे के लिए था। लड़का अब बड़ा हो रहा था और उसे अच्छी खुराक देना बूढ़ा अपना कर्तव्य समझता था। दूसरा टुकड़ा उसने कुत्ते को दिया और अपने लिए उसने सबसे छोटा टुकड़ा रख लिया।

भोजन पर तेल छिड़कते हुए वह धीमे स्वर में बुदबुदाने लगा, "परम पिता, परमपुत्र, हमारी रक्षा कर ! हे प्रभु ! सारे जगत की आंखे तुझ पर लगी हैं।" फिर उसने भोजन परोस दिया। "सर्गे, खाओ !"

मेहनतकश मजदूरों की तरह वे तीनों धीरे-धीरे चुपचाप अपना रूखा-सूखा भोजन खाने लगे। केवल उनके जबड़ों के हिलने और रोटी चबाने की चबर-चबर सुनायी दे रहा था। आर्तो उनसे कुछ दूर अलग बैठा था। पेट के बल बैठा हुआ वह अपने अगले दो पंजों से रोटी खा रहा था। बूढ़ा और सर्गे बारी बारी मे पके हुए टमाटर को नमक में डुबोकर खा रहे थे। टमाटरों का खून सा लाल रस उनके होठों और हाथों पर टपापट गिर रहा था। टमाटर के हर कौर के बाद रोटी और पनीर की बारी आती थी। अपनी क्षुधा शान्त करने के बाद उन्होंने पानी पिया। टीन के लोटे में उन्होंने झरने का पानी पहले से ही भर लिया था। पानी बहुत स्वादिष्ट और साफ था और ठंडा इतना ज्यादा कि लोटे का बाहरी हिस्सा एकदम धुंधला पड़ गया था। वे बहुत थक गये थे। पौ फटते ही वे उठ खड़े हुए थे और दुपहर भर कड़कड़ाती धूप में घूमते-भटकते रहे थे। नींद के मारे बूढ़े की आंखें झपक रही थीं। सर्गे कभी जम्हुआई लेता था, कभी अंगड़ाई।

"सर्गे, अगर थोड़ा सो लिया जाय तो कैसा रहे ?" बूढ़े ने पूछा। "सोने से पहले एक घूंट पानी और पी लूं — कितना बढ़िया पानी है !" पानी पी कर उसने झटके से एक सांस ली और लोटा मुंह से हटा दिया। पानी की बूंदें लोटे से छिटक कर उसकी मूंछ और दाढ़ी के बालों में उलझ गयीं। "अगर मैं बादशाह होता तो सुबह से रात तक यही पानी पीता। आर्तो प्यारे, जरा मेरे पास तो आ। ईश्वर की कृपा से हमें आज खाली पेट न जाना पड़ा। अच्छा भोजन मिल गया। कोई हड़प करने वाला भी न था, सो हमने तबीयत से खाया।"

बूढ़ा लोदिजकिन और सर्गे अपने कोटों का सिरहाना बना कर घास पर लेट गये। बलूत वृक्ष की उलझी हुई सरसराती शाखाओं के बीच शान्त, नीले आकाश की झलक मिल जाती थी। चट्टानों पर उछलते-कूदते पहाड़ी झरने का कलकल स्वर मानो थपकियां देता हुआ लोरी सुना रहा था। कुछ देर तक बूढ़ा करवटें लेता हुआ कराहता और बुड़बुड़ाता रहा। सर्गे को बूढ़े के शब्द सुनायी दे रहे थे, किन्तु नींद में उसे लग रहा था मानो वे रहस्यमय शब्द किसी सुदूर, परी-लोक से आ रहे हों।

"सब से पहले मैं तुम्हारे लिए एक खूबसूरत पोशाक खरीदूंगा — गुलाबी रंग का जांगिया, जिस पर सोने का काम किया होगा; साटन के जूते जो जांगिये की तरह गुलाबी रंग के होंगे। असली सर्कस तो कीव, खारकोव या ओडेसा जैसे बड़े शहरों में होता है। चारों ओर बिजलियां जगमगाती रहती हैं — बिजली के लैम्प सितारों को भी मात करते हैं। मुझे अच्छी तरह याद नहीं रहा, किन्तु लगभग पांच हजार लोग सर्कस देखने आते हैं — शायद इससे भी ज्यादा आते हों। हम तुम्हारा नाम बदलकर एतालवी नाम रखेंगे — चेस्तीफयेव या लोदिजकिन — भला ये भी कोई नाम हैं? नाम रखने के लिए कल्पना-शक्ति की जरूरत है, वरना भद्दे-बेढंगे नामों की कमी नहीं। हम पोस्टर पर तुम्हारा नाम अन्टोनियो या एनरिको या अलफोन्सो छपवाएंगे!"

सर्गे ने इसके आगे और कुछ नहीं सुना। नींद के कोमल मीठे झोंके ने शरीर के अंग-प्रत्यंग को निर्जीव और निश्चेष्ट सा बना दिया। हर रोज खाने के बाद बूढ़ा सर्गे के सुनहरे भविष्य के सम्बंध में कल्पना के घोड़े दौड़ाया करता था। आज भी वह यही कर रहा था, किन्तु कुछ ही देर में उसकी आंख लग गयी और उसने बुड़बुड़ाना बन्द कर दिया। सोते हुए एक बार उसे लगा मानो आर्तो किसी पर गुर्रा रहा है। उसके अर्ध-चेतन मन में गुलाबी कमीज पहने चौकीदार की धुंधली सी झलक थिरक गयी, किन्तु नींद, थकान और गर्मी के कारण उसने उठने की चेष्टा नहीं की। आंखें मूंदे लेटा रहा। अलसाये-स्वर में उसने केवल इतना कहा, "आर्तो, बदमाश, देख, तुझे कैसा मजा चखाता हूं!" किन्तु दूसरे ही क्षण उसके विचार धुंधले, आकार-हीन सपनों में उलझ गये।

सर्गे की आवाज सुनकर बूढ़ा जाग उठा। वह झरने के दूसरी ओर जोर-जोर से सीटी बजाता हुआ चिल्ला रहा था। उसके चेहरे पर हवाइयां उड़ रही थीं। "आर्तो, आर्तो! आ जाओ! देखो आर्तो मैं यहां हूं! आर्तो..."

"सर्गे! यह क्या तमाशा बना रखा है? इतना गला फाड़-फाड़ कर क्यों चिल्ला रहे हो?"

"कुत्ते का कहीं पता नहीं है!" सर्गे ने झुंझला कर कहा। "वह हमें छोड़ कर चला गया है!"

उसने एक बार फिर सीटी बजायी और जोर से चिल्लाया, "आ—र्तो ..."

"पागल हो ! वह जायेगा कहां ? अभी आता होगा।" बूढ़े ने कहा। वह हड़बड़ा कर उठ खड़ा हुआ और अपनी क्रुद्ध, कांपती, नींद से बोझिल आवाज में चिल्लाने लगा। "आर्तो, चले आओ ! अरे ओ कुत्ते के बच्चे, कहां गया है तू !"

लड़खड़ाते पांवों से छोटे-छोटे डग भरता हुआ बूढ़ा पुल पार करके मुख्य सड़क पर पहुंच गया और कुत्ते को बार-बार बुलाने लगा। सफेद, चिकनी-चमकती सड़क पौन मील तक आगे चली गयी थी — निपट अकेली और खाली सड़क, जिस पर किसी प्राणी की छाया तक दिखायी नहीं देती थी।

"आर्तो, आर्तो ! मेरे बच्चे !" बूढ़ा दीन-करुण स्वर में चिल्ला रहा था। आखिर थक कर वह सड़क पर बैठ गया।

"सर्गे, इधर चले आओ !" सूखी, खोखली आवाज में उसने सर्गे को अपने पास बुलाया।

"क्या बात है ?" बूढ़े के पास आते हुए सर्गे ने रूखे स्वर में कहा। "तुम तो कह रहे थे कि कुत्ता खोया नहीं है। फिर ढूंढ क्यों रहे हो ?"

"सर्गे, यह क्या माजरा है ? मेरा मतलब है कि यह कैसे हुआ ... ?" उसने दबे होंठों से बुदबुदाते हुए सर्गे से पूछा।

वह लड़के की ओर कातर, विस्फारित आंखों से देख रहा था और अपनी कांपती अंगुली से सड़क की ओर इशारा कर रहा था।

सॉसेज का एक कुतरा हुआ टुकड़ा सफेद मिट्टी पर पड़ा था और उसके इर्द-गिर्द कुत्ते के पदचिन्ह दिखायी दे रहे थे।

"वह बदमाश हमारे कुत्ते को फुसला कर अपने संग ले गया है।" बूढ़े ने भयभीत स्वर में कहा। वह अभी तक बीच सड़क पर बैठा हुआ था। "वही बदमाश होगा — उसके अलावा और कोई नहीं हो सकता। याद है सर्गे, समुद्र तट पर वह आर्तो को सॉसेज खिला रहा था ?"

"हां, अब कोई शक नहीं रहा।" सर्गे ने खिन्न भाव से कहा।

अचानक बूढ़े लोदिजकिन की झपकती आंखें बड़े-बड़े आंसुओं से छलछला आयीं। उसने उन्हें अपने हाथों से ढंक लिया।

"सर्गे प्यारे, अब हम क्या करेंगे ? हाय, अब क्या होगा ?" बूढ़ा इधर-उधर डोलता हुआ असहाय-भाव से सिसकियां भरने लगा।

"हम क्या करेंगे ! अब क्या होगा ! हाय, हाय !" सर्गे गुस्से में उसकी नकल उतारने लगा। "लोदिजकिन दादा, चलो यहां से तो उठो। हमें अब चलना चाहिये !"

"चलो," खिन्न-भाव से बूढ़े ने सर्गे का आदेश चुपचाप मान लिया। वह सड़क से उठ खड़ा हुआ। "आओ, सर्गे भाई, चलो, चलें।"

सर्गे अपना क्रोध वश में न रख सका।

"यह रोना-झींकना बन्द करो दादा।" वह बड़प्पन भरे स्वर में बूढ़े पर चिल्लाया, मानो उम्र में वह बूढ़े लोदिजकिन से बड़ा हो।

"किसी आदमी को दूसरे के कुत्ते को फुसला कर ले जाने का हक नहीं है। खड़े-खड़े मुंह बांयें क्या देख रहे हो? क्या मैं गलत कहता हूं? हम अभी वहां जाकर उनसे अपना कुत्ता मांगेंगे। अगर उन्होंने कुत्ता नहीं दिया तो सीधे पुलिस के पास जाकर उनकी रपट लिखवायेंगे। फिर आटे-दाल का भाव पता चलेगा उन लोगों को!" सर्गे ने कहा।

"पुलिस ... क्यों नहीं। तुमने ठीक सलाह दी है सर्गे।" बूढ़े के होठों पर एक फीकी और कटु मुस्कान फैल गयी। उसकी आंखों में घने संकोच का भाव घिर आया। "किन्तु एक अड़चन है—हम पुलिस के पास नहीं जा सकते।"

"क्यों नहीं जा सकते? कानून सबको एक नजर से देखता है।" सर्गे ने गुस्से में बूढ़े की बात को बीच में ही काट दिया।

"सर्गे, बात कुछ ऐसी ही है ... तुम मुझ पर नाराज मत होना। वैसे तो रपट लिखवा कर भी हमें कुत्ता नहीं मिलेगा।" उसने रहस्यमय भाव से अपना स्वर धीमा करते हुए कहा। "मुझे अपने पासपोर्ट की चिन्ता खाए जा रही है। याद है, बंगले में उस साहब ने हमसे क्या पूछा था? 'कहां है तुम्हारा पासपोर्ट?' अब जो पासपोर्ट मेरे पास है ..." बूढ़े का स्वर इतना धीमा हो गया कि उसके शब्दों को सुन पाना भी कठिन था, "वह पासपोर्ट असल में मेरा नहीं है—समझे सर्गे?"

"तुम्हारा नहीं है? इसके क्या माने?"

"हां, वह पासपोर्ट मेरा नहीं है। मेरा पासपोर्ट तगनरोग में खो गया था या शायद किसी ने उसे चुरा लिया। दो वर्षों तक मैं छुकता-छिपता रहा। एक शहर से दूसरे शहर चला जाता था, घूस देकर जान बचाता था। मैंने कई अर्जियां भी लिखीं, किन्तु कुछ काम नहीं बना। आखिर मैं तंग आ गया। कोई कहां तक खरगोश की तरह सबसे डरता-दुबकता रहे? हर घड़ी मेरा दिल बेचैन रहता। अचानक एक दिन ओडेसा की एक सराय में एक यूनानी से भेंट हो गयी। मैंने उसे सारी बात बता दी। 'इसमें मुश्किल क्या है?' उसने मुझ से कहा। 'पच्चीस रूबल निकालो, और मैं तुम्हें ऐसा पासपोर्ट दे दूंगा, जो जिन्दगी भर तुम्हारे काम आएगा।' मैं पहले कुछ पशोपेश में पड़ा, लेकिन बाद में मैंने वह पासपोर्ट ले लिया। उस दिन से मैं किसी दूसरे आदमी का पासपोर्ट लिये फिरता हूं।"

"दादा," सर्गे फूट पड़ा। "फिर तो वह कुत्ता सदा के लिए हमारे हाथों से निकल गया। कितना प्यारा कुत्ता था!"

"सर्गे, मेरे प्यारे बच्चे!" बूढ़े ने अपने कांपते हाथ हवा में फैला दिये। "अगर मेरे पास सच्चा पासपोर्ट होता तो क्या कभी मैं उन लोगों की—चाहे वे जनरल भी होते—जरा भी परवाह करता? मैं उन्हें फौरन गले से पकड़ लेता। 'तुम्हें हमारा कुत्ता चुराने का क्या हक है?' मैं तमक कर पूछता। 'ऐसा कोई कानून नहीं है।' पर सर्गे, अब हम मजबूर हैं। पुलिस के पास जाते ही मुझ से पहला सवाल यह पूछा जाएगा: 'अपना पासपोर्ट दिखाओ। क्या तुम्हारा नाम मार्टिन लोदिजकिन है?' 'हां जनाब!' मुझे कहना पड़ेगा। किन्तु मेरा नाम लोदिजकिन नहीं है—यह तो पासपोर्ट का नाम है, मेरा असली नाम इवान डडकिन है। मैं एक किसान हूं। खुदा जाने यह लोदिजकिन कौन है? हो सकता है वह कोई चोर या जेल से भागा हुआ कैदी हो—या कातिल ही हो! सर्गे, हम बुरे फंसे। अब हम कुछ भी नहीं कर सकते।"

बूढ़े का स्वर बीच में ही टूट गया। आंसुओं की धार उसके चेहरे की गहरी झुर्रियों पर बहने लगी। सर्गे एकदम विचलित हो उठा। वह अब तक चुपचाप होठों को सख्ती से भींचे हुए दादा की कहानी सुन रहा था। भावोद्वेलित होने के कारण उसका चेहरा पीला पड़ गया था। बूढ़े को रोता देखकर उसने झट उसका हाथ पकड़ लिया। "दादा, उठो!" उसने स्नेह भरे स्वर में कहा। "पासपोर्ट को मारो गोली। अब हमें यहां से चलना चाहिए। सड़क पर बैठे-बैठे रात थोड़े ही बितानी है! चलो!"

"मेरे प्यारे बच्चे," बूढ़ा होठों ही होठों में बुदबुदाया। उसकी देह सिर से पांव तक कांप रही थी। "कितना प्यारा कुत्ता था आर्तो! अब हमें वैसा कुत्ता कहां मिलेगा?"

"अच्छा, अब बहुत हो गया। अब तुम यहां से उठने की तैयारी करो। लाओ, तुम्हारे कपड़े झाड़ दूं—जरा अपनी ठुड्डी तो ऊपर करो।"

उस दिन उन्होंने सर्कस का खेल कहीं और नहीं किया। सर्गे हालांकि अभी बच्चा ही था, किन्तु वह 'पोसपोर्ट' जैसे खतरनाक शब्द का अर्थ समझ गया था। इसीलिए उसने आर्तो को पाने की आशा छोड़ दी थी, पुलिस-स्टेशन जाने का आग्रह भी नहीं किया था। उसे छुड़वाने के लिए किसी तरह की कड़ी कार्रवाई को बेकार समझ कर उसने वह विचार अपने मस्तिष्क से निकाल दिया था। किन्तु बूढ़े के संग सराय की ओर जाते हुए उसके चेहरे पर एक दृढ़ संकल्प की भावना झलक रही थी, मानो उसने मन-ही-मन कोई अत्यन्त महत्वपूर्ण कार्य सिद्ध करने की योजना बना ली हो।

उनके बीच कोई बात नहीं हुई थी, किन्तु किसी मूक-समझौते के अनुसार वे दोनों लम्बा चक्कर काटकर उसी सड़क पर आ गये जो 'मैत्री-कुटीर' के सामने से होकर गुजरती थी। बंगले के फाटक के सामने वह क्षण भर के लिए ठिठक गये। एक धुंधली सी आशा उनके मन में उमड़ रही थी — शायद एक क्षण के लिए वे आर्तो की एक झलक पा सकें, अथवा उसके भौंकने की आवाज सुन सकें।

किन्तु ऐसा कुछ भी न हुआ। उस शानदार बंगले का लौह-द्वार मजबूती से बन्द कर दिया गया था। बंगले के भीतर अंधेरी वाटिका में पतले, उदास सरो के वृक्षों तले घनी, अभेद्य नीरवता फैली हुई थी।

"रईस कहते हैं अपने को? छिः!" बूढ़े ने फूत्कारते हुए अपने हृदय की समूची कटुता इन शब्दों में उड़ेल दी।

"बस, अब चलें!" सर्गे ने कठोर स्वर में बूढ़े को आदेश दिया और उसकी आस्तीन पकड़कर उसे अपने संग ले चला।

"आर्तो शायद वहां से भाग निकलेगा — क्यों सर्गे, तुम्हारा क्या ख्याल है?" बूढ़ा सिसक रहा था।

किन्तु सर्गे ने कोई उत्तर नहीं दिया। वह लम्बे डग भरता हुआ आगे-आगे चल रहा था। उसकी आंखें सड़क पर जमी हुई थीं और भृकुटियां क्रुद्ध-मुद्रा में एक दूसरे के समीप सिमट आयी थीं।

छः

वे दोनों चुपचाप अलुप्का की ओर चलने लगे। रास्ते भर बूढ़ा ठंडी सांसें भरता रहा, धीरे-धीरे कराहता रहा, किन्तु सर्गे के निश्चल चेहरे पर दृढ़ संकल्प का अविचलित, क्रुद्ध भाव जमा रहा। उन्होंने एक पुराने-फटीचर कहवाघर में रात बिताने का निश्चय किया, जो "यहूदी" अथवा "सितारा" के नाम से प्रसिद्ध था। कहवाघर में उनका परिचय पत्थर कूटनेवाले यूनानियों, भूमि खोदने वाले तुर्की मजदूरों और कुछ ऐसे रूसी मजदूरों से हुआ जो दो-जून रोटी जुटाने के लिए हर तरह का काम करने के लिए प्रस्तुत रहते थे। उनके अलावा संदिग्ध-चरित्र के कुछ ऐसे घुमक्कड़ आवारागर्द लोग भी वहां जमा थे, जिनकी दक्षिणी-रूस में कोई कमी नहीं थी। नियत वक्त पर जब कहवाघर बन्द हो गया तो ये लोग दीवार से सटे बेंचों और फर्श पर पांत लगाकर लेट गये। जिन लोगों को ऐसे स्थानों का पुराना अनुभव था, उन्होंने अपने कपड़ों और मूल्यवान वस्तुओं को सिर के नीचे दबाकर रख लिया।

जब आधी रात गुजर गयी तो सर्गे, जो बूढ़े की बगल में लेटा था, अचानक उठ खड़ा हुआ और कपड़े पहनने लगा। पीली चांदनी चौड़ी खिड़कियों से भीतर झांकती हुई फर्श पर आड़ी-तिरछी शक्लें बना रही थी। उसके बुझे मलिन प्रकाश में सोते हुए लोगों के अवसादग्रस्त चेहरे मृतवत् से दिखायी दे रहे थे।

"लड़के—इतनी रात गये तुम कहां जा रहे हो ?" कहवाघर के मालिक नौजवान तुर्क इब्राहिम ने नींद से बोझिल स्वर में सर्गे से पूछा।

"मुझे किसी जरूरी काम से बाहर जाना है।" सर्गे ने व्यस्त-भाव से कहा। "झटपट दरवाजा खोल दो।"

इब्राहिम ने उलाहना भरे भाव से सिर खुजलाते हुए जम्हुआई ली और अनमने भाव से दरवाजे की चिटखनी खोल दी। कहवाघर के बाहर छोटी-संकरी गलियों पर सर्गे चलने लगा। शहर के इस भाग में तातार लोग रहा करते थे। नीले-श्यामल अंधकार में डूबी सड़क के अगले छोर पर कुछ मकान खड़े थे जिनकी छोटी दीवारें चांदनी में बिलकुल सफेद दिखायी दे रही थीं। शहर के दूसरे सिरे पर कुत्तों के भौंकने का रिरियाता स्वर सुनायी दे जाता था। मुख्य सड़क के ऊपरी भाग पर किसी घोड़े की मद्धिम टाप सुनायी दे रही थी।

सर्गे को रास्ते में एक सफेद मस्जिद के सामने से गुजरना पड़ा, जिसके गुम्बद की बनावट हरे प्याज की शक्ल से मिलती-जुलती थी। यह मस्जिद चारों ओर अंधकार में डूबे सरों के वृक्षों से घिरी हुई थी। मुख्य सड़क पार करके सर्गे एक तंग, टेढ़ी-मेढ़ी गली में घुस गया। उसने केवल एक जांघिया पहन रखा था ताकि फुर्ती से भाग-दौड़ सके। चांदनी उसकी पीठ पर गिर रही थी और काली, विचित्र सी बौनी सिलहट में उसकी छाया आगे-आगे दौड़ रही थी। गली के दोनों ओर काली झाड़ियां सिर झुकाये खड़ी थीं। उनके भीतर कोई छिपा-दुबका पक्षी बार-बार अपने पतले-तीखे स्वर में चिल्ला उठती थी : "सो जाओ, सो जाओ !" रात की घनी निस्तब्धता में उस पक्षी की सहमी सी चीखों को सुन कर लगता था मानो वह कोई दुःख भरा भेद छिपा रही हो और "सो जाओ, सो जाओ !" की विकल पुकारों से अपनी नींद और थकान को भगाने की विफल चेष्टा कर रही हो। काली झाड़ियों और सुदूर वनों के नीले शिखरों से परे आई-पेत्री पर्वत की दो चोटियां आकाश की ओर सिर उठाये खड़ी थीं—स्पष्ट, सूक्ष्म और स्वप्निल चोटियां, जिन्हें देख कर लगता था मानो किसी ने चमकीले गत्ते को दो बड़े भागों में काट कर आकाश में टांग दिया हो।

दिव्य और अथाह शान्ति ... सर्गे को अपनी पदचाप से भी डर लगने लगा। भय और विस्मय की एक विचित्र भावना ने उसे अभिभूत सा कर दिया।

किन्तु उसी क्षण उसकी धमनियों में अदम्य साहस की वेगवती लहरें स्पन्दित होने लगीं। गली के मोड़ पर सर्गे को अचानक समुद्र की एक झलक दिखलायी दी। उसे समुद्र के असीम, शान्त विस्तार का गौरव अद्वितीय जान पड़ा। चांदी सी चमचमाती एक छोटी सी पगडंडी क्षितिज से निकल कर सागर में लोप हो गयी थी — उसके दोनों ओर केवल कहीं-कहीं चमकीले धब्बे छिटक आए थे। किन्तु समुद्र के किनारे पहुंच कर यह पगडंडी तरल धातु की चमकीली झालर सी सागर-तट के एक छोर से दूसरे छोर तक फैल गयी थी।

सर्गे दबे पांवों लकड़ी के फाटक से गुजरता हुआ क्रीड़ा-वन में घुस गया। घने छायादार पेड़ों के नीचे निबिड़, निस्तब्ध अंधकार फैला था। वहां से कुछ दूर किसी झरने की चंचल गड़गड़ाहट सुनायी दे जाती थी। झरने के सम्पर्क से हवा का स्पर्श गीला और शीतल सा प्रतीत होता था। सर्गे के पैरों के दबाव से लकड़ी का पुल खड़-खड़ कर उठता था। पुल के नीचे हहराते नाले के प्रवाह को देखकर हृदय भय से दहल जाता था। आखिर उसे बंगले का चिर-परिचित लौह-द्वार, जिस पर कपड़े पर काढ़े गये बेल-बूटों की तरह की नक्काशी की गयी थी — दिखायी दिया। पत्तों से भरी लम्बी बेल-लताओं ने दरवाजे को अपने आंचल से ढांप रखा था। पेड़ों के घने झुरमुट से छनता हुआ चांदनी का फीका, मद्धिम आलोक चमकीली कटी-फटी चिप्पियों की शक्ल में दरवाजे पर छिटक आया था। उसके पीछे केवल अंधकार था और अंधकार में लिपटा हुआ सहमा सा, स्तब्ध, सतर्क मौन ...।

कुछ क्षणों तक सर्गे झिझकता रहा, मानो कोई अज्ञात भय उसके भीतर समा गया हो। किन्तु तुरन्त ही उसने अपने को सम्भाल लिया। "चाहे जो कुछ भी हो, मुझे भीतर जाना ही होगा।" वह धीरे से बुदबुदाया।

फाटक पर चढ़ना कठिन नहीं था। दरवाजे में जड़ी हुई लोहे की टेढ़ी मेढ़ी कड़ियों को अपने मजबूत हाथों और छोटे-छोटे मांसल पैरों से पकड़ कर वह ऊपर चढ़ने लगा। दरवाजे के ऊपर पत्थर की मेहराब लगी थी। सर्गे हाथों से फाटक को टटोलता हुआ उसी मेहराब की ओर चढ़ने लगा। ऊपर पहुंच कर वह पेट के बल लेट गया और अपनी टांगें फाटक के दूसरी ओर लटका लीं। अपने पांवों के लिए सहारा टटोलते हुए वह पूरी शक्ति से अपने शरीर को नीचे की ओर धकेलने लगा। वह मेहराब के छोर को अपनी अंगुलियों से पकड़े हुए नीचे लटक रहा था, किन्तु उसके पैरों को अभी तक कोई सहारा नहीं मिला था। उसे यह बात नहीं मालूम थी कि फाटक के मेहराब का बाहर को निकला हुआ हिस्सा अन्दर की तरफ अधिक नीचा है। वह भय से सिहर गया। उसकी अंगुलियां सिकुड़ने लगी थीं और उसे अपने शरीर का भार क्षण प्रति क्षण असह्य सा प्रतीत होने लगा।

आखिर कब तक वह इस तरह हवा में लटकता रहता ? अचानक उसकी अंगुलियां मेहराब से फिसल गयीं और वह धड़ाम से नीचे आ गिरा ।

उसे अपने नीचे बजरी की चरमराहट सुनायी दी । पीड़ा की एक तीखी लहर उसके घुटनों को झुलसा गयी । कुछ देर तक वह हतबुद्धि सा पड़ा रहा । उसे लगा मानो उसके गिरने के धमाके को सुनकर सब लोग जाग गये होंगे, गुलाबी कमीज वाला चौकीदार अभी भागता हुआ आएगा और चारों ओर हो-हल्ला मच जायेगा । किन्तु बाग में शान्ति और निस्तब्धता पूर्ववत् छायी रही—धीमी दबी सी भनभनाहट के अलावा और कोई स्वर सुनायी नहीं दे रहा था ।

"यह तो खुद मेरे कानों में बज रही है !" उसने अनुमान लगाया । वह उठ खड़ा हुआ । सुगन्धित सपनों से महकती अंधेरी वाटिका किसी परी-कथा के मायावी-लोक सी रहस्यमय, भयावह और सुन्दर दिखायी दे रही थी । अंधेरे में अदृश्य फूल क्यारियों में धीरे-धीरे डोल रहे थे । एक स्पष्ट, धुंधली सी आशंका के कारण वे एक दूसरे से सट कर मानो दबे स्वरों में बुदबुदा उठते थे, और फिर सतर्क, सन्देहपूर्ण दृष्टि से सर्गे की ओर देख लेते थे । पतले-दुबले सरों के वृक्ष अपने पत्तों की सुरभि चारों ओर बिखेरते हुए, उदास और उलाहना-भरे भाव में धीरे-धीरे अपनी नुकीली फुनगियां हिला रहे थे । झरने के पार घनी झाड़ियों के झुरमुट में थकी-मांदी नन्हीं सी पक्षी अपनी नींद से जूझती हुई अवसाद-भरे स्वर में बार-बार चीख उठती थी : "सो जाओ ! सो जाओ !!"

रात के अंधेरे में सर्गे को बाग की हर चीज अपरिचित सी जान पड़ रही थी । वृक्षों की उलझी छायाओं से घिरी सड़क पर चलते हुए उसे लग रहा था मानो वह किसी भूल-भुलैयां में घुस आया है । बजरी की सड़क पर काफी देर तक दिग्भ्रान्त अवस्था में भटकने के बाद वह मकान के सामने आ खड़ा हुआ ।

यह पहला अवसर था जब सर्गे ने अपने को जीवन में इतना असहाय, विवश और अकेला पाया था । उसे लग रहा था मानो इस मकान के हर कोने में क्रूर, निर्दयी शत्रु लुक-छिप कर बैठे हैं, अंधेरी खिड़कियों से उनकी आंखें उसकी गति-विधि को तौल परख रही हैं, उनके होठों पर एक वीभत्स मुस्कान खिल उठी है, मानो वे चुपचाप गगन-भेदी स्वर में दिये जाने वाले किसी भयानक आदेश की प्रतीक्षा कर रहे हों ।

"इस घर में नहीं, कदापि नहीं !" सर्गे मानो कोई स्वप्न देखता हुआ बुदबुदा उठा । "हमारा कुत्ता इस घर में हमेशा रिरियाता रहेगा—सब उससे तंग आ जायेंगे ।"

वह बंगले के इर्द-गिर्द चक्कर काटने लगा । उसके पीछे आंगन में कुछ और ईमारतें थीं जो मुख्य बंगले की तुलना में जरा छोटी थीं । कदाचित उस

घर के नौकर-चाकर वहां रहते होंगे। मुख्य बंगले की भांति इस ओर भी किसी कमरे में प्रकाश नहीं था—केवल खिड़कियों के शीशों पर भुनैर्ली सी चांदनी के छोटे-बड़े वृत्त-खंड झिलमिला रहे थे। "मैं शायद यहां से कभी बाहर न निकल सकूंगा।" सर्गे का मन विह्वल हो उठा। एक क्षण के लिए उसके मानस-पटल पर अनेक सुखद स्मृतियां जाग उठीं—लोदिजकिन दादा, उनका पुराना बाजा, कहवाघरों की रातें, शीतल झरनों की छाया में बैठ कर भोजन करना, आदि। "अब वे दिन कभी वापिस न लौटेंगे!" दुःखी होकर उसने सोचा। पीड़ा के इन क्षणों ने उसे एक ऐसी स्थिति में पहुंचा दिया, जहां उसका भय निराशा की एक थकी सी क्लान्त भावना में परिणत होने लगा।

अचानक भौंकने का एक पतला, सिसकता सा स्वर उसे सुनायी दिया। सर्गे के स्नायु तन गये, वह सांस रोक कर अपने पंजों के बल खड़ा हो गया। उसे पुनः वही रिरियाता स्वर सुनायी दिया—इस बार उसे लगा मानो वह स्वर उसके पास ही पत्थर की किसी कोठरी से बाहर आ रहा है। फूलों की क्यारियों को लांघता हुआ वह एक दीवार के सामने आ खड़ा हुआ, जहां खिड़की के स्थान पर बिना शीशों के चन्द खाली सूराख दिखायी दे रहे थे। इनमें से एक सूराख पर अपना मुंह टिका कर उसने धीरे से सीटी बजायी। भीतर हल्की सी कुछ आवाज हुई, किन्तु दूसरे ही क्षण सन्नाटा छा गया।

"आर्तो, आर्तो!" सर्गे कांपते स्वर में फुसफुसाया। उसी क्षण भौंकने की टूटी सी उन्मत्त रिरियाहट बाग के कोने-कोने में गूंज गयी। उस रिरियाहट में शिकवा, नाराजगी शारीरिक-यातना और बिछोह के बाद पुनर्मिलन का अनिर्वचनीय आनन्द—सभी भावनाएं एक दूसरे के संग घुल-मिल गयी थीं। सर्गे को लगा मानो आर्तो उस काल-कोठरी में अपने को किसी बन्धन से मुक्त करवाने के लिए बुरी तरह छटपटा रहा है।

"आर्तो, प्यारे कुत्ते, मेरे आर्तो!" सर्गे का कंठ आंसुओं से रुंध गया था।

"चुप भी रह साले," नीचे से कोई कर्कश स्वर में चिल्लाया। "बदमाश ने भौंकते-भौंकते आसमान सिर पर उठा लिया है!"

कोठरी के भीतर से तड़ाक, तड़ाक पीटने की आवाज आयी। कुत्ता चूं-चूं करता हुआ काफी देर तक रिरियाता रहा।

"उस पर हाथ मत उठा, जानवर कहीं के। मेरे कुत्ते को मारने वाला तू कौन होता है?" सर्गे गुस्से में पागल होकर चिल्ला उठा। क्रोध में वह अपने नाखूनों से पत्थर की दीवार को कुरेदने लगा।

उसके बाद जो कुछ हुआ वह सर्गे को केवल धुंधला सा याद है, मानो उसने कोई दुःस्वप्न देखा हो। कोठरी का दरवाजा धमाके से खुला और चौकीदार तीर की तरह बाहर निकल आया। उसके पांव नंगे थे और जांगिये के अलावा

उसके शरीर पर कोई दूसरा वस्त्र नहीं था। उसकी दाढ़ी और चेहरा उज्जवल चांदनी में चमक रहे थे। सर्गे को लगा मानो क्रोध में फुत्कारता कोई नरभक्षी दैत्य उसके सामने अचानक आकर खड़ा हो गया हो।

"कौन है? नीचे उतर जाओ, वरना गोली मार दूंगा!" उसकी आवाज बिजली सी कड़क उठी। "चोर! चोर!! भागकर न जाने पाए!"

किन्तु उसी क्षण आर्तो सफेद गेंद सा उछलता हुआ अंधेरी ड्योढ़ी से बाहर निकल आया और जोर-जोर से भौंकने लगा। उसके गले पर बंधी हुई रस्सी नीचे लटक रही थी।

किन्तु सर्गे का ध्यान कुत्ते की ओर नहीं था। चौकीदार की भयानक, भीमकाय मूर्ति को देखते ही एक अजीब भय से सर्गे का खून सूख गया, उसके पांव जमीन से चिपक गये और सारे शरीर पर लकवा सा मार गया। सौभाग्य-वश उसे शीघ्र ही अपनी स्थिति का ज्ञान हो गया। अनायास उसके मुंह से तेज, कांपती चीख निकल गयी। भय से विक्षिप्त, बदहवास सा वह अंधाधुंध कोठरी को पीछे छोड़ कर अंधेरे में भागने लगा।

वह खरगोश की तरह भाग रहा था, मानो उसके दोनों पैरों पर लोहे के स्प्रिंग लग गये हों। आर्तो खुशी से भौंकता हुआ उसके संग दौड़ रहा था। चौकीदार उन्हें कोसता, गाली देता हुआ उनके पीछे-पीछे भाग रहा था। सामने फाटक देखकर सर्गे को एकाएक विचार आया कि वहां से बाहर निकलना असं-भव है। सफेद पत्थर की दीवार और उससे सटे सरों के वृक्षों के बीच एक छोटी सी संकरी पगडंडी बाहर जाती थी। भय ने उसकी सारी झिझक को मिटा डाला था। तेजी से लपक कर वह पगडंडी की ओर मुड़ गया और दीवार के साथ साथ भागने लगा। सरों के वृक्षों की नुकीली सूइयां, जिनमें से गोंद की गन्ध आ रही थी, बार-बार सर्गे के चेहरे को खरोच डालती थीं। कई बार मुलायम जड़ों पर फिसल कर वह गिर पड़ता, हाथों पर चोट लग जाती, किन्तु वह बिना विलम्ब किये झटपट उठ जाता और दूनी चाल से भागने लगता। उसे अपने घावों की कोई चिन्ता नहीं थी। और तो और, अपनी चीखों के प्रति भी उसके कान बहरे हो गये थे। आर्तो बराबर उसके पीछे-पीछे भाग रहा था।

जाल में फंसे एक छोटे से निरीह, आतंकग्रस्त जन्तु की तरह वह एक ओर ऊंची दीवार और दूसरी ओर सरों के वृक्षों की कतार के बीच छोटी सी पगडंडी पर भागा चला जा रहा था। उसका मुंह सूख गया था और हर सांस के संग उसे ऐसा महसूस होता था मानो हजारों सूइयां एक संग उसकी छाती में चुभ रही हों। अपने पीछे चौकीदार की पदचाप उसे कभी दायीं ओर तो कभी बायीं ओर से आती सुनायी देती थी। सोचने-समझने की उसकी शक्ति बिलकुल जाती रही थी। वह कभी आगे की ओर दौड़ता और कभी पीछे मुड़ जाता। बार-बार

फाटक उसके सामने आ जाता था, और वह बाहर निकलने के लिए दुबारा उस छोटी सी अंधेरी पगडंडी की ओर मुड़ कर भागने लगता था।

भागते-भागते थकान के कारण उसका शरीर टूटने सा लगा था। उसे लगा मानो उसकी सारी शक्ति चुक गयी है। डर के बावजूद उसके हृदय में एक असह्य, परवश पीड़ा का भाव जमने लगा। खतरे के प्रति एक विरक्त उदासीनता सी उत्पन्न होने लगी। वह एक वृक्ष के नीचे बैठ गया और अपने थके-मांदे शरीर को उसके तने के सहारे टिका कर आंखें मूंद लीं। उसके शत्रु के भारी पैरों से दबती रेत की चरमराती आवाज क्षण प्रति क्षण निकट आती गयी। आर्तो अपनी नाक सर्गे के घुटनों पर टिका कर धीमे-धीमे सिसकता हुआ कराह रहा था।

हवा चलने से पत्तों से लदी शाखाएं एक दूसरे से अलग होकर सरसराने लगीं। सर्गे की आंखें अचानक ऊपर उठ गयीं—हर्ष और आनन्द से उसका दिल बांसों उछलने लगा। उसने देखा कि उसके सामने जो दीवार खड़ी है, वह मुश्किल से साड़े तीन फीट ऊंची होगी। उसके ऊपर बोतल के टूटे कांच के टुकड़े चूने से चिपके हुए थे, किन्तु उन्हें देख कर सर्गे निरुत्साहित नहीं हुआ। पलक मारते ही उसने आर्तो को उठा लिया, और उसे उसके अगले पंजों के सहारे दीवार पर खड़ा कर दिया। कुत्ते को सर्गे का अभिप्राय समझते देर न लगी। वह पैरों को घसीटता हुआ दीवार पर चढ़ गया और विजयोल्लास से पूंछ हिलाता हुआ जोर-जोर से भौंकने लगा।

सरों के वृक्षों के झुरमुट से सर्गे की काली, बेडौल प्रतिमा लड़खड़ाती-डगमगाती हुई बाहर निकल आयी। कुत्ते और बालक की फुर्तीली-लचीली छायाएं दीवार पर एक क्षण के लिए दिखायी दीं और फिर तेजी से वे दूसरी ओर सड़क पर कूद गयीं। उनके पीछे चौकीदार की कुत्सित, भद्दी गालियां हवा में गूंज रही थीं।

कदाचित दौड़ में चौकीदार उन दोनों मित्रों की तेजी का मुकाबला नहीं कर सका था अथवा बाग में भागते-भागते वह थक कर चूर हो गया था, या शायद उसने उन भगोड़ों को पकड़ने की आशा छोड़ दी थी—चाहे जो भी कारण रहा हो, इसमें अब सन्देह नहीं था कि उसने अब पराजय स्वीकार कर ली थी और अब वह उन दोनों के पीछे नहीं भाग रहा था। किन्तु वे दोनों बड़ी फुर्ती से काफी देर तक, बिना रुकें, बिना सांस लिए सरपट भागते रहे—मानो बन्धन से मुक्ति पा लेने के अदम्य उल्लास ने उनके पैरों पर पंख लगा दिये हों। कुत्ते की पुरानी मौज-मस्ती फिर से उमड़ आयी थी। गले में बंधी रस्सी डुलाता और अपने कान हिलाता हुआ वह खुशी की झोंक में बार-बार सर्गे पर लपकता था और उसका मुह चाटने के लिए छटपटाने लगता था।

किन्तु सर्गे का भय अभी पूरी तरह से दूर नहीं हुआ था और वह बार-बार संत्रस्त और सतर्क भाव से पीछे की ओर देख लेता था।

जब वे भागते-भागते उस झरने के पास पहुंच गये जहां पिछले दिन उन्होंने खाना खाया था, तब कहीं जाकर सर्गे का मन शान्त हुआ और उसने चैन की ठंडी सांस ली। दोनों ने ही अपने मुंह उस शीतल झरने से लगा लिए और देर तक उसके ताजे और स्वादिष्ट जल को पीते रहे। वे एक दूसरे को धीरे से धकियाते हुए सांस लेने के लिए अपना सर ऊपर उठाते, उनके होठों से पानी बूंद-बूंद नीचे टपकता जाता, प्यास फिर हरी हो जाती और वे अपनी अतृप्त तृष्णा को शान्त करने के लिए दुबारा अपना मुंह झरने से लगा लेते। आखिर झरने से विदाई लेकर जब वे आगे बढ़े तो उनके पेट में गड़गड़ करता हुआ जल कुलाचें मार रहा था। वे खतरे से मुक्ति पा गये थे, और रात की सारी भयंकर दुश्चिन्ताएं मिट गयी थीं। वे प्रफुल्लित मन से उज्ज्वल चांदनी में लिपटी सफेद सड़क पर चल रहे थे। उनके दोनों ओर सुबह की शबनम से भीगी काली झाड़ियां सर उठाए खड़ी थीं, जिनके सद्य स्नात पत्तों से उड़ती हुई भीनी-भीनी खुशबू हवा में फैल रही थी।

जब वह दोनों कहवाघर पहुंचे तो इब्राहिम ने बुदबुदाते हुए सर्गे को झिड़कना शुरू कर दिया। "लड़के — तू आवारागर्दी बहुत करता है। रात भर तू कहां रहा? मैं पूछता हूं, इसका क्या मतलब है? यह अच्छी बात नहीं है लड़के..."

सर्गे बूढ़े को जगाना नहीं चाहता था, किन्तु आर्तो को इतना धैर्य कहां था! फर्श पर लेटे हुए आदमियों के जमघट में उसने बूढ़े को एकदम पहचान लिया और इसके पहले कि बूढ़ा जाग कर स्थिति का आकलन कर सके, वह झट उसके पास भाग आया और खुशी से उसका मुंह चाटने लगा। बूढ़ा लोदिजकिन हड़बड़ा कर आंखें मलता हुआ उठ खड़ा हुआ। उसने कुत्ते को सामने बैठे हुए पाया — उसके गले से रस्सी बंधी हुई थी। पास ही धूल से लंदा-फंदा सर्गे चुपचाप लेटा था। बूढ़ा तुरन्त सारी बात समझ गया। "यह सब कैसे हुआ?" उसने सर्गे की ओर मुंह मोड़ कर आश्चर्य से पूछा। सर्गे ने कोई उत्तर नहीं दिया। उसका मुंह खुला था — दोनों बाहें पसार कर वह गहरी नींद सो रहा था।

१६०४

मैं एक अभिनेता था
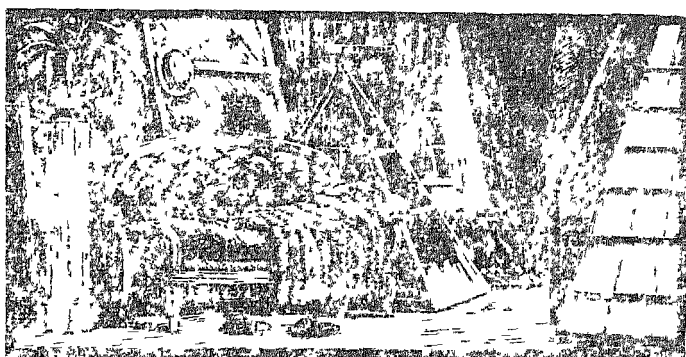
अपने एक मित्र से मैंने यह विषादपूर्ण तथा हास्यास्पद गाथा सुनी थी, जो हास्यास्पद होने की अपेक्षा विषादपूर्ण अधिक है। मेरे इस मित्र ने अनेक घाटों का पानी पिया है और कहावत के अनुसार वह राजा भोज और तेली कांगड़ा—दोनों का ही जीवन भिन्न-भिन्न अवसरों पर बिता चुका है, किन्तु भाग्य की इतनी ठोकरें खाने के बावजूद उसने विवेक और सहृदयता का पल्ला कभी नहीं छोड़ा। किन्तु इस कहानी में उसने जिन घटनाओं का वर्णन किया है, उनका उस पर इतना विचित्र प्रभाव पड़ा कि उसने फिर कभी थियेटर की ओर भूल कर भी आंखें नहीं उठायी, चाहे इसके लिए कितनी ही बार उसे मन मार कर क्यों न रह जाना पड़ा हो।

यहां मैं आपको अपने उस मित्र की कहानी सुनाने की चेष्टा करूंगा, यद्यपि मुझे डर है कि जिस सहज ढंग से—दबा सा हलका व्यंग्य लिए—उसने मुझे अपनी कहानी सुनायी थी, ठीक उसी रंग में कहानी सुनाना मेरे बूते के बाहर है।

एक

अच्छा तो... क्या आप दक्षिणी प्रदेश के एक छोटे गन्दे कस्बे की कल्पना कर सकते हैं? इस कस्बे के बीचोंबीच एक विशाल खाई सी है, जहां गांव से आये हुए खोखोल (यूक्रेन-निवासी) कमर तक कीचड़ में धसे हुए खड़े रहते हैं

और अपने छकड़ों पर लदे खीरों और आलुओं को बेचते हैं। यहां बाजार लगता है। इसके एक ओर गिरजा और गिरजे की सड़क है, दूसरी ओर सार्वजनिक वाटिका है, तीसरी ओर दुकानों की लम्बी कतार चली गयी है, जिनकी दीवारों का पीला पलस्तर झर गया है और जहां चारों ओर, छतों, कारनीसों पर कबूतर ही कबूतर बैठे दिखायी देते हैं; चौथी तरफ मुख्य सड़क है, जहां किसी बैंक की शाखा का दफ्तर, डाक घर, नोटरी दफ्तर और मास्को के नाई थियोडोर की दुकान है। यह सड़क आगे चल कर मंडी में मिल जाती है। कस्बे के बाहर, जेसलेयस (गांव से परे), जामोस्तेयस (पुल के परे) और जारचेयस (नदी के परे) में पैदल सेना की रेजीमेंट और कस्बे के बीचोबीच घुड़सवार रेजीमेंट ठहरी हुई हैं। सार्वजनिक वाटिका में एक थियेटर है। बस यहां यही है।

मैं यहां इतना और जोड़ दूं कि 'स' कस्बे में हम जो ड्यूमा (टाउन-हॉल), स्कूल, सार्वजनिक वाटिका और रोड़ियों से ढंकी मुख्य सड़क देखते हैं, ये सब कुछ इस शहर के करोड़पति और चीनी की मिलों के मालिक खारितोनेन्को के धन का ही प्रताप है।

दो

मैं उस शहर में कैसे आकर टिक गया, यह एक लम्बी गाथा है, जिसे पूरा सुनाना सम्भव नहीं। इसलिए मैं संक्षेप में ही सब कुछ कहूंगा। मुझे वहां अपने एक मित्र से मिलना था — ईश्वर उसकी आत्मा को शान्ति दे! — वह मेरा सच्चा मित्र था और जैसा कि सच्चे मित्रों की पत्नियों के संग होता है, उसकी पत्नी को भी मैं फूटी आंख नहीं सुहाता था। हम दोनों के पास हजारों रूबल जमा थे जो हमने खून पसीना एक करके कमाये थे। कई वर्षों तक वह अध्यापक रहा था और उसके साथ बीमा-एजेन्ट का काम भी करता था। पूरे वर्ष ताश के पत्तों में भाग्य ने मेरा साथ दिया। एक बार हम दोनों को ऐसा काम मिला जिसमें मुनाफा ही मुनाफा था। हम जोखिम उठाने के लिए प्रस्तुत हो गये। पहले मुझे प्रस्थान करना था, दो तीन रोज बाद मेरे पीछे उसे आना था। मैं भुलक्कड़ आदमी ठहरा, इसलिए मैंने अपना रुपया उसके हवाले कर दिया। एक जर्मन की तरह उसने कायदे-करीने से मेरा और अपना रुपया दो अलग-अलग थैलियों में रख दिया।

उसके बाद दुर्घटनाओं की झड़ी सी लग गयी। खारकोव स्टेशन पर जब मैं मछली खा रहा था, किसी ने मेरी जेब से बटुआ चुरा लिया। जब मैं 'स' शहर, जिसका उल्लेख पहले कर चुका हूं, मैं आया तो मेरे पास बटुए में कुछ रेजगारी बची थी और साथ में इंगलैंड का बना हुआ सुन्दर सूटकेस था,

जिसमें इने-गिने कपड़े भरे थे। मैं एक होटल में ठहर गया जिसका नाम, जाहिर है, सेंट पीटर्सबर्ग था और तार पर तार भेजने शुरू कर दिये। किन्तु दूसरी ओर मानो मौत की खामोशी थी — मुझे एक तार का भी उत्तर नहीं मिला। हां, "मौत" का शब्द ही शायद सबसे अधिक उपयुक्त है, क्योंकि जब चोर मेरे बटुए पर हाथ साफ कर रहा था — भाग्य का खेल देखिये — उसी समय घोड़ा-गाड़ी में जाते हुए मेरे साझेदार मित्र की तबियत अचानक बिगड़ गयी और वहीं उसका स्वर्गवास हो गया। उसके सारे सामान और रुपये पर मोहर लगी हुई थी। छः हफ्ते छोटी-मोटी निरर्थक कानूनी कार्रवाइयों में नष्ट हो गये। मेरे मित्र की पीड़ाक्रान्त पत्नी मेरे रुपयों के सम्बंध में कितना कुछ जानती थी, मुझे कुछ नहीं पता। दरअसल मैंने जितने तार भेजे, सब उसी को मिले थे। अपनी जिद में उसने ईर्ष्यावश, बदला लेने की ओछी भावना से प्रेरित होकर मेरे किसी तार का उत्तर नहीं दिया। यह सही है कि ये तारें बाद में मेरे बहुत काम आये। मेरे मित्र की पैतृक-सम्पत्ति से सम्बंधित कार्रवाही करने वाले वकील से मैं सर्वथा अनभिज्ञ था। सामान की मोहरें खोलते समय उसकी आंखें इन तारों पर पड़ीं। उसने मेरे मित्र की विधवा को काफी डांटा-फटकारा और अपनी जिम्मेवारी पर थियेटर के पते पर मुझे पांच सौ रूबल भिजवा दिये। यह कोई अचम्भे की बात नहीं थी क्योंकि वे कोई साधारण तार नहीं थे — प्रत्येक तार के बीस या तीस शब्दों में मैंने अपनी आत्मा का करुण आर्तनाद निचोड़ कर रख दिया था।

तीन

सेंट पीटर्सबर्ग में रहते-रहते मुझे दस दिन हो चले थे। आत्मा का करुण आर्तनाद करने के लिए जो रुपया लगाना पड़ा, उससे सारा बटुआ खाली हो गया। होटल का मालिक खोखोल (यूक्रेन निवासी) था — संजीदा, सोया हुआ सा उसका चेहरा कातिलों जैसा था। उसे अब मेरी किसी भी बात पर विश्वास नहीं होता था। मैंने अपनी स्थिति का स्पष्टीकरण करने के लिए उसे कुछ पत्र और दस्तावेज दिखलाए, किन्तु वह घृणा से मुंह सिकोड़ कर भुनभुनाता हुआ चला गया। आखिरकार एक वेटर भोजन लेकर आया और आते ही उसने घोषणा की : "मालिक का हुक्म है कि यह आपको अन्तिम बार भोजन दिया जा रहा है।"

आखिर वह दिन भी आ पहुंचा जब बीस कोपेक के मैले-पुराने सिक्के के अलावा मेरी जेब में कुछ भी नहीं रहा। उसी दिन सुबह होटल मालिक ने बड़े रूखे स्वर में कहा था कि होटल में रहने-खाने की सुविधा अब मुझे नहीं दी

जाएगी और वह मेरी रिपोर्ट पुलिस में करेगा। उसके स्वर से मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि जो बात उसने कही है, वह करके छोड़ेगा।

सारा दिन शहर में भटकता फिरा। मुझे याद है कि काम ढूंढने के लिए मैं ट्रांसपोर्ट के दफ्तर तथा दूसरे स्थानों पर गया था किन्तु इससे पेश्तर कि कुछ कहूं, मुझे दरवाजा दिखला दिया जाता। कभी-कभी मैं मुख्य सड़क पर लम्बे लौम्बार्डी चिनार वृक्षों के बीच हरी बेंच पर बैठ जाता। भूख के मारे सिर चकरा रहा था और जी मिचलाने लगा था। किन्तु एक क्षण के लिए भी मेरे मन में आत्महत्या करने का विचार नहीं आया। मेरे उलझे हुए जीवन में यह विचार कई बार आया था, किन्तु हर बार एक वर्ष या एक महीना और कभी-कभी तो सिर्फ दस मिनट के बीतने के बाद ही सब कुछ बदल जाता, भाग्य फिर से चमक उठता और आनन्द और सुख की घड़ियां वापिस लौट आतीं। गर्म और उबा देने वाले उस शहर की गलियों में भटकते हुए कई बार मैंने अपने से कहा था, "पवेल आन्द्रेविच, बड़े चक्कर में फंसे हो भाई।"

भूख लगी थी। किन्तु किसी अज्ञात शक्ति ने अब तक मुझे बाकी बचे हुए उन बीस कोपेक को खर्च करने से रोक रखा था। जब रात घिर आयी, तो मेरी निगाहें दीवार पर लगे एक लाल पोस्टर पर जा पड़ीं। काम कुछ था नहीं इसलिए यन्त्रवत मेरे पांव पोस्टर की ओर बढ़ गये और मैं उसे पढ़ने लगा। पता चला कि उस रात सार्वजनिक वाटिका में गुत्जकोव का दुःखान्त नाटक 'उरयल अकोस्ता' खेला जाने वाला था। उसमें भाग लेने वाले अभिनेताओं के नाम भी दिये गये थे। दो अभिनेताओं के नाम सबसे ऊपर मोटी सुर्खियों में दिये गये थे: "पीटर्सबर्ग रंगमंच की एक अभिनेत्री कुमारी आन्द्रोसोवा" और "खारकोव के सुप्रसिद्ध अभिनेता श्री लारा-लार्सकी।" गौण कलाकारों में श्रीमती वोलोगोदस्काया, मेदवेदेवा, स्त्रूनीना-दोल्सकाया और सर्वश्री तिमोफयेव-सुम्सकोव, अकीमेंको, समोयलेंको, नेल्यूबोव-ओलिगिन और दुखोवस्कोय के नाम दिये गये थे। सब से छोटे अक्षरों में लिखे गये नामों में पेत्रोव, सर्जीयेव, सिदोरोव, ग्रिगोरयेव, निकोलायेव इत्यादि शामिल थे। "श्री समोयलेंको" रंगमंच-निर्देशक और "श्री वेलेरियानोव" प्रबन्ध-निर्देशक थे।

आगा-पीछा न देखकर मैंने अचानक फैसला कर लिया। सड़क के पार मास्को के नाई थियोडोर के पास भागता हुआ गया और अन्तिम बीस कोपेक उसके हवाले करके अपनी मूछें और छोटी सी नुकीली दाढ़ी मुंड़वा लीं। हे परमात्मा—आइने में मेरा चेहरा कैसा उदास, कैसा नंगा सा दीखता था! मुझे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हो पाया। तीस वर्ष के व्यक्ति के सम्मान-युक्त—चाहे देखने में वह सुन्दर न रहा हो—चेहरे के स्थान पर आइने में जो व्यक्ति दिखाई दे रहा था, वह शक्ल-सूरत में पुराना, अक्खड़ और गंवारू

हास्य-अभिनेता लगता था जिसका शरीर गले तक चादर से लिपटा हुआ था — चेहरे पर विविध प्रकार के गुनाहों का जाल बिछा था और जो निश्चित-रूप से पक्का पियक्कड़ दिखलायी देता था।

"क्या हमारे थियेटर में काम करने का इरादा है?" नाई ने चादर झाड़ते हुए मुझ से पूछा।

"हां" मैंने गर्व से कहा। "यह लो अपने पैसे।"

चार

सार्वजनिक-वाटिका जाते हुए मैं सोच रहा था : उन्हें देखते ही पता चल जाएगा कि मैं एक लुटा-पिटा सामर्थ्यहीन शख्स हूं। गरमी के दिनों में चलने वाले इन छोटे-मोटे थियेटरों को हमेशा किसी न किसी आदमी की जरूरत पड़ती ही रहती है। शुरू में मैं कुछ अधिक नहीं मांगूगा — महीने में पचास या चालीस रूबल। बाद में जो होगा, सो देखा जाएगा। मैं पचास रूबल पेशगी मागूंगा। नहीं पचास अधिक हैं, चलो दस रूबल ही सही। सबसे पहले तो मैं बहुत ही सख्त भाषा में एक तार भेजूंगा; पांच गुणा पांच पच्चीस जमा सिफर ढाई सौ हुए जिसमें तार भेजने के पन्द्रह कोपेक जोड़ देने से कुल दो सौ पैंसठ कोपेक का खर्च आएगा। जब तक इल्या नहीं आता तबतक बाकी बचे हुए पैसों पर अपना गुजारा करूंगा। यदि वे मेरी परीक्षा लेना चाहेंगे तो बड़ी खुशी से लें। मुझे मुंह जबानी जो याद होगा — मिसाल के तौर पर पिमेन का एकालाप — वही उन्हें सुना दूंगा।

होठों में ही मेरे मुंह से गहरे, गम्भीर शब्द निकलने लगे :

घटना एक और लिखूंगा मैं —

मेरे पास से गुजरता हुआ एक व्यक्ति डर के मारे दूसरी ओर भाग खड़ा हुआ। कुछ संकुचित सा होकर मैं खांसने लगा। मैं अब सार्वजनिक वाटिका के पास पहुंच गया था। सैनिक-बैंड बज रहा था, सड़क पर उस शहर की कुछ युवतियां गुलाबी-नीले वस्त्रों से सुसज्जित होकर नंगे सिर घूम रही थीं और उनके पीछे उसी शहर के क्लर्क, तारबाबू और चुंगी-कर्मचारी अपने कोट के नीचे हाथ रखे और सफेद दफ्तरी टोपियों को सिरों पर टेढ़ा लगाए निस्संकोच हंसते हुए मजे से धीरे-धीरे चल रहे थे।

दरवाजा खुला था। मैं भीतर चला गया। किसी ने बॉक्स-ऑफिस की ओर संकेत करके मुझसे कहा कि मैं वहां से टिकट खरीद लूं। किन्तु मैंने लापरवाही से कहा कि मैं मैनेजर श्री वेलेरियानोव से मिलना चाहता हूं। फौरन मुझे प्रवेश-द्वार के पास रखी हुई वह बेंच दिखला दी गयी जहां दाढ़ी-मूंछ

साफ किये हुए दो युवक बैठे थे। मैं वहां गया और उनसे दो कदमों के फासले पर जाकर खड़ा हो गया।

बातचीत में संलग्न होने के कारण उन्होंने मेरी ओर कोई ध्यान नहीं दिया और मुझे उन दोनों को गौर से देखने का अवसर मिल गया। उनमें से एक महानुभाव ने हल्का पानामा हैट और नीली धारियों वाली फ्लैनेल की पतलून पहन रखी थी। चेहरे पर उद्दात्त-भावना अंकित थी और वह लापरवाही से अपनी पतली छड़ी से खेल रहा था। दूसरा व्यक्ति भूरे रंग के वस्त्र पहने था और उसकी टांगे और बाहें असाधारण रूप से लम्बी थीं। दरअसल ऐसा जान पड़ता था कि उसकी टांगें छाती से शुरू होकर नीचे तक चली गयीं हैं और उसकी बाहें घुटनों से भी नीचे लटकती दिखायी देतीं थीं। उसकी टेढ़ी-मेढ़ी आकृति को देखकर ऐसा लगता था मानो कब्जेदार गज की छड़ी की तरह उसे मोड़ा जा सकता हो। उसका बहुत छोटा सा सिर था, चेहरे पर चेचक के दाग थे और काली चंचल आंखें थीं।

मैंने धीरे से गला साफ किया। वे दोनों मुझे देखने के लिए मुड़ गये।

"क्या मैं श्री वेलेरियानोव से मिल सकता हूं ?" मैंने दोस्ती के लहजे में पूछा।

"जी हां, मैं ही हूं," उस व्यक्ति ने उत्तर दिया जिसके चेहरे पर दाग थे। "बताइये, मैं आपकी क्या सेवा कर सकता हूं ?"

"देखिये, मैं ..." मैं हकलाने सा लगा। "मैं ... विदूषक या ... 'मूर्ख' का पार्ट कर सकता हूं ...। नाटक के पात्रों का अभिनय भी मैं कर सकता हूं।"

पानामा हैट वाले महानुभाव उठे और सीटी बजाते और छड़ी झुलाते हुए वहां से चल दिये।

"पहले कहां नौकरी करते थे ?" वेलेरियानोव ने पूछा। मैंने केवल एक बार एक नाटक में हास्य-अभिनेता का पार्ट खेला था, किन्तु अपनी कल्पना-शक्ति पर जोर डालकर मैंने उत्तर दिया :

"आपसे सच कहूं तो बात यह है कि आजतक मैंने आपकी जैसी बढ़ी-चढ़ी कम्पनी में काम नहीं किया। मुझे दक्षिण-पश्चिम की छोटी-मोटी कम्पनियों में अभिनय करने का मौका मिला है। किन्तु उन्हें शुरू होते देर नहीं होती थी कि ठप्प हो जाती थीं — मारिनिख, सोकोलोवस्की इत्यादि की कम्पनियों की मिसालें हमारे सामने हैं।"

"देखो, क्या तुम शराब पीते हो ?" वेलेरियानोव ने अचानक पूछा।

"नहीं," मैंने झट उत्तर दिया। "कभी-कभी भोजन के बाद या किसी दावत में जरूर पी लेता हूं, लेकिन वह भी सिर्फ बूंद भर ..."

वेलेरियानोव अपनी आंखें सिकोड़ कर नीचे रेत की ओर देखने लगा।

"अच्छा, ठीक है।" उसने कुछ देर सोचने के बाद कहा। "मैं तुम्हें रख लूंगा। तुम्हें पच्चीस रूबल मासिक वेतन मिलेगा और फिर बाद में देखा जायगा। शायद आज रात ही तुम्हारी जरूरत पड़ जाए। मंच पर जाकर रंगमंच के सह-निर्देशक दुखोवस्कोय से मिल लो, वह निर्देशक से तुम्हारा परिचय करावा देंगे।"

मंच की ओर जाते हुए मुझे यह सोचकर काफी आश्चर्य हुआ कि उसने मेरा रंगमंच का नाम क्यों नहीं पूछा। शायद भूल गया हो, मैंने सोचा, या शायद उसने यह अनुमान किया हो कि रंगमंच का मेरा कोई नाम ही नहीं है। फिर भी चलते-चलते मैंने अपना एक उपनाम खोज निकाला—ओसनिन। नाम में कोई तड़क-भड़क नहीं थी ... सीधा-सादा नाम था, जो सुनने में भी भला प्रतीत होता था।

पांच

परदे के पीछे मैं दुखोवस्कोय से मिला। देखने में वह एक चंचल बालक सा लगता था—चोरों का सा उसका मलिन, पीला चेहरा था। उसने मेरा परिचय निर्देशक समोयलेंको से करवा दिया। उस रात समोयलेंको किसी बहादुर नायक का अभिनय करने वाला था; उसने सोने का कवच और लम्बे जूते पहन रखे थे और तरुणों का सा रंग-रूप बना रखा था। इस भेष के बावजूद उसका स्थूलकाय व्यक्तित्व, चांद सा गोल चेहरा, चुभती हुई तीखी आंखें और मुंह पर जमी हुई खोखली मुस्कराहट मुझ से छिपी न रह सकी। बड़े घमंड से उसने मेरा स्वागत किया और मुझसे हाथ मिलाने की भी जरूरत नहीं समझी। मैं वहां से जाने ही वाला था कि उसने कहा :

"जरा ठहरिए! मैं सुन नहीं सका, क्या नाम बताया आपने?"

"वासिल्येव," दुखोवस्कोय ने 'जी-हजूरी' की मुद्रा में तुरन्त बड़ी मुस्तैदी से कहा।

मैं हक्का-बक्का सा खड़ा रहा। सोचा, गलती सुधार दूं, किन्तु उसके लिए अवसर ही नहीं मिला।

"वासिल्येव, जरा सुनिए, आज आपको यहीं रहना होगा। दुखोवस्कोय, दरजी से कहकर वासिल्येव को एक कोट दिलवा दो।"

इस तरह ओसनिन के बदले मेरा नाम वासिल्येव पड़ गया। जब तक मैं थियेटर में काम करता रहा, पैत्रोव, इवानोव, निकोलायेव, ग्रिगरोयेव, सिदोरोव इत्यादि नामों के साथ यह नाम भी मेरे साथ चिपका रहा। अनुभव-हीन अभिनेता होने के कारण पूरे एक सप्ताह तक मुझे पता न चल सका कि पोस्टर में दिये गये नामों में अकेला मेरा नाम ही ऐसा था जो सच्चे अर्थों में किसी व्यक्ति

का प्रतिनिधित्व करता था। मैं क्या करता, उस नाम में स्वरों का मेल ही कुछ ऐसा था !

पतला-दुबला दरजी लंगड़ाता हुआ आया और बाहोंवाला काले कफन सा दरेस मुझे पहना कर उसे ऊपर से नीचे तक सी दिया। फिर उसके बाद नाई आया, जो और कोई न होकर थियोडोर का सहायक था जिसने अभी कुछ देर पहले मेरी दाढ़ी बनाई थी। हम दोनों एक-दूसरे को देखकर मुस्करा दिये। उसने कृत्रिम केशों से मेरा सिर ढंक दिया। दुखोवस्कोय ड्रेसिंग रूम में घुसते ही ऊंचे स्वर में चिल्लाया : "वासिल्येव, रंग लगाना शुरू करो।" मैंने पास रखे रंग में अपनी अंगुलियां डुबो दीं। मेरे बायीं ओर एक रूखा सा व्यक्ति, जिसका माथा काफी गम्भीर दिखायी देता था, मेरे ऊपर झपट पड़ा : "क्यों जी, दूसरे के डिब्बे पर ही हाथ साफ करने लगे ? आप ये रंग क्यों नहीं लेते, इन पर सब का हक है।"

मैंने एक डब्बे के खानों में गंदले और एक-दूसरे से मिले हुए रंग देखे। मैं किंकर्तव्यविमूढ़ सा खड़ा रहा। दुखोवस्कोय ने तो चिल्लाकर आदेश दे दिया : "रंग लगाना शुरू करो," किन्तु कैसे, कहां से रंग लगाना शुरू करूं ? साहस बटोर कर मैंने अपनी नाक के नीचे एक सफेद रेखा खींच दी और मेरा चेहरा विदूषक सा बन गया। फिर मैंने अपनी दोनों भौहों पर गहरा रंग लेप दिया, आंखों के नीचे दो नीले रंग के छाया-वृत्त बना दिये, फिर विस्मित होकर सोचने लगा कि और कहां-कहां अपना हाथ अजमाऊं ? आंखें सिकोड़ कर दोनों भौहों के बीचों-बीच मैंने दो सीधी लम्बी रेखाएं खींच दीं। अब तो दुनिया के लिए मैं किसी आदिवासी कबीले का सरदार जैसा दिखायी दे रहा था।

"वासिल्येव, तैयार हो जाओ !" ऊपर से आवाज आयी। मैं ड्रेसिंग रूम से निकल कर पीछे की दीवार से लगे कपड़े के दरवाजे की ओर बढ़ गया। दुखोवस्कोय वहां मेरी प्रतीक्षा कर रहा था।

"अब तुम्हारी बारी है... या खुदा — कैसा चेहरा बनाया है ! जब तुम यह वाक्य सुनो : 'हां, वह वापिस लौट आएगा।' तो उसी क्षण मंच पर चले जाना। जाकर कहना — उसने मुझे कोई नाम बतलाया था, जो अब मुझे याद नहीं रहा — 'अमुक व्यक्ति आपसे गुप्त रूप में मिलना चाहता है' और इतना भर कहकर बाहर आ जाना। समझ में आ गया ?"

"हां।"

"हां, वह वापिस लौट आएगा।" ये शब्द अचानक मेरे कानों में पड़े। मैं दुखोवस्कोय को पीछे धकेलता हुआ मंच की ओर लपका। एक या दो क्षणों के लिए मेरी जुबान तालू से चिपकी रही, मैं उस कम्बख्त आदमी का नाम भूल गया था। अंधेरे, हहराते पाताल की भांति दर्शकों की भीड़ मेरे सामने फैली

थी। ठीक मेरे सम्मुख लैम्प के चुंधियाते प्रकाश में भोंडे-भद्दे ढंग से रंगे हुए अपरिचित चेहरे दिखायी दे रहे थे। सब की तीखी नजरें मुझ पर जमी हुई थीं। दुखोवस्कोय पीछे से कुछ फुसफुसाया, किन्तु उसका एक शब्द भी मेरे पल्ले नहीं पड़ा। फिर अचानक मैंने बहुत ही गम्भीर शिकायत भरे स्वर में कहा : "हां, वह लौट आया है।"

स्वर्ण-कवच से सुसज्जित समोयलेंको आंधी की तरह मेरे सामने से गुजर गया। मैंने ईश्वर को धन्यवाद दिया और चुपचाप परदे के पीछे खिसक आया।

मुझे उस नाटक में दो बार और काम करना पड़ा। उस दृश्य में जहां अकोस्ता यहूदियों के धार्मिक रीति-रस्मों की भर्त्सना करने के बाद गिर पड़ता है, मुझे उसे अपनी बाहों में उठा कर बाहर घसीट ले जाना पड़ता था। काला कफन ओढ़े हुए आग बुझाने वाला एक आदमी इस काम में मेरी सहायता करता था। (जहां तक दर्शकों का सम्बंध है, वे उसे "सिदोरोव" समझते थे) "खारकोव का सुप्रसिद्ध अभिनेता" लारा-लार्सकी और कोई न होकर उरियल अकोस्ता ही था, जिसे उस दिन मैंने वेलेरियानोव के संग बेंच पर बैठे हुए देखा था। उसके भारी कसरती शरीर को उठाने में हमें काफी कठिनाई का सामना करना पड़ा, किन्तु सौभाग्यवश कभी ऐसा अवसर नहीं आया जब वह हमारे हाथों से लुढक पड़ा हो। "गधे कहीं के—सत्यानाश हो तुम दोनों का!" वह केवल इतना बुड़बुड़ा कर रह गया था। हम उसे संकरे दरवाजे से भीतर घसीट लाने में सफल हुए थे, किन्तु उसके बाद कितनी ही देर तक उस प्राचीन मन्दिर की पिछली दीवार डोलती-हिलती रही थी।

तीसरी बार मंच पर मुझे उस समय आना पड़ा जब अकोस्ता पर मुक-दमा चल रहा था और मुझे वहां केवल चुपचाप खड़े रहना था। इसी बीच एक दुर्घटना हो गयी। जब बेन अकीबा मंच पर आया, तो सब बड़े आदर-भाव से खड़े हो गये, अकेला एक मैं ही था जो अपनी धुन में बैठा रहा। मेरी कुहनी के ऊपर कोई बहुत ही निर्दयता से चिकोटी काट कर गुर्राया, "क्या तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है? देखते नहीं यह बेन अकीबा है? खड़े हो जाओ!"

मैं हड़बड़ा कर उठ खड़ा हुआ। किन्तु सच पूछो तो मुझे ख्याल तक नहीं आया था कि वह शख्स बेन-अकीबा हो सकता है। मैं तो उसे बिल्कुल साधारण आदमी समझ बैठा था।

नाटक समाप्त हो जाने के बाद समोयलेंको ने मुझ से कहा : "वासिल्येव, कल ग्यारह बजे तुम्हें रिहर्सल में आना होगा।"

जब मैं होटल वापिस लौटा तो उसके मालिक ने मेरी आवाज सुनते ही खट से दरवाजा ठोक दिया। वह रात मैंने चिनार के वृक्षों के बीच एक बेंच पर काट दी। रात गर्म थी और मैं उस दिन का ख्वाब देखने लगा जब

मेरा नाम रौशन हो जाएगा। किन्तु सुबह की ठंडी हवा और भूख की जलन ने मुझे जल्द ही जगा दिया।

छः

ठीक साढ़े दस बजे मैं थियेटर पहुंच गया। अभी कोई नहीं आया था। ग्रीष्म-ऋतु में खुलने वाले रेस्तरां के वेटर बाग में सफेद-चिट्टे वस्त्र पहने नींद में झूमते हुए इधर-उधर घूम रहे थे। अंगूर की बेलों से घिरे हुए जालीदार कुंज में किसी महाशय के लिए सुबह की कॉफी या नाश्ते का प्रबंध किया जा रहा था।

यह तो मुझे बाद में पता चला कि वहां प्रतिदिन थियेटर के मैनेजर वेलेरियानोव पैंसठ वर्ष की भूतपूर्व अभिनेत्री तथा थियेटर और उसके मैनेजर की संरक्षिका वुलातोवा-चर्नोगोंस्काया के संग सुबह का नाश्ता लिया करते थे। मेज नये और उजले-सफेद कपड़े से ढका हुआ था, उस पर दो मेज-पोश बिछे हुए थे और तश्तरी में कटी हुई रोटी के अलग-अलग दो ढेर रखे थे।

अब मैं एक बड़ा दुःखद प्रसंग छेड़ने चला हूं। जीवन में पहली—और अन्तिम बार मैंने चोरी की। बिजली की तेजी से मैंने चारों ओर नजरें घुमायीं, झटपट उस लता-कुन्ज में घुस पड़ा और झपट्टा मार कर रोटी के कई टुकड़े हथिया लिए। कितनी मुलायम कितनी अच्छी थी वह रोटी! किन्तु जैसे ही मैं तेजी से बाहर निकला वहीं सामने से आते हुए एक वेटर से मुठभेड़ हो गयी। वह अपने संग सिरका, मिर्चें और सरसों की थाली भीतर ले जा रहा था। उसकी कठोर दृष्टि मुझ पर और मेरे हाथों में दबी हुई रोटी पर पड़ी। उसने धीरे से पूछा : "क्या मतलब है इसका ?"

मुझे लगा मानो मेरे मन में घृणा से उबलता अभिमान जाग उठा हो। उसकी आंखों से आंखें मिलाते हुए मैंने उसी की तरह दबे स्वर में उत्तर दिया, "परसों चार बजे से लेकर अब तक मेरे मुंह में एक दाना भी नहीं गया।"

वह घूम कर बिना एक शब्द कहे चुपचाप तेजी से चला गया। मैंने रोटी जेब में डाल ली और प्रतिक्षा करने लगा। मुझे डर भी लग रहा था और उसके संग बहुत सा आनन्द भी आ रहा था। "बहुत खूब!" मैंने सोचा। "कुछ ही देर में यहां मालिक आ पहुंचेगा, सारे वेटर जमा हो जायेंगे, पुलिस को बुलाने के लिए सीटी बजायी जायगी, और तुरन्त ही सारा वातावरण लड़ाई-झगड़े और गाली-गलौज से गर्म हो उठेगा। वह दृश्य भी देखते ही बनेगा जब मैं थालियों-तश्तरियों को उनके सिरों पर फेंक कर चकनाचूर कर दूंगा। सबको काट लूंगा, और तब तक काटता रहूंगा, जब तक सब लहु-लुहान न हो जायं।"

किन्तु वेटर अकेला ही वापिस भागता हुआ लौट आया। वह कुछ-कुछ हांफ रहा था। मेरी ओर देखे बिना वह आगे बढ़ आया। मैं भी दूसरी ओर मुड़ गया। किन्तु अचानक उसने कपड़े के नीचे से छिपा हुआ पिछली रात का पका हुआ गऊ के मांस का बड़ा टुकड़ा मेरे हाथों में थमा दिया। उस पर बड़ी होशियारी से नमक लगाया गया था। मैंने सुना वह दबे होंठों से अभ्यर्थना कर रहा था : ' कृपया आप इसे ले लीजिए।"

मैं मांस के उस टुकड़े पर टूट पड़ा और परदे के पीछे एक ऐसे स्थान पर जाकर बैठ गया जहां काफी अंधेरा था। उन गन्दे, बेडौल खम्बों के बीच बैठा-बैठा मैं चटखारे लेकर अपने दांतों से गोश्त के उस टुकड़े को मसकने लगा। आनन्द से मेरी आंखों में आंसू छलक आए।

बाद में मैं उस आदमी से प्रतिदिन मिलता रहा था। सर्गे उसका नाम था। जब कोई गाहक नहीं होते थे, तो वह दूर से मेरी ओर बड़ी स्निग्ध, श्रद्धा पूर्ण और अभ्यर्थना भरी दृष्टि से देखा करता था। किन्तु उससे कुछ भी मांगना हम दोनों के बीच बनी हुई उस सद्भावना के लिए घातक सिद्ध होता जो हमारी पहली मुलाकात के समय अंकुरित हुई थी। इसलिए इस बात के बावजूद कि कभी-कभी मुझे सरदी में भेड़िये की तरह भूख सताती थी, मैंने कभी उससे कुछ नहीं मांगा।

उसका कद नाटा और सिर गंजा था। उसकी स्याह मूंछें कनखजूरे के पैरों सी बाहर निकली हुई थीं। उसकी छोटी स्नेहसिक्त आंखें आधे कटे हुए वृत्तों सी चमकती रहती थीं। वह कुछ-कुछ लंगड़ाता हुआ इस तरह चलता था मानो बहुत जल्दी में हो। बाद में जब अपना रुपया मिलने पर एक दुःस्वप्न की तरह थियेटर के बन्धन से मुझे छुटकारा मिल गया तो मुझे सर्गे बहुत याद आता रहा। उस समय जब मेरे ईर्द-गिर्द मेरी खुशामद करने वाले गये-गुजरे कमीने लोग शैम्पेन पीने में धुत थे तो मेरी आंखों के सामने बेचारे सर्गे का प्यारा, अजीब सा चेहरा नाच उठता था। उसे रुपया देने का दुस्साहस मैं कभी न करता। क्या कभी स्नेह और मुहब्बत का मोल रुपये में चुकाया जा सकता है? मैं तो उसे कोई उपहार देना चाहता था — कोई छोटा-मोटा सा आभूषण या उसके बीबी-बच्चों के लिए कोई चीज। उसके बहुत से बच्चे थे जो कभी-कभी सुबह के वक्त नन्हे परिन्दों की तरह शोर-गुल करते, उधम मचाते उसके पास आ धमकते थे।

किन्तु मेरे जीवन के इस चमत्कारपूर्ण परिवर्त्तन के एक सप्ताह पूर्व ही सर्गे को नौकरी से बरखास्त कर दिया गया। मुझे उसका कारण मालूम है। कैप्टन वॉन ब्राडके के सामने जब भुने हुए गोश्त की बोटी रखी गयी तो वह नाक-भौंह सिकोड़ कर गरजने लगे :

"बदमाश — कैसे बनाया है इसे — जानते नहीं कि मैं हमेशा कम भुना हुआ गोश्त खाता हूं ?"

सर्गे ने साहस बटोरकर केवल इतना कहा कि इसमें उसका नहीं, बावर्ची का दोष है और वह अभी फौरन बदल कर नयी बोटी ले आता है। फिर अन्त में उसने डरते-डरते यह भी कह दिया, "जनाब, मुझे माफ करें।"

क्षमा-प्रार्थना के ये शब्द सुन कर अफसर के क्रोध का पारावार न रहा। गुस्से में लाल होकर उसने गर्म जलती बोटी सर्गे के मुंह पर दे मारी।

"क्या-क्या कहा ? मुझे 'जनाब' कहते हो... क्यों जी... मुझे जनाब कहते हो — बादशाह सलामत की घुड़सवार सेना के स्टाफ कैप्टन को तुम 'जनाब' नहीं कह सकते... कहां गया होटल का मालिक, जरा उसे यहां तो बुलाओ ! इवान लुक्यानिच, तुम्हें आज ही इस सरफिरे को निकाल देना होगा। मैं इसकी शक्ल भी नहीं देखना चाहता। अगर तुम आज ही लात मार कर इसे बाहर नहीं कर देते तो आइन्दा से मैं तुम्हारे होटल में पांव तक नहीं रखूंगा।"

इस होटल में कैप्टन वॉन ब्राडके बड़ी धूमधाम से जश्न मनाया करते थे। इसलिये फौरन सर्गे को जवाब दे दिया गया। होटल का मालिक दिन भर अफसर साहब को प्रसन्न करने की चेष्टा में जुटा रहा। बीच-बीच में जब कभी ठंडी हवा खाने मैं बाहर बाग में जा निकलता तो मुझे लता-कुंज से गरजता हुआ उसका क्रुद्ध स्वर सुनायी दे जाता : "हरामी की यह मजाल कि मुझे 'जनाब' कह कर पुकारे ! अगर उस समय वहां महिलाएं न होतीं तो बच्चू को छटी का दूध याद दिला देता।"

सात

इसी दौरान में धीरे-धीरे अभिनेताओं का जमाव शुरू होने लगा और साढ़े बारह बजे रिहर्सल आरम्भ हो गया। नाटक का नाम "नयी दुनिया" था, जिसे सियंकिविस के उपन्यास "को वादीस ?" के आधार पर बड़े भद्दे-भोंढ़े ढंग से रूपान्तरित किया गया था। दुखोवस्कोय ने मेरे हाथ में एक कागज दे दिया जिसमें मेरा पार्ट लीथो द्वारा मुद्रित किया हुआ था। मुझे महाप्रतापी मार्कस की सैनिक-टुकड़ी के एक सरदार की हैसियत से काफी प्रभावशाली और मोटे-मोटे शब्दों का प्रयोग करना था, जैसे — "ओ मार्क्स ! तुम्हारे आदेशों का अक्षरशः पालन किया गया है," अथवा "ओ मार्कस ! पोम्पेई की मूर्ति के नीचे वह तेरी प्रतीक्षा कर रही होगी।" मुझे अपना पार्ट बहुत पसन्द आया था और मैं एक बूढ़े, अनुभवी, गम्भीर और स्वामीभक्त योद्धा के निडर स्वरों में अपने पार्ट को मन ही मन कई बार दुहरा चुका था।

किन्तु रिहर्सल की प्रगति के दौरान में मुझे कुछ विचित्र अनुभव होने लगे। मुझे यह देखकर काफी आश्चर्य हुआ कि अनेक छोटे-मोटे पार्ट मेरे हिस्से में आ गये हैं। मिसाल के तौर पर जब स्वामिनी बेरोनिका ने बोलना बन्द किया, समोयलेंको ने, जिसकी आंखें नाटक के मूलपाठ पर जमी हुई थीं, ताली बजायी और चिल्लाकर कहा, "गुलाम का प्रवेश।"

किन्तु कोई आगे नहीं बढ़ा।

"महाशयो ... आप में से कौन 'गुलाम' है? दुखोवस्कोय, जरा देखना, गुलाम कौन है?"

दुखोवस्कोय झटपट कागजों के पोथे में कुछ देखने लगा, किन्तु गुलाम का वहां कहीं नाम-निशान तक नहीं मिला।

"इसको काट डालो ... समय बर्बाद करने से क्या लाभ?" बोयेव ने आलस भरे स्वर में सलाह दी। वह वही गम्भीर ललाट वाला व्यक्ति था जिसके रंगों में मैंने उस दिन अपनी अंगुलियां डुबो दी थीं।

किन्तु मार्कस (लारा-लार्सकी) अचानक नाराज हो उठा।

"कृपया ऐसा मत करिये। नाटक के इस दृश्य में मैं पूरे रौब और ठाठ-बाट के संग प्रवेश करता हूं। गुलाम की अनुपस्थिति में मैं काम नहीं करूंगा।"

समोयलेंको की आंखें मंच पर घूमने लगीं और मुझ पर ठिठक गयीं।

"जरा ठहरिये — क्यों भई वासिल्येव, क्या तुम्हारा इस अंक में कोई पार्ट है?"

मैं अपने कागज की ओर गौर से देखने लगा।

"हां, बिल्कुल आखिर में।"

"अच्छा तो यह, बेरोनिका के गुलाम का, तुम्हारे जिम्मे एक और पार्ट रहा — लो इस किताब से देख लो।" उसने ताली बजायी। "महानुभावो और देवियो — जरा खामोश हो जाइये। गुलाम का प्रवेश। 'हे देवी ...' और जोर से — पहली पंक्ति में बैठे लोग भी तुम्हें नहीं सुन सकते।"

कुछ ही मिनटों बाद पता चला कि मर्सिया (सियेंकिविस की *लीगिया*) को भी एक गुलाम की आवश्यकता है — इस अभाव की पूर्ति भी मुझ से की गयी। तत्पश्चात जब हाउस-मैनेजर का पार्ट करने के लिये उन्हें कोई दूसरा नहीं मिला तो फिर दुबारा मुझ से ही काम चलाया गया। इस तरह रिहर्सल खत्म होते-होते सैनिक टुकड़ी के सरदार के अतिरिक्त मुझे पांच और पार्ट मिल गये थे।

आरम्भ में मुझे बड़ी कठिनाई पड़ी। मंच पर आते ही मैं ये आरम्भिक शब्द कहता था: "ओ मार्कस ..."

समोयलेंको पांव फैला कर आगे की ओर झुक जाता और कानों पर हथेलियां रख लेता।

"क्या कहा? अरे! होठों में क्या बुड़बुड़ा रहे हो? एक अक्षर भी पल्ले नहीं पड़ा।"

"ओ मार्कस ..."

"माफ करना, लेकिन मुझे कुछ भी सुनायी नहीं दे रहा। जरा और जोर से बोलो।" वह चल कर मेरे बहुत निकट आ जाता। "देखो—तुम्हें इस तरह बोलना चाहिये।" और जब वह बोलता तो लगता मानो बकरी के कंठ से कोई मिमियाता हुआ गा रहा हो। उसका स्वर सारे बाग में सुना जा सकता था। 'ओ मार्कस—तेरी आज्ञा—!' देख लिया ... इस तरह कहा जाता है। नौजवान! हमेशा रूसी अभिनेताओं का यह प्रसिद्ध सिद्धान्त याद रखो: 'मंच पर बोलना नहीं, चिल्लाना चाहिए और चलने के बजाय अकड़ कर चहलकदमी करनी चाहिए।'" यह कहकर उसने संतुष्ट भाव से चारों ओर देखा।

"अब फिर दुबारा कहो।"

मैंने फिर पुराना वाक्य दुहराया, जो पहले से भी बदतर साबित हुआ। फिर उन सब ने बारी-बारी से मुझे सिखाना शुरू कर दिया और रिहर्सल के समाप्त होने तक वे मुझे सिखाते रहे; मुझे पाठ पढ़ाने वालों में लारा-लार्सकी थे, जिनका व्यवहार मेरे प्रति घमन्ड, हिकारत और नखरे से भरा हुआ था, तोंदिल बुढ़ऊ गोंचारोव थे, जिनकी ढीली-ढाली, सुर्ख नसों से भरी गालें ठुड्डी के नीचे झूल रहीं थीं, चिकने रंगों का स्वामी बोदेव था और था अकीमेंको, जो जानबूझ कर मूर्ख इवान की भान्ति अपनी मुख-मुद्रा बनाने का उपक्रम किया करता था। मैं उस परेशान घोड़े की तरह अपने को पा रहा था, जिसके शरीर से भाप निकल रही हो, जिसे चारों ओर गली के लोगों ने घेर रखा हो और प्रत्येक व्यक्ति उसके सम्बन्ध में अपने-अपने अलग सुझाव बतला रहा हो। मुझे लग रहा था मानो मैं कोई एक नया विद्यार्थी हूं, घर के सुरक्षित वातावरण से बाहर आकर स्कूल के अनुभवी, चालाक और निर्दयी लड़कों के बीच घिर गया हूं।

उस रिहर्सल में मैंने एक बहुत ही क्रूर, ओछे व्यक्ति को अपना शत्रु बना लिया, जो मेरे थियेटर जीवन के प्रत्येक दिन को विषाक्त बनाता रहा। बात दरअसल यह थी।

मैं अपना वही पुराना कभी न खत्म होने वाला वाक्य दुहरा रहा था: ओ मार्कस! इतने में समोयलेंको अचानक दौडता हुआ मेरे पास आया।

"ठहरो मेरे दोस्त, जरा ठहरो—यह सब गलत है। तुम्हें मालूम नहीं, किसे सम्बोधित करके तुम यह कह रहे हो? महाप्रतापी मार्कस को, क्यों ठीक

है न ? किन्तु तुम्हें तो बिल्कुल मालूम ही नहीं कि प्राचीन रोम में छोटे अधि-कारी किस प्रकार अपने सर्वोच्च सेनाध्यक्ष को सम्बोधित करते थे । इधर देखो, सही तरीका यह है ।"

उसने आधा कदम लेकर अपना दायां पांव आगे बढ़ाया, नब्बे डिग्री का कोण बनाते हुए अपना शरीर नीचे झुकाया और अपनी दायीं बांह लटका कर हथेली को बड़े चम्मच की तरह मोड़ लिया ।

"देखा — ऐसे किया जाता है । अब तुम दुबारा ऐसे ही करो ।"

जो उसने बतलाया, मैंने कर लिया, किन्तु मुझे यह सब कुछ इतना निरर्थक और बेढंगा सा जान पड़ा कि मैं दबे स्वर में इसका विरोध किये बिना न रह सका ।

"मुझे माफ करें, किन्तु सैनिक वेश-भूषा में किसी व्यक्ति का नीचे झुकना वर्जित माना जाता है । फिर यहां यह संकेत भी दिया हुआ है कि वह अस्त्र-शस्त्रों से लैस होकर आता है — आप इस बात से सहमत होंगे कि अस्त्र धारण किये हुए कोई भी व्यक्ति ..."

"कृपया चुप हो जाइए ।" समोयलेंको क्रोध में चिल्लाया । उसका चेहरा लाल हो उठा । "यदि मंच-निर्देशक यह कहे कि एक टांग पर खड़े हो जाओ, जुबान बाहर निकाल लो, तो यह भी तुम्हें बिना किसी चूं-चपड़ के करना पड़ेगा । मेहरबानी करके आप फिर दुबारा कीजिये !" मैंने पुनः वही क्रिया दुहराई जो पहले से कहीं अधिक भद्दी दिखायी दी । उस क्षण लारा-लार्सको मेरी सहायता के लिए आ पहुंचा ।

"छोड़ो भी बोरिस — देखते नहीं कि यह उसकी सामर्थ्य के बाहर है ? इसके अलावा तुम स्वयं जानते हो कि इस विषय में इतिहास कोई स्पष्ट प्रमाण प्रस्तुत नहीं करता — यह एक विवादास्पद विषय है ।" उसने समोयलेंको से यह बात हिचकिचाते हुए कही ।

समोयलेंको ने आखिर मुझे अपने पर ही छोड़ दिया । किन्तु उस दिन के बाद से वह मुझे मौके बेमौके फटकार देता, ताना कस देता और मुझे कष्ट पहुंचाने का कोई अवसर हाथ से न जाने देता । वह हमेशा इसी ताक में रहता कि मैं कोई गलती करूं और वह मुझे पकड़ ले । वह मुझ से इस कद्र जला-भुना रहता कि मुझे लगता है कि रात में भी मैं उसे स्वप्न में दिखलायी देता हूंगा । जहां तक मेरा प्रश्न है, आज उस घटना को बीते दस साल होने को आये, किन्तु जब कभी मैं उस आदमी के बारे में सोचता हूं, गुस्से में मेरा जी तिलमिला उठता है । इसमें कोई सन्देह नहीं कि वह स्थान छोड़ने से पूर्व — किन्तु यह बाद की बात है, अभी उसका उल्लेख करने से कहानी की शृंखला बीच में टूट जाएगी ।

रिहर्सल समाप्त होने वाला ही था कि मंच पर अचानक मूछों वाले एक सज्जन आ धमके। उनकी काफी लम्बी नाक थी, लम्बा ही कद था, देखने में बड़े पतले-दुबले लगते थे और उन्होंने खिलाड़ियों का टोप पहन रखा था। वह लड़-खड़ाते हुए कभी-कभी पार्श्व-द्वारों से टकरा जाते थे। आंखें उनकी टीन के दो बटनों से मिलती-जुलती थीं। सब लोग उन्हें घृणा की दृष्टि से देख रहे थे, किन्तु किसी ने उनके विरुद्ध कोई शब्द नहीं कहा।

"कौन है यह आदमी ?" दबे स्वर में मैंने दुखोवस्कोय से पूछा।

"एक शराबी है," उसने लापरवाही से उत्तर दिया। "नेल्यूबोव-ओलिगन इसका नाम है—हमारे थियेटर का दृश्य-चित्रकार है। बड़ा प्रतिभावान व्यक्ति है और जब होश में होता है तो हमारे नाटकों में कभी-कभार अभिनय भी करता है। किन्तु पुराना-पक्का पियक्कड़ है और हम उसके स्थान पर उसके अलावा किसी और को रख भी नहीं सकते। एक तो वह पैसे ही बहुत कम लेता है, दूसरे पलक मारते प्रत्येक सेटिंग चित्रित कर देता है।

आठ

रिहर्सल समाप्त हो गया। सब लोग तितर-बितर होने लगे। अभिनेता मसिया के नाम के विभिन्न अर्थ निकालते हुए एक-दूसरे से मजाक करने लगे। लारा-लार्सकी ने बड़े भेद-भरे स्वर में बोयेव से कहा कि वह उसके संग "वहां" चले। मैं तेजी से आगे चलकर पेड़ों से ढंके फुटपाथ पर वेलेरियानोव के संग हो लिया। वह काफी लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ चल रहा था और मुझे उसके सग पांव मिला कर चलने में काफी कठिनाई महसूस हो रही थी। "विक्टर विक्टरोविच, क्या आप मुझे कुछ थोड़ा सा रुपया पेशगी दे सकते हैं—सिर्फ थोड़ा सा ... ?" मैंने उससे कहा।

वह ठहर गया—आश्चर्य में उसके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। फिर बोला : "क्या ? कैसा रुपया ? क्यों ? किस लिए ?"

मैंने अपनी दु:ख गाथा उसे सुनानी आरम्भ की, किन्तु इससे पेश्तर कि मैं पूरी बात कहूं, वह अधीरता से पीठ मोड़ कर आगे बढ़ गया। किन्तु सहसा वह ठिठक गया और मुझे पास बुलाने का संकेत किया।

"सुनो, क्या नाम है तुम्हारा ... वासिल्येव ! तुम अपने होटल के मालिक से जाकर कहो कि वह मुझ से मिले। मैं यहां टिकट-घर में लगभग आध घंटा ठहरूंगा। उसे आने दो, मैं उससे बातचीत करूंगा।"

मैं चलने के बजाय उड़ता हुआ होटल पहुंचा। खोखोल मुंह फुला कर अविश्वास भरी मुद्रा में मेरी बात सुनता रहा। उसने अपनी भूरे रंग की वास्कट

पहनी और थियेटर की ओर धीरे-धीरे मन्द कदमों से चल पड़ा। मैं उसकी इन्तजार में खड़ा रहा। पन्द्रह मिनट बाद वह वापिस आ गया। उसका मुंह तोप के गोले सा फूला हुआ था, और वह अपने दाहिने हाथ में थियेटर के लाल "पासों" का गट्ठर पकड़े हुए था। मेरे पास पहुंचते ही वह उस गट्ठर को मेरे मुंह के नीचे हिलाते हुए चिल्लाया : "देख लिया ? मैंने सोचा था कि वह मुझे रुपये देगा और रुपयों के बदले मुझे ये 'पास' मिले हैं—इन्हें लेकर चाटूंगा ?"

मैं दुविधा में खड़ा रहा। किन्तु उन कागजों का कुछ तो लाभ निकला ही। बहुत मिन्नत-आरज़ू करने के बाद उसे समझौता करने के लिए मैंने राजी कर लिया। मैंने इंगलैंड का बना हुआ पीले चमड़े का अपना खूबसूरत सूटकेस उसके पास गिरवी रखवा दिया, बदले में उसने मेरे कपड़े, पासपोर्ट और कापियां —जिनका मूल्य मेरी दृष्टि में बहुत ऊंचा था—मुझे वापिस लौटा दीं। विदा लेने से पहले उसने मुझ से पूछा, "क्यों—क्या यहां भी अपनी वही लीला शुरू करने का इरादा है ?"

"हां," मैंने बड़े गर्व से हामी भरी।

"जरा बच के रहना। तुम्हें देखते ही मैं जोर चिल्लाऊंगा : 'अरे, मेरे बीस रूबल कहां हैं ?'"

तीन दिनों तक मैंने वेलेरियानोव को तंग करने का दुस्साहस नहीं किया। हरे बेंच पर कपड़ों की गठरी का सिरहाना बनाकर सारी रात काट देता। सौभाग्यवश वे दो रातें काफी गर्म थीं। फुटपाथ के पत्थर दिन भर तपते रहते और जब मैं रात को बेंच पर लेटता तो उनसे उड़ती हुई सूखी गरमाई मुझ तक आती रहती। किन्तु तीसरी रात बड़ी देर तक बूंदाबांदी होती रही। घरों की ड्योढ़ियों में रात भर आश्रय ढूंडता रहा, सुबह होने तक नींद की एक झपकी भी नहीं ले सका। आठ बजे के करीब सार्वजनिक-वाटिका के दरवाजे खुले। दबे पांवों से मंच के पीछे रेंगता चला गया और एक पुराने परदे पर लेट कर दो घंटे तक मीठी नींद में सोता रहा। किन्तु समोयलेंको ने मुझे सोते हुए देखना था, सो देख लिया। बड़ी देर तक वह मुझे तीखे-कटु स्वर में खरी खोटी सुनाता रहा। "थियेटर कला का मन्दिर है—शयनागार नहीं।" उसने कहा। मैं साहस बटोरकर दुबारा मैनेजर के पास जा पहुंचा। वह बाग के बीच में से जाती हुई सड़क पर टहल रहा था। मैंने उससे कुछ रुपये मांगे और कहा कि मेरे पास सोने के लिए कोई ठौर-ठिकाना नहीं है।

"मुझे बड़ा अफसोस है," उसने कहा। "किन्तु इसमें भला मैं क्या कर सकता हूं ? तुम बच्चे तो हो नहीं और न मैं तुम्हारा रखवाला हूं।"

मैं चुप हो रहा। उसकी छोटी-छोटी आंखें सड़क पर धूप में झिलमिलाती रेत पर भटकती रहीं। कुछ उदास से सोचते हुए स्वर में उसने कहा, "एक

काम मैं कर सकता हूं। क्या तुम थियेटर में सोना पसन्द करोगे ? मैंने इसके सम्बंध में चौकीदार से बात छेड़ी थी, किन्तु वह बुद्धू बड़ा डरपोक है।"

मैंने उसे धन्यवाद दिया।

"लेकिन याद रखो — थियेटर में धूम्रपान करने पर कड़ी पाबन्दी है — जब सिगरेट पीने का मन करे तो बाहर बाग में चले जाना।"

उस दिन से रात को रहने के लिए डेरे कि व्यवस्था हो गयी, छत के नीचे सोने की सुविधा मिल गयी। कभी-कभी मैं दो मील दूर छोटी सी नदी की ओर चल देता, वहीं पर अपने वस्त्रों को किसी सुरक्षित कोने में धो लेता और उन्हें तट पर उगने वाले वृक्षों की डालों पर सुखा लेता। वे वस्त्र अत्यंत उपयोगी सिद्ध हुए। कभी-कभी मैं अपनी कमीज या कोई और वस्त्र बाजार में बेच आता। इस बिक्री से जो बीस या तीस कोपेक मिलते, उनसे दो दिन तक पेट भरने का आहार मिल जाता। मुझे निश्चित रूप से अब ऐसा प्रतीत होता था कि अच्छे दिन वापिस लौटने वाले हैं। एक दिन अनुकूल अवसर का लाभ उठाकर मैंने वेलेरियानोव से एक रूबल झाड़ लिया और फौरन इल्या को यह तार भेज दी :

"भूखा मर रहा हूं — तार द्वारा मनीआर्डर भेजो — लियोन्तोविच — एस. थियेटर।"

नौ

दूसरे रिहर्सल में भी पूरी तरह सज-धज कर अभिनय करना था। उस अवसर पर मुझे दो और पार्ट दिये गये — आरम्भिक-काल का एक वयोवृद्ध इसाई और टिगेल्लीनस — इन दोनों के पार्ट मुझे सौंप दिये गये। मैंने बिना किसी प्रकार की चूं-चपड़ किये उन्हें स्वीकार कर लिया।

उस रिहर्सल में भाग लेने के लिए हमारे ट्रैजिक अभिनेता तिमोफियेव-सुम्स्कोई भी पधारे। उसके चौड़े कंधे, लाल घुंघराले बाल आंखों के कोटरों से बाहर निकलती हुई पुतलियां और चेचक के दागों से भरे चेहरे को देखकर लगता था कि साक्षात कोई कसाई या जल्लाद सामने खड़ा है। वह अधेड़ उम्र का व्यक्ति था और उसका लम्बा कद था। उसकी आवाज उसके शरीर से भी अधिक भारी थी और वह पुराने ढंग से मंच पर चिंघाड़ने का आदी था।

वह जो घायल हिंस्र-पशु सा दहाड़ रहा है, कोई और नहीं, ट्रैजिक-अभिनेता है। उसे अपने पार्ट का एक अक्षर भी याद नहीं था। वह नीरो का अभिनय कर रहा था। पुस्तक से अपना पार्ट पढ़ने में उसे काफी कठिनाई पेश आ रही थी। उसने तेज पावर के शीशों की ऐनक लगा रखी थी, जिसका उपयोग अधिकतर केवल बूढ़े लोग ही करते हैं। यदि उससे कोई कहता कि वह अपने पार्ट को

जरा पढ़ ले तो वह धीमे से गरज उठता, "मैं जरा भी परवाह नहीं करता। सब ठीक हो जाएगा। जो प्रॉम्पटर कहेगा, वही मैं भी दुहरा दूगा। दर्शकों को क्या खाक समझ में आता है? अव्वल दर्जे के जाहिल तो होते हैं वे लोग।"

मेरे नाम का उच्चारण उसके लिए काफी सिरदर्द पैदा कर रहा था। उसके मुंह से तिगेल्लीनस निकलता ही नहीं था। कभी मुझे तिगेलिनियस, कभी ताइनगिल्लस कहकर पुकारता था। जब कभी मैं उसकी गलती सुधारने की चेष्टा करता तो वह गुर्रा उठता: "मैं जरा भी परवाह नहीं करता। क्या पागलपन है? मैं अपने दिमाग में बेकार की बातें ठूंसना नहीं चाहता।"

यदि उसे अपने पार्ट में कहीं कठिन अलंकार दिखाई दे जाता या एक ही पंक्ति में यदि विदेशी नामों की झड़ी लग जाती तो वह अपनी पुस्तक में अंग्रेजी जेड का निशान लगाकर कहता: "मैं इन वाक्यों को काटे दे रहा हूं।"

किन्तु वहां सब लोग इसी लीक पर चलते थे। काट-छांटकर नाटक की धज्जियां कर दी गयीं। तिगेल्लीनस का लम्बा भाषण एक पंक्ति को छोड़कर सब काट दिया गया।

नीरो ने पूछा: "तिगेल्लीनस! शेरों के क्या हाल-चाल हैं?"

और मैंने उसके सन्मुख माथा नवाकर उत्तर दिया, "हे देवस्वरूप सीजर! रोम-निवासियों ने ऐसे पशुओं को शायद ही कभी पहले देखा हो। ये शेर अत्यंत क्रूर और भूखे हैं।"

बस केवल इतना ही...

वह दिन भी आ पहुंचा जब नाटक शुरू होना था। नाट्य-मंडप चारों ओर से खुला था और दर्शकों की भीड़ से खचाखच भरा हुआ था। दीवार के पीछे उन लोगों की भीड़ जमा थी, जिनके पास टिकट नहीं थे। मैं काफी बेचैन था।

उन सब लोगों का अभिनय अत्यंत निम्न-कोटि का रहा। ऐसा लगता था मानो वे सब तिमोफयेव के इन शब्दों को पहले से ही गुरु-मंत्र मान बैठे हों: "मुझे किसी की रत्ती भर परवाह नहीं—सब दर्शक मूर्ख होते हैं।" उनका प्रत्येक शब्द और संकेत इतना पुराना, इतना घिसा-पिटा लगता था मानो पीढ़ी-दर-पीढ़ी उन्हें ऐसा देखते हुए लोगों का मन ऊब गया हो, आंखें पक गयी हों। मुझे ऐसा महसूस हुआ कि उन्होंने गिनती के लगभग बीस गायन-सुर और तीस के करीब भाव-भंगिमाएं रट रखी हैं जिनमें वह भी शामिल है जिसे समोयलेंकों ने एक अवसर पर मुझे सीखाने की व्यर्थ चेष्टा की थी। मैंने सोचा कि नैतिक पतन की इस सीढ़ी पर पहुंचने तक वे लोग सब हया-शर्म घोलकर पी गये होंगे।

तिमोफयेव-सुम्सकोय का अभिनय देखते ही बनता था। राज्य-सिंहासन की दायीं ओर झुकते हुए उसने अपनी लम्बी टांग से मंच के आधे भाग को घेर

रखा था। सिर पर मुकट टेढ़ा हो गया था और वह विदूषक सा जान पड़ता था। प्रॉम्पटर के बक्से की ओर उन्मुख होकर आंखों की पुतलियां नचाते हुए वह इस तरह दहाड़ता था कि दीवार पर चढ़े हुए लोग आनन्द-विभोर होकर चिल्लाने लगते थे। इसमें कोई आश्चर्य की बात नहीं कि ऐन वक्त पर वह मेरा नाम भूल गया। वह मुझ पर इस तरह चिल्लाया जिस प्रकार तुर्की-स्नानागार में कोई व्यापारी चिल्लाता है: "तेल्यान्तिन ! मेरे शेर और चीते यहां ले आओ ! जल्दी करो।"

मैंने जो वाक्य बोलने थे, उन्हें विनीत भाव से चुपचाप निगल कर मैं वहां से चला आया। महाप्रतापी मार्कस अर्थात लारा-लार्सकी अपनी निकृष्टता में सब से बाजी मार ले गया — क्योंकि उसमें औरों की अपेक्षा सबसे अधिक निर्लज्जता, उच्छ्रृंखलता, नीचता और अहंमन्यता का भाव भरा हुआ था। वह अपनी भावानुभूति को चिंघाड़-चिंघाड़ कर अभिव्यक्त किया करता था, कोमल शब्द उसके मुंह से चिपचिपाती हुई टॉफियों की तरह बाहर निकलते थे और जब वह रोमन सामन्त-योधा के ओजस्वी शब्दों को मंच पर बोलता था, तो उनके पीछे से एक रूसी सिपहसलार की सूरत झांकने लगती थी — जो उसकी असलियत थी। किन्तु आन्द्रोसोवा का अभिनय सर्वोत्कृष्ट रहा। उसके व्यक्तित्व में कुछ भी ऐसा न था, जो मन न मोह लेता हो — प्रेरणायुक्त चेहरा, खूबसूरत हाथ, लचकदार सुरीला स्वर और लम्बे घुंघराले बाल, जो अंतिम अंक में उसने अपनी पीठ पर खुले छोड़ दिये थे। उसका अभिनय पक्षियों के संगीत की भांति सुन्दर और स्वभाविक था।

मंच पर लगे तिरपाल के छोटे सुराखों से मैं उसके कला-सौन्द्रय का रस-पान कर रहा था और कभी-कभी मेरी आंखों में आंसू छलक पड़ते थे। किन्तु मुझे यह मालूम नहीं था कि कुछ मिनटों बाद मंच के बाहर भी एक दूसरे रूप में वह मुझे मोहित कर लेगी।

उस नाटक में मैंने इतने पार्ट खेले थे कि यह उचित ही होता यदि थियेटर के व्यवस्थापक इश्तहार में पेट्रोव, सिदोतेव, ग्रिगोरयेव, इवानोव और वासिल्येव के संग दिमित्रोव और अलेक्जेन्द्रोव का नाम भी जोड़ देते। पहले अंक में ढीला-ढाला सफेद कुर्ता पहने और सिर पर कंटोप लगाये मैं एक बूढ़े के भेष में मंच पर प्रकट हुआ था; उसके बाद तुरन्त परदे के पीछे जाकर मैंने वह कुर्ता उतार दिया और अस्त्र और कवच से सुसज्जित होकर नंगी टांगों वाले रोमन सिपहसलार के भेष में मंच पर आ खड़ा हुआ, फिर दुबारा गायब हो गया और एक वृद्ध ईसाई की वेश-भूषा में मंच पर प्रकट हुआ। दूसरे अंक में मैं रोमन सिपहसलार और दास बना। तीसरे अंक में दो बार दास बना। चौथे अंक में एक बार रोमन सिपहसलार और दो बार दास बना। पांचवें अंक में गृह-प्रबंधक व

दास बना। अन्त में टिगेल्लीनस का पार्ट अदा किया और अन्तिम दृश्य में एक मूक योद्धा की हैसियत से मार्कस और मारिया को अखाड़े में उतरने का आदेश दिया जहां शेर उनके लिए तैयार बैठे थे।

"भोंदू" अकीमेंको भी मुझे शाबाशी देने में पीछे न रहा। मेरे कंधे को थपथपाते हुए उसने प्रसन्न मुद्रा में कहा: "यार ! तुम तो अपना वेश बदलने में बड़े उस्ताद हो !"

किन्तु इस प्रशंसा का मूल्य मंहगा पड़ा। थकान के मारे टांगों पर खड़ा नहीं हुआ जाता था।

नाटक समाप्त हो गया। चौकीदार लैंपों को बुझाने लगा। मैं मंच पर चहलकदमी करता हुआ उस घड़ी की प्रतीक्षा करने लगा जब अभिनेता अपनी नाटकीय वेश-भूषा बदल कर चले जाएं ताकि मैं थियेटर के सोफे पर लेट सकूं। मैं होटल में भुना हुआ गुर्दा खाने के लिए भी लालायित था, जिसे मैंने मंच के खम्बों और ड्रेसिंग-रूम के बीच अपने एक अलग कोने में दीवार पर टांग रखा था। (जब से चूहे सुअर का गोश्त उड़ा ले गये थे, तब से मैं अपने हर खाद्य पदार्थ को रस्सी पर लटका कर रखा करता था।) अचानक मैंने अपने पीछे एक आवाज सुनी : "गुडनाइट, वासिल्येव।"

मैं पीछे मुड़ा। आन्द्रोसोवा खड़ी थी और उसने अपना हाथ आगे बढ़ा दिया था। उसका सुन्दर चेहरा बहुत थका सा दिखायी देता था।

संयोग की बात है कि उस नाटक मंडली में दुखोवस्कोय और नेल्यूबोव जैसे छोटे-मोटे लोगों को छोड़ कर अकेली एक वह थी जिसने मुझसे हाथ मिलाया था—दूसरे लोग इसमें अपनी हेठी समझते थे। आज भी मुझे उससे हाथ मिलाने की घटना याद है। एक असली स्त्री और मित्र की भांति उसके हाथों का स्पर्श अत्यन्त सहज, कोमल और निर्भीक था।

मैंने उसका हाथ अपने हाथ में ले लिया। उसने मुझे बड़े ध्यान से देखा और कहा : "क्या तुम बीमार हो ? कुछ अस्वस्थ से दिखाई देते हो।" फिर अपने स्वर को तनिक धीमा करके कहा, "क्या कुछ रुपयों की जरूरत आ पड़ी है ? ... मैं तुम्हें कुछ उधार दे सकती हूं।"

'नहीं-नहीं ... धन्यवाद !" मैंने बहुत गम्भीरता से उसे बीच में ही टोक दिया। फिर अचानक मुझे कुछ देर पहले के वे सुखद क्षण याद हो आए जब मैं आनन्द-विभोर हो उठा था। बरबस मेरे मुंह से प्रशंसा के शब्द फूट पड़े : "आज रात तो आपने कमाल कर दिया।" प्रशंसा के इन शब्दों से असाधारण रूप में ईमानदारी का भाव झलकता होगा। प्रसन्नता से उसका चेहरा गुलाबी हो उठा। उसने आंखें झुकाकर हंसते हुए धीरे से कहा :

"मुझे खुशी है कि तुम्हें मेरा अभिनय पसन्द आया।"

मैंने बड़े आदरभाव से उसका हाथ चूमा। किन्तु उसी समय नीचे से एक स्त्री की आवाज सुनायी दी। "आन्द्रोसोवा, तुम कहां रह गयीं ? नीचे आओ —वे लोग भोजन के लिए तुम्हारा इन्तजार कर रहे हैं।"

"गुडनाइट वासिल्येव," उसने सीधे-सादे मैत्रीपूर्ण स्वर में कहा। फिर उसने सिर हिलाया और बाहर जाते हुए होठों में बुड़बुड़ाने लगी : "बेचारा गरीब आदमी ..."

किन्तु कौन कहता है कि उस क्षण मैं गरीब था। मुझे लगा कि यदि जाने से पहले वह अपने होठों से मेरा माथा चूम लेती, तो खुशी के मारे मेरे प्राण निकल जाते।

दस

शीघ्र ही मै थियेटर कम्पनी के सब लोगों से परिचित हो गया। सच बात तो यह है कि अनिच्छा से अभिनेता बनने के पूर्व भी प्रान्तीय-रंगमंच के सम्बंध में मेरे विचार कोई बहुत अच्छे नहीं थे। किन्तु मेरे कल्पना-जगत में ओस्त्रोवस्की ने ऊपर से उज्जड, किन्तु भीतर से कोमल और उदार नेशचाज्स्तलिव्तसे और अरकाशका जैसे विदूषक-अभिनेताओं के चित्र भर दिये थे, जो अपने विशिष्ट ढंग से कला और बंधुत्व के उपासक थे। अब मुझे पता चला कि रंगमंच निर्लज्ज स्त्री-पुरुषों से भरा पड़ा है।

वे सब लोग अत्यंत क्रूर थे, एक दूसरे से जलते रहते थे, विश्वासघात करने में भी नहीं चूकते थे। उनमें सृजनात्मक कला के सौन्दर्य और शक्ति के प्रति कोई श्रद्धा-भाव नहीं था — वे जिद्दी और ओछी तबियत के लोग थे। इसके अलावा उनका फूहड़पन देखकर आश्चर्य होता था, किसी भी वस्तु में उन्हें दिलचस्पी नहीं थी, 'मुंह में राम बगल में छुरी' जैसा उनका आचरण था, पागलों की तरह सफेद झूठ बोलते थे, नकली आंसू उनकी नाक पर रहते थे और रोते हुए थियेटराना अंदाज में सिसकियां भरा करते थे। पुराने पिछड़े हुए गुलामों की भांति वे अपने प्रभुओं और मालिकों के तलवे सहलाने के लिए हमेशा तत्पर रहते थे। चेखव ने ठीक ही कहा था, "केवल पुलिस अफसर ही ऐसा व्यक्ति है जो अभिनेता की अपेक्षा ज्यादा भावोन्मादित हो उठता है। जार के जन्म दिवस पर वे दोनों शराबखाने में खड़े होकर भाषण देते हैं और आंसू बहाते हैं।"

किन्तु थियेटर की परम्परा का अक्षरशः पालन किया जाता था। हमारे यहां एक अभिनेता मित्रोफानोव-कोजलोवस्की मंच पर जाने से पूर्व सलीब

का निशान बनाया करता था। उसका यह संकेत एक लीक बन गया। उसकी देखा-देखी में प्रत्येक मुख्य अभिनेता ऐसा करने लगा। कनखियों से वह यह भी देख लेता था कि अन्य व्यक्तियों ने उसकी इस भंगिमा को देखा है या नहीं। जाहिर है, जो देखेगा वह उसके अन्धविश्वास और मौलिकता का लोहा तो मान ही लेगा। कला का गला घोंटने वालों में बकरी की मिमियाती आवाज लिए, चौड़े कूल्हों वाले एक ऐसे महानुभाव भी थे जो कभी दरजी पर, तो कभी बाल बनाने वाले पर हाथ उठा बैठते थे। हमारे यहां यह भी एक प्रथा बन गयी थी। मैंने अनेक बार लारा-लार्सकी को लाल-लाल आंखें किये हुए मंच पर गुस्से में पांव पटकते देखा था — उसका मुंह चिल्लाते-चिल्लाते झाग से भर जाता था। "दरजी को अभी फौरन यहां बुलाओ — अभी साले की जान निकाल दूंगा।"

वह दरजी पर हाथ तो चला बैठते थे किन्तु भीतर ही भीतर उन्हें हमेशा यह भय रहता था कि कहीं वह भी जवाब में उन्हें एक दो घूसा न जमा दे। दरजी को पीट लेने के बाद वह अपनी बाहें पीछे खींच लेते थे और कांपते हुए चिल्लाने लगते थे, "मुझे रोक लो — रोक लो, वरना मैं सचमुच हत्या कर डालूंगा।"

वैसे रंगमंच और "पवित्र कला" के सम्बंध में वे लोग लम्बी-चौड़ी डींगें मारा करते थे। मुझे जून का वह उजला निखरा दिन आज भी याद है। रिहर्सल अभी आरम्भ नहीं हुआ था। मंच पर अंधेरा और हल्की सी ठंडक थी। प्रमुख अभिनेताओं में लारा-लार्सकी और मैदवेदेवा, जो उनकी अभिनेत्री-पत्नी थी, सबसे पहले आ गये थे। कुछ नवयुवतियां और स्कूल के बच्चे सीटों पर बैठे थे। लारा-लार्सकी चिन्तित मुद्रा में मंच के ऊपर-नीचे चहल कदमी कर रहे थे। वह मन ही मन किसी नये गम्भीर पात्र का अध्ययन कर रहे थे। इतने में उनकी पत्नी ने उनसे कहा :

"शशा — जरा सीटी बजा कर वह धुन तो सुनाओ जो कल रात हमने 'पागलियाकी' में सुनी थी।"

वह रुक गये, बड़े गौर से ऊपर-नीचे देखा और फिर हाल की सीटों की ओर तिरछी नजर करके एक अभिनेता की भारी आवाज में बोले :

"सीटी ? मंच पर ? हा-हा-हा !" अभिनेताओं का कटु अट्टहास उनके मुंह से फूट पड़ा। "क्या सचमुच तुम संजीदा हो ? क्या तुम जानतीं नहीं कि मंच एक मन्दिर है, एक ऐसी पवित्र वेदी है जहां हम अपने सर्वश्रेष्ठ विचार और आकांक्षाएं समर्पित करते हैं ? सीटी ... हा हा हा !"

किन्तु यह किससे छिपा था कि स्थानीय घुड़सवार-सैनिक और दूसरों की मेहनत पर जीने वाले दौलतमन्द जमीदार कला की उस वेदी, स्त्रियों के वस्त्र बदलने के कमरे में अक्सर उसी तरह आया करते थे जिस तरह वेश्याओं के

प्राइवेट कोठों पर दूसरे लोग जाते हैं। हम इन सब घटनाओं के प्रति सर्वथा उदासीन थे। अक्सर अंगूर-लताओं के कुन्ज में हमें जलती हुई बत्ती दिखलायी दे जाती थी, और वहां से आता हुआ किसी स्त्री के हंसने का स्वर, घुड़सवार सैनिकों की एड़ियों और शराब के प्यालों की खनखनाहट कोई भी सुन सकता था। दूसरी ओर उस स्त्री का अभिनेता-पति सन्तरी की तरह अंधेरी सड़क पर इस आशा में चहलकदमी किया करता था कि शायद उसे भी आमंत्रित कर लिया जाय। वेटर मद्य-पात्रों की ट्रे ऊपर उठा कर जाता हुआ अक्सर उसे कोहनी से धकेल देता और फिर बड़े रूखे स्वर में कहता : "महाशय, क्षमा कीजिए...।"

और जब कभी उसे भी आमंत्रित कर लिया जाता तब तो उसके घमंड का पारावार न रहता। बियर और सिरका वोद्का में मिला कर पीता और यहूदियों के सम्बंध में अश्लील मजाक करता।

किन्तु इसके बावजूद वे लोग बड़े उत्साह और गर्व से कला के सम्बंध में बातचीत करते थे। तिमोफयेव-सुम्स्कोय ने एक बार से अधिक 'क्लासिकल-एक्जिट' के विषय पर भाषण दिया था।

"क्लासिकल दुःखान्त नाटकों की कला हम लोग भूल चुके हैं।" उसने खिन्न मन से कहा। "पुराने समय में अभिनेता मंच छोड़ कर कैसे जाता था? इस तरह..." वह बिल्कुल सीधा खड़ा हो गया और अपनी सारी अंगुलियां भींच कर दायां हाथ हवा में उठा दिया, केवल बीच की अंगुली कांटे की तरह खड़ी रही। "देख रहे हो?" और फिर वह मन्द गति से लम्बे-लम्बे डग भरता हुआ दरवाजे की ओर बढ़ने लगा। "इसी को हम 'क्लासिकल एक्जिट' (मंच से बाहर जाने का प्राचीन ढंग) कहते हैं।" आज हमारे पास क्या धरा रह गया है? पतलून की जेब में हाथ डाले और चल पड़े घर की ओर—बस इतना ही काफी है।"

कभी-कभी वे मूल पुस्तकों के वाक्यों को तोड़-मरोड़ कर अनोखे मजाक किया करते थे। एक बार लारा-लार्सकी ने हमें बताया कि उसने कैसे खेलस्वा-कोव (गोगोल के प्रहसन 'इंसपेक्टर जनरल' का प्रमुख पात्र) की भूमिका अदा की।

"देखो—जब गवर्नर होटल के उस कमरे में आकर कहता है कि वहां कुछ अंधेरा है, तो मैं उत्तर देता हूं: 'क्या आप यहां कुछ पढ़ने जा रहे हैं—मिसाल के तौर पर मैक्सिम गोर्की की कोई पुस्तक? लेकिन आप कैसे पढ़ पायेंगे? यहां तो बिल्कुल अंधेरा है—निपट अंधकार!' और हमेशा करतल ध्वनि से मेरा स्वागत किया जाता था।"

प्राय: तिमोफयेव-सुम्सकोय और गोंचारोव जैसे बूढ़े अभिनेताओं की बात-चीत सुनने में बहुत आनन्द आता था — खासकर उस समय जब उन्होंने थोड़ी सी पी रखी हो।

"हां भाई फेदोतुश्का — आजकल के अभिनेता पुराने जमाने के अभिनेताओं की तरह नहीं रहे — ना भाई !"

"पैत्रुशा, तुम ठीक कहते हो। तुम्हें चार्सकी या ल्युबस्की की याद है ? असली अभिनेता तो वे लोग थे।"

"अब तो नजरिया ही बदल गया है।"

"पीटर्सबर्ग, तुम सही फरमाते हो। वे लोग बदल गये हैं। कला की पवित्रता में अब किसी की श्रद्धा नहीं रही। आखिर पेत्रोशा, तुम और मैं ही तो कला के सच्चे साधक थे — किन्तु ये लोग ... जरा एक और देना।"

"भाई फेदोलुश्का. क्या तुम्हें इ. कोजलस्की की कभी याद आती है ?"

"चुप भी रहो, पेत्रोग्राद, मेरा दिल न तोड़ो। जरा एक पेग इधर भी देना। आजकल के अभिनेताओं और पुराने जमाने के अभिनेताओं में जमीन-आसमान का अन्तर है।"

"तुमने ठीक कहा — सचमुच जमीन और आसमान का अन्तर है।"

"हां भई ... अब वह बात कहां रही !" इन सबसे भिन्न आन्द्रोसोवा थी, निश्छल, कोमल, सुन्दर और प्रतिभासम्पन्न। अश्लीलता, मूर्खता, पाखण्ड, उच्छश्रृंखलता, आत्मश्लाघा, फूहड़पन और भ्रष्टाचार से दूषित वातावरण में केवल अन्द्रोसोवा ही सच्चे अर्थों में कला-साधक थी।

आज इतने वर्षों बाद मुझे लगता है कि वह स्वयं अपने चारों ओर फैली गंदगी से इसी तरह अनभिज्ञ थी जिस प्रकार काली कीचड़ की दलदल में खिलता हुआ खूबसूरत फूल जो यह भी नहीं जानता कि उसकी जड़ें उस कीचड़ द्वारा ही पोषित होती हैं।

ग्यारह

हमने एक्सप्रेस-रेलगाड़ी की तरह तेजी से धड़ाधड़ नाटक खेलने आरम्भ कर दिये। छोटे-मोटे कॉमेडी-नाटक तो हम केवल एक रिहर्सल बाद ही प्रस्तुत कर देते थे। 'भयंकर ईवान की मृत्यु' और 'नई दुनिया' को दो रिहर्सलों बाद प्रस्तुत कर दिया गया। बुखारिन के एक नाटक 'इजमाईल' के तीन रिहर्सल करने पड़े क्योंकि उसकी भूमिका में हमें स्थानीय दुर्ग-रक्षक सेना, होम गार्ड और आग बुझाने वाले विभाग के चालीस से अधिक 'एक्स्ट्रा' अभिनेताओं को शामिल करना पड़ा।

'भयंकर ईवान की मृत्यु' की स्मृति आज भी मस्तिष्क में ताजी है क्योंकि जिस दिन यह नाटक खेला गया, एक बेसिर-पैर की हास्यास्पद घटना हुई। तिमोफग्नेव सुम्सकोय ईवान की भूमिका अदा कर रहे थे। किमखाब का वस्त्र और कुत्ते की खाल की नुकीली टोपी पहने हुए वह चलती-फिरती लम्बी मीनार से दिखाई दे रहे थे। जार के भयंकर रूप को और अधिक भयावह बनाने के लिए वह बार-बार अपना निचला जबड़ा बाहर की ओर खींचते थे, अपने मोटे होंठ बिचकाते थे, चरखी की तरह आंखें घुमाते थे और पिछले सब अवसरों की अपेक्षा ज्यादा जोर से दहाड़ते थे!

जाहिर है, उन्हें अपना पार्ट याद नहीं रहा। मंच पर उनके बोलने का ढंग इतना बेतुका और भोंदा था कि वे अभिनेता भी अपना सिर पकड़ कर बैठ गये जो एक लम्बे अर्से से दर्शकों को मूर्ख समझते आए थे। किन्तु उस दृश्य में वह सबसे अधिक सफल रहे जब ईवान घुटनों पर गिर कर पश्चाताप की भावना से अभिभूत होकर सब कुछ स्वीकार करता हुआ कहता है: "मेरे मस्तिष्क पर पपड़ियां जम गयी हैं" इत्यादि। अन्त में वह स्थल भी आ पहुंचा जहां उन्हें यह वाक्य कहना था: "एक पतले-दुबले कुत्ते की तरह ..." यह कहने की आवश्यकता नहीं कि उनकी आंखें कोने में बैठे प्राम्पटर पर चिपकी हुई थीं। वह जोर से चिल्लाए: "एक ..." और अचानक चुप हो गये।

"एक दुबले-पतले कुत्ते की तरह ..." प्रॉम्पटर फुसफुसाया।

"पैक!" तिमोफयेव दहाड़ा।

"एक दुबले-पतले ..."

"टैक!"

"एक दुबले-पतले कुत्ते की तरह ..." आखिर काफी मुश्किल से वह उन पंक्तियों को कह पाए। उनके चेहरे पर उलझन या घबराहट का कोई चिन्ह दिखलायी नहीं दिया। किन्तु मैं, जो उस समय राज्य-सिंहासन के करीब खड़ा था, अपनी हंसी न रोक सका। मेरे संग हमेशा यहीं होता है—जब मुझे बिल्कुल हंसना नहीं चाहिए, खास उसी समय हंसी का बांध टूटने लगता है। मुझे अचानक ध्यान आया कि सिंहासन की ऊंची पीठ के पीछे छिपने का सुरक्षित स्थान है, जिसकी आड़ में जीभर कर हंसा जा सकता है। मैं पीछे मुड़ गया और अपनी हंसी के ठहाके को दबाकर 'बोयार' की तरह उचकता हुआ सिंहासन के पीछे जा दुबका। वहां क्या देखता हूं कि दो अभिनेत्रियां, वोल्कोवा और वोग्नुत्वार्सकाया सिंहासन की पीठ से सटी हुई चुपचाप हंसते-हंसते बेहाल सी हो गयी हैं। अब तो अपने को काबू में रखना असंभव हो गया। मैं मंच से दौड़ता हुआ अपने नकली सोफे पर आ गया और उस पर हंसते-हंसते लोट-पोट होने लगा।

समोयलेंको की ईर्षालू आंखें सदा मेरे पीछे लगी रहती थीं। उसने मुझ पर पांच रूबल जुरमाना कर दिये।

जिस दिन यह नाटक खेला गया, उस दिन और भी अनेक घटनाएं हुई थीं। मैं यह कहना भूल गया कि हमारे यहां रोमनोव नाम का एक बहुत ही सुन्दर, लम्बे कद वाला, गम्भीर नवयुवक अभिनय किया करता था। उसे अधिकतर द्वितीय श्रेणी की तड़क-भड़क, रोब-दोब वाली भूमिकाएं दी जाती थीं। दुर्भाग्य से नजर कमजोर होने के कारण उसे एक खास तरह का चश्मा लगाना पड़ता था। मंच पर ऐनक के बिना वह सदा इधर-उधर रखी हुई चीजों पर लुढ़क पड़ता था, मंच पर लगे हुए खम्बों को गिरा देता था, फूलदानों और आराम कुर्सियों को उलटा देता था, कभी-कभी उसके पांव कालीन में फंस जाते थे और वह धड़ाम से नीचे आ गिरता था। उसकी ख्याति उस समय से चली आ रही थी जब उसने एक दूसरे शहर की थियेटर-कम्पनी द्वारा प्रस्तुत किये गये नाटक 'राजकुमारी फैन्सी' में एक सामन्त-सैन्याधिकारी की भूमिका अदा की थी। उसने टीन का कवच पहन रखा था। उस नाटक में अभिनय करता हुआ वह गिर पड़ा और एक बड़ी चायदानी की तरह मंच के 'फुट लाइट्स' तक लुड़कता चला गया। किन्तु 'भयंकर ईवान की मृत्यु' में तो उसने अपने सारे पिछले रिकार्ड तोड़ दिये। शुइस्की के घर में, जहां सब षढ़यंत्रकारी इकट्ठा हुए थे, वह इस झपाटे से घुस गया कि सामने रखी बेंच, जिसपर बोयार (मध्य-रूस के निवासी) बैठे हुए थे, नीचे उलट गयी।

ये 'बोयार' भी देखने लायक लोग थे। वे सब उस शहर के तम्बाकू के कारखाने में काम करने वाले कराइत यहूदी युवक थे, जिन्हें थियेटर में भर्ती कर लिया गया था। मैं ही उन्हें रंगमंच पर लाया था। मैं कद में ठिगना हूं, किन्तु उनमें सब से लम्बा व्यक्ति भी मेरे कंधों तक ही पहुंचता था। उनमें से आधे से ज्यादा 'बोयार' लोगों ने कॉकेशिया की पोशाक पहन रखी थी और बाकी लोग, स्थानीय पादरी की भजन-मंडली से किराये पर ली गयीं कफ़्तनें (एक तुर्की-पोशाक) पहने हुए थे। इन सब चीजों के अलावा उनके बालवत् चेहरों पर काली चिपकी हुई दाढ़ियां, चमकती हुई काली आंखें, हर्ष से खुले हुए मुंह, संकोच से भरी हुई बेढंगी सी चाल-ढाल — ये सब कुछ देखते ही बनता था। ज्यों ही हमने बड़ी गम्भीर मुद्रा में मंच पर पदार्पण किया, दर्शकों ने हमें देखते ही हंसी के ठहाकों से हमारा स्वागत किया।

हम रोज नित-नये नाटक खेलते थे और हमारा थियेटर काफी लोक-प्रिय हो चला था। अफसर और जमींदार हमारी अभिनेत्रियों के लिए आते थे और प्रतिदिन खारीतोनेन्को के लिए एक अलग 'बॉक्स' सुरक्षित रखा जाता था। वह बहुत कम आता था, उस 'सीजन' में वह दोबार से अधिक नहीं आया था,

किन्तु हर बार वह हमें सौ रूबल भेज दिया करता था। थियेटर की अवस्था किसी हालत में बुरी नहीं थी, फिर भी छोटे-मोटे अभिनेताओं को वेतन नहीं मिलता था। दरअसल वेलेरियानोव उस कोचवान की तरह चालाक था जो अपने भूखे घोड़े के मुंह के सामने कुछ दूरी पर चारे की गठरी लटका देता है, ताकि वह उसके लालच में और भी तेजी से भागने लगे।

बारह

एक दिन नाटक नहीं हुआ — कारण मुझे याद नहीं। मौसम बहुत ही खराब था। दस बजते ही मैं अपने सोफा पर लेट गया और अंधेरे में काठ की छत पर मेह की बूंदों की टपाटप सुनता रहा।

अचानक परदों के पीछे से सरसराहट का स्वर आया। मुझे किसी की पदचाप सुनायी दी और उसके बाद कुर्सियों के धड़ाधड़ गिरने का धमाका हुआ। मोमबत्ती जलाकर भीतर गया तो देखता हूं कि शराब में धुत नेल्युबोव-ओल्गिन मंच और दीवार के बीच खड़ा हुआ मजबूरी की हालत में बुरी तरह लड़खड़ा रहा था। मुझे देखकर भयभीत होने के बदले केवल एक शान्त विस्मय का भाव उसके चेहरे पर झलक आया।

"तुम यहां बैठे क्या क–कर रहे हो?" थोड़े शब्दों में मैंने उसे सब कुछ बतला दिया। कुछ देर तक अपनी पतलून की जेबों में हाथ डाले हुए वह डगमगाता रहा। एक दफा उसका सन्तुलन बिगड़ गया, किन्तु कुछ कदम आगे बढ़कर उसने अपने को संभाल लिया।

"तुम मेरे घ–घर क्यों नहीं टि–टिक जाते?" उसने कहा।

"मेरी तुमसे ज्यादा जान-पहचान नहीं है।"

"छोड़ो भी ... आओ चलें।"

वह मेरी बांह पकड़कर मुझे अपने घर ले गया। उस दिन से लेकर अपने अभिनेता-जीवन के अन्तिम दिन तक मैं उसके कमरे का साझीदार बना रहा। वह छोटा सा कमरा, जिसमें धुंधला सा अंधेरा छाया रहता था, उसने उस जिले के अवकाश-प्राप्त हाकिम से किराये पर ले रखा था। पियक्कड़ होने के कारण वह नशे में अक्सर लड़ाई-झगड़ा कर बैठता था, जिसके परिणाम-स्वरूप थियेटर कम्पनी के लोग उस पर नाक-भौं सिकोड़ते रहते थे। किन्तु वास्तव में वह शान्त, कोमल प्रकृति का एक अत्यन्त सुशील व्यक्ति था जो बाद में उत्कृष्ट साथी साबित हुआ। ऐसा जान पड़ता था कि किसी स्त्री ने उसकी आत्मा को गहरा आघात पहुंचाया था, जिसका घाव न केवल इलाज के परे था, बल्कि बराबर उसे कष्ट पहुंचाया करता था। मैं इस दुखद प्रेम-

कहानी का भेद न जान पाया। जब कभी वह ज्यादा पी लेता था, तो दराज से एक स्त्री का चित्र निकालकर देखा करता था। देखने-भालने में वह स्त्री सुन्दर न रही हो, किन्तु कुरूप भी नहीं कही जा सकती थी—किंचित टेढ़ी आंखें, औद्धित्य का भाव लिए ऊपर उठी हुई नाक—सादा-साधारण सा उसका चेहरा था। वह कभी उस चित्र को चूमने लगता, कभी फर्श पर फेंक देता, फिर एकदम वहां से उठाकर छाती से चिपका लेता, कभी उस पर थूक देता, फिर उसे 'आइकन' (धार्मिक-चित्र) पर लगा देता और कभी-कभी उस पर मोमबत्ती का पिघला हुआ मोम छिड़क देता। मुझे यह भी पता नहीं था कि उन दोनों में से कौन किसे छोड़कर चला गया था और न मैं यह बात जानता था कि जिन बच्चों की वह चर्चा करता था, वे किसके बच्चे थे, उसके, अथवा उस स्त्री के, या किसी और के ?

"हम दोनों में से किसी के पास रुपया नहीं था। एक लम्बा अर्सा पहले वह वेलेरियानोव से काफी बड़ी रकम कर्ज लेकर उस स्त्री को भेज चुका था। अब उसकी दशा उस दास से बेहतर नहीं थी, जिसके हाथ-पाव जकड़ लिए गये हों और जो महज शराफत के कारण अपनी बेड़ियां न काट पा रहा हो। उसी शहर में साइनबोर्ड रंगनेवाले एक आदमी का हाथ बटाकर वह कभी-कभी कुछ कोपेक कमा लेता था। किन्तु यह काम वह थियेटर कम्पनी से लुक-छिपकर किया करता था। भला लारा-लार्सकी कभी कला को इस तरह अपमानित होते देख सकता था ?

हमारा मकान-मालिक तो नेकी और शराफत का पुतला था। पके गुलाबी रंग के गाल, दुहरी ठुड्डी और हृष्ट-पुष्ट शरीर—यही उसका डील-डौल था। प्रतिदिन जब उसके परिवार के सदस्य सुबह और शाम की चाय पी चुकते थे, तब वह हमारे लिए दुबारा चाय की देगची में पानी भर कर केतली, चाय की पत्तियां और काली रोटी भेज देता था ताकि हम खा-पीकर अपनी भूख-प्यास मिटा सकें। इस तरह हमारे पेट हमेशा ठसाठस भरे रहते थे।

दुपहर को सोने के बाद यह भूतपूर्व पुलिस अफसर (हमारा मकान-मालिक) अपने ड्रेसिंग-गाउन में ही बाहर सीढ़ियों पर जा बैठता और पाइप पीता रहता। थियेटर जाने से पहले कुछ देर के लिए हम भी उसके पास अड्डा जमा लेते थे। हमारी बातें घूम-फिरकर हमेशा एक ही विषय पर आ टिकतीं—जिन दिनों वह नौकरी करता था, तब उसे कौन-कौन से कष्ट झेलने पड़े, उसके प्रति उसके अफसरों का कैसा दुर्व्यवहार रहा, किस प्रकार उसके शत्रु उसके विरुद्ध कुत्सित षड़यंत्र रचते थे, इत्यादि। उसने अनेक बार अपनी यह इच्छा प्रकट की थी कि वह देश के प्रमुख समाचार पत्रों को एक पत्र भेजना चाहता है। उस पत्र को कैसे लिखा जाय, इस सम्बंध में उसने हमारी राय भी पूछी

थी। उसने हमें बतलाया था कि वह उस पत्र के द्वारा यह साबित करेगा कि वह बिलकुल निर्दोष है और गवर्नर, डिपुटि गवर्नर, जिले का वर्तमान पुलिस-अफसर और वह बदमाश सहकारी अमीन जो उसकी सब मुसीबतों की जड़ था और जो आजकल एक-दूसरे जिले का अफसर है—इन सब लोगों को अपने-अपने ओहदों से हटवाकर ही वह दम लेगा। हमने इस सिलसिले में उसे अपनी बुद्धि के अनुसार अनेक सलाहें दी थीं, किन्तु हर बार वह एक लम्बी सांस लेकर मुंह बिचका लेता और सिर हिलाने लगता।

"उ-हूं... मैं यह नहीं चाहता।" वह अपनी जिद में कहता। "बात यह नहीं है। काश, मैं खुद लिख पाता! मैं अपना सब कुछ लुटाने के लिए तैयार हूं।"

उस कम्बख्त के पास रुपये की कमी नहीं थी। एक दिन उसके कमरे में पहुंचकर मैंने देखा कि वह मुझे देखते ही कुछ संकुचित सा हो उठा और कागज की उन पर्चियों की ओर अपनी पीठ मोड़कर ड्रेसिंग-गाउन के पीछे उन्हें छिपा लिया। मुझे पक्का विश्वास है कि जिन दिनों वह नौकरी करता था, उसने अवश्य ही अपनी अधिकार-सीमा का उल्लंघन किया होगा और घूसखोरी, लूट-खसोट तथा अन्य धोकाधड़ी की कार्रवाहियों में अपने हाथ मैले किये होंगे।

खेल समाप्त हो जाने के बाद मैं और नेल्यूबोव कभी-कभी रात के समय बाग में टहलने निकल जाया करते थे। हर जगह पेड़-पौधों के बीच बिछे हुए सफेद छोटे-छोटे मेज हमें अपनी ओर आमंत्रित करते से जान पड़ते थे। उन पर रखे हुए शीशों के बीच मोमबत्तियों की लौ स्थिर, निश्चल रूप से जलती रहा करती थी। आस-पास खड़े हुए स्त्री-पुरुष, आनन्द से ओत-प्रोत, रहस्यपूर्ण नटखट मुस्कान चारों ओर बिखेरते हुए एक-दूसरे पर झुके से जाते थे। कोमलांगी स्त्रियों के छुई-मुई पैरों के नीचे रेत बार-बार दब कर चरमरा उठती थी।

"काश, हमें भी कोई ऐसा भाग्यवान मिल जाता जो आंख का अंधा और गांठ का पूरा हो।" नेल्यूबोव कभी-कभार भारी स्वर में मेरी ओर कनखियों से देखता हुआ कहता।

शुरू में मुझे उसकी यह बात खटकी थी। वे अभिनेता जो दूसरों के रुपयों से अपनी पेट-पूजा करने के लिए ललचाई दृष्टि से दुम हिलाते हुए लोगों के खाने की मेजों के इर्द-गिर्द मंडराते रहते हैं—हमेशा मेरी घृणा के पात्र रहे हैं। खुशामदी कुत्तों सी उनकी भूखी-भीगी आंखें, खाने की मेज पर अस्वाभाविक रूप में सधे-संतुलित स्वर में उनकी बातें, आत्म-तुष्टि का ऐसा भाव मानो वे त्रिकालदर्शी हों, उनकी उत्सुकता और बैरों के संग ऐसा खुला व्यवहार मानो वे उनके पुराने परिचित रहे हों—उनकी इन सब बातों से मुझे घृणा थी। बाद में जब मुझे नेल्यूबोव को ज्यादा निकट से जानने का अवसर मिला,

तो मुझे पता चला कि उसकी बात का वह अर्थ नहीं था जो मैं समझ बैठा था। सनकी होने के बावजूद उसमें आत्म-सम्मान की भावना बहुत गहरी थी और वह नाक पर मक्खी भी नहीं बैठने देता था।

किन्तु एक बार सचमुच एक 'आंख का अंधा ...' अपने आप हम दोनों से अचानक टकरा गया। वह घटना तनिक लज्जास्पद होने के बावजूद अपने में काफी दिलचस्प थी।

बात दरअसल यह थी। एक शाम नाटक समाप्त हो जाने के बाद ज्यों ही हम ड्रेसिंगरूम से बाहर निकले, हमने देखा कि एक आदमी, जिसका नाम आल्टशिलर था, परदों के पीछे से भागता हुआ बाहर निकल आया। भारी भरकम सा शरीर, पके गुलाबी गाल — अंगूठियों, जंजीरों और झुमकों से चम-चम करता हुआ वह एक कम उम्र का मुंहफट और रंगीला यहूदी युवक था। हमने देखा, वह हमारी ओर तेजी से भागता हुआ आ रहा था।

"तौबा! पूरा आध घंटा हो गया है इस तरह भागते हुए — थक कर चूर हो गया हूं। खुदा के वास्ते क्या आपने वोल्कोवा या बोगुचार्सकाया को कहीं देखा है?"

नाटक समाप्त हो जाने के तुरन्त बाद हमने उन दोनों अभिनेत्रियों को कुछ घुड़सवार अफसरों के संग घुड़सवारी करने के लिए बाहर जाते हुए देखा था। हमने आल्टशिलर को यह बात इस तरह बतलायी मानो हम उस पर कोई बड़ा अहसान कर रहे हों। इतना सुनना था कि वह सिर पकड़ कर मंच के इर्द-गिर्द तेजी से भागने लगा।

"नीचता की हद हो गयी! मैंने उनके लिये खाने का आर्डर दिया था। कुछ समझ में नहीं आता, अब क्या करूं! उन्होंने मुझे अपना वचन दिया था, आने के लिए वादा किया था — और अब ... सब कुछ मिट्टी में मिल गया।"

हम चुप खड़े रहे।

उसने मंच के दो-चार चक्कर और काटे और फिर अचानक खड़ा हो गया। कुछ देर तक हिचकिचाता सा वह सिर खुजलाता रहा। फिर कुछ सोचने की मुद्रा में उसने होठों को तर किया और यकायक, दृढ़ निश्चय के स्वर में बोल उठा:

"सज्जनो! मेरी आप से विनम्र प्रार्थना है कि आज आप मेरे संग भोजन करें।"

हमने इन्कार कर दिया।

किन्तु वह कब मानने वाला था, जोंक की तरह हमसे चिपट गया। कभी मुझे मनाता, कभी नेल्यूबोव का हाथ पकड़ता और बार-बार हमारी ओर अत्यंत

कोमल और स्निग्ध भाव से देखता हुआ दावा करने लगता कि वह भी कला का पुजारी है। आखिर नेल्यूबोव का मन डिगने लगा।

"मारो गोली — इसमें क्या धरा है, आओ चलें।" कला का वह संरक्षक हमें अपने संग ले गया और एक प्रमुख स्थान पर हमारे बैठने की व्यवस्था करवा दी। उसके बाद तो उसकी उछल-कूद का ठिकाना न रहा। वह बार-बार हवा में हाथ घुमाने लगता और बैरा को बुलाने के लिए उछल-उछल कर भागता था। *डुपेल्ड कुम्मेल* (एक किस्म की जर्मन शराब) का एक गिलास पीकर तो वह बिल्कुल अपनी सुध-बुध खो बैठा। उसने अपनी टोपी को तिरछा करके पहन लिया ताकि उसे देखने वालों की निगाहों में वह बिल्कुल छैला सा जान पड़े।

"अचार? रूसी ज़ुबान में तुम इसे क्या कहते हो? बिना अचार के खाना हजम नहीं होगा — ठीक है न? अरे, वोडका तो लो — मैं हाथ जोड़ कर आपसे याचना करता हूं — आप जी भरकर खाइये, सब कुछ खत्म कर डालिए। आपको बूफ स्ट्रोगानोफ (एक किस्म का स्वादिष्ट गोश्त) कैसा लगता है? यहां के पकवान तो लाजवाब हैं, अरे बैरा, कहां हो?"

उस रात भुना हुआ गोश्त खाकर मुझे ऐसा लगा मानो मैंने शराब चढ़ा ली हो। नशे की खुमारी में मेरी आंखें मुंदने लगीं। बरामदे की जगमगाती रोशनियां, सिगरेटों का नीला धुआं, बातचीत की उठती गिरती आवाजें हवा में तिरती हुई सी मेरे नजदीक आती थीं और फिर कहीं दूर जाकर डूब जातीं थीं। मेरे कान में आती हुई वह आवाज मानो मैं सपने में सुनता रहा था :

"महाशय — और लीजिये, तकल्लुफ करना ठीक नहीं, भला यह भी कोई मेरे बस की बात है कि मैं कला से इतना प्रेम करता हूं ...।"

तेरह

किन्तु आखिर हर चीज की पराकाष्ठा होती है। कई दिनों से बराबर चाय और काली रोटी पर गुजारा करते-करते मेरा स्वभाव चिड़चिड़ा सा हो गया और अक्सर अपनी झुंझलाहट छिपाने के लिए मुझे बाग के किसी कोने की शरण लेनी पड़ती थी। अपने कपड़े मैं कब के बेच चुका था।

समोयलेंको ने मुझे सताना जारी रखा। आपने देखा होगा कि कभी-कभी छात्रावास का कोई अध्यापक किसी नन्हे-मुन्ने विद्यार्थी की हर चीज से नफरत करने लगता है — उसका पीला चेहरा, आगे बढ़े हुए कान, कंधा उचकाने की आदत — कोई भी चीज उसे एक आंख नहीं सुहाती। समोयलेंको का मेरे प्रति बर्ताव हूबहू वैसा ही था। अब तक वह मुझ पर पन्द्रह रूबल जुर्माना कर चुका था। रिहर्सलों के दौरान में उसका मेरे प्रति व्यवहार उतना ही बदतर था

जितना एक थानेदार का कैदी के प्रति होता है। कभी-कभी उसकी रूखी-कड़वी टिप्पणियां सुनकर मेरी आखों के सामने अंगारे से धधकने लगते और मैं अपनी पलकें झुका लेता। वेलेरियानोव ने अर्से से मुझ से बोलना छोड़ दिया था—जब कभी अचानक उससे मुठभेड़ हो जाती तो शुतर्मुर्ग की तरह आंखें बचा कर तेजी से दूर हट जाता। नौकरी करते मुझे छः सप्ताह होने को आए थे किन्तु अब तक मुझे केवल एक रूबल मिला था।

उस दिन जब सुबह उठा तो सिर दर्द के मारे फट रहा था, मुंह में अजीब कसैला सा स्वाद महसूस हो रहा था और दिल में गुस्से की आग भड़क रही थी। मैं उसी बिगड़े हुए मिजाज को लेकर सीधे थियेटर चला आया।

उस शाम कौन सा नाटक प्रस्तुत किया जा रहा था, अब याद नहीं रहा। केवल इतना याद है कि एक किताब के मुड़े हुए पन्नों का गट्ठर मेरे हाथ में था। हमेशा की तरह मुझे अपना पार्ट अच्छी तरह से याद था। संयोगवश मुझे कहीं ये शब्द बोलने थे : "मैं इसके योग्य हूं।"

रिहर्सल के दौरान में वह क्षण भी आ पहुंचा जब मुझे यह वाक्य कहना था।

"मैं इसके योग्य हूं।" मैंने कहा। किन्तु समोयलेंको भागता हुआ मेरे पास आया और पूरा जोर लगाकर चीखने लगा : "क्यों साहब—यह आप रूसी भाषा में बात कर रहे हैं ? रूसी जुबान क्या इस तरह बोली जाती है ? 'मैं इसके योग्य हूं।' क्या खूब ! सही वाक्य यह है, 'मैं इसके लिये योग्य हूं।' गंवार कहीं का ..."

मेरा मुंह पीला पड़ गया। मैंने उसके सामने पुस्तक ला कर कहा :

"कृपया जरा मूलपाठ पर तो एक नजर डालिये।"

मेरा इतना कहना था कि वह पूरी शक्ति लगाकर दहाड़ने लगा, "भाड़ में जाए तुम्हारा मूलपाठ ! तुम्हारे लिये मैं ही मूलपाठ हूं। अगर तुम्हें इसमें कोई एतराज है तो जहन्नुम का रास्ता नापो, समझे ?"

मेरी आंखें ऊपर उठ गयीं। पलक मारते ही वह सब कुछ समझ गया। मेरी तरह उसका चेहरा भी पीला पड़ गया और वह हड़बड़ाकर दो कदम पीछे हट गया। किन्तु मौका हाथ से निकल चुका था। मेरे हाथ में पुस्तक के ढीले खुले हुए पन्नों का जो भारी गट्ठर था, उसे उठाकर मैंने उसकी बायीं गाल पर दे मारा, फिर दायीं गाल पर, उसके बाद दुबारा बायीं और फिर दायीं गाल पर—इस तरह काफी देर तक उसकी मरम्मत करता रहा। उसने कोई विरोध नहीं किया—यहां तक कि मेरे सामने से हट जाने या अपने को बचाने की भी कोई चेष्टा नहीं की। नाटक के विदूषक की तरह विस्मित होने का उपक्रम करता हुआ वह मुंह बाये खड़ा था और मेरे प्रत्येक घूसे के संग उसका सिर

कभी बायीं और कभी दायीं ओर लुड़क पड़ता था। अन्त में पुस्तक उसके मुंह पर फेंक कर मैं मंच से उतर गया और बाग में चला आया। किसी ने मुझे रोकने की चेष्टा नहीं की।

और तब एक चमत्कार हुआ। बाग में पहुंचकर जिस पहले व्यक्ति से मेरी मुठभेड़ हुई, वह वोलगा और कामा बैंक की स्थानीय शाखा का चपरासी था। उसने मुझ से लियोन्तोविच का पता पूछा और मेरे हाथों पर पांच सौ रूबल का मनी आर्डर रख दिया।

एक घंटे बाद मैं और नेल्यूबोव वापिस बाग में आ गये और एक विराट-भोज का आर्डर दे दिया। दो घंटे बाद ही सारी थियेटर-कम्पनी बाग में जमा हो गयी। शैम्पेन के दौर पर दौर चलने लगे। सब लोग मुझे बधाई दे रहे थे। लोगों में यह अफवाह फैल गयी कि मुझे वरासत में एक हजार रूबल मिले हैं। इस अफवाह को उड़ाने में मेरा कोई हाथ नहीं था, नैल्यूबोव ने ही इस मिथ्या धारणा को फैलाया था, किन्तु मैंने इसका खंडन नहीं किया। बाद में वेलेरिया-नोव ने सौगन्ध खाकर मुझे विश्वास दिलाया कि कम्पनी की आर्थिक अवस्था बहुत डांवाडोल है। मैंने उसे सौ रूबल दे दिये।

उस शाम पांच बजे की ट्रेन से मुझे चले जाना था। मेरी जेब में मास्को का टिकट और सत्तर रूबल के अलावा कुछ भी नहीं बचा था। किन्तु लग मुझे ऐसा रहा था मानो मैं कोई शहनशाह हूं। दूसरी घंटी बजने के बाद जब मैं अपने डब्बे में घुसने लगा, तो समोयलेंको, जो अब तक मुझ से दूर रहा था, भागकर मेरे निकट आ खड़ा हुआ और बोला: "देखिये, क्रोध में आकर जो कुछ कहा-सुनी हो गयी है, उसके लिए क्षमा मांगता हूं।"

आगे बढ़ा हुआ उसका हाथ अपने हाथ में लेकर मैंने प्रसन्न-मुद्रा में कहा:

"आशा है, आप भी मुझे माफ करेंगे — कसूर मेरा भी वही है।"

उन सबने विदाई के अवसर पर मुझे अपनी शुभकामनाएं भेंट कीं। मैंने आखिरी बार स्नेह भरी निगाहों से नैल्यूबोव की ओर देखा। रेल चल पड़ी — सब कुछ हमेशा के लिए पीछे छूट गया। जो बीत गया वह कब दुबारा देखने को मिलेगा? जारच्चे की नीली झोपड़ियां एक-एक करके गायब होने लगीं और हमारे सामने स्तेपी की झुलसी हुई पीली और सूनी धरती का विस्तार फैलने लगा। एक अजीब सी उदासी मुझ पर घिर आयी। धरती के जिस कोने से मैं लौट रहा था, वहां मैंने क्या कुछ नहीं सहा — चिन्ता, यातना, भूख और अपमान — किन्तु इसके बावजूद मैं वहां हमेशा के लिए अपने दिल का एक टुकड़ा छोड़ चला था।

१९०६

गेम्ब्रीनस

एक

दक्षिणी-रूस में समुद्र-तट पर बसे एक फले-फूले शहर में गेम्ब्रीनस नाम का एक बियर-घर था। बीच बाजार की चहल-पहल और रंग-रौनक से घिरे होने के बावजूद उसका पता चलाना कठिन था, क्योंकि वहां पहुंचने के लिए बाजार के धरातल से नीचे उतर कर जाना पड़ता था। कभी-कभी तो गेम्ब्री-नस में नियमित-रूप से आनेवाले ग्राहक भी रास्ता भटक जाते, धोखा खाकर दो-चार दुकानें आगे निकल जाते और फिर गलती महसूस होने पर अपने पांव वापस मोड़ते।

बियर-घर के आगे कोई साइन-बोर्ड नहीं लगा था। सड़क की ओर दिन-रात एक तंग दरवाजा खुला रहता, जिसमें से ग्राहकों को भीतर जाने के लिए गुजरना पड़ता था। दरवाजे के अन्दर जाते ही नीचे की ओर पत्थर की बनी छोटी-छोटी बीस सीढ़ियां बनी थीं, जो लाखों भारी जूतों की चोट सह कर अब बिलकुल क्षत-विक्षत सी दिखायी देतीं थीं। सीढ़ियों के नीचे सामने दीवार

पर बियर-उत्पादकों के प्रसिद्ध संरक्षक गेम्ब्रीनस महाराज की दस फीट लम्बी चित्रांकित प्रतिमा खड़ी थी। उसे देख कर लगता था मानो रबड़ के सूखे टुकड़ों को तराश कर बड़े भोंड़े ढंग से जोड़ दिया गया हो। वह किसी नौसिखिये कलाकार की प्रथम कला-कृति जान पड़ती थी। किन्तु लाल वास्कट, चांदी सा चम-चम करता श्वेत धवल फर का चोगा, स्वर्णमंडित मुकुट और ऊपर उठे हुए कलष में लबालब भरी मदिरा के सफेद झाग को देखकर मन में कोई संशय बाकी नहीं रहता था कि हमारे सम्मुख मद्य-व्यवसाय के संरक्षक की साक्षात मूर्ति खड़ी है।

दो लम्बे कमरे थे, जिनकी मेहराबदार छतें बहुत नीची थीं। खिड़कियां न होने के कारण रात-दिन गैस की लालटैनें जलती रहा करती थीं, जिनके प्रकाश में पत्थर की दीवारें चमका करती थीं। धरती के नीचे स्थित होने के कारण उन दीवारों से हमेशा एक प्रकार की नमी बाहर निकलती रहती थी। कुछ अधमिटे व्यंग्य चित्रों के चिन्ह उन दीवारों पर अब भी दिखलायी दे जाते थे। एक चित्र में शराब में मदमस्त नाचते-गाते जर्मन युवकों की एक टोली चली जा रही थी। उन्होंने शिकारियों की हरी वास्कट पहन रखी थी, तीतरों के पंख अपनी टोपियों पर लगाये हुए थे और गोश्त के टुकड़े उनके कंधों से नीचे झूल रहे थे। हाल के सामने वे लोग मदिरा-कलष उठाये आपका स्वागत करते दिखलायी देते थे। चित्र में दो हृष्ट-पुष्ट, गदराये अंगों वाली छैल-छबीली युवतियां भी थीं, जो किसी देहाती सराय की सेविकाएं अथवा किसी सीधे-सादे किसान की लड़कियां दिखलायी देती थीं। दो युवकों ने उन्हें कमर से पकड़ रखा था। एक अन्य भित्ति-चित्र में अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध-काल की एक पिकनिक का दृश्य था। चित्र में सामने की ओर राज्य-सामन्त थे जिन्होंने अपने कृत्रिम केशों पर पाउडर लगा रखा था। उनके निकट कोमलांगी सामन्त कुल-बधुएं बैठी थीं। पीछे चरागाह की हरित भूमि पर भेड़-बकरियां उछल-कूद रही थीं। पास ही घने वृक्षों से घिरा एक सरोवर था जिसके बीच एक स्वर्ण-मंडित नाव में कुछ भद्र महिलाएं अंगरक्षकों के संग बैठी थीं और सरोवर के हंसों को कुछ खिला रही थीं। एक दूसरे चित्र में यूक्रेन के किसी गांव की झोंपड़ी का अन्दरूनी भाग दिखलाया गया था, जहां कुछ देहाती गंवार आनन्द-विभोर होकर होलिका (एक किस्म की शराब) की बोतलें हाथ में लिए हुए 'होपेक' नृत्य कर रहे थे। उसी हॉल में कुछ दूर पर पूरी चमक-दमक के संग एक खासा-बड़ा कनस्तर रखा था, जिस पर अंगूर की बेल-लताओं से आवृत्त स्थूलकाय, लाल मुंह और मोटे होठों वाली कामदेव की दो मूर्तियां बनी थीं—दोनों के हाथों में एक दूसरे को छूते हुए मद्य-पात्र थे और दोनों ही मूर्तियां अपनी निर्लज्ज, गिलगिली आंखों से एक दूसरे को घूर रहीं थीं। दूसरा कमरा पहले कमरे से एक मेहराब द्वारा

विभाजित कर दिया गया था। उस कमरे में मेंढक के जीवन की कुछ झांकियां प्रस्तुत की गयीं थीं—हरे-भरे दलदल में बियर पीते हुए, घास में भिड़ों को पकड़ते हुए, चार मेंढक एक संग गाते हुए, तलवार चलाते हुए, इत्यादि। चित्र-कार अवश्य ही कोई विदेशी रहा होगा।

बलूत की लकड़ी के बड़े बड़े पीपे बुरादे से भरे फर्श पर रखे थे, जो मेजों का काम देते थे। कुर्सियों की अभाव-पूर्ति के लिए छोटे पीपे पड़े थे। प्रवेश-द्वार के दायीं ओर एक नीचा मंच था, जिस पर एक पियानो रखा था। उस मंच पर कई वर्षों से हर रात शशका वायलिन बजा कर ग्राहकों का मनोरंजन करता आया था। शशका अनिश्चित आयु का एक अति विनम्र गंजा यहूदी था, जो देखने में मैले-मलिन लंगूर सा लगता था। शराब पीकर मस्त रहता और हमेशा हंसता हुआ दिखलायी देता। विगत वर्षों में चमड़े की आस्तीनें पहन कर कितने वेटर आये और चले गये, बियर पीनेवाले और पिलाने वाले भी बदल गये, यहां तक कि बियर-घर के पुराने मालिकों के स्थान पर नये मालिक आ गये, किन्तु हर शाम छः बजे शशका वायलिन लिए मंच पर बैठा हुआ अवश्य दिखलायी देता। उसके घुटनों के पास उसका सफेद कुत्ता बैठा रहता था। सुबह एक बजते ही वह उठ खड़ा होता और अपने छोटे से कुत्ते स्नोड्रॉप के संग नशे में मदमस्त लड़खड़ाता हुआ गेम्ब्रीनस के बाहर निकल पड़ता।

गेम्ब्रीनस की एक अन्य स्थायी सदस्या 'बारमेड' मदाम ईवानोवा थी। वह एक स्थूलकाय, रक्तहीन बूढ़ी स्त्री थी, जिसने अपना सारा जीवन उस सीलन भरे तहखाने में गुजार दिया था। उसे देखकर बरबस उन सफेद और सुस्त मछलियों की याद आ जाती थी, जो गहरी समुद्री कन्दराओं में आजीवन वास करती हैं। 'बार' में एक ऊंचे स्थान पर बैठे-बैठे वह जहाज के कप्तान की भांति चुपचाप नौकरों पर हुकुम चलाया करती थी। वह मुंह के दायें कोने में सिगरेट दबाकर बराबर धूम्रपान करती रहती। उसकी दायीं आंख सिगरेट के धुएं से बचने के लिए हमेशा अधमुंदी सी झिपी रहती थी। बहुत कम लोगों ने उसकी आवाज सुनी थी। जब कभी कोई उसका अभिवादन करता, तो उसके होठों पर एक बुझी मुरझायी सी मुसकान सिमट आती।

दो

उस बन्दरगाह की गणना संसार की सबसे बड़ी बन्दरगाहों में होती थी। कोई दिन ऐसा नहीं जाता, जब वह जहाजों से ठसाठस न भरी हो। जंग लगे हुए काले भीमकाय ड्रेडनॉट जहाज भी यहां लंगर डालते थे। इस बन्दरगाह में देश के कोने-कोने से ट्रेनों में लद कर सामान और हजारों की संख्या में कैदी

आते थे जिन्हें बाहर भेजने के लिए सुदूर पूर्व जाने वाले दोब्रोवोल्नी लाइन के मोटी चिमनियों वाले पीले जहाजों में ठूंस दिया जाता था। शिशिर या वसन्त के दिनों में बन्दरगाह पर संसार के विभिन्न देशों के झंडे हवा में फहराते थे और शायद ही कोई ऐसी भाषा होती, जिसमें सुबह से लेकर रात तक आदेश न दिये जाते या कसमें न खायीं जातीं। बन्दरगाह के गोदी-मजदूर असंख्य गोदामों की ओर भागते हुए दिखलायी देते और फिर दुबारा वापिस लौट कर झूलते हुए तख्तों पर से होकर जहाजों में घुस जाते। मजदूरों में फटे चीथड़ों से अपना तन ढंके लगभग नंगे आवारागर्द रूसी थे, जिनके चेहरे अधिक शराब पीने के कारण फूल आये थे, मैली-कुचैली पगड़ियां पहने स्याह रंग के तुर्की थे, जिन्होंने ऐसे खुले, ढीले-ढाले पाजामे पहन रखे थे जो घुटनों पर बहुत चौड़े होने के बावजूद नीचे पैरों पर बहुत तंग हो गये थे, हृष्ट-पुष्ट मांसल पुट्ठों वाले ईरानी थे, जिन्होंने अपने बालों और नाखूनों को गाजर की रंग वाली लाल मेंहदी से रंग लिया था। दो या तीन इटली के जहाज मस्तूल उठाये अक्सर उस बन्दरगाह में आते थे। दूर से देखने पर वे बहुत सुन्दर प्रतीत होते थे। उन जहाजों से बंधे हुए परस्पर गुम्फित पाल किसी नवयुवती के निर्मल धवल, गोल-सुडौल उरोजों से दिखलायी देते थे। वसन्त की किसी उजली सुबह को जब कभी ये सुघड़-सुन्दर जहाज लाइट-हाउस के आस-पास कहीं दिखलायी दे जाते, तो लगता मानो सफेद, सुरम्य सपनों का कोई समूह पानी में न बहकर, क्षितिज के पार हवा में तिरता उड़ता चला जा रहा है। कुछ ऐसे भी अनातोलिया के ऊंचे कशिरमा जहाज व त्रेबीजोन्द जलपोत वहां खड़े थे, जिन पर नक्काशी की गयी थी और जिन्हें विभिन्न प्रकार के विचित्र और हास्यास्पद आभूषणों से सजाया गया था। ये जहाज महीनों उस बन्दरगाह के गंदले, हरे जल में, कूड़ा-करकट, तरबूज और अंडों के छिलकों और सफेद समुद्री-परिन्दों के बीच घिरे हुए खड़े रहते थे। कभी-कभी काले पालों वाला कोई विचित्र छोटा सा जहाज मैले चीथड़े का झंडा उड़ाता हुआ तेजी से बन्दरगाह में घुस पड़ता और बन्दरगाह से बाहर निकली हुई जैटी (जहाज से नीचे उतरने की पटरी) से बाल-बाल बचता हुआ, गालियों और धमकियों की परवाह किये बिना, तट के किसी घाट पर लग जाता। जहाज के नंग-धड़ंग तांबे के रंग के ठिगने मल्लाह झटपट बाहर निकल आते और मोटी खुरदरी आवाजों में बातचीत करते हुए, बिजली की तेजी से, फटे-चीथड़े पालों को लपेटना शुरू कर देते। एक ही क्षण में सन्नाटा छा जाता और वह जीर्ण-जर्जरित, विचित्र जहाज बिलकुल निस्पन्द, निस्तब्ध हो जाता, मानो अचानक उसकी मृत्यु हो गयी हो। जिस प्रच्छन्न रहस्य को छिपाए वह यहां रुक गया था, चुपचाप उसी रहस्यमयता के संग वह जहाज एक अंधेरी रात में बिना रोशनियां जलाये, समुद्र के निबिड़ अंधकार में विलीन हो जाता। रात

के समय खाड़ी चुंगीचोरों की छोटी नौकाओं से खचाखच भर जाती। मछुए बन्दरगाह में अलग-अलग ऋतुओं में विभिन्न किस्म की मछलियां पकड़ कर लाते थे; वसन्त ऋतु में लाखों की संख्या में छोटी-छोटी आंकोवी मछलियां नौकाओं में भर कर लायी जाती थीं, ग्रीष्म ऋतु में भद्दी बेडौल प्लेस मछलियां, शिशिर में मैकरल, मोटी भूरे रंग की मुलेट और घोंघे और शरद ऋतु में पांच मन से नौ मन तक भारी सफेद स्टर्जियन मछलियां, जिन्हें मछुए तट से दूर जाकर, जान जोखिम में डाल कर पकड़ा करते थे।

विभिन्न देशों और जातियों के ये लोग — जिनमें जहाजी, मछुए, नाविक, छोटे जहाजों पर काम करने वाले छोकरे, बन्दरगाह के चोर, इंजीनियर, मजदूर, गोदियों में काम करने वाले मजदूर, मल्लाह, गोताखोर, चुंगीचोर इत्यादि सभी शामिल थे— कम उम्र के प्रभावशाली युवक थे। समुद्र और मछलियों के वातावरण ने उनके व्यक्तित्व पर अपनी अमिट छाप छोड़ दी थी। वे डट कर काम करना जानते थे। रोजमर्रा के काम उनके हृदय में भय और सम्मोहन की मिश्रित भावनाएं उपजाते थे। शक्ति, साहस और चटपटी भाषा के नुकीले व्यंग्यों के प्रति वे शीघ्र ही आकर्षित हो जाते और तट पर पहुंचते ही आमोद-प्रमोद, मद्यपान और लड़ाई-झगड़े में व्यस्त हो जाते थे। रात हो जाने पर बन्दरगाह से ऊपर बड़े शहर की ओर जाने वाली सड़क की बत्तियां जगमगाने लगतीं, मानो अपनी जादुई, चमकती हुई आंखों से उन्हें आमंत्रित कर रही हों। देखकर ऐसा भ्रम होता था कि वे सुख और आनन्द की मायापुरी की ओर संकेत कर रही हैं, जिससे सब अभी तक अनभिज्ञ रहे हैं, किन्तु जहां पहुंचते ही सब भ्रम टूट जाते हैं।

शहर को बन्दरगाह से जोड़ने वाली कुछ ढलुआं, संकरी, टेढ़ी-मेढ़ी सड़कें थीं। शहर का कोई शान्तिप्रिय नागरिक रात के समय उन सड़कों पर चलने का दुस्साहस नहीं कर सकता था। हर मोड़ पर एक धर्मशाला दिखायी देती थी, जिसकी जालीदार खिड़कियां बाहर की ओर खुली रहती थीं। भीतर कमरे में मद्धिम प्रकाश देती हुई एक लालटैन टिमटिमाती रहती। अनेक ऐसी दुकाने आपको वहां मिल जाएंगी, जहां मल्लाह अपने सब कपड़े, यहां तक कि अपनी बनियान भी — आसानी से बेच सकते थे, अथवा अगर आप चाहें, तो किसी भी दुकान से आप किसी भी किस्म की जहाजी पोशाक खरीद सकते थे। वहां पर बियर-घरों, मदिरालयों, और भोजनालयों की संख्या भी कम नहीं थी। सब भाषाओं में बड़ी-बड़ी सुर्खियों में लिखे हुए नामों के बोर्ड उनकी शोभा बढ़ा रहे थे। वेश्यावृत्ति खुले अथवा गैर-कानूनी ढंग से की जाती थी। रात के समय अपने-अपने कोठों पर सस्ते और भोंढ़े ढंग से अपने चेहरे लीप-पोत कर वेश्याएं खड़ी रहतीं और फटती, कर्कश आवाजों से सड़क पर आते-जाते नाविकों का

आह्वान करतीं। यूनानी कहवा घरों में ग्राहक अक्सर ताश या डोमीनो खेला करते थे। तुर्की होटलों में पांच कोपेक देकर रात बिताने की व्यवस्था हो जाती थी—साथ में हुक्का भी पीने के लिए मिलता था। वहां कुछ ऐसे भी भोजनालय थे, जहां प्राच्य देशों के निवासियों की सुख-सुविधा का पूरा ध्यान रखा जाता था—वे एक किस्म के ओरियन्टल होटल थे। वहां ग्राहकों को घोंघे, केकड़े, लिम्पेट और मस्सेदार मछलियां इत्यादि अनेक समुद्री जन्तुओं का गोश्त उपलब्ध हो सकता था। कहीं-कहीं बन्द दरवाजों और खिड़कियों के पीछे अंधेरी कोठरियां और तहखाने थे, जिनका जुए के अड्डों के रूप में उपयोग किया जाता था। अक्सर फारो या बकारा (जुए के कुछ खेल) खेलते-खेलते लड़ाई ठन जाती, पेट में छुरा भोंक दिया जाता और सिर फोड़ दिये जाते। इन तहखानों से सटे कोनों या कोठरियों में हर किस्म का चुराया हुआ सामान—हीरे का कंगन, चांदी का क्रॉस, ल्योनेज मखमल का थान अथवा किसी मल्लाह का ओवर कोट—हाथों हाथ बिक जाता था।

ज्यों-ज्यों रात गहरी होती जाती, कोयले की गर्द से स्याह उन संकीर्ण ऊंची-नीची गलियों का वातावरण गर्म चिपचिपा सा हो जाता। लगता, मानो ये गलियां कोई दुःस्वप्न देखते हुए पसीने से तरबतर हो गयी हैं। ये गलियां गन्दी नालियां थीं, जिनके जरिए वह बड़ा अन्तरराष्ट्रीय शहर, स्वस्थ मांसल शरीरों और निर्मल आत्माओं को दूषित करने वाला अपना सारा कूड़ा-करकट, सड़ांध, और व्यभिचार समुद्र में बहा देता था।

उन गलियों में रहने वाले लोग अपने ही उत्पाद-उपद्रवों में इतना मस्त रहते थे कि कभी शहर जाने का उन्हें अवसर ही नहीं मिल पाता था। उस सुन्दर, स्वच्छ और साफ-सुथरे शहर में अनेक भव्य स्मारक थे। कोलतार की पक्की सड़कों के दोनों ओर गोंद उत्पन्न करने वाले सफेद बबूल के वृक्षों की लम्बी कतारें खड़ी थीं। सारा शहर विद्युत-रोशनियों से जगमगाता रहता था। सड़कों पर रौबदार पुलिस के सिपाही बड़े ठाठ से चहलकदमी किया करते थे। दुकानों के आगे सड़क की ओर मुंह किये हुए शीशे की अलमारियां लगी थीं। सारे शहर में सफाई और नागरिक सुविधाओं का पूरा ध्यान रखा जाता था। अपने गाढ़े पसीने से कमाये हुए चिकने, फटे पुराने रूबल के नोटों को खर्च करने से पूर्व हर व्यक्ति कम-से-कम एक बार गेम्ब्रीनस के दर्शन किये बिना नहीं रहता था। पीढ़ियों से चलती आयी इस परम्परा की कोई अवहेलना नहीं कर पाता था, हालांकि शहर के मध्य में स्थित होने के कारण लोगों को रात के अंधियारे में लुक-छिपकर गेम्ब्रीनस जाना पड़ता था।

यह अलग बात थी कि गेम्ब्रीनस के ग्राहक अक्सर सुप्रसिद्ध बियर-सम्राट के नाम का उच्चारण नहीं कर पाते थे। किन्तु कहने को इतना ही काफी था,

"चलो यार, शसका के यहां हो आएं।" दूसरा व्यक्ति उत्तर देता : "जरूर... वहां नहीं जायेंगे तो और कहां जाएंगे ?" फिर सब मिलकर एक संग चिल्ला उठते : "चलो भाई, चलो।"

यह कोई आश्चर्य की बात नहीं थी कि स्थानीय पादरी और गवर्नर की अपेक्षा बन्दरगाह के नाविकों और मल्लाहों में शसका की इज्जत और ख्याति कहीं ज्यादा थी। शसका का नाम चाहे न याद रहता हो, किन्तु दुनिया का कौन सा ऐसा नगर था—सिडनी, प्लीमाऊथ, न्यूयार्क, लंका, ब्लादीवोस्तोक या कांस्टैंटीनोपल—जहां लोग शसका का लंगूर सा खिलखिलाता चेहरा और वॉयलन कभी-कभार याद न कर लेते हों ? कृष्ण-सागर की खाड़ियों की बात तो छोड़िए, क्योंकि वहां के साहसी मछुओं में मुश्किल से कोई ऐसा व्यक्ति मिलेगा जो शसका का गुणगान न करता हो।

तीन

इन इक्के-दुक्के ग्राहकों के अलावा, जो अकस्मात गेम्ब्रीनस में आकर बैठ जाते थे, रोजमर्रा के आने वाले ग्राहकों में शसका ही ऐसा व्यक्ति था, जो प्रायः सबसे पहले गेम्ब्रीनस पहुंच जाया करता था। दिन के समय लालटैनों में कम गैस भरी जाती थी, इसलिए दोनों कमरों में रुआंसा क्षुब्ध अंधकार छाया रहता। पिछली रात की बियर की बासी गंध हवा में घुलती रहती। जुलाई की तपती गर्मी में गेम्ब्रीनस में ठन्डक और शान्ति रहती, हालांकि बाहर शहर में दिन भर हल्ला-गुल्ला मचता रहता और पत्थर की दीवारें धूप में झुलसती रहतीं।

शसका 'बार' में जाकर मदाम ईवानोवा का अभिनन्दन करता और बियर का पहला गिलास पीने लगता। कभी-कभी मदाम शसका से कहतीं : "शसका, पियानो पर कोई धुन बजाओ।"

"कौन सी धुन बजाऊं, मदाम इवानोवा ?" शसका अनुगृहीत सा होकर पूछता। मदाम के प्रति उसका बर्ताव अत्यन्त विनम्र था।

"कोई ऐसी धुन बजाओ, जो तुम्हारी अपनी हो।"

वह पियानो की बायीं ओर अपने पुराने स्थान पर बैठ गया और अवसाद से भरी अजीब धुनें बजाने लगा। कमरे में उनींदी सी निस्तब्धता छा गयी। कभी-कभी ऊपर से शहर की दबी-घुटी आवाजें या दीवार के पीछे रसोई में तश्तरियों और गिलासों की खनखनाहट कमरे का मौन भंग कर देती थीं। शसका का वॉयलन यहूदियों की मर्मान्तिक पीड़ा में भीगा सा सुबकने लगा। राष्ट्रीय राग-लहरियों के उदास फूलों में उलझी यह पीड़ा हमारी धरती की

तरह ही पुरानी और प्राचीन जान पड़ती थी। शाम की उस धुंधली वेला में शसका के चेहरे में एक अजीब सा परिवर्तन हो जाता। गेम्ब्रीनस के ग्राहकों ने हमेशा उसे हंसते हुए, आंख मारते हुए, नाचते हुए देखा था। किन्तु संध्या की इस उदास घड़ी में उसके चेहरे पर जो भाव-मुद्रा खिंच आती, उससे वे अपरिचित थे। उसके झुके हुए सिर के नीचे उसकी ठुड्डी पर तनाव की रेखाएं खिंच जातीं, भौंहें भारी सी हो जातीं, और आंखें अपलक कठोर सी होकर शून्य को ताकती रहतीं। उसकी छोटी सी कुतिया, स्नोड्राप उसके घुटनों के पास दुबकी रहती थी। अर्सा पहले वह इस बात को समझ गयी थी कि संगीत के समय भौंकना उचित नहीं है। उसे देखकर लगता था मानो वॉयलन के जाहर बहकर आती हुई घनीभूत पीड़ा में सुबकती, अभिशप्त, रागनियां उसे भी विचलित कर देती हैं। मुंह खोलकर वह लम्बी जम्हुआइयां लेती, और अपनी छोटी-सी गुलाबी जुबान को मोड़कर पीछे कर लेती। एक क्षण के लिए उसका नन्हा सा जिस्म और नाजुक काली आंखों वाला चेहरा उद्भ्रान्त सा होकर कांपने लगता।

धीरे-धीरे लोग आने लगते। घड़ी साज या दर्जी की दुकानों में अपना दिन का काम निपटाकर पियानो बजाने वाले सज्जन पधारते। 'बार' की अलमारियों के भीतर गर्म पानी से भरी तश्तरी पर 'सॉसेज' और पनीर की 'सेंडविचेज' सजा दी जातीं। गैस की लालटैनें धीरे-धीरे जला दी जातीं। शसका बियर का एक और गिलास पीकर पियानो बजानेवाले अपने साथी से कहता, "'मई-परेड', एक-दो-तीन," और धमाधम पैरों की चाप की लय पर संगीत आरम्भ हो जाता। शसका भीतर आनेवाले प्रत्येक नवागंतुक का झुककर अभिनंदन करता। प्रत्येक आगंतुक शसका को अपना खास दोस्त मानता था और वह दूसरे ग्राहकों की ओर गर्व से देखकर यह कहता सा प्रतीत होता था कि "देखा—शसका ने झुककर मेरा अभिनन्दन किया है"। शसका वॉयलन बजाते हुए कभी एक आंख टेढ़ी कर लेता, कभी दूसरी, अपने गंजे, ढलुआं सिर को इस तरह सिकोड़ लेता कि उस पर ऊंची-नीची सलवटें पड़ जातीं, हास्यास्पद ढंग से अपने होठ हिलाता और चारों ओर अपनी मुस्कराहट बिखेरता रहता।

दस या ग्यारह बजे तक गेम्ब्रीनस, जिसमें दो सौ से अधिक ग्राहक समा सकते थे, खचाखच भर जाता। लगभग आधे ग्राहक स्त्रियों के संग आते, जो अपने सिर रुमाल से ढके रहतीं। भीड़ और शोर-शराबे की चिन्ता कौन करता? पांव भिच जाते, टोपियां मुस जातीं और कभी धक्का लगने से बियर पतलून पर ढुलक जाती, किन्तु कोई किसी पर नाक-भौं नहीं चढ़ाता। झगड़ा-फसाद वही लोग करते थे, जिन्होंने ज्यादा पी रखी हो या जो जान-बूझकर हाथापाई

करने के लिए उतारू होते। तेल के रंग में लिपी-पुती दीवारों से टपकती हुई नमी तहखाने के धुंधले प्रकाश में चमकती रहती। भीड़ में कीड़ी-दल से बैठे हुए लोगों की घुटी हुई सासें जम कर छत से बारिश की गर्म, भारी बूंदों की तरह टपकने लगती। गेम्ब्रीनस में खूब छककर शराब पी जाती थी। दो-तीन आदमी एक संग बैठ जाते और मेज पर खाली बोतलों का इतना बड़ा जमघट लगा देते कि उनके लिए हरे शीशे के जंगल के आर-पार एक-दूसरे को देखना भी असम्भव हो जाता।

सुरा-पान की चरम-सीमा के समय लोगों के चेहरे लाल हो जाते, आवाजें फटने लगतीं और शरीर पसीने से तर-बतर हो जाते। तम्बाखू का धुआं आंखों को चुभने लगता। कोलाहल इतना अधिक बढ़ जाता कि अपनी बात कहने के लिए मेज पर झुककर चिल्लाना पड़ता था। किन्तु शसका पूर्ववत मंच पर बैठा हुआ, बिना किसी शैथिल्य के, वॉयलन बजाता रहता। दम घोट गर्मी, सिगरटों का धुआं, गैस, बियर और निर्बाध भीड़ के तुमुल, कर्णभेदी कोलाहल के बावजूद शसका के वॉयलन की गूंज इन सब आवाजों के ऊपर सुनी जा सकती थी।

कुछ देर बाद गेम्ब्रीनस के गर्म वातावरण, स्त्रियों की निकटता और बियर ने लोगों को मतवाला सा बना दिया और हर व्यक्ति शसका से अपना प्रिय गीत सुनाने की मांग करने लगा। बुझी, निस्पन्द आंखों वाले दो या तीन व्यक्ति डगमगाते पैरों पर हमेशा शसका के इर्द-गिर्द मडराते रहते और उसकी आस्तीन पकड़ कर मिन्नत करते: "शसका! मैं एक करुण-गीत सुनना चाहता हूं, बड़ी ... (हिचकी) ... मेहरबानी होगी।"

"बस, जरा एक सेकन्ड ठहरो ..." शसका तेजी से बार-बार सिर हिलाता, और चुपचाप बड़े सहज भाव से चांदी के सिक्के अपनी जेब में डालता जाता मानो कोई डॉक्टर अपने मरीजों से फीस के रुपये इकट्ठा कर रहा हो।

'जरा एक सेकन्ड ठहरो ..."

"शसका — तुम बड़े नीच हो। मैं तुम्हें रुपये दे चुका हूं और तुमसे बीसवीं बार 'मेरा जहाज ओडैसा की ओर बह चला' बजाने के लिए कह रहा हूं। तुम सुनते ही नहीं।"

"जरा एक सेकन्ड ठहरो ..."

"शसका — 'कोयल' का गीत बजाओ।"

"'मारुस्या' को मत भूलना — शमका।"

"'सेत्ज सेत्ज' शसका — 'सेत्ज-सेत्ज' बजाओ!"

"जरा एक सेकन्ड ठहरो ...।"

"'ग-डे-रि-या' !" हॉल के दूसरे सिरे से एक शख्स इतने जोर से चिल्लाया कि लगा मानो कोई घोड़ा हिनहिना उठा हो। हंसी के ठहाकों से सारा हॉल गूंज उठा और शसका मुर्गे सा फिर अपनी सीट पर आकर बैठ गया। "जरा एक सेकन्ड।"

शसका को अपने विश्राम की सुध नहीं रही—वह एक के बाद दूसरे फरमायशी गानों को बजाता रहा। लगता था, मानो उसे सब गीत-गाने जुबानी याद हों। चारों ओर से चांदी के सिक्के उसकी जेबों में खिचते चले आते थे। कोई टेबुल ऐसा नहीं था, जहां से उसके लिए एक बियर का गिलास न भेजा गया हो। जब कभी मंच से उतर कर वह 'बार' की ओर जाने लगता, लोगों की भीड़ उस पर टूट पड़ती।

"शसका, मेरे दोस्त—बस मेरे हाथ का एक गिलास पी लो।"

"शसका—यह खास तुम्हारे लिए गिलास रखा है, जब हम तुम्हें बुलाते हैं, तो आते क्यों नहीं? हमारी बला से जहन्नुम में जाओ।"

"सशका, आओ, थोड़ी सी बियर पी जाओ।" घोड़े की आवाज वाला आदमी चिल्लाया।"

गेम्ब्रीनस में बैठने वाली स्त्रियां अन्य स्त्रियों की भांति रंगमंच के कलाकारों पर फिदा थीं। उनके सम्मुख कभी शेखी बघारती थीं, कभी गिड़गिड़ाती थीं और उनसे छेड़छाड़ करने में तो कभी नहीं चूकती थीं। वे अपनी सुरीली आवाज से शसका को पास बुलातीं, खिलखिला कर हंसते हुए आग्रह करतीं: "प्यारे सशका, तुम्हें मेरे हाथ से बियर का गिलास जरूर पीना होगा—देखो मना मत करो। और सुनो, 'कोयल चलो' बजाने की कृपा करोगे?"

शसका मुस्कराता, मुंह बनाता और बार-बार दायें-बायें सिर झुकाता। कभी छाती पर हाथ रखता और कभी होठों को अंगुलियों से दबाकर हवा में ही स्त्रियों को चुम्बन भेंट करता। हर मेज पर जाकर बियर पीता और फिर वापिस अपनी सीट पर लौट आता, जहां बियर से भरा एक और गिलास उसकी प्रतिक्षा कर रहा था। ऐसे मौकों पर शसका वॉयलन पर 'विदा' या उससे मिलती-जुलती कोई धुन छेड़ देता। कभी-कभार श्रोतागणों के मनोविनोद के लिए वह वॉयलन के सुरों से कुत्ते के पिल्ले के रोने की आवाज अथवा सुअर के गुर्राने का स्वर या मसके का कर्कश नाद इत्यादि विचित्र ध्वनियां निकालता था। लोग "वाह-वाह" कर उठते और हंसी-ठहाकों से उसके इन 'करतबों' का स्वागत करते।

गर्मी बढ़ती जाती। छत टपकने लगती। कुछ लोग रो रहे थे और अपनी छाती पीट रहे थे। कुछ ग्राहकों की आंखें लाल-सुर्ख हो गयी थीं और स्त्रियों को लेकर उनमें परस्पर लड़ाई-झगड़ा होने लगा था। एक दूसरे के पुराने कुसूरों

को याद किया जा रहा था और बदला लेने के लिए वे मरने-मारने पर उतारू हो गये थे। कुछ लोगों के होश अभी तक दुरुस्त थे। इनमें से अधिकतर ऐसे आदमी थे जो दूसरों के रुपयों पर मौज उड़ाते हैं। जो कुछ भी हो, ये लोग अपने साथियों को समझा-बुझा कर बीच-बचाव करने की चेष्टा कर रहे थे। उस होटल के वेटर जिस प्रकार हवा में ऊपर बियर के गिलास उठाए, कनस्तरों, पीपों, पैरों और सन्दूकों के बीच रास्ता बनाते थे, वह एक अदभुत चमत्कार से कम न था। मदाम इवानोवा की खामोशी, तटस्थता और निर्जीवता पहले से कहीं अधिक घनी हो जाती। 'बार' में पीछे की ओर बैठी हुई वह तूफान के समय जहाज के कप्तान की भांति वेटरों को आदेश दे रही थी।

सब लोग गाने के लिए उतावले हो उठते। शसका कोई भी धुन बजाने के लिए तैयार हो जाता। बियर की खुमारी, उसके स्वभाव की सहज मृदुलता और उसके संगीत के सस्ते सतही आनन्द ने उसके भीतर एक अजीब सा हल्का-पन भर दिया था। लोग गला फाड़-फाड़ कर शसका के वॉयलन के स्वरों के संग एक ही सुर में, एक दूसरे की ओर शून्य उच्छल आंखों से देखते हुए, फटी खुरदरी आवाजों में गाने लगते :

क्योंकर बिछुड़ना सदा के लिए,
क्योंकर तड़पना सदा के लिए ?
इसी वक्त शादी करालें, जियें
खुशनुमा जिंदगी सदा के लिए !

इतने में ही एक दूसरा प्रतिस्पर्द्धी दल अपनी रुचि का एक नया तराना छेड़ देता। इस दल के लोग पूरा जोर लगा कर गाने लगते ताकि पहले दल के गीत-स्वर उनकी ऊंची आवाजों के नीचे डूब जाएं।

एशिया-माइनर के वे यूनानी जो रूसी बन्दरगाहों में मछली पकड़ने आया करते थे, अक्सर गेम्ब्रीनस भी आते थे। वे लोग शसका से वॉयलन पर प्राच्य संगीत की कोई धुन बजाने का अनुरोध करते। उस धुन में केवल दो या तीन करुण, अवसादपूर्ण सुर होते थे जिसके संग अपना स्वर मिला कर वे घंटों गाते रहते। गाने के दौरान में उनका चेहरा पत्थर सा कठोर और संजीदा हो जाता और आंखों से आग की लपटें निकलने लगतीं। शसका अपने वॉयलन पर इटली के लोक-गीत, यूक्रेन के डुमका, यहूदियों के विवाह-नृत्य इत्यादि अनेक धुनें आसानी से बजा लेता था। एक दिन नीग्रो नाविकों का दल गेम्ब्रीनस में आया। सब लोगों को गाता हुआ देखकर वे भी अपने को न रोक सके। शसका को नीग्रो-गीत की तीव्र चालित लय पकड़ने में देर नहीं लगी। आंख झपकते ही नीग्रो गीत की धुन पियानों के सुरों में ढल कर निकलने लगी। लोगों के आनन्द

की कोई सीमा न रही जब सारा हॉल अफ्रीकी संगीत के अपरिचित, विचित्र और भारी-भरकम स्वरों में गूंजने लगा।

एक दिन संगीत-विद्यालय का प्रोफेसर गेम्ब्रीनस में शसंका का वॉयलन सुनने आया। उसने शसका के मित्र स्थानीय समाचार पत्र के एक संवाददाता के मुंह से शसका की संगीत-प्रवीणता के सम्बंध में बहुत कुछ सुना था। जब शसका को यह पता चला, तो उसने जान-बूझकर अपने वॉयलन से बिल्ली की म्याऊं-म्याऊं, भेड़ों के मिमियाने, और गधे के रेंकने के विचित्र हास्यास्पद स्वर निकालने आरम्भ कर दिये। गेम्ब्रीनस के ग्राहकों के हंसते-हंसते पेट में बल पड़ गये। संगीताचार्य प्रोफेसर ने घृणा से नाक-भौं सिकोड़ ली। "विदूषक है, और कुछ नहीं!"

और वह बियर का गिलास अधूरा ही छोड़कर वहां से चला आया।

चार

अक्सर गेम्ब्रीनस में, संयम की सब सीमाओं को लांघ जानेवाली दुराचरण और व्यभिचार की ऐसी घटनाएं घटित होती थीं, जो गेम्ब्रीनस के अतिरिक्त शायद कहीं और देखने को न मिलें। दीवारों पर लगे चित्रों से मारकुइस घराने की सुन्दर कुलीन राजवधुएं, मद्यपान करते हुए जर्मन शिकारी, भारी-भरकम शरीर वाले कामदेव और मेंढक गेम्ब्रीनस के इन रोमांचकारी दृश्यों को चुपचाप देखते रहते।

कभी-कभी चोरों का कोई दल, बड़ा खजाना लूटने की खुशी में गेम्ब्रीनस आ पहुंचता। दल का हर सदस्य, ऊंचे पेटेंट चमड़े के जूते पहने, सिर पर तिरछी टोपी लगाए अपनी-अपनी प्रेमिका के संग भीतर आता था। चंडूखाने का सुसंस्कृत शिष्टाचार उनके व्यवहार में कूट-कूटकर भरा होता। आंखों से एक अजीब सी लापरवाही और दायित्वहीनता का भाव टपकता रहता। शसका खास उनके मनोरंजन के लिए चोरों के गीत, "मैं मारा गया". "मत रो, मरयूस्या", "वसन्त बीत गया" इत्यादि बजाता। वे लोग नाचने को हेय-दृष्टि से देखते थे किन्तु जो लड़कियां उनके संग आती थीं, वे सुध-बुध खोकर "चरवाहा" की धुन के संग ताल मिलाकर एड़ियां खटखटातीं, चीखती-चिल्लाती हुई नाचा करती थीं। वे सब लड़कियां जवान थीं, सुन्दर थीं और उनमें से कुछ लड़कियों की आयु तो बीस वर्ष से भी कम लगती थी। स्त्री-पुरुष सब खूब छककर पिया करते थे। किन्तु चोरों के नाच-गाने के इस समारोह का अन्त हमेशा रुपये-पैसों के झगड़े में हो जाता और अक्सर वे बिना बिल चुकाये नौ दो ग्यारह हो जाते।

जब कभी मछुए सौभाग्यवश कोई बड़ी मछली पकड़ लेते तो वे भी गेम्ब्रीनस में खुशी मनाने आते थे। मछुओं के दलों में तीस से कम आदमी नहीं रहते थे। शिशिर के अन्तिम दिनों में कुछ ऐसे सुनहरे सप्ताह भी आते थे, जब प्रतिदिन चालीस हजार के लगभग मैकरल अथवा मुलेट मछलियां पकड़ी जाती थीं। उन दिनों सबसे कम शेयर रखने वाले व्यक्ति भी २०० रूबल से अधिक कमा लेते थे। किन्तु यदि शरद ऋतु में 'बेलुगा' मछली बड़ी संख्या में पकड़ ली जाती, तो अचानक भाग्य का सितारा चमक उठता। पर 'बेलुगा' को फंसाना कोई हंसी-खेल नहीं था। मछुओं को तट से बीस-पच्चीस मील की दूरी पर रात के अंधेरे में आंधी-तूफान का सामना करते हुए काम करना पड़ता था। कभी-कभी लहरें नौकाओं के ऊपर से गुजर जाती थीं और कपड़ों, पतवारों पर गिरा हुआ पानी तुरन्त बर्फ बनकर जम जाता था। मौसम खराब होने के कारण उन्हें विवश होकर समुद्र के बीचों-बीच दो-तीन दिन काटने पड़ते थे, जिसके उपरान्त लहरें उन्हें अपने साथ बहाती हुई लगभग सौ मील की दूरी पर अनापा या त्रेबिजोन्द के तट पर फेंक आती थीं। हर साल शरद ऋतु में कम-से-कम बारह नौकाएं समुद्र में विलीन हो जाती थीं। वसन्त के आरम्भ होने पर इन साहसी जीवट मछुओं के जिस्म विदेशी तटों पर पड़े मिलते थे।

जब कभी मछलियां पकड़ने में उन्हें आशातीत सफलता मिल जाती, तो वापिस बन्दरगाह लौटने पर वे भोग-विलास की खोज में चल पड़ते। मजा लूटने की एक अतृप्त तृष्णा भूत की तरह उनके सिर पर सवार हो जाती। दो-तीन दिन में ही कुत्सित, निकृष्टतम और पूर्णतया निष्क्रिय कर देनेवाले विलासी जीवन का आनन्द लूटने में वे हजारों रूबल पानी की तरह बहा देते। वे किसी बियर घर या भोग विलास के स्थान पर धावा बोल देते, भीतर बैठे हुए लोगों को जबरदस्ती बाहर खदेड़ देते और सब खिड़कियां-दरवाजे बन्द कर लेते। चौबीस घन्टों तक दिन रात उस जगह धमा-चौकड़ी मचती। शराब पीकर वे सुध-बुध खो बैठते, जी भर कर प्रेम-क्रीड़ा करते, जोर-जोर से गाने गाते, आइनों और तश्तरियों को तोड़-फोड़ कर चकनाचूर कर देते, स्त्रियों को पीटते या कभी एक दूसरे पर हाथ चला बैठते। नींद आने पर जहां जिसे जगह मिलती वहीं वह लम्बा पड़ जाता—मेज या फर्श पर, पलंग पर औंधे मुंह लेटे हुए, थूक, सिगरेट के बुझे हुए टोटों, शीशे के टूटे हुए टुकड़ों, गिरी हुई शराब और खून के धब्बों के बीच, कोई स्थान ऐसा न होता, जहां पांव पसार कर वे न सो रहे हों। यह कार्य-कलाप कई दिनों तक चलता—कभी एक स्थान छोड़ कर दूसरे स्थान पर चले जाते और वहां अपना प्रोग्राम जारी रखते। जब अपनी कमाई की अन्तिम पाई भी खाने-पीने के इस समारोह पर स्वाह कर देते तो मुंह लटका कर चुपचाप खिन्न मुद्रा में अपनी-अपनी नावों की ओर चल

देते। मद्यपान के बाद उन्हें अपना अंग-प्रत्यंग टूटता सा प्रतीत होता, शरीर में अजीब सी शिथिलता महसूस होती, चेहरों पर लड़ाई-झगड़े के चिन्ह खिचे रहते और सिर दर्द से फट रहा होता। फिर काम का ढर्रा शुरू हो जाता — यद्यपि वह काम एक अभिशाप की तरह उनसे चिपटा था, किन्तु उन्हें वही काम सबसे प्रिय भी लगता था; जितना ही वह कठिन था, उतना ही अधिक वह उन्हें उत्तेजित करता था।

गेम्ब्रीनस जाने से वे कभी न चूकते। दल-बल सहित वे बड़े हॉल में घुस पड़ते थे। उनका लम्बा डीलडौल और भारी फटती सी आवाजें थीं। सरदी की उत्तर-पूर्वी हवा के कारण उनके चेहरे लाल-सुर्ख हो गये थे। उन्होंने जल-सोख वास्केट, चमड़े की पतलूनें और घुटनों तक ढके हुए बैल की खाल के जूते पहन रखे थे। ये उसी किस्म के जूते थे, जिन्हें पहन कर उनके साथी तूफानी रातों में समुद्र की अतल गहराइयों के नीचे चले जाते थे।

वे लोग शसका का आदर करते थे, इसलिए और स्थानों की तरह वे गेम्ब्रीनस में बैठने वाले अजनबी लोगों को बाहर नहीं धकेलते थे। इसके अलावा वे जो मन में आता वही करते। बियर के भारी गिलासों को फर्श पर पटक कर चकनाचूर करने में उन्हें कोई हिचक नहीं होती थी। शसका उन्हीं के गीत वॉयलन पर बजाने लगता, जो समुद्र की तरह अबाध, सहज और संजीदा होते। अपनी मजबूत छाती तान कर वे भारी गले से एक दूसरे के संग सुर से सुर मिलाकर गाने लगते। उनके बीच शसका *आरफियस* सा दीख पड़ता था, जो अपने संगीत के जादू से समुद्री लहरों को अपने वश में कर रहा हो। कभी-कभी मछली पकड़ने की नौका का एक लम्बी दाढ़ी वाला कप्तान गाते-गाते रोने लगता। उसकी आयु लगभग चालीस वर्ष के आस-पास होगी। उसके काल-गलित चेहरे से पाशविक कठोरता टपकती थी। किन्तु उसकी ऊंची आवाज में गीत के करुणा से भीगे शब्दों की मर्मवेदना बार-बार फूट पड़ती थी :

मैंने मछुए का जन्म क्यों पाया,
गरीबी और भाग्य से ठुकराया हुआ ?

और कभी-कभी वे नाचने लगते। उनके चेहरे पत्थर से भावहीन हो जाते और वे एक ही स्थान पर अपने खौफनाक जूते बार-बार पटकने लगते। उनके शरीरों और वस्त्रों से आती हुई मछली की नमकीन गंध सारे हॉल में फैल जाती। शसका के प्रति वे बड़ी उदारता से पेश आते थे और बड़ी देर तक उसे अपने पास बिठाये रखते थे। शसका भी उनके जीवन की कठिनाइयों और खतरों से अपरिचित न था। अक्सर उनके सम्मुख वॉयलन बजाते हुए उसका हृदय आदर जन्य करुणा से भर जाता।

जब कभी व्यापारी जहाजों के अंग्रेज नाविक गेम्ब्रीनस में आते, तो शसका बड़े उत्साह से उनके मनोरंजन के लिए वॉयलन बजाता था। भरा हुआ सीना, चौड़े कंधे, सफेद दांत, गुलाबी गाल और हंसती हुई नीली मुखर आंखों वाले वे सजीले नौजवान अपना दल बना कर हाथ में हाथ डाले गेम्ब्रीनस में आते थे। तने हुए उनके मांसल पुट्ठे मानो कमीज फाड़ कर बाहर आ जाना चाहते हों। उनके सीधे, सुघड़ और सुडौल गले कमीजों के बाहर कमान की तरह उठे रहते थे। उनमें से कुछ नाविक शसका को पहचान जाते क्योंकि वे उस बन्दरगाह में पहले भी आ चुके थे। एक परिचित मुस्कान में उनके होंठ फैल जाते, और सफेद मोतियों से दांत चमकने लगते। रूसी जुबान में वे शसका का अभिनन्दन करते : "ज्दरिस्त"।

बिना किसी फरमायश की प्रतीक्षा किये शसका वॉयलन पर "रूल बर्तानिया" की धुन छेड़ देता। इस समय उनके पांव उस देश की धरती पर थे, जो दासता के अभिशाप से कुचला हुआ था। कदाचित इसीलिए वे और भी अधिक गम्भीरता और गर्व से ब्रिटेन की स्वतंत्रता का तराना गाते थे। जब वे नंगे सिर खड़े होकर गीत की अन्तिम पंक्तियां गाते, तो रोमांच हो आता :

जनता ब्रिटेन की
गुलाम न होगी कभी,
कभी नहीं, कभी नहीं, कभी नहीं!

जब वे ये पंक्तियां गाते, तो उनके पास बैठे हुए उपद्रव-प्रिय लोग भी एक क्षण के लिए शान्त हो जाते और अपनी टोपियां उतार लेते।

एक भारी डील-डौल वाला तगड़ा नाविक, कानों में बालियां पहने, लम्बी झालर सी दाढ़ी हिलाता हुआ शसका के पास आता, उसके सामने खीसे निपोरते हुए बियर के दो गिलास रख देता और उसकी पीठ को धीरे से थपथपाते हुए नफीरी बजाने की प्रार्थना करता। नाविकों के नृत्य के मदमाते, हिचकोले खाते हुए सुरों को सुन कर अंग्रेज नाविक अपनी कुर्सियों से उछल पड़ते और कनस्तरों और पीपों को दीवार से लगा कर नाचने के लिए स्थान खाली कर देते। उल्लासपूर्ण मुस्कानों और हाथ के निशानों से वे दूसरे लोगों को भी नृत्य में भाग लेने के लिए आमंत्रित करते। उनमें कहीं कोई दूरी या दिखावे का भाव नहीं था। जो लोग उठने में सुस्ती करते उनके पास जाकर वे मेज के नीचे रखे पीपों को लात मार कर लुढ़का देते। किन्तु उन्हें ऐसा कुछ अवसरों पर करना पड़ता था। गेम्ब्रीनस में भला ऐसा कौन था जो नाचने का शौकीन न हो? और जब शसका नफीरी बजा रहा हो, तब तो बस सोने में सुहागा ही समझो! सारे हाल में उत्साह की लहर दौड़ जाती — यहां तक कि शसका भी कुर्सी पर

खड़ा होकर नफीरी बजाने लगता ताकि वह नाचने वालों को अच्छी तरह से देख सके।

नाविकों का दल एक गोल दायरे में खड़ा हो जाता, उनमें से दो नाविक दायरे के बीच आते और सब मिल कर तेज लय के साथ ताली बजाने लगते। यह नृत्य नाविकों के समुद्री-जीवन का प्रतीक था: जहाज चलने को तैयार है, बड़ा सुन्दर सुहावना समय है, और सारी व्यवस्था बड़े साफ-सुथरे ढंग से पूरी हो गयी है। नर्तक छाती पर दोनों हाथ आड़े तिरछे ढंग से रख लेते, सिर पीछे की ओर टेढ़ा कर लेते, किन्तु धड़ का भाग निश्चल तना रहता और इस मुद्रा में उनके पांव मदमस्त से होकर तेजी से फर्श पर थपाथप थिरकने लगते। फिर हवा का वेग तेज हो जाता और जहाज धीरे-धीरे डोलने लगता। नाविकों में आनन्द की लहर दौड़ जाती और नृत्य की रूपरेखा उत्तरोत्तर अधिक पेचीदा और जटिल बनने लगती। हवा का एक झोंका आता, डेक पर चलना कठिन हो जाता और नर्तकों के पांव धीरे डोलने लगते। लो, आखिर तूफान आ ही गया! नाविकों के पांव उखड़ने लगते। स्थिति सचमुच चिन्ताजनक सी दीखने लगती। "हाथ ऊपर पतवार संभालो!" नर्तकों के हिलते-डुलते हाथ-पैरों के संकेतों से यह स्पष्ट हो जाता कि हवा के तूफानी थपेड़ों से जहाज डांवाडोल हो उठा है, नाविक मस्तूल के रस्सों पर चढ़ रहे हैं, पालों को लपेट रहे हैं, चादरों को इकट्ठा कर रहे हैं। "ठहरो..." जान बचाने के लिए एक नांव को जहाज से नीचे उतारा जाता। अपने सिर झुकाए, मांसल नंगे गलों को तान कर नर्तक कभी कमर झुकाते, कभी उठाते मानो एड़ी-पसली का जोर लगा कर नौका की डांड चला रहे हों। किन्तु धीरे-धीरे तूफानी हवा का वेग ढीला पड़ने लगता, जहाज का हिलना-डुलना कम हो जाता, आकाश साफ हो जाता और जहाज अपनी पुरानी मन्द गति से बहने लगता। नर्तकों के पांव पूर्ववत नफीरी की ताल पर थिरकने लगते, सिर के नीचे उनका धड़ निश्चल और गतिहीन हो जाता और पुरानी मुद्रा में वे अपनी बाहें आड़े-तिरछे ढंग से अपने कंधों पर डाल लेते।

कभी-कभी शसका को जॉर्जियाई लोगों की फरमायश पर 'लेजगिन्का' की धुन बजानी पड़ती थी। वे लोग शहर के पास रहते थे और शराब बनाते थे। कोई ऐसा नृत्य नहीं था जिसकी धुन से शसका अपरिचित हो। भीड़ में से कोई नर्तक भेड़ की खाल की टोपी और सिरकास्सी कोट पहने हुए बाहर निकल आता और बार-बार सिर पीछे की ओर घुमाता हुआ कनस्तरों के बीच बड़ी फुर्ती से नाचने लगता। उसके मित्र हल्ला मचाते हुए तालियां पीटते और उसे प्रोत्साहित करते। शसका भी हंसते हुए अपनी आवाज उनकी आवाजों के साथ मिलाकर चिल्लाने लगता: "खस्स! खस्स! खस्स!" शसका विभिन्न अवसरों

पर मोल्दाविया का 'ज्होक,' इटली का तारांतेल्ला और जर्मन नाविकों के लिए वॉल्ज बजाया करता था।

कभी-कभी गेम्ब्रीनस लड़ाई का अखाड़ा बन जाता, मारपीट की नौबत आ पहुंचती। वह स्थान अनेक भयंकर लड़ाइयों का रणस्थल रह चुका था, किन्तु गेम्ब्रीनस के पुराने ग्राहक विशेष-रूप से उस लड़ाई का वर्णन बड़े शौक से किया करते थे जो गेम्ब्रीनस के इतिहास में अमर बन चुकी है। यह लड़ाई अंग्रेज नाविकों और रूसी जहाजी बेड़े के उन नाविकों के बीच हुई थी जिन्हें क्रूजर से हटाकर रिजर्व-सेना में रख दिया गया था। घूसे-मुक्के, लौह-पंजे, बियर के गिलास — कोई ऐसी चीज नहीं थी जिसका प्रयोग न किया गया हो; यहां तक कि दोनों दल एक दूसरे पर शराब के पीपे फेंकने में भी नहीं चूके थे। सच कहें तो मानना पड़ेगा कि लड़ाई शुरू करने की जिम्मेदारी रूसियों पर थी और छुरे भी सबसे पहले उन्होंने ही निकाले थे। यद्यपि रूसी नाविकों की संख्या अंग्रेजों से *तीन गुना अधिक थी, फिर भी वे अंग्रेजों को पूरे आध घंटे के* घनघोर युद्ध के बाद ही बाहर खदेड़ सके थे।

अक्सर खून-खराबा होने से पूर्व ही शसका हस्ताक्षेप करके बीच-बचाव कर देता था। वह उन लोग के पास जाकर खड़ा हो जाता, जो आपस में झगड़ रहे होते। कभी कोई फड़कता हुआ मजाक कर देता और कभी अजीब सा मुंह बना लेता। लोग लड़ाई-झगड़ा भूलकर उसे घेर लेते और चारों ओर से बियर के गिलास उसकी ओर बढ़ जाते।

"शसका — एक गिलास तो लो! आओ मेरे संग बैठकर बियर पियो! आ भी जाओ यार!"

शसका की विनोदपूर्ण विनम्र सहृदयता, जो उसकी ढलुआ खोपड़ी के नीचे उल्लासित आंखों से झलकती रहती थी, संभवतः उन सीधे-सादे लोगों की उत्तेजित, उन्मत्त भावनाओं को शान्त कर देती थी। कदाचित उनके हृदय में शसका की कला-प्रवणता के प्रति गहरा आदर हो और उसके प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए ही वे उसकी बात मान जाते हों। शसका के दबदबे का कारण शायद यह भी रहा हो कि गेम्ब्रीनस के प्रायः सब ग्राहक आवश्यकता पड़ने पर शसका से रुपये उधार लिया करते थे और उसके ऋण के बोझ के नीचे हमेशा अपने को दबा हुआ पाते थे। जब उनकी जेबें खाली हो जातीं और पास एक कौड़ी बाकी न बचती — जिस परिस्थिति को बन्दरगाह के निवासियों और नाविकों ने अपनी स्थानीय बोली में 'देखोखतो' का नाम दे रखा था — तब कोई दूसरा चारा न देखकर वे शसका के सामने हाथ फैलाते थे। शसका कभी 'ना' न करता और वे हमेशा उससे छोटी-मोटी रकम लेने में सफल हो जाते।

कहना न होगा कि एक बार रुपये लेकर कोई ऋण चुकाने नहीं आता था — इसलिए नहीं कि वे जानबूझ कर शसका को हानि पहुंचाना चाहते थे, बल्कि उन्हें रुपये लौटना कभी याद ही नहीं रहता था। आखिर ये ही तो वे कर्जदार थे जो आनन्द-उल्लास के क्षण में शसका के गीतों से प्रसन्न होकर उसकी जेबों में दस गुना से अधिक रुपया ठूंस देते थे।

कभी-कभी 'बारमेड' शसका पर तुनक पड़ती, "शसका, रुपये के मामले में तुम्हारी लापरवाही मुझे हैरत में डाल देती है," झिड़कते हुए वह कहती।

किन्तु शसका आश्वस्त स्वर में उत्तर देता : "मदाम इवानोवा ! अपने संग कब्र में तो रुपया ले नहीं जाऊंगा। जो कुछ भी है, वह मेरे और स्नोड्रॉप के लिए काफी है — क्यों स्नोड्राप, ठीक है न ? जरा पास तो आओ ... मेरी लाडो!"

पांच

गेम्ब्रीनस में संगीत-धुनों की लोकप्रियता कालचक्र के समान बदलती रहती थी।

बूर-युद्ध के समय "बूर-मार्च" की धुन का फैशन चला था (शायद उन्हीं दिनों गेम्ब्रीनस में अंग्रेज और रूसी नाविकों के बीच झगड़ा भी हुआ था)। हर शाम शसका को बीसियों बार यह जोशीली धुन बजानी पड़ती थी। गीत के समाप्त होने पर लोग बड़े उत्साह से टोपियां हिलाते और तालियां पीटते थे। जो व्यक्ति इस उत्साह-प्रदर्शन में दिलचस्पी न दिखाकर उदासीन से बैठे रहते उनकी ओर लोग बुरी तरह घूर-घूर कर देखते थे। गेम्ब्रीनस में उदासीनता को एक अशुभ लक्षण माना जाता था।

फिर रूसी-फ्रेंच गठबन्धन के अवसर पर खुशियां मनायी गयीं। गवर्नर ने बड़े खट्टे दिल से गेम्ब्रीनस में 'मार्सिय्ये' बजाने की अनुमति दी थी। मार्सिय्ये भी रोज बजाया जाता, किन्तु 'बूर-मार्च' की तुलना में उसकी लोकप्रियता काफी कम थी। बहुत कम लोग ताली बजाते थे और टोपी तो कोई हिलाता ही न था। एक तो लोगों में इस धुन के प्रति कोई विशेष हार्दिक-लगाव न था, दूसरे गेम्ब्रीनस के ग्राहकों में ऐसे बहुत कम व्यक्ति थे जो इस गठबन्धन के राजनीतिक महत्व को समुचित रूप से समझते हों। ले-दे कर कुछ लोग थे, जो बार-बार मार्सिय्ये बजाने की फरमायश करते थे और वही लोग ताली भी पीटते थे।

एक बार निग्रो नृत्य 'केक-वाक' की धुन काफी लोक-प्रिय हुई थी — किन्तु केवल कुछ अर्से के लिए ही। एक रात एक व्यापारी जो अकस्मात गेम्ब्री-

नस आ पहुंचा था, अपने रैकून फर का ओवरकोट, ऊंचे रबड़ के जूते और लोमड़ी की खाल की बनी टोपी को उतारने का कष्ट किये बिना ही, पीपों के बीच इस धुन के संग नाचने लगा था। किन्तु शीघ्र ही लोग इस नीग्रो-नृत्य को भूल गये।

रूस-जापानी युद्ध के आरम्भ होने पर गेम्ब्रीनस के ग्राहकों में काफी उत्तेजना फैली थी। कनस्तरों पर अखबार चिपकाये जाते थे। हर शाम युद्ध के सम्बंध में बहसें हुआ करती थीं। सीधे-सादे लोग, जो अब तक दीन-दुनिया से बेखबर थे, कुछ ही दिनों में राजनीतिज्ञ और रणनीतिज्ञ बन गये। किन्तु भीतर ही भीतर उन्हें अपनी, या अपने भाई की अथवा जैसा कि प्राय: होता था, अपने मित्र की चिन्ता खाये जाती थी। उन दिनों उन सब लोगों के बीच मित्रता के अदृष्य बंधन और अधिक सुदृढ़ हो गये, जिन्होंने लम्बे अर्से से एक साथ कंधे से कंधा मिला कर काम किया था, जो मौत और अन्य खतरों का सामना करने में एक दूसरे के साथ रहे थे।

शुरू में किसी को भी सन्देह न था कि अन्त में रूस ही विजयी होगा। शसका ने कहीं 'कुरोपटकिन मार्च' का गीत सुना था। लगातार बीस रातों तक वह यही धुन किंचित सफलता के संग बजाता रहा। किन्तु एक रात जब बालाक्लावा के मछुओं ने गेम्ब्रीनस में "नमकीन यूनानी" अथवा "पिनडोजिज" के गीत गाने शुरू किये, तो लोग 'कुरोपटकिन मार्च' की धुन बिलकुल भूल गये।

"प्यारी मां, वे मुझे तुमसे छीन कर ले गये
और भेज दिया मुझे दूर — बहुत दूर
कल तक तेरे हाथ मुझ पर थे
आज हथियार है मेरे हाथों में!"

उस रात के बाद गेम्ब्रीनस में कभी कोई और धुन नहीं बजायी गयी। हर शाम सब लोग बार-बार इन गीतों की फरमायश किया करते थे: "शसका, बालाक्लावा का वही उदास गीत बजाओ, हां, वही सैनिकों का गीत।"

वे गाते हुए रोने लगते थे, पहले की अपेक्षा दुगनी मात्रा में शराब पीते थे — उन दिनों रूस में हर जगह यही हो रहा था। हर रात कोई न कोई अलविदा कहने आता था। गेम्ब्रीनस में आते ही वह फर्श पर मुर्गे की तरह फुदकने लगता, टोपी उतार कर नीचे फेंक देता, हाथ उठा-उठा कर चिल्लाता कि वह अकेला ही जापानियों के छक्के छुड़ा देगा और अन्त में वही हृदय-भेदी गीत गाता हुआ रोने लगता।

एक दिन शसका रोज की अपेक्षा गेम्ब्रीनस में काफी पहले पहुंच गया।

उसके गिलास में बियर उड़ेलते हुए 'बार-मेड' ने वही बात दुहराई जो वह हर रोज कहती थी : "शसका, कोई अपनी पसंद की चीज बजाओ।"

अचानक शसका के होंठ सिकुड़ गये। बियर का गिलास उसके हाथ में कांपने लगा।

"क्या तुम जानती हो, मदाम इवानोवा," उसके स्वर में गहरा विस्मय था। "मुझे सेना में भर्ती होने के लिए बुलाया गया है—लड़ाई में जाने के लिए ?"

मदाम ने, अपने दोनों हाथ एक दूसरे में उलझा कर मसल दिये।

"कैसी बात कर रहे हो शसका ! मजाक तो नहीं कर रहे ?"

"नहीं," शसका ने हल्की निराशा से सिर हिला दिया। "यह सच है।"

"किन्तु तुम्हारी उम्र के लोगों को भर्ती थोड़े ही किया जाता है ? अब तुम्हारी आयु कितनी होगी ?"

यह एक ऐसा प्रश्न था जिसे अब तक किसी ने शसका से नहीं पूछा था। सब लोग यही सोचते थे कि शसका उतना ही पुरातन है जितनी 'बियर-घर' की दीवारें, उन दीवारों पर बने हुए मार्कुइस घरानों की राजवधुओं, यूक्रेन-निवासियों और मेंढकों के चित्र, उतना ही प्राचीन है, जितनी बियर-सम्राट की वह भव्य मूर्ति जो प्रवेश द्वार पर खड़ी थी।

"छियालिस," शसका ने सोचते हुए कहा। "या शायद उन्चास। मैं अनाथ हूं।" उसने उदास होकर कहा।

"यह बात तुम अधिकारियों के पास जाकर क्यों नहीं कहते ?"

"मैं गया था, मदाम इवानोवा।"

"फिर क्या हुआ ?"

"उन्होंने कहा, 'जाहिल यहूदी—बकवास मत करो, वरना जेलखाने की हवा खाओगे।' इसके आगे मैं क्या कहता ?"

शाम तक यह बात गेम्ब्रीनस में बिजली की तरह फैल गयी। कोई ऐसा व्यक्ति नहीं था, जिसने अपनी सहानुभूति प्रकट करने के लिए उसे बियर न पिलायी हो। शसका नशे में अधमरा सा हो गया। पहले की तरह उसने आंखें टेढ़ी कीं, मुंह बनाया, किन्तु उसकी विनोदपूर्ण आंखें उदास और आतंकग्रस्त सी दिखायी देती थीं। बॉयलर बनाने वाले एक ताकतवर तगड़े मजदूर ने अचानक खड़े होकर कहा कि शसका के स्थान पर वह युद्ध में जाने के लिए प्रस्तुत है। यह एक फिजूल सी बात थी। किन्तु शसका की आंखों में आंसू भर आये। उसने उस मजदूर को गले से लगा लिया और उसी समय, उसी स्थान पर अपना वॉयलन उसे भेंट कर दिया।

स्नोड्राप को उसने 'बार-मेड' के हवाले कर दिया।

"मदाम इवानोवा," उसने कहा, "मेरी इस छोटी सी कुतिया को संभाल कर रखना। हो सकता है मैं लौट कर वापिस न आ सकूं, तब यह कुतिया ही आपके पास मेरी निशानी रहेगी। स्नोड्राप—मेरी लाड़ो! देखो जरा, कैसे चटखारे ले-लेकर चॉप खा रही है! एक और बात है मदाम इवानोवा, जो मैं आपसे कहना चाहता हूं। मालिक के नाम मेरे कुछ रुपये हैं, कृपया वे रुपये उससे लेकर उन लोगों के पास भेज देना, जिनके पते मैं आपके पास छोड़ जाऊंगा। मेरा एक चचेरा भाई है, जो जोमोल में परिवार सहित रहता है। इसके अलावा मेरे भतीजे की विधवा जर्मेरिन्का में रहती है। मैं प्रति मास उन्हें रुपये भेजता रहता हूं। दर असल हम यहूदी अपने रिश्तेदारों को बहुत चाहते हैं। मैं अनाथ हूं और अकेला हूं। अलविदा, मदाम इवानोवा!"

"अलविदा, शसका! क्या यह उचित नहीं होगा कि हम एक दूसरे का चुम्बन लेकर विदा हों? आखिर हम दोनों इतने वर्षों से एक साथ रहे हैं। शसका, बुरा न मानो तो मैं तुम्हें तुम्हारी कुशल-क्षेम के लिए 'क्रॉस' पहनाना चाहूंगी।"

शसका की आंखें गहरे विषाद में डूबी थीं, फिर भी वह मजाक करने का लोभ संवरण न कर सका:

"मदाम इवानोवा—कहीं रूसी क्रॉस मुझे सीधा मृत्यु-लोक तो नहीं पहुंचा देगा?"

छः

गेम्ब्रीनस का वातावरण अब उखड़ा-उखड़ा, वीरान सा लगता था, मानो बिना शसका और उसकी वॉयलन के वह अनाथ सा हो गया हो। गेम्ब्रीनस के स्वामी ने ग्राहकों के मनोरंजन के लिए मैंडोलिन बजाने वाले चार घुमक्कड़ संगीतज्ञों को शसका के स्थान पर नियुक्त किया। उस संगीत-मंडली के एक सदस्य की वेश-भूषा तो संगीत-रंगमंच के किसी हास्य-अभिनेता से मिलती-जुलती थी—बड़ी-बड़ी लाल मूंछें, कृत्रिम नाक, धारीदार पतलून और कानों से ऊपर निकले हुए कमीज के कॉलर। वह अश्लील संकेतों के साथ हास्य-गीत गाया करता था। यह संगीत-मंडली अधिक दिनों तक नहीं चल सकी। गेम्ब्रीनस के ग्राहक अक्सर उनकी हंसी उड़ाया करते थे या कभी-कभी 'सॉसेज' के टुकड़े उन पर उछाला करते थे। एक बार हास्य-अभिनेता के मुंह से शसका के प्रति तिरस्कार पूर्ण शब्द सुनकर तेन्द्रोवो के मछुओं ने उसकी खूब खबर ली थी।

किन्तु समुद्र और बन्दरगाह के वे नवयुवक, जो युद्ध में मृत्यु या किसी

अन्य दुःखदायी घटना के ग्रास बनने से बच गये थे, अब भी अभ्यासवश गेम्ब्रीनस में आते थे। शुरू-शुरू में तो हर शाम शसका को याद किया जाता था।

"काश, शसका हमारे बीच मौजूद होता। उसके बिना तो यहां बहुत अकेलापन महसूस होता है।"

"न जाने बेचारा कहां होगा।"

"*दूर ... दूर मंचूरिया के मैदानों में*" अचानक किसी के मुंह से उस गीत के शब्द फूट पड़ते, जो उन दिनों अत्यन्त लोकप्रिय हो गये था। किन्तु गाने वाला संकुचाकर बीच में ही रुक जाता। कोई अन्य व्यक्ति अचानक कह उठता:

"तीन प्रकार के घाव होते हैं — बिधा हुआ, छिदा हुआ और कटा हुआ। इनके अलावा ऐसे घाव भी होते हैं, जो हमेशा के लिये फट जाते हैं और निरन्तर रिस-रिसकर बहते हैं।"

आये हम जीत लड़ाई, मिलन बेला आई,
हाय! बिधना की देखो खोटाई
बांह बिन भेंटा जाई ... !

"यह रिरियाना बन्द करो। मदाम इवानोवा, शसका की कोई खबर मिली? क्या उसने कोई पत्र या पोस्टकार्ड भेजा है?"

मदाम इवानोवा को हर रात अखबार पढ़ने की आदत पड़ गयी थी। स्नोड्राप आराम से उनकी गोद में लेटी हुई खर्राटे भरती और मदाम सिर पीछे किये, होठ हिलाती हुई कुछ फासले पर अखबार टिकाए पढ़ती रहतीं। मदाम को इस अवस्था में देखकर कौन कह सकता था कि एक समय वह डेक पर खड़े कप्तान की भांति हुकम चलाया करती थी — अब तो उसके नाविक और मल्लाह (गेम्ब्रीनस के सेवक-सेविकाएं) भी 'बियर घर' में अलसाये, सोये से इधर से उधर निरुद्देश्य चक्कर काटा करते थे।

जब कभी कोई शसका के हाल-चाल के सम्बंध में उससे प्रश्न पूछता, तो वह धीरे से सिर हिलाकर कहते:

"मुझे कुछ मालूम नहीं। उसका कोई पत्र मेरे पास नहीं आया और न अखबारों से ही कुछ पता चलता है।"

वह धीरे से अपनी ऐनक उतारती और अखबार के संग उसे पांव के पास लेटी हुई स्नोड्राप के निकट रख देती। फिर वह धीमे-धीमे रोने लगती।

कभी-कभी वह उस छोटी सी कुतिया पर झुक कर कुंठित, करुण स्वर में अपने आप बुड़बुड़ाने लगती: "स्नोड्राप, मेरी लाडो — कैसी तबियत है तेरी? हमारा शसका कहां गया — जानती नहीं अपने मालिक को? बता, इस समय वह कहां होगा?"

स्नोड्राप अपनी नन्ही सी नाजुक नाक ऊपर उठाती, काली नम आंखों को झपकाती और 'बारमेड' के संग मिलकर धीरे-धीरे चू-चूं करने लगती।

किन्तु समय की राख तले सब पीड़ा दब जाती है। सारंगी बजाने वाले गये, तो 'बलालायका' बजाने वाले आ पहुंचे और उनके कदमों पर रूसी-यूक्रेनी संगीत-मंडली ने, जिसमें लड़कियां भी शामिल थीं, अपनी उपस्थिति से गेम्ब्रीनस को सुशोभित किया। अन्त में ल्योशका आया और आते ही उसने गेम्ब्रीनस में अपनी धाक जमा ली। वह एकार्डियन (एक किस्म का हारमोनियम) बजाया करता था। पेशे से वह चोर था, किन्तु विवाह हो जाने के बाद उसने एक नये नैतिक-जीवन का अध्याय आरम्भ करने का निश्चय कर लिया था। विभिन्न भोजनालयों में रहने के कारण लोग उससे परिचित थे, इसलिए गेम्ब्रीनस के ग्राहकों ने उसके नाम पर कोई विशेष आपत्ति नहीं उठायी। वैसे भी मन्दी के कारण आपत्ति करने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता था।

दिन महीनों में उलझते गये और इस तरह एक साल गुजर गया। मदाम इवानोवा को छोड़ कर अब गेम्ब्रीनस में शसका का कोई नामलेवा नहीं था और मदाम भी उसके नाम पर अब आंसू नहीं बहाती थी। दूसरा साल भी बीत गया। शसका की सफेद छोटी कुतिया भी शायद अब उसे भूल चुकी थी।

किन्तु इस दौरान में शसका का भय निर्मूल साबित हो चुका था। रूसी क्रास ने उसे मृत्युलोक नहीं भेजा। वह अब तक तीन बड़ी लड़ाइयों में भाग ले चुका था—और एक बार भी घायल नहीं हुआ था।

अपनी बटेलियन के बैंड में शसका बांसुरी बजाया करता था। एक बार तो इस बटेलियन के हरावल दस्तों में शामिल होकर वह युद्ध के मोर्चे पर भी गया था। वफांग्कू के स्थान पर उसे बन्दी बना लिया गया। युद्ध समाप्त होने पर एक जर्मन जहाज ने शसका को उसी बन्दरगाह पर छोड़ दिया जहां उसके साथी काम करते थे और मौज उड़ाते थे।

उसके आगमन का समाचार बिजली की तरह सब बन्दरगाहों, घाटों और जहाज की गोदियों में फैल गया। उस रात गेम्ब्रीनस में तिल रखने की जगह न थी। बहुत से लोगों को बैठने की सीट नहीं मिली और वे खड़े रहे। बियर के गिलास लोगों के सिरों पर से ग्राहकों के हाथों में पहुंचाये जाते थे। गेम्ब्रीनस में इतनी अधिक बिक्री शायद ही पहले कभी हुई हो, हालांकि बहुत से लोग बिना बिल चुकाए चलते बने थे। बॉयलर बनाने वाला मजदूर शसका के वॉयलन को अपनी पत्नी की शाल में बड़ी सावधानी से लपेट कर लाया था। बियर के कुछ गिलासों के एवज में उसने वहीं, उसी समय वह शाल बेच दी। जो व्यक्ति शसका के संग पियानो बजाता था, उसे भी शहर के किसी कोने-किनारे से खोज कर मंच पर बुला लिया गया। ल्योशका का आहत अभिमान

विद्रोह कर उठा। "कन्ट्रेक्ट के अनुसार मुझे पूरे दिन के पैसे मिले हैं..." उसने कहा और अपनी जिद्द पर अड़ गया। किन्तु वहां उसकी कौन सुनता था ? बिना किसी हील-हुज्जत के उसे गेम्ब्रीनस के बाहर खदेड़ दिया गया। यदि शसका बीच में हस्ताक्षेप न करता तो उसकी खूब मरम्मत की जाती।

जिस उत्साह और उमंग से शसका का स्वागत किया गया, शायद ही ऐसा स्वागत रूसी-जापानी युद्ध के किसी अन्य शूरवीर योद्धा को कहीं मिला हो। भीड़ में लोगों ने अपने कड़े मजबूत हाथों से शसका को पकड़ लिया और हर्षोन्मादित होकर उसे फर्श से उठाकर जोर-जोर से ऊपर उछालने लगे। कई बार तो बेचारा शसका छत से टकराते-टकराते बचा ! धीरे-धीरे कोलाहल इतना अधिक बढ़ गया कि गेम्ब्रीनस में गैस से जलने वाली लालटेनों की बत्तियां ही बुझ गयीं। मुहल्ले में गश्त लगाने वाला पुलिस का सिपाही अनेक बार भीतर आकर कह गया था कि वे लोग इतने जोर से न चिल्लाएं क्योंकि सारी आवाजें बाहर सड़क तक पहुंच रही हैं।

उस रात शसका ने गेम्ब्रीनस के लोकप्रिय गीतों और नृत्यों की सब धुनों को बजाया। उसने कुछ जापानी गीतों की धुनों को भी बजाया जो उसने अपने बन्दी-काल में सीखी थीं, किन्तु श्रोतागणों ने उन्हें पसन्द नहीं किया। शसका की वापसी से मदाम इवानोवा को तो मानो एक नया जीवन मिल गया। उल्लासित मुद्रा में पूर्ववत जहाज के कप्तान की भांति वह सिर उठाये खड़ी थी। शसका की गोद में बैठी हुई 'स्नोड्राप' खुशी में बार-बार भौंक उठती थी।

कभी-कभी जब शसका वायलन बजाता हुआ रुक जाता, तब किसी सीधे-सादे मछुए के मन में शसका की चमत्कारपूर्ण वापसी का असली अर्थ और महत्व सहसा बिजली की तरह चमक जाता। "अरे सच — यह शसका ही तो है !" सहज, उल्लासपूर्ण विस्मय से भर कर वह अचानक चिल्ला उठता। सब लोग हंसी के ठहाकों में लोट-पोट हो जाते, मजाक में गालियां देते और कसमें खाते। एक बार फिर शसका के लिए छीना-झपटी शुरू हो जाती, उसे ऊपर छत की ओर उछाला जाता, कोलाहल बढ़ता जाता, शराब के दौर फिर चलने लगते, गिलासों को खनखनाया जाता और एक दूसरे के कपड़ों पर शराब छलका दी जाती।

शसका का चहरा-मोहरा पहले जैसा ही लगता था — बुढ़ापे का कोई चिन्ह कहीं लक्षित न होता था। 'बियर घर' के संरक्षक गेम्ब्रीनस की मूर्ति की भांति उसकी शक्ल-सूरत में भी समय और दुर्भाग्य किसी प्रकार का अन्तर लाने में असफल रहे थे। किन्तु मदाम इवानोवा की नारी-सुलभ, संवेदनशील सहृदयता से शसका की आंखों में सहमा-दबा भय और पीड़ा छिपी न रह सकी। भय और पीड़ा का यही भाव शसका के जाने से पूर्व उसने उसकी आंखों में देखा था —

अन्तर केवल इतना था कि आंखों का यह भाव अब और भी अधिक गहरा और अर्थपूर्ण दिखायी देता था। आज भी शसका पहले की तरह लोगों के विनोद के लिए विचित्र प्रकार की मुख-मुद्राएं बनाता, अपने माथे पर सलवटें डालता, किन्तु मदाम इवानोवा जानती थी कि वह केवल बन रहा है।

सात

फिर सब कुछ पूर्ववत स्वाभाविक सहज गति में बहने लगा, मानो कभी युद्ध हुआ ही न था। यह असम्भव सा लगता था कि शसका कभी नागासाकी में युद्धबन्दी भी रह चुका हो। पहले की तरह बुनेगा या भूरे रंग की मुलेट मछली पकड़ने की खुशी में भीमकाय जूते पहने हुए मछुए गेम्ब्रीनस आते थे, चोरों के झुंड भी पहले की तरह आते थे, उनके दल की लड़कियां गेम्ब्रीनस में नाचती थीं और संसार की सब बन्दरगाहों के गीतों को, जो नाविक अपने संग गेम्ब्रीनस में लाते थे, शसका पहले की तरह अपनी वॉयलन पर बजाया करता था।

किन्तु इसके बावजूद लगता था कि अशान्ति और गड़बड़ के बादल चारों ओर से घिरते चले आ रहे हैं। एक शाम तो कीड़ी दल के समान लोगों के झुंड सड़कों पर इकट्ठा हो गये। सारे शहर में खलबली और उथल-पुथल सी मच गयी, मानो किसी ने खतरे की घंटी बजा दी हो। चारों ओर छोटी-छोटी सफेद पर्चियां बांटी जा रही थीं। लोगों की जुबानों पर केवल एक शब्द सुनायी देता था : "स्वतंत्रता", जिसे उस शाम देश की समूची जनता बार-बार दुहरा रही थी।

फिर आनन्द और उल्लास के सुनहरे दिन आये, जिनकी उजली-चमकीली आभा से गेम्ब्रीनस का अंधेरा तहखाना भी आलोकित हो उठा। अब गेम्ब्रीनस छात्रों, मजदूरों और सुन्दर युवतियों से भरा हुआ दिखलायी देने लगा। जिन कनस्तरों ने अपने समय में इतना सब कुछ देखा था, अब उन पर चमकती हुई आंखों वाले नवयुवक खड़े होकर भाषण देते थे। उनकी बहुत सी बातें पल्ले नहीं पड़ती थीं, किन्तु उनके शब्दों से छलकती हुई उज्ज्वल आशा और प्रेम की प्रतिध्वनि उत्सुक श्रोतागणों के दिलों में देर तक गूंजती रहती थी।

"शसका—मारसिय्ये बजाओ, मारसिय्ये..." 'मारसिय्ये' का यह वातावरण उससे बिलकुल भिन्न था, जब रूसी-फ्रांसीसी गठबंधन के उपलक्ष्य में होनेवाले आनन्द-समारोह के समय गवर्नर ने अनमने भाव से गेम्ब्रीनस में 'मारसिय्ये' बजाने की अनुमति दी थी। अब तो अनगिनत जलूस सड़कों पर दिन रात निकला करते थे, जिनमें लोग लाल झंडे फहराते हुए, गाने गाते हुए गली-गली घूमा करते थे। औरतें लाल फूल और लाल रिबन लगा कर घरों से बाहर

निकला करती थीं। अजनबी और पूर्णतया अपरिचित लोग भी मुस्कराते हुए एक दूसरे से हाथ मिलाते थे।

किन्तु एक दिन उत्साह और उल्लास की यह लहर अचानक किसी अज्ञात दिशा में विलीन हो गयी, मानो सागर-तट पर बच्चों के पदचिन्हों को किसी ने अचानक मिटा दिया हो। एक दिन पुलिस का असिस्टेंट कमिश्नर पैर पटकता हुआ गेम्ब्रीनस में आ धमका। नाटा कद, थलथल करता भारी मोटा शरीर, आंखों से बाहर निकलती हुई पुतलियां — देखने में वह जरूरत से ज्यादा पका हुआ टिमाटर सा लगता था।

"क्यों? इस जगह का मालिक कौन है?" फटे हुए बांस की सी उसकी आवाज चीख उठी। "उसे जरा मेरे पास बुलाओ।"

उसकी आंखें शसका पर जम गयीं। वह अपना वॉयलन लिए मंच पर खड़ा था।

"क्या तुम इस जगह के मालिक हो? चुप रहो। क्या? अच्छा, तो आप हैं वह जनाब, जो तराने बजाते हैं। यहां तराना नहीं बज सकता — समझे?"

"जनाब, आगे से यहां कोई तराना नहीं बजेगा।" शसका ने शान्त-भाव से उत्तर दिया।

असिस्टेंट कमिश्नर का मुंह गुस्से से लाल हो गया। शसका की नाक के नीचे अपनी बड़ी अंगुली जोर-जोर से नचाता हुआ वह गरजने लगा:

"बिलकुल नहीं बजेगा।"

"हां जनाब, बिलकुल नहीं बजेगा।"

"क्रान्ति करने चले हैं! अभी सब पता चल जाएगा कि क्रान्ति कैसे की जाती है।"

धमधमाता हुआ वह बाहर चला गया। गेम्ब्रीनस के हाल में निराशा छा गयी।

सारा शहर अंधेरे में डूबता गया। अफवाहें अपने भयावह, मनहूस डैने फैला कर हवा में उड़ने लगीं। लोग सतर्क होकर बात करते, मानो कोई हल्का सा संकेत भी उन्हें किसी जाल में फंसा देगा। वे अपने विचारों, यहां तक कि अपनी छायाओं से भी डरने लगे। पहली बार उन्हें महसूस हुआ कि उनके पांव किसी गहरी दुर्गन्धमयी, काली दलदल में फंसे हैं — समुद्र के किनारे पर जमी हुई दलदल — जिसमें विगत अनेक वर्षों से वह शहर अपनी विषैली मल-विष्ठा निकाल-निकाल कर इकट्ठा करता रहा है। सारे शहर में बढ़ी-चढ़ी दुकानों की खिड़कियों के सुन्दर शीशों पर तख्ते जड़ दिये गये, भव्य स्मारकों के सामने पहरेदार बिठा दिये गये और आलीशान, समृद्धशाली भवनों के आंगनों में तोपें लगा दी गयीं ताकि खतरे के समय उनकी रक्षा की जा सके। दूसरी ओर शहर

के बाहर संकरी दुर्गन्धमयी झोपड़ियों में, उन घरों में जिनकी छतों से पानी टपकता था, भगवान के प्रिय-जन रहा करते थे। बाइबल के क्रूर, निर्मम ईश्वर द्वारा परित्यक्त, उपेक्षित ये आतंकग्रस्त लोग डर के मारे दिन रात रोते हुए प्रार्थना किया करते थे, जैसे अब भी उनके मन में सुख की आशा बची है, मानो अभी उनके कष्टों का प्याला पूरा लबालब भरा नहीं है।

शहर के नीचे समुद्र-तट के पास अंधेरी, चिपचिपाती नालियों सी तंग, संकीर्ण गलियों में खुफिया तरीके से काम किया जा रहा था। उस रात मदिरालयों, चाय-घरों और धर्मशालाओं के दरवाजे खुले रहे।

दूसरे दिन सुबह यहूदियों का कत्लेआम शुरू हो गया। जो लोग कुछ दिन पहले तक भाईचारे की भावना पर आधारित भावी-समाज के आलोक और उल्लास से उत्प्रेरित होकर सड़कों पर स्वतंत्रता के झंडे फहराते, गाते हुए घूमा करते थे, वही लोग अब खून के प्यासे हो गये थे। इस आकस्मिक परिवर्तन का कारण यह नहीं था कि किसी ने उन्हें खून बहाने का आदेश दिया था, या उनके दिलों में यहूदियों के प्रति कोई घृणा की भावना थी या इसमें उनका कोई निजी स्वार्थ था। किन्तु हर आदमी के भीतर एक धूर्त, अधम शैतान छिपा रहता है, जो अवसर पाते ही सिर उठा कर फुसफुसाने लगता है :

"जाओ — अब आदमी के खून से अपने हाथ रंगने की तुम्हें खुली छूट है, हत्या करके अपनी निषिद्ध तृष्णा को तृप्त करो, बलात्कार करने का आनन्द भोगो, दूसरे पर अपनी शक्ति आजमाने का यही अवसर है, इसे हाथ से मत जाने दो।"

कत्लेआम के दौरान में शसका का बाल भी बांका न हुआ, हालांकि वह दिन भर सड़कों पर घूमता रहा था और उसके चेहरे को देख कर साफ पता चल जाता था कि वह यहूदी है। उसकी निर्भीक आत्मा के अटूट और अडिग साहस ने उसे प्रत्येक भय के प्रति अभय बना दिया था — दुनिया भर की समस्त बन्दूकें चाहे किसी व्यक्ति को न बचा पाएं, किन्तु अभयता का यह प्रसाद एक कमजोर व्यक्ति को भी सुरक्षित रखने में समर्थ होता है। एक दिन सड़क पर एक लम्बी भीड़ आंधी की तरह बढ़ती चली आ रही थी। शसका रास्ते से हट कर एक मकान की दीवार से सट कर खड़ा हो गया। किन्तु भीड़ में एक राज मजदूर ने उसे देख लिया। वह लाल कमीज पहने था और गले में एक सफेद रुमाल लटका रखा था। अपनी खेनी हवा में हिलाता हुआ वह चिल्लाया : "देखो, साला यहूदी सामने खड़ा है! जरा देखें तो सही इसके खून का रंग कैसा है?"

किन्तु भीड़ में से ही किसी ने उसका हाथ पकड़ लिया।

"तेरा दिमाग तो खराब नहीं हो गया — देखता नहीं, यह शसका है।"

राज मजदूर ठिठक गया। उन्मत्त विक्षिप्तावस्था के उस अंधे प्रमाद क्षण में वह अपने पिता, अपनी बहिन, पादरी अथवा ऑर्थोडोक्स चर्च के भगवान तक की हत्या करने में न झिझकता, किन्तु शायद इसी कारण वह एक बच्चे की तरह कोई भी आज्ञा मानने को प्रस्तुत हो जाता, यदि वह आज्ञा अधिकारपूर्ण स्वर में दी जाती।

वह पागल की तरह दांत निपोरने लगा, फिर जोर से एक तरफ थूक कर उसने कमीज की आस्तीन से अपना मुंह साफ किया। किन्तु अचानक उसकी आंखें एक सफेद कुतिया पर पड़ गयीं जो शसका से चिपटी हुई कांप रही थी। उसने बिजली की तेजी से नीचे झुक कर उस कुतिया को पिछली दो टांगों से पकड़ कर ऊपर उठाया और उसके सिर को सड़क के पत्थरों पर दे मारा। उसके बाद वह वहां नहीं ठहरा और भागने लगा। शसका की आंखें चुपचाप उस दिशा की ओर देखती रहीं, जहां वह भाग कर चला गया था। वह आदमी नंगे सिर भागे चला जा रहा था, उसका शरीर नीचे की ओर झुका हुआ था और उसने अपनी दोनों बाहें हवा में फैला रखी थीं। उसका मुंह खुला हुआ था और उसकी सफेद फटती सी आंखों में अजीब सा पागलपन भरा हुआ था।

स्नोड्राप के भेजे के टुकड़े शसका के जूतों पर लिथड़ आये थे। उसने अपने रूमाल से उन्हें साफ कर दिया।

आठ

उसके बाद जो दिन आए, वे एक लकवा-ग्रस्त रोगी की नींद की तरह अजीब थे। शाम हो जाने पर भी शहर का कोई मकान ऐसा न था, जिसकी खिड़की से रोशनी आती हो। किन्तु उन रेस्तराओं के साइनबोर्ड, जहां गाना-बजाना होता था, और मदिरालयों की खिड़कियां बिजलियों से जगमगाती रहती थीं। पिछले दिनों की लूटमार और अनियंत्रित अराजकता से अभी मदमत्त विजेताओं की भूख नहीं मिटी थी। उनके दिलों में अपनी शक्ति आजमाने के अरमान अभी बाकी थे। अनेक उच्छृंखल स्वभाव वाले उपद्रव-प्रिय व्यक्ति मंचूरिया की फर की बनी टोपियां पहने और अपनी वास्कटों के बटन-होल में सेंट जार्ज के रिबन लगाए रेस्तरांओं के चक्कर लगाते फिरते थे और हर रेस्तरां में जाकर जिद्द करते थे कि 'जनता का तराना' बजना चाहिये और लोगों को वे कुर्सियों से उठाकर खड़ा रहने के लिए बाध्य करते थे। ये लोग अक्सर घरों में घुस जाते थे, बिस्तरों और अलमारियों के खानों और दराजों को खोलते-टटोलते थे, वोदका, रुपयों और तराने की मांग करते थे और शराब की दुर्गन्ध से सारी हवा को दूषित करके वापिस लौट जाते थे।

उनमें से दस आदमियों का दल एक बार गेम्ब्रीनस आ पहुंचा। दो मेजों के आमने-सामने वे लोग बैठ गये। उनकी बातचीत और चाल-ढाल से दर्प और उद्दंडता का भाव झलकता था। वेटरों के प्रति उनका व्यवहार अनौचित्यपूर्ण था। अपने पास बैठे हुए लोगों से अपरिचित होने के बावजूद वे उनके कंधों पर थूक देते थे, दूसरे लोगों की सीटों पर अपने पांव फैला देते थे, या बियर को बासी कहकर फर्श पर लुढ़का देते थे। वे उधम-उत्पात मचाते रहे किन्तु किसी ने उनसे "हां, ना" नहीं कही। सब जानते थे कि वे पुलिस के भेदिये हैं, इसलिए उनके दिलों में इन आदमियों के प्रति न केवल छिपा दबा भय था, बल्कि एक अदम्य, उत्सुकता का अस्वस्थ भाव भी था — कुछ ऐसा ही कौतूहल का भाव, जो सर्व साधारण लोगों में जल्लादों के प्रति भी देखा जाता है। मोतका उस दल का नेता था। उसकी नाक टूटी हुई थी, इसलिए वह नकिया कर बोलता था और लोग उसे मोतका 'नकुआ' कह कर पुकारते थे। उसके बाल लाल थे और वह एक यहूदी था जिसने इसाई धर्म स्वीकार कर लिया था। हर जगह उसकी शारीरिक-शक्ति की दाद दी जाती थी। पहले वह चोरी करता था, किन्तु यह धन्धा छोड़कर वह एक वेश्यालय का चौकीदार और बाद में दलाल बन गया। आजकल भी वह एक तरह से दलाल था, अन्तर केवल इतना था कि अब वह वेश्याओं के स्थान पर पुलिस की दलाली करता था।

शसका वॉयलन पर 'बर्फ का तूफान' की धुन बजा रहा था। अचानक 'नकुए' ने आगे बढ़कर शसका का दाहना हाथ पकड़ लिया और हाल की ओर मुंह करके चिल्लाया : "तराना... जनता का तराना, दोस्तो, हमारे गौरव-युक्त सम्राट के सम्मान में तराना होना चाहिए।"

"तराना ! तराना !" एक आवाज में फर की टोपियां पहने हुए उन उचक्कों ने चिल्लाना शुरू कर दिया।

"तराना !" पीछे के सिरे से एक अकेली धीमी, ढिलमिल सी आवाज सुनाई दी।

किन्तु शसका ने अपनी बांह छुड़ा कर शान्त-स्वर में कहा : "यहां कोई तराना नहीं होगा।"

"क्या ?" नकुआ गुस्से में दहाड़ने लगा। "तेरी यह मजाल — गन्दे सड़े यहूदी !"

शसका नीचे झुका और अपना मुंह नकुए के मुंह के पास ले आया। उसकें चेहरे की झुर्रियां खिच आयीं। वॉयलन को एक तरफ रख कर उसने कहा : "और तुम — तुम कौन हो ?"

"क्या मतलब ?"

"माना मैं एक गला-सड़ा यहूदी हूं, लेकिन तुम कौन हो ?"

"मैं ऑर्थोडोक्स इसाई हूं।"

"इसाई हो ? खूब ! इसाई बनने के एवज में कितना कुछ हाथ लगा ?"

सारा गेम्ब्रीनस हंसी के ठहाकों से गूंज उठा। गुस्से से नकुए का चेहरा लाल हो गया। अपने साथियों की ओर उन्मुख होकर वह आंसुओं से रुंधी, कांपती आवाज में किसी दूसरे व्यक्ति के शब्दों को दुहराने लगा, जो कदाचित उसे कंठस्थ थे : "दोस्तो, हम कब तक इस यहूदी के मुंह से सम्राट और 'धर्म-परायण-चर्च' के बारे में यह गलाजत से भरी गाली-गलौज सुनते रहेंगे ?"

किन्तु शसका ने मंच पर खड़े होकर नकुए का मुंह अपनी ओर मोड़ लिया। गेम्ब्रीनस के ग्राहकों ने शसका को सदा हंसते, या मुंह बनाते हुए ही देखा था, किन्तु उस दिन वे उसके प्रभावशाली, अधिकार पूर्ण शब्दों को सुनकर स्तम्भित रह गये।

'कुत्ते के बच्चे ... हत्यारे ! जरा देखूं तेरी शक्ल ! इधर मुंह कर, वहां क्या देख रहा है ? हां — अब बता !"

आंख झपकते ही सारा कांड हो गया। शसका का वायलन ऊपर उठा, हवा में चमका और 'फट' से आवाज हुई। फर की टोपी पहने हुए उस लम्बे आदमी की कनपटी पर प्रहार हुआ और उसके पांव डगमगाने लगे। वॉयलन टूटकर चूर-चूर हो गया। शसका के हाथ में अब केवल वॉयलन की छड़ी थी, जिसे उसने विजयोल्लास में भीड़ के ऊपर हवा में उठा रखा था।

"दोस्तो, मेरी मदद करो !" नकुआ जोर-जोर से चीख रहा था।

किन्तु समय हाथ से निकल चुका था। लोग शसका के इर्द-गिर्द एक मजबूत दीवार बना कर खड़े हो गये थे ताकि उस पर कोई आंच न आ सके। इसी दीवार ने फर की टोपियां पहने बदमाशों के दल को बाहर खदेड़ दिया।

किन्तु एक घंटे बाद जब शसका अपनी ड्यूटी पूरी करके बियर-घर के बाहर आया, तो बहुत से लोग एक संग उस पर टूट पड़े। उनमें से किसी आदमी ने शसका की आंख पर घूंसा मारा और सीटी बजा दी। जब पुलिस का सिपाही भागता हुआ घटनास्थल पर पहुंचा, तो उस आदमी ने शसका को उसके हवाले करते हुए कहा : "इस आदमी को बुलीवा स्टेशन ले जाओ। राजनीतिक अभियोगी ... समझे — यह रहा मेरा बिल्ला।"

नौ

इस बार जब शसका को पकड़ कर ले गये, तो सबने यही समझा कि अब वह कभी वापिस नहीं लौटेगा। गेम्ब्रीनस का एक ग्राहक भी उस समय मौजूद था जब बियर-घर के पास सड़क पर शसका के साथ यह दुर्घटना हुई थी।

गेम्ब्रीनस के अन्य ग्राहकों को उसके मुंह से सारी बात का पता चला था। गेम्ब्रीनस में आनेवाले लोग अनुभवी व्यक्ति थे, 'बुलीवा स्टेशन' किस किस्म का स्थान है, यह उनसे छिपा न था। पुलिस के दलाल जिसके पीछे पड़ जाते हैं, उसकी कैसी दुर्दशा होती है, इस बात से भी वे भली भांति परिचित थे।

किन्तु पहले की अपेक्षा इस बार शसका का दुर्भाग्य अधिक दिनों तक चिन्ता का विषय नहीं बन सका। लोग जल्दी ही उसे भूल गये। उसके स्थान पर एक नये व्यक्ति को वॉयलन बजाने के लिए नियुक्त कर दिया गया। वह शसका का ही एक शिष्य था।

तीन महीने बाद बसन्त की एक सुरम्य, शान्त संध्या के समय, जब गेम्ब्रीनस में "प्रतीक्षा" के वाल्ज-नृत्य की धुन बज रही थी, कोई पतली, डरी हुई आवाज में अचानक चिल्ला उठा · "दोस्तो — शसका आ गया!"

लोगों के सिर मुड़ गये, वे पीपों से उठ खड़े हुए। हां, यह शसका ही तो था, जो मौत के मुंह से दुबारा वापिस लौट आया था। उसकी दाढ़ी बढ़ गयी थी और चेहरा पीला, म्लान सा हो आया था। लोगों ने उसे घेर लिया — कोई उसे गले से लगाता था, कोई उसके हाथ में बियर का गिलास पकड़ा रहा था। किन्तु वही आदमी जो पहले चिल्लाया था, पुनः चीख उठा, "दोस्तों — शसका की बांह को क्या हुआ?"

एक घनी चुप्पी छा गयी। शसका के बाएं हाथ की कुहनी एक तरफ मुड़ी हुई सी लटकी थी। लगता था मानो किसी ने उसे कुचल डाला हो। वह अपने हाथ को झुकाने या उठाने में असमर्थ सा दीखता था। हाथ की अंगुलियां उसकी ठुड्डी के पास शिथिल सी पड़ी थीं।

"यह क्या हुआ भाई?" रूसी कम्पनी के एक नाविक ने मौन तोड़ा।

"कोई खास बात नहीं," शसका ने लापरवाही से उत्तर दिया। "शायद किसी जोड़ की हड्डी या नस पर चोट लग गयी है।"

"यह बात है।"

एक बार फिर निस्तब्धता छा गयी।

"क्या अब 'चरवाहा' हमारे बीच नहीं रहेगा?" नाविक के शब्दों में सहानुभूति भरी थी।

"चरवाहा?" शसका की आंखें मुस्कराहट में भीगी सी चमक उठीं।

"देखो ... जरा ..." पियानो-वादन करने वाले अपने साथी की ओर उन्मुख होकर वह पहले की तरह आश्वस्त भाव से चिल्लाया। "चरवाहा ... शुरू करो, एक-दो-तीन ..."

पियानो पर आनन्द और उल्लास से भरी नृत्य-संगीत की धुन बजाते हुए उसके साथी ने चिन्तित, शंकाकुल दृष्टि से शसका की ओर देखा। किन्तु शसका

तैयार खड़ा था। उसने तुरन्त अपना दायां हाथ — जो ठीक था — जेब में डाल कर एक काले रंग का लम्बा वाद्य-यंत्र निकाल लिया, जो हाथ की हथेली से बड़ा नहीं था। उसके संग पेड़ की टहनी का एक टुकड़ा था, जिसे उसने मुंह में रख लिया। जहां तक उसकी टूटी, अकड़ी हुई बांह रास्ता दे सकती थी, वहां तक वह बायीं ओर झुकता चला गया और फिर अचानक 'ओकारिना' (एक प्रकार का बाजा) पर रस और उल्लास से भरी 'चरवाहा' की नाचती, झूमती धुन बजाने लगा।

"हा-हा-हा ..." श्रोतागण खुशी के मारे अपनी कुर्सियों से उछल पड़े। चारों ओर हंसी की लहर दौड़ गयी।

"यह शसका भी छिपा रुस्तम है!" नाविक खुशी में चिल्ला उठा और जोर-जोर से हाथ-पांव घुमाता हुआ नाचने लगा। अपने इस अदम्य उत्साह पर मानो उसे स्वयं आश्चर्य हो रहा था। गेम्ब्रीनस के अन्य ग्राहक, स्त्री-पुरुष मिल कर उसके साथ नाचने लगे। वेटर भी मुस्कराते हुए अपने पैरों से ताल देने लगे, हालांकि वे अपनी मुख-मुद्रा को गम्भीर बनाये रखने का भरसक प्रयत्न कर रहे थे। मदाम इवानोवा, जो 'बार' की ऊंची कुर्सी पर जहाज के कप्तान की भांति हुकम दे रही थी, कुछ क्षणों के लिए अपने कर्तव्यों को भूल सी गयीं और धीमे-धीमे अपनी अंगुलियां चटखाते हुए नृत्य की हंसती, उछलती लय के साथ अपना सिर हिलाने लगीं। लगता था मानो गेम्ब्रीनस की पुरानी, जीर्ण-शीर्ण, काल-गलित मूर्ति भी अपनी भौंहों को हिलाती हुई, प्रसन्नचित्त से बाहर सड़क की ओर देख रही है। ऐसा प्रतीत होता था कि अपाहिज शसका के हाथों में सीधी-सादी बेचारी सीटी एक ऐसे स्वर में अपना गीत गा रही है, जिसकी भाषा से दुर्भाग्यवश न केवल गेम्ब्रीनस के ग्राहक अपरिचित हैं, बल्कि जिसे समझने में स्वयं शसका अपने को असमर्थ पा रहा है :

"चिन्ता न करो। तुम आदमी को अपाहिज बना सकते हो किन्तु कला का बाल भी बांका नहीं कर सकते। कला की हमेशा विजय होगी।"

१९०७

एमरल्ड

खोल्सतोमर की याद में, जो एक बेजोड़
चितकबरा दौड़ाक था

एक

रात आधी बीत चुकी थी। अपने नियत समय पर अस्तबल में खडे एमरल्ड की आंख खुल गयी। चमकीले सलेटी बालों वाले एमरल्ड की आयु लगभग चार वर्ष की होगी। वह रेस का घोडा था और अमरीकी घोड़ो सा उसका डील-डौल था। उसके दाए-बाएं और दहलीज की दूसरी ओर पात लगाकर बाकी घोडे खडे थे। वे चटखारे ले-लेकर घास-फूस का चारा चबा रहे थे। चलते हुए दातो का 'कच-कच' स्वर एक लय मे बंधा हुआ आता था। जब कभी चारे में मिली हुई धूल उनके नथुनों मे घुस जाती, तो उनकी नाक घर्घराती हुई सी बोलने लगती। एक कोने मे घास के ढेर पर पडा हुआ साईस खर्राटे भर रहा था, हालाकि उस समय वह अपनी ड्यूटी पर था। दिनों के परिवर्त्तन और खर्राटो के स्वर से एमरल्ड जान गया कि घास पर लेटा हुआ आदमी वासिली के अलावा दूसरा कोई नही है। वासिली की उम्र ज्यादा नही थी, अभी लडका सा ही दीखता था। उसकी करतूनो के कारण घोडे अक्सर उससे कतराते थे। अस्तबल को वह अपनी सिगरेटो के गन्दे, दम घुटा देने वाले धुए से भर देता था, घुडसाल की कोठरियो में वह शराब के नशे में धुत होकर आता

था, कभी किसी घोड़े के पेट पर लात जमा बैठता था, कभी उनकी आंखों के सामने हवा में घूसे चलाता था, उनके गलों में बंधी रस्सी को झटका देकर, जोर से खींच देता था और हमेशा अस्वभाविक कर्कश स्वर में दनदनाता हुआ डांट-फटकार बरसाता रहता था।

एमरल्ड अपनी कोठरी के दरवाजे तक चला आया। उसके सामने *स्मार्ट* नामक घोड़ी की कोठरी थी। स्मार्ट काले रंग की घोड़ी थी। उसका यौवन अभी पूर्णरूप से विकसित नहीं हुआ था। अंधेरे में उसका शरीर एमरल्ड की आंखों से छिपा था, किन्तु जब कभी भूसे की टोकरी से वह अपना सिर ऊपर उठाती, कुछ क्षणों के लिए उसके गहरे नीले रंग की आंख अंधेरे में चमक जाती। एमरल्ड ने अपने नथुने फुलाकर एक लम्बी सांस खींची, मानो स्मार्ट के शरीर की अदृश्य किन्तु उत्तेजक गंध सूंघ रहा हो, और वह हिनहिनाने लगा। स्मार्ट भी उत्तर में अपनी चपल, कांपती हुई, प्यार से भरी आवाज में हिनहिना दी।

उसी क्षण एमरल्ड को पास की कोठरी से ईर्ष्या और क्रोध में भरी फुत्कारती सांसें सुनायी दीं। यह *ओनजिन* था—भूरे रंग का एक अधेड़ आयु का साहसी घोड़ा, जो कभी-कभी शहर की घुड़दौड़ों में भाग लिया करता था। एक पतला सा लकड़ी का तख्ता इन दोनों घोड़ों की कोठरियों के बीच लगा था, इसलिये दोनों ही एक दूसरे को देख पाने में असमर्थ थे। एमरल्ड तख्ते के सिरे पर अपनी नाक ले गया। उसे चबायी हुई घास की ऊष्ण गन्ध ओनजिन के तेजी से फड़कते हुए नथुनों से आती हुई जान पड़ी। गुस्से में उन दोनों घोड़ों के गले तन गये, कान सिर पर सिमट आए और वे कुछ देर तक अंधेरे में एक दूसरे को सूंघते रहे। दोनों का पारा चढ़ा हुआ जान पड़ता था। दोनों ऊंची आवाजों में चीख उठे और गुस्से में पंजों से फर्श कुरेदते हुए हिनहिनाने लगे।

"हरामजादे कहीं के! चुप हो रहो!" सोता हुआ साईस गुर्रा उठा। अपनी आदत के अनुसार वह डांट-डपट किये बिना नहीं रह सकता था।

भय से दोनों घोड़ों के कान खड़े हो गये और वे झटपट दरवाजे के पीछे खिसक आए। वैसे तो वे दोनों एक दूसरे के पुराने शत्रु थे, किन्तु पिछले तीन दिनों के दौरान में—जब से वह काली घोड़ी अपनी मदमाती मधुरिमा बिखेरती हुई अस्तबल में आई थी—कोई ऐसा दिन नहीं बीता था जब वे कई बार आपस में गुत्थम-गुत्था न हुए हों। दरअसल साधारण रूप से घोड़ियों को उस अस्तबल में नहीं लाया जाता था, किन्तु इस बार घुड़दौड़ होने से पूर्व भीड़-भक्कड़ हो जाने से स्थानाभाव के कारण स्मार्ट को इस अस्तबल में रख दिया गया था। दोनों घोड़ों की जहां भी मुलाकात हो जाती, चाहे अस्तबल हो, या घुड़दौड़ का मैदान या पानी के हौज के पास—एक दूसरे को वे लड़ाई के लिए चुनौती देने लग जाते। किन्तु एमरल्ड मन-ही-मन ओनजिन के भीमकाय शरीर

से भय खाता था। ओनजिन का गहरा आत्म-विश्वास, उसके शरीर से आती हुई मक्कारी की गंध, ऊंट की तरह बाहर निकला हुआ उसका विशाल टेंटुआ, उसकी संजीदा गहरी आंखें और पत्थर सा कठोर उसका शारीरिक ढांचा — जिसे बढ़ती हुई उम्र, घुड़दौड़ के अभ्यास और पिछली लड़ाइयों ने लोहे सा सख्त और मजबूत बना दिया था — एमरल्ड के हृदय में हमेशा अजीब सा डर संचालित कर देता था।

एमरल्ड हेकड़ी जतलाता हुआ अपनी नांद के पास चला आया और उसमें अपना मुंह डालकर अपने चपल, कोमल होंठ भूसे पर फेरने लगा। वह पहले कुछ देर तक घास के तिनकों को कुतरता रहा, फिर जुगाली का रस आने लगा और वह बड़ी मुस्तैदी से मुंह चलाने लगा। अलसाये, उनींदे से विचार उसके मस्तिष्क में तिरने लगे। विभिन्न दृश्यों, गन्धों और स्वरों की स्मृतियां उसके मानस-पटल पर क्षण भर के लिए थिरक आतीं और फिर दूसरे ही क्षण अतीत और भविष्य की परिधि से घिरे अथाह, अंधेरे गढ़े में विलीन हो जातीं।

वह प्रधान साईस नजार के सम्बंध में सोचने लगा, जिसने पिछली रात चारा दिया था।

बूढ़ा नजार एक सीधा-सादा, ईमानदार व्यक्ति था। जब वह अस्तबल में आता था, हवा में काली रोटी और शराब की हल्की, सोंधी सी गंध फैल जाती थी। उसकी चाल-ढाल में एक कोमल सा ठहराव था, मानो उसे किसी बात की जल्दी नहीं है। उसके हाथों से दिये गये जई और भूसे का स्वाद ही निराला होता था। घोड़ों को चारा डालते हुए वह धीमे स्वर में प्यार भरी हल्की झिड़कियां दिया करता था, उसकी स्नेह भरी मधुर बातों को सुनने के लिये सब घोड़े लालायित रहते थे। किन्तु साईस का वह गुण — हाथ की सफाई — जिसे घोड़े सबसे अधिक महत्व देते हैं, नजार में न थी। जब कभी नजार एमरल्ड को अस्तबल से बाहर घुमाने ले जाता था, एमरल्ड को उसके हाथों के स्पर्श से ही पता चल जाता था कि उसमें आत्मविश्वास और दक्षता का अभाव है।

वासिली में भी इस गुण की कमी थी। वह घोड़ों को मारता-पीटता था, डांटता फटकारता था, किन्तु वे उसकी कायरता से परिचित थे और उससे डरते नहीं थे। उसे घुड़सवारी करना भी नहीं आता था, घोड़े की पीठ पर बैठा हुआ वह हमेशा हिलता-डुलता रहता था। तीसरा साईस काना था और उन दोनों की अपेक्षा अधिक निपुण था। किन्तु वह अत्यन्त क्रूर स्वभाव का व्यक्ति था, जल्दी ही झल्ला उठता था और घोड़े तो उसे एक आंख नहीं भाते थे। उसके हाथ लकड़ी की तरह कठोर और सख्त थे। चौथा साईस आन्द्रियाश्का अभी लड़का ही था। दूध पीते घोड़े के बच्चे की तरह वह घोड़ों से खेलता था, कभी चुपके से उनका ऊपरी होंठ, कभी उनके नथुनों के बीच का स्थान चूम लेता,

जो घोड़ों को न केवल अरुचिकर लगता बल्कि उन्हें उसकी यह हरकत काफी बचकाना सी जान पड़ती।

एक अन्य व्यक्ति अक्सर अस्तबल में आता था—लम्बा छरहरा शरीर, झुकी हुई पीठ, हजामत किया हुआ साफ-सुथरा चेहरा, आंखों पर सुनहरे फ्रेम का चश्मा। उसकी चाल-ढाल और वेश-भूषा में एक असाधारण सी विशिष्टता थी। एक अच्छे घोड़े में जो गुण होते हैं, वे सब उसमें मौजूद थे—बल, बुद्धि और निडरता। कभी किसी ने उसे लाल-पीला होते नहीं देखा। उसने कभी चाबुक से घोड़ों को मारने या धमकाने की चेष्टा नहीं की। जब कभी वह एमरल्ड को दो पहियों की गाड़ी से जुता कर बाहर निकलता था, तो एमरल्ड के शरीर में आनन्द और उल्लास की एक लहर सी दौड़ पड़ती। उसकी सुघड़, सर्वज्ञ अंगुलियों के प्रत्येक इशारे का अनुकरण करने में एमरल्ड को एक उदात्त और दिव्य आल्हाद प्राप्त होता। वह एमरल्ड के पुट्ठों के बीच एक ऐसा सहज-सन्तुलन स्थापित कर देता कि भागते समय उसके अंग-प्रत्यंग एक नयी शक्ति और स्फूर्ति से आडोलित हो उठते। मन हल्का हो जाता और सीना खुशी से फूल जाता।

उसी क्षण उसकी आंखों में घुड़दौड़ के मैदान की ओर जाने वाली छोटी सी सड़क, उसका हर पत्थर और मकान घूमने लगा। उसने देखा कि मैदान में जिस मार्ग पर घोड़े दौड़ते हैं, वहां रेत पड़ी है, उसके परे एक विशाल चबूतरा है, घोड़े भाग रहे हैं, सामने हरी घास और पीला रिबन भी दिखलायी दे रहा है। अचानक उसकी स्मृति एक कुम्मैद घोड़े पर जा टिकी, जिसकी आयु अभी तीन वर्ष की थी। कुछ दिन पहले उसके पांव में मोच आ गयी थी और अब वह लंगड़ा कर चलता था। उसका विचार आते ही एमरल्ड मन ही मन लंगड़ा कर चलने की कल्पना करने लगा।

खाते-खाते एमरल्ड का मुंह अचानक चारे के ऐसे गट्ठर पर जा पड़ा, जिसमें से बड़ी मनोहर सुगन्ध आ रही थी। एमरल्ड पूरी तरह तन्मय होकर उस गट्ठर को चबाने लगा। उसे अच्छी तरह निगल चुकने पर, कुछ देर तक वह अपने मुंह में मुरझाये हुए फूलों और सूखी, सुरभित घास की सुगन्ध महसूस करता रहा। कहीं बहुत दूर से एक भूली-भटकी धुंधली सी स्मृति उसके मस्तिष्क में कौंध गयी। यह स्मृति उस अनुभूति से मिलती-जुलती थी, जो कभी-कभी सड़क पर चलता हुआ कोई भी आदमी सिगरेट जला कर, पहला कश लेते ही अचानक महसूस करने लगता है। केवल एक क्षण के लिए उसे लगता है कि वह अचानक धुंधले आलोक में डूबे गलियारे में खड़ा है, जिसकी दीवारों पर पुराने फैशन का वालपेपर लगा है और सामने अलमारी पर एक मोमबत्ती जल रही है, या वह रात भर ऊंघते हुए यात्रा करता रहा है और गाड़ी की घंटिया एक मधुर लय के संग बजती रही हैं, या कुछ ही दूर पर एक नीला जंगल फैला है, बर्फ चमक रही

है, शिकार का पीछा किया जा रहा है और एक कसमसाती आकांक्षा में डूबी उत्सुकता जाग उठी है, जिसके कारण घुटने कांपने लगे हैं — और एक क्षण के लिए उस बीती हुई घड़ी की विस्मृत अनुभूति, जो कभी चिंगारी की तरह जली थी और अब बुझ कर धुंधली पड़ गयी है, उसके दिल को स्पर्श कर जाती है, सहलाती सी, दुखद और उदास। एमरल्ड का मन भी कुछ इसी प्रकार की धुंधली स्मृतियों के अस्पष्ट कुहासे में भटकने लगा।

नांद के ऊपर छोटी सी काली खिड़की की आकृति, जो कुछ देर पहले तक अंधेरे की ओट में छिपी थी, अब धीरे-धीरे धुंधली सी दीखने लगी। घोड़े थक से गये थे और अलसाये मन से चारा चबाते हुए धीरे-धीरे भारी सांसें ले रहे थे। बाहर एक मुर्गे ने बांग दी। उसका उल्लास भरा सुमधुर स्वर सुनकर लगा मानो किसी ने शहनाई बजा दी हो। उसके बाद काफी देर तक दूर-दूर से मुर्गों के बांग देने का स्वर सुनायी देता रहा।

एमरल्ड नांद में सिर डाले हुए चाह रहा था कि उसके मुंह में यह विचित्र सुगन्ध सदा के लिए टिकी रहे। यह उस सुगन्ध का ही चमत्कार था जिसने उसके दिल में एक अस्पष्ट सी अज्ञात स्मृति को इतने स्पष्ट और मांसल रूप में जगा दिया था। किन्तु ऐसा होना असंभव था और वह सोने की इच्छा न रखते हुए भी कुछ देर बाद खुद-ब-खुद ऊंघने लगा।

दो

एमरल्ड का शरीर गठा हुआ था, टांगें सुघड़ और सुडौल थीं, इसलिए वह धीरे-धीरे इधर-उधर डोलता हुआ खड़े-खड़े ही सो जाता था। कभी-कभी वह सोता हुआ हठात चौंक पड़ता, नींद उचट जाती और कुछ क्षणों तक वह अर्द्ध-निद्रा की अवस्था में ऊंघता रहता। गहरी नींद के बाद उसके स्नायु, पुट्ठों और त्वचा में एक नयी ताजगी और स्फूर्ति भर जाती।

पौ फटने से पहले एमरल्ड सपना देखने में खोया था — वसन्त का ऊषा-काल, धरती पर झिलमिलाती किरणों का हल्का गुलाबी आलोक और चरागाह की सुरभित हवा। चारों ओर घनी, कोमल घास फैली थी, जो प्रभात की रश्मियों का गुलाबी स्पर्श पाकर और भी अधिक उज्ज्वल और आकर्षक दीख पड़ती थी। आदमी और पशु केवल जवानी के दिनों में ही सौन्दर्य की इस छटा का भरपूर आनन्द उठा सकते हैं। चारों ओर बिखरी ओस के कण धूप में चमक रहे थे। हवा के हल्के ताजे झोंके अपने संग विभिन्न सुरभित गन्धों को बहा लाते थे। सुबह के शीतल-शान्त वायुमंडल में गांव की चिमनियों से उड़ता, बल खाता हुआ पारदर्शी धुआं सुई सा नाक में चुभ जाता था। चरागाह में

खिलते हुए हर फूल की अपनी एक अलग विशेष गन्ध थी। मेड़ के परे नमी से भरी एक गीली सड़क चली जाती थी, जिस पर चलते फिरते लोगों, कोलतार, घोड़े की लीद, गर्द, गायों के ताजे दूध और फर के वृक्षों से निकलती सोंधी लार की मिली-जुली गन्ध एक स्थान पर आकर जमा होती थीं।

एमरल्ड की आयु अभी केवल सात महीने की थी। इस समय वह मैदान में अपनी पिछली टांगों को हवा में झाड़ते हुए, सिर झुकाए, निरुद्देश्य भाग रहा था। उसे रत्ती भर भी अपने शरीर का बोझ महसूस न हो रहा था—लगता था, मानो उसके पंख लग गये हों और वह हवा में उड़ता जा रहा है। उसके पैरों तले दबे हुए सफेद, सुगन्धित कैमोमिल फूल पीछे छूट जाते थे। वह चौकड़ी भरता हुआ सीधा सूरज की दिशा में भागता चला जा रहा था। गीली घास में भीगे हुए उसके घुटनों में शीतलता भर गयी थी और उनका रंग श्यामल सा हो गया था। नीला आकाश, हरी घास, सुनहरी धूप, खूबसूरत हवा, शक्ति, यौवन और तेज भागने का मदमाता, नशीला सुख!

और तब अचानक उसे संक्षिप्त, चिन्ताग्रस्त, सहलाता सा हिनहिनाने का स्वर सुनायी दिया—एक पुकार, जिससे वह भली-भांति परिचित था और जिसे वह दूर से ही हजारों आवाजों के बीच पहचान सकता था। वह जहां था, वहीं ठिठक गया और सुनने लगा। एक क्षण के लिए उसका सिर ऊपर उठ आया, पतले कान हिलने लगे और उसकी छोटी सी खुरदरी पूंछ धान की बाली की तरह पीछे की ओर मुड़ आयी। यकायक वह भी चीख उठा और उसका लम्बी टांगों वाला पतला छरहरा शरीर जोर से हिलने लगा। वह द्रुत-गति से अपनी मां की ओर भागने लगा।

उसकी मां शान्त और स्थिर खड़ी थी। उसके बूढ़े शरीर पर हड्डियां उभर आयीं थीं। उसने घास से अपनी गीली नाक ऊपर उठायी और... अपने बच्चे के शरीर को सावधानी से जल्दी-जल्दी सूंघने लगी। किन्तु दूसरे ही क्षण उसने अपना सिर पुनः घास की ओर मोड़ लिया मानो वह कोई बहुत ही आवश्यक कार्य करने में जुट गयी हो, जिसे टाला नहीं जा सकता। बच्चा अपनी लचकीली गर्दन उसके पेट के नीचे ले आया और मुंह मोड़ कर पुरानी आदत के अनुसार उसने अपने होठ घोड़ी की पिछली दोनों टांगों के बीच डाल दिये और गुनगुने से गर्म, गदराये स्तनों को पकड़ लिया। गर्म और तनिक खट्टे दूध की पतली धार स्तनों से उसके मुंह में जाने लगी। वह बिना रुके गटगट दूध पिये जा रहा था। आखिर घोड़ी ने उसे धकेल दिया और उसे डराने के लिए वह उसकी जांघों को अपने दांतों से काटने का उपक्रम करने लगी।

अब अस्तबल में रोशनी हो गयी थी। एक लम्बी दाढ़ी वाला बूढ़ा बकरा, जो अस्तबल में घोड़ों के साथ रहा करता था, अपनी शरीर की दुर्गन्ध हवा में

फैलाता हुआ दरवाजे पर आ कर रुक गया। दरवाजा भीतर से एक लकड़ी के पट्टे द्वारा बन्द कर दिया गया था। बकरा पीछे मुड़-मुड़ कर साईस की ओर देखता जाता था और जोर-जोर से मिमियाने लगता था। वासिली अपने अस्त-व्यस्त बालों से भरे सिर को खुजलाता हुआ उठा और नंगे पांव ही दरवाजा खोलने चल दिया। बाहर शिशिर की सुबह ठंडी, कड़कड़ाती, नीली सी धुंध में डूबी थी। दरवाजे के खुले चौखटे में अस्तबल की गर्म भाप जमा हो गयी। सफेद पाले और मुरझाये हुए पत्तों की भीनी गन्ध बाहर से भीतर तिरती हुई अस्तबल की कोठरियों में फैलने लगी।

घोड़े भांप गये कि उन्हें जई दी जाने वाली है। वे अपनी कोठरियों के दरवाजों के सामने खड़े हो गये और अधीर होकर हौले-हौले घर्घराने लगे। लालची और मक्कार ओनजिन अपने पंजों से लकड़ी का फर्श खुरचने लगा, नांद पर लगी लोहे की पटरियों को काटने लगा और गरदन उठाकर हवा निगलते हुए डकारने लगा। एमरल्ड अपना मुंह सामने लगे छड़ों से रगड़ रहा था।

चारों साईस अस्तबल में आ पहुंचे और बालटियों से जई निकालकर घोड़ों में बांटने लगे। जब नजार एमरल्ड की नांद में जई डाल रहा था, एमरल्ड पहले उस बेचारे बूढ़े के कंधों और फिर उसकी बगलों से भूसा खींचने का प्रयत्न करने लगा। इस खींचतान में उसके नथुने गर्म होकर फड़कने लगे। साईस को एमरल्ड की अधीनता बहुत भली लगी और उसने जान-बूझ कर देर करने के लिए अपनी कुहनी से नांद का ढक्कन बन्द कर दिया।

"बड़ा लालची है बदमाश!" वह हंसते हुए बुड़बुड़ाने लगा। "अरे इतनी जल्दी क्या पड़ी है—अब फिर मुंह मारेगा? देख, इस बार मुंह उठाया तो तुझे कैसा मजा चखाता हूं।"

नांद के ऊपर छोटी सी खिड़की से धूप की उजली किरण शहतीर सी नीचे की ओर आ रही थी। चौखटे की लम्बी छायाओं ने धूल के उन स्वर्णिम कणों को एक दूसरे से अलग कर दिया था, जो लाखों की संख्या में धूप की इस पतली, चमकीली शहतीर पर तैर रहे थे।

तीन

जब एमरल्ड जई खा चुका, तो उसे अस्तबल से बाहर ले जाया गया। धीरे-धीरे तापमान बढ़ने लगा था और धरती मुलायम होने लगी थी, किन्तु अस्तबल की दीवारों पर सफेद पाला अब भी पड़ा हुआ था। लीद के ढेर से, जो कुछ देर पहले अस्तबल से बाहर निकाला गया था, भाप की मोटी परतें ऊपर उठ रही थीं और उस पर चिड़ियों ने उछलना-कूदना शुरू कर दिया था। उनकी

चहचहाहट को सुनकर लगता था मानो आपस में लड़ रही हों। दरवाजे के पास दहलीज पार करते हुए एमरल्ड ने अपना सिर झुका लिया। ताजी हवा में सांस लेते ही खुशी से उसका रोयां-रोयां चमक उठा। उसने अपना सिर और समूचा शरीर जोर से हिलाया और फिर ऊंचे स्वर में तेजी से घर्घराने लगा। "भगवान तेरा भला करे!" नजार ने सच्चे मन से कहा। एमरल्ड एक स्थान पर टिककर नहीं ठहर सकता था। हवा के झोंके उसके नथुनों और आंखों को गुदगुदा रहे थे। उसका अंग-प्रत्यंग तेजी से सरपट दौड़ने के लिए मचलने लगा था। वह चाहता था कि उसका दिल गर्म होकर तेजी से धड़कने लगे। वह जी भर कर लम्बी गहरी सांसें लेना चाहता था। वह खूंटे की रस्सी से बंधा हुआ था और जोर-जोर से हिनहिना रहा था। कभी-कभी अपनी पिछली टांगों पर खड़ा होकर नाचने लगता था और अपनी गर्दन टेढ़ी करके पीछे खड़ी काली घोड़ी को कनखियों से देखता जाता था। उसकी गोल सांवली आंख की सफेद पुतली पर लाल धारियां खिच आयीं थीं।

नजार ने हांफते हुए पानी की बालटी ऊपर उठायी और घोड़े की पीठ पर — कंधों से लेकर पूंछ तक — पानी उड़ेल दिया। एमरल्ड को जो अनुभूति हुई, उससे वह परिचित था। पानी का स्पर्श उसे भाता था किन्तु वह इतना अचानक होता था कि रोज ही उसका मन भय से कांप उठता था। नजार और पानी भरकर लाया और एमरल्ड की बगलों, टांगों, छाती और पूंछ के नीचे के स्थान को धोकर अच्छी तरह साफ करने लगा। फिर वह अपने कड़े, सख्त हाथों से एमरल्ड की गीली खाल रगड़ने लगा ताकि उसके शरीर की नमी दूर हो जाए। एमरल्ड ने पीछे मुड़कर देखा — उसके तनिक नीचे की ओर झुके हुए पिछले पुट्ठे उजली धूप से चमक रहे थे।

वह घुड़दौड़ का दिन था, यह बात साईसों को देख कर एमरल्ड से छिपी न रह सकी। उनके चेहरों पर घबराहट के चिन्ह स्पष्ट दिखलायी देते थे। घोड़ों के आस-पास वे तेजी से घूम-फिर रहे थे। कुछ घोड़ों के टखनों पर चमड़े की जुराबें चढ़ायी जा रहीं थीं किन्तु उनका धड़ छोटा होने के कारण जुराबों की लम्बाई टखनों से कहीं ज्यादा हो गयी थी। कुछ अन्य घोड़ों की टांगों पर, जोड़ से लेकर घुटनों तक कपड़े की पट्टियां बांधी जा रही थीं, अथवा आगे की टांगों के गढ़ों के इर्द-गिर्द फर की बनी गद्दियां लपेटी जा रही थीं। ऊंची सीटों वाली दो पहियों की हल्की गाड़ियां ओसारे से बाहर लायी जा रही थीं। उनके पहियों के बीच लगी पीतल की सलाखें धूप में चमक रही थीं। पहियों की हालें और बम चमकीले ताजे लाल रंग में रंगे हुए थे।

जब अस्तबल का मुख्य घुड़सवार, जो एक अंग्रेज था, वहां पहुंचा, एमरल्ड के गीले शरीर पर ब्रुश फेरा जा चुका था और ऊनी दस्तानों द्वारा उसे

अच्छी तरह रगड़ कर सुखा दिया गया था। उस अंग्रेज घुड़सवार का शरीर पतला-दुबला था, कमर तनिक झुकी हुई सी और बाहें लम्बी थीं। आदमी और घोड़े दोनों ही उसका आदर करते थे और उससे डरते भी थे। हजामत किया हुआ उसका साफ-सुथरा चेहरा धूप में झुलस आया था। उसके पतले, दृढ़ होंठ एक व्यंग्यात्मक मुस्कान में मुड़े रहते थे। उसने सुनहरे फ्रेम का चश्मा पहन रखा था, जिसके भीतर से उसकी शान्त, स्थिर चमकती आंखें बाहर झांकती रहती थीं। उसकी लम्बी टांगों पर ऊंचे जूते चढ़े हुए थे। उसने अपने दोनों हाथ पतलून की जेबों में ठूंस रखे थे। मुंह में सिगार दबा था, जिसे वह मुंह के एक कोने से दूसरे कोने तक घुमाता हुआ चबा रहा था। दोनों पैरों को पसार कर आराम से खड़ा हुआ वह घोड़ों की सफाई-धुलाई देख रहा था। उसने भूरे रंग की वास्कट पहन रखी थी, जिस पर फर का कॉलर लगा था। सिर पर काली टोपी थी, जिसके ऊपर चौकोर आकार का एक फुन्दा जड़ा था। कभी-कभी वह उदासीन स्वर में उड़ती-उड़ती सी बात कह देता। उसकी आवाज को सुनते ही घोड़ों के कान खड़े हो जाते और साईस और नौकर चौंक कर ठिठक जाते और उसकी ओर देखने लगते।

उसकी आंखें अन्य घोड़ों से हट कर एमरल्ड पर जा टिकीं। उस पर साज चढ़ाया जा रहा था। उसने माथे के बालों से लेकर पैर के खुरों तक एमरल्ड को जांचा-परखा। उसकी तीक्ष्ण, परखती हुई आंखों के नीचे एमरल्ड ने गर्व से अपना सिर ऊपर उठाया, अपनी लचकीली गर्दन को जरा सा मोड़ा और धूप में झिलमिलाते पतले कानों को खड़ा कर लिया। अंग्रेज घुड़सवार ने स्वयं आगे बढ़ कर अपनी अंगुलियों को एमरेल्ड के साज की पेटी के नीचे डाल कर देखा कि कहीं वह ढीली तो नहीं रह गयी है। साईसों ने लाल किनारों वाले भूरे रंग के कपड़े घोड़ों की पीठ पर डाल दिये। इन कपड़ों पर लाल दायरे और मोनो-ग्राम बने हुए थे और वे घोड़ों की पिछली टांगों के नीचे झूल रहे थे। नजार और कानी आंख वाले साईस ने एमरल्ड को लगाम से पकड़ा और वे उसे लेकर रेसकोर्स जाने वाली चिर-परिचित सड़क पर चलने लगे, जिसके दोनों ओर पत्थर के ऊंचे मकान खड़े थे। अस्तबल से घुड़दौड़ का मैदान दो फर्लांग से भी कम था।

मैदान में पहले से ही घोड़ों का जमघट लगा था। वे साईसों के संग धीमी गति से घेरे के भीतर उस दिशा की ओर घूम रहे थे, जिस दिशा में — घड़ी की सूइयों की दिशा से बिलकुल उलटी ओर — घुड़दौड़ के समय अक्सर घोड़े दौड़ते थे। मैदान के अन्दरूनी घेरे के भीतर धीमी चाल, नाटे कद और बलिष्ट टांगों वाले घोड़े चक्कर काट रहे थे, उनकी पूंछों के बाल काट दिये गये थे। एमरल्ड ने मैदान में घुसते ही उस छोटे से सफेद घोड़े को पहचान लिया जो घुड़दौड़ के

अवसर पर हमेशा उसके साथ चौकड़ी भरा करता था। दोनों घोड़े एक दूसरे के प्रति अपनी मैत्री-भावना प्रदर्शित करने के लिए हिनहिनाने लगे।

चार

मैदान में घंटी बजी। साईसों ने एमरल्ड की पीठ से कपड़ा उतार लिया। अंग्रेज घुड़सवार बगल में चाबुक दबाए अपने दस्तानों के बटन लगाता हुआ वहां आ पहुंचा। चश्मे के पीछे धूप में उसकी आंखें मिचमिचा रही थीं। उसका मुंह खुला हुआ था, जिसके भीतर घोड़े के दांतों से उसके लम्बे पीले दांत दिखाई दे रहे थे। एक साईस ने एमरल्ड की घने बालों से भरी पूंछ, जो टखनों तक लटक रही थी, उठा कर सावधानी से गाड़ी की सीट पर रख दी। पूंछ का हल्के रंग का सिरा नीचे की ओर लटकने लगा। आदमी के बोझ से गाड़ी के बम हिलने लगे। अपने कंधों के ऊपर से एमरल्ड ने कनखियों से देखा कि वह अंग्रेज बिलकुल उसके पीछे गाड़ी के बमों पर अपने पांव पसारे बैठा है। घुड़-सवार ने सावधानी से लगाम उठा ली, किसी एक शब्द का उच्चारण किया और तुरन्त साईसों ने एमरल्ड की लगाम छोड़ दी। दौड़ होने वाली है, यह विचार आते ही एमरल्ड के पांव हवा से बातें करने लगे, किन्तु मजबूत हाथों के एक ही झटके से उसे अपनी चाल धीमी कर देनी पड़ी। वह अपनी पिछली टांगों के बल पर, हवा में सिर उठाये, दरवाजे से बाहर निकल कर घुड़दौड़ के मैदान की ओर धीमी दुलकी चाल से भागने लगा।

जो रास्ता घुड़दौड़ के लिए तैयार किया गया था, वह काफी चौड़ा था और एक मील तक अण्डाकार-वृत्त में फैला हुआ था। उस पर पीली रेत छिड़क दी गयी थी और चारों ओर किनारे पर लकड़ी का जंगल लगा हुआ था। रेत भीग कर ठोस बन गयी थी, और स्प्रिंग की तरह पैरों को हल्के से उछाल देती थी। उस पर गाड़ी के गटापर्चा टायरों के निशान और खुरों के चिन्ह स्पष्ट रूप से दिखलायी देते थे।

सामने 'स्टैंड' था — २०० गज लम्बी लकड़ी की बड़ी इमारत, जो लम्बे पतले स्तम्भों के सहारे खड़ी थी। उसमें तिल रखने की भी जगह न थी, जमीन से छत तक लोग खचाखच भरे थे। लगाम तनिक ढीली पड़ते ही एमरल्ड समझ गया कि वह अपनी चाल बदल सकता है। इस खुशी में वह फूल उठा और उसकी नाक से घर्घराने का स्वर निकलने लगा।

अब वह तेज दुलकी चाल में दौड़ने लगा, उसकी पीठ स्थिर, निश्चल सी हो गयी, गर्दन आगे की ओर तन गयी और गाड़ी के बाएं बम की ओर जरा झुकने लगी। उसका मुंह ऊपर उठ आया था। वह लम्बे डग भरता हुआ दौड़

रहा था, इसलिए दूर से उसे देखकर यह नहीं जान पड़ता था कि वह इतनी तेजी से भाग रहा है। एमरल्ड को देखकर लगता था मानो कम्पास की दो सीधी सुइयों की तरह आगे की उसकी दोनों टांगें धीरे-धीरे रास्ता नाप रही हैं और केवल उनके खुरों के कोने कभी-कभी जमीन को स्पर्श कर लेते हैं। यह अमरीकी प्रशिक्षण का प्रभाव था जिसके परिणामस्वरूप घोड़ा बिना किसी कठिनाई के सांस लेता है, हवा का जोर रोकने की शक्ति बढ़ जाती है और घुड़दौड़ आरम्भ होने से पूर्व घोड़े पर इस प्रकार का नियंत्रण रखा जाता है जिससे उसकी अधिक से अधिक शक्ति सुरक्षित रखी जा सके। भले ही इस प्रशिक्षण-प्रणाली के कारण घोड़े का बाह्य सौन्दर्य कम हो जाए, किन्तु उसकी कमी उसमें स्फूर्ति, हल्कापन, लम्बी सांस खींचने की सामर्थ्य, तेज चाल, इत्यादि गुणों से पूरी हो जाती थी। घोड़े का समूचा शरीर एक ऐसी मशीन में परिणत कर दिया जाता है, जो सब दोषों से सर्वथा मुक्त है।

दो दौड़-प्रतियोगिताओं के बीच अब अवकाश के समय दुलकी भागनेवाले घोड़ों के शरीरों को गरमाई दी जा रही थी, ताकि सांस लेने में उन्हें किसी प्रकार का कष्ट न हो। अनेक घोड़े बाहरी घेरे में उसी दिशा की ओर भाग रहे थे, जहां एमरल्ड चक्कर लगा रहा था। कुछ घोड़े अन्दरूनी घेरे में उल्टी दिशा की ओर भाग रहे थे। ओरल-नस्ल का एक लम्बा, भूरे रंग का चितकबरा घोड़ा एमरल्ड से आगे निकल गया। उसकी मुड़ी हुई गर्दन और हवा में उड़ती पूंछ को देखकर लगता था मानो वह झूले में घूमता हुआ लकड़ी का घोड़ा है। उसकी चौड़ी मोटी छाती पसीने से काली हो गयी थी। जब वह घुटनों को आगे करके अगली टांगों को हिलाता हुआ भागता था, तो हर कदम पर उसकी तिल्ली थल-थल सी आवाज करने लगती थी और उरुसन्धि पर लटकता हुआ मांस हिलने लगता था।

इतने में भूरे रंग की एक लम्बी, पतली-दुबली सी घोड़ी, जिसकी गर्दन पर काले बाल लटक रहे थे, पीछे से आती हुई दिखायी दी। उसकी चाल-ढाल को देखकर लगता था कि एमरल्ड की भांति उसे भी अमरीकी-प्रणाली के नियमों के अनुसार प्रशिक्षित किया गया था। उसकी पीठ पर छोटा-सा साफ-सुथरा कोट चमक रहा था। खाल के नीचे पुट्ठों के हिलने-डुलने से कोट पर बल पड़ जाते थे। जब तक दोनों सवार आपस में बातचीत करते रहे, दोनों घोड़े एक संग कंधे से कंधा मिलाकर भागते रहे। एमरल्ड घोड़ी को सूंघने लगा और उससे छेड़छाड़ करने का उपक्रम करने लगा। किन्तु बीच में ही अंग्रेज ने उसे रोक दिया।

काले रंग का एक बड़ा घोड़ा तेजी से दुलकी मारता हुआ उनके सामने से दूसरी ओर निकल गया। उसके सिर से पूंछ तक पट्टियां बंधी थीं, घुटनों

की रक्षा के लिए चमड़े के टुकड़े लगे थे और टांगों पर गद्दियां बंधी थीं। उसकी गाड़ी का बायां बम दाहिने बम से चौदह इंच लम्बा होने के कारण बाहर की तरफ निकला हुआ था। उसके सिर के ठीक ऊपर एक छल्ला लगा हुआ था, जिसके भीतर लोहे के कुंडे से बंधा एक फीता नीचे की ओर चला गया था, जहां उसे घोड़े की सहमी सी नाक में बड़ी निर्ममता से बांध दिया गया था। एक साथ एमरल्ड और उस घोड़ी की आंखें उस पर जा टिकीं और दोनों ने एक ही निगाह में उसकी असाधारण शक्ति, गति और दृढ़ता को पहचान लिया। किन्तु उनसे यह भी छिपा न रह सका कि वह एक बहुत जिद्दी, कुटिल और चिड़चिड़े स्वभाव का घोड़ा है। काले घोड़े के बाद एक हल्के-सलेटी रंग का छोटा सा चुस्त घोड़ा उनके सामने से गुजरा। एक तरफ से उसे देखने पर यह भ्रम हो सकता था कि वह बहुत तेजी से सरपट भाग रहा है। उसके पांव तेजी से उपर-नीचे उठ रहे थे, अपने घुटनों तक वह उन्हें उठा लेता था। उसके सुडौल, सुघड़ सिर के संग जुड़ी टेढ़ी गर्दन उसकी निष्ठा और तल्लीनता का द्योतक थी। एमरल्ड ने आंख टेढ़ी करके घृणा से उसे देखा और अपना एक कान उसकी ओर झटक दिया।

दूसरा सवार हिनहिनाता हुआ सा हंसा और बात खत्म करके अपनी घोड़ी की रास ढीली छोड़ दी। घोड़ी धीरे से चुपचाप अनायास भाव से एमरल्ड को पीछे छोड़कर आगे बढ़ गयी और दुलकी चाल से दौड़ने लगी। उसकी पीठ की मुलायम चिकनी खाल — जिस पर चमड़े की रगड़ का कोई चिन्ह दिखलायी नहीं देता था — धूप में चमक रही थी।

किन्तु उसी क्षण गहरे लाल रंग में चमकता एक घोड़ा तेजी से सरपट दौड़ता हुआ एमरल्ड और उस घोड़ी को बहुत पीछे छोड़ गया। उस पर एक बड़ा सा सफेद सितारा लगा था। दौड़ते-दौड़ते वह लम्बी छलांगें मारता था, कभी धरती की ओर उसका समूचा शरीर बिलकुल झुक जाता और कभी ऐसा लगता मानो हवा में उसकी अगली और पिछली टागें आपस में उलझ जाएंगी। उसके सवार ने अपना सारा भार लगाम पर छोड दिया था मानो वह बैठा न होकर घोड़े की पीठ पर लेटा था। एमरल्ड भड़क गया और उसकी टांगें किनारे की ओर मुड़ गयीं, किन्तु अंग्रेज ने अपने दक्ष हाथों से रास खींच ली। उसके लचकीले चुस्त हाथ, जो एमरल्ड की प्रत्येक भाव-भंगिमा के प्रति सचेत और सतर्क रहा करते थे, सहसा लोहे की तरह कड़े और कठोर बन गये। पवेलियन की इमारत के निकट वह लाल घोड़ा एक बार फिर एमरल्ड के सामने से गुजर गया। इसी बीच वह एक और चक्कर लगा चुका था। उसके मुंह से झाग निकलने लगे थे, आंखें लाल सुर्ख हो गयी थीं और सांस लेते हुए 'गड़-गड़' का स्वर निकलने लगता था। उसके ऊपर झुका हुआ सवार पूरा जोर लगाकर

दनादन उस पर चाबुक बरसा रहा था। आखिर गेट के पास साईसों ने उसकी रास और लगाम पकड़ ली। वह बुरी तरह हांफ रहा था, कांप रहा था और उसका सारा शरीर पसीने से लथपथ हो गया था। उसका वजन कुछ ही मिनटों में काफी कम हो गया होगा।

एमरल्ड ने तेज दुलकी चाल में मैदान का आधा चक्कर और लगाया, फिर मैदान के बीचों-बीच भागता हुआ एक बार फिर छोटे से घेरे में लौट आया।

पांच

घुड़दौड़ के मैदान में कई बार घंटी बजी। घोड़े दुलकी मारते हुए बिजली की तेजी से गेट से गुजर जाते थे। पवेलियन में खड़े लोग उन्हें देखते ही खुशी से चिल्लाते थे और ताली पीटने लगते थे। एमरल्ड भी घोड़ों की पांत में अपना झुका हुआ सिर हिलाता हुआ नजार के संग जा रहा था। वह कपड़े में ढंके हुए अपने कानों को हिला रहा था। कसरत से उसकी नाड़ियों में गर्म खून का झरना आनन्द-विभोर सा होकर बहने लगा था। शरीर का तनाव ढीला पड़ गया था और अंग-प्रत्यंग में मृदुल शीतलता सी भर गयी थी। सांस लेने में जरा भी कठिनाई महसूस नहीं हो रही थी और वह गहरी लम्बी सासें खींचने में समर्थ था। शरीर के पुट्ठे एक नयी दौड़ के लिए मचलते से जान पड़ते थे।

इस प्रकार लगभग आध घंटा बीत गया। घंटी फिर बजी। इस बार जब वह अंग्रेज गाड़ी में चढ़ा तो उसके हाथों में दस्ताने नहीं थे। उसके सफेद, चौड़े, जादुई हाथों को देखते ही एमरल्ड के मन में उसके प्रति स्नेह और सम्मान का भाव जाग उठा।

वह अंग्रेज मन्दगति से गाड़ी मैदान की ओर ले चला, जहां से घोड़े कसरत समाप्त कर लेने के बाद वापिस लौट रहे थे। जिस रास्ते पर घोड़े कसरत किया करते थे, वहां पर अब केवल एमरल्ड और उस विशालकाय काले घोड़े के अतिरिक्त कोई दूसरा घोड़ा नहीं था। इस काले घोड़े से वह एक बार पहले भी कसरत के समय मिल चुका था। पवेलियन ऊपर से नीचे तक खचाखच भरा था। भीड़ एक बड़े काले धब्बे के समान दिखायी देती थी। चारों ओर ऊपर-नीचे धूप में चमकते हाथ और चेहरे, स्त्रियों के बटुए और नोनेट (टोपियां), हवा में फरफराते हुए प्रोग्राम के छोटे-छोटे सफेद कागज नजर आते थे। जब एमरल्ड पवेलियन के पास आया, उसकी चाल जरा तेज हो गयी। एमरल्ड को लगा कि हजारों आंखें उस पर चिपकी हुई हैं — उससे आशा कर रही हैं कि वह जी-तोड़कर भागेगा, अपने शरीर की समूची शक्ति, दिल की हर धड़कन दौड़ में पूरी तरह झोंक देगा। इस विचार के आते ही उसके पुट्ठे नाज-

नखरे में एक दूसरे से गुथ गये और उसकी गति में एक हल्की सी सहजता भर आयी। उसका परिचित सफेद घोड़ा उसके दायीं ओर सरपट भागा चला जा रहा था। उसकी पीठ पर एक लड़का बैठा हुआ था।

एमरल्ड का शरीर तनिक बायीं ओर झुक आया था। सहज मंथरगति में दुलकी मारता हुआ वह मैदान के चौड़े मोड़ पर घूम गया। जब वह उस खम्बे के पास पहुंचा जिस पर लाल दायरे का चिन्ह बना था, तो घंटी बजने लगी। अंग्रेज सवार अपनी सीट पर जरा सा हिला और अचानक उसके हाथ पत्थर से सख्त हो गये। "हां अब चलो — लेकिन देखो! अपनी सारी ताकत जल्दी खर्च मत कर देना — अभी तो सिर्फ शुरूआत हुई है।" यह बात अंग्रेज सवार ने कही नहीं, किन्तु एमरल्ड उसके हाथ के इशारे और दबाव से सब कुछ समझ गया। उत्तर में एमरल्ड ने एक क्षण के लिए अपने पतले कोमल कान पीछे कर लिये और फिर उन्हें पुनः उठा लिया। सफेद घोड़ा जो बराबर उसके साथ भाग रहा था, कभी-कभी पीछे छूट जाता था। उसकी तेज सांस एमरल्ड के गले के निचले भाग को स्पर्श कर जाती थी।

लाल खम्बा पीछे छूट गया, बीच में एक और मोड़ आया, उसके बाद रास्ता सीधा और साफ था। सामने दूसरा पवेलियन था, जिसमें लोग कीड़ी दल के समान भरे थे। हर कदम पर जन-समुदाय पहले से अधिक बड़ा दीखने लगता था। "तेज!" जोकी ने लगाम ढीली कर दी: "और तेज, जरा और तेज!" एमरल्ड उत्तेजित हो उठा। एक बार ही अपनी समूची शक्ति झोंक डालने की तबियत होने लगी। "इजाजत है?" उसने सोचा। "नहीं, अभी से उत्तेजित मत हो," उन जादुई हाथों ने उसे आश्वासन दिया। "कुछ देर और ठहरो।"

दोनों घोड़ों ने एक साथ 'पुरस्कार खम्बों' को अलग-अलग सिरों से पार किया। खम्बों से बंधा हुआ फीता एमरल्ड से टकराते ही टूट गया। एक क्षण के लिए एमरल्ड ने अपने कान हिलाए किन्तु दूसरे ही क्षण वह इस घटना को भूल गया और उसका ध्यान फिर सवार के आकर्षक हाथों पर केन्द्रित हो गया।

"जरा और तेज! आराम से... उत्तेजित मत हो!" जोकी ने आदेश दिया। भीड़ से भरा हुआ चबूतरा पीछे छूट गया। कुछ गज आगे जाकर वे चारों — एमरल्ड, सफेद घोड़ा, अंग्रेज सवार और अस्तबल का लड़का जो रेकाबों पर खड़ा होकर घोड़े की गर्दन से लिपट गया था — दौड़ की एक सुगठित इकाई में घुल-मिल गये, मानो वे तीव्र गति से प्रतिबिम्बित होता एक अनूठा सौन्दर्य-रूप हो, संगीत की एक लय, एक आकांक्षा हो, जो चारों की प्रेरणा और उमंग का स्रोत बन गयी थी। 'ता-ता-ता-ता' एमरल्ड के खुरों से सुमधुर ताल-ध्वनि आ रही थी। 'त्रा-त्रा, त्रा-त्रा,' दूसरे घोड़े के खुर तीखे स्वर में गूंज रहे थे। एक और मोड़ — और एक दूसरा चबूतरा तेजी से उनके पास खिसकता

हुआ दिखायी दिया। "क्या अब और तेज हो जाऊं?" एमरल्ड ने पूछा। "हां!" हाथों ने उत्तर दिया। "लेकिन जरा सावधानी से।"

चबूतरा पीछे रह गया। लोगों की चीख-पुकार से एमरल्ड का ध्यान भटक गया। वह उत्तेजित हो उठा और लगाम का अंकुश कुछ क्षणों के लिए छूट गया। अपनी सधी हुई, नियंत्रित चाल को छोड़कर उसने अंधाधुंध तीन-चार छलांगें लगायीं और उसके पांव उलटे-सीधे पड़ने लगे। किन्तु उसी क्षण लगाम की पकड़ सख्त हो गयी। जोकी ने एक झटके से उसकी गर्दन नीचे झुका दी और उसका सिर दायीं ओर खींच लिया। अब उसके लिए अपनी इच्छानुसार भागना असंभव हो गया। गुस्से में आकर वह अपनी जिद पर अड़ गया, किन्तु उसी क्षण सवार ने धीरे से एक मजबूत झटका दिया और एमरल्ड दुलकी मारता हुआ सीधा भागने लगा। चबूतरा बहुत पीछे छूट चुका था। एमरल्ड फिर अपनी पुरानी, सधी हुई चाल पर आ गया और वे हाथ जो कुछ देर पहले सख्त हो गये थे, अब पूर्ववत कोमल और मैत्रीपूर्ण जान पड़ने लगे। एमरल्ड को अपनी गलती का आभास हो गया था और उसे सुधारने के लिए वह दुलकी चाल को दुगना तेज कर देना चाहता था। "अभी नहीं, जरा ठहरो," जोकी ने प्रसन्न-मुद्रा में कहा। "घबराओ नहीं—खोया हुआ फासला अभी पूरा कर देते हैं।"

इस बार बिना कोई गलती किये, मेल-मिलाप के संग उन्होंने डेढ़-चक्कर पूरा कर लिया। किन्तु उस दिन काला घोड़ा भी अपना जौहर दिखलाने पर तुला हुआ था। जब एमरल्ड उलटे-सीधे पांव रखता हुआ बिदक रहा था, उस समय काला घोड़ा छः गज उससे आगे निकल चुका था। किन्तु इस दौरान में एमरल्ड बीच का फासला काफी कम कर चुका था। आखिरी खम्बे से पहले जो खम्बा था, एमरल्ड वहां काले घोड़े की अपेक्षा सवा तीन सेकन्ड पहले पहुंच गया। "अब तुम्हें पूरी छूट है—भागो।" सवार ने आदेश दिया। एमरल्ड के कान सिमट गये, बिजली की तेजी से उसने एक क्षण पीछे मुड़कर देखा। अंग्रेज सवार का चेहरा एक दृढ़ निश्चय से दमक रहा था, हजामत किये हुए साफ-सुथरे होंठ अधीरता से मुड़ गये थे, जिनके भीतर एक दूसरे से सटे हुए पीले लम्बे दांत दिखायी दे रहे थे। "अपनी पूरी ताकत झोंक दो," ऊपर उठे हुए हाथों में दबी लगाम कह रही थी। "ज्यादा—और ज्यादा!" अचानक अंग्रेज सवार की थरथराती आवाज भोंपू के गगन-भेदी नाद सी हवा में गूंजने लगी: "ओ-ई...ए..."

"हां! हां! हां! हां!" भागते हुए पैरों की ताल पर सफेद घोड़े पर बैठा हुआ लड़का गा उठा।

अब तनाव अपनी चरम-सीमा पर आ पहुंचा था—लगता था मानो एक पतला सा बाल उसे रोक रहा है, जो किसी क्षण भी टूट सकता है। "आ-

ता-ता-ता" एमरल्ड के पांव एक साथ जमीन पर पड़ रहे थे। "ग्रा-ग्रा-ग्रा" सफेद घोड़े की पदचाप सुनायी दे रही थी। वह एमरल्ड से आगे भाग रहा था। गाड़ियों के लचकीले बम दौड़ की लय के साथ हिचकोले खा रहे थे। काले घोड़े की गर्दन से लिपटा हुआ लड़का बार-बार ऊपर-नीचे उछल पड़ता था।

सामने से आते हुए तेज हवा के झोंके एमरल्ड के कोनों में सीटियां सी बजा रहे थे और उसके नथुनों को गुदगुदा देते थे। एमरल्ड की नाक से बार-बार भाप के फुव्वारे से छूटने लगते थे। उसकी खाल गर्मी से तपने लगी थी। सांस लेने में भी अब उसे कठिनाई महसूस हो रही थी। मैदान के अन्तिम मोड़ का चक्कर लेते हुए उसका सारा शरीर नीचे की ओर झुक गया। सामने ही चबूतरा था, जिस पर खड़े हजारों लोग एक कंठ से चिल्लाते हुए उसे प्रोत्साहित कर रहे थे। उनकी आवाजों ने उसे एक साथ ही भयभीत, उत्तेजित और उल्लासित कर दिया। वह दुलकी चाल छोड़ कर चौकड़ी भरने को ही था कि पीछे से उन जादुई हाथों ने उसे रोक दिया। उस संकेत में याचना, आदेश और आश्वासन के सब भाव भरे थे, मानों वे उससे कह रहे हों : "चौकड़ी भरने की जरूरत नहीं है मेरे बच्चे ... खुदा के वास्ते इतना जोश मत दिखलाओ ... हां बस यह ठीक है . यह ठीक है।" एमरल्ड ने बिना देखे फीता तोड़ दिया। विराट चबूतरा चीखों, हंसी के ठहाकों और करतल-ध्वनि से गूंज उठा। लोगों के हाथों और चेहरों के बीचो-बीच छतरियां, छड़ियां, टोपियां और प्रोग्राम के सफेद कागज हवा में उछलने लगे। अंग्रेज सवार ने धीरे से लगाम छोड़ दी। "दौड़ खत्म हो गयी — धन्यवाद मेरे बच्चे!" उसके हाथ की हरकत ने एमरल्ड से कहा। एमरल्ड ने सप्रयास अपने को रोका और दौड़ना बन्द करके चलने लगा। काला घोड़ा अपने खम्बे पर एमरल्ड से सात सेकन्ड पीछे पहुंचा।

अंग्रेज सवार ने अपने सिकुड़े हुए पैर काफी कठिनाई से ऊपर उठाए और बग्गी से लड़खड़ाता हुआ नीचे उतर आया। बग्गी से मखमल की गद्दी उठा कर वह सीढ़ियों की ओर चल पड़ा। साईस भागते हुए एमरल्ड के पास आये, भाप उड़ाती हुई उसकी पीठ को कपड़े से ढंक दिया, और उसे अस्तबल से सटे घास के मैदान की ओर ले चले। उसके पीछे निर्णायक की कुर्सी की ओर से घंटियों की आवाज और भीड़ का कोलाहल निरन्तर बढ़ता जा रहा था। एमरल्ड के मुंह से हल्के पीले रंग के झाग जमीन और साईसों के हाथों पर टपक रहे थे।

कुछ मिनटों बाद एमरल्ड को बग्गी से अलग करके वापिस चबूतरे के पास ले आया गया। उसी क्षण ओवरकोट और नया चमचमाता हुआ हैट पहने एक लम्बा आदमी एमरल्ड के पास आया। एमरल्ड ने उसे अक्सर अस्तबल में आते-जाते देखा था। उसने एमरल्ड की गर्दन को प्यार से थपथपाया और अपनी हथेली से खांड की गोलियां उसके मुंह में डाल दीं। अंग्रेज सवार भी भीड़ में

खड़ा था और मुह सिकोड़ कर अपने लम्बे दांत निकालता हुआ मुस्करा रहा था। एमरल्ड की पीठ से कपड़ा उतार दिया गया और उसे एक तीन टांगों वाले बक्से के सामने खड़ा कर दिया गया। बक्से पर एक काला कपड़ा बिछा था और उसके नीचे सलेटी रंग की पोशाक पहने हुए एक आदमी सिर झुका कर कुछ काम करने में व्यस्त था।

उस विशाल-जन समुदाय में से लोगों के झुंड काली लहरों की तरह चबूतरे के नीचे उतरने लगे। वे लोग घोड़े के इर्दगिर्द भीड़ लगाकर इकट्ठा हो गये। कोई पूरा जोर लगा कर चिल्ला रहा था तो कोई हवा में हाथ हिला रहा था। धूप में उनके चेहरे तपे हुए लाल-सुर्ख हो गये थे और आंखें चमक रही थीं। वे मुंह फुलाये खड़े थे मानो कोई बात उन्हें चुभ रही हो। बार-बार अपनी अंगुलियों से वे लोग एमरल्ड के पैर, सिर और बगलों को छू रहे थे, उसकी पीठ की चादर को खींचने लगते थे।

यकायक वे एक साथ चिल्लाने लगे: "यह नकली घोड़ा है। हमें उल्लू बनाया गया है। हमारे रुपये वापिस करो।" एमरल्ड को कुछ समझ में नहीं आया कि वे क्या कह रहे हैं। वह बेचैनी से अपने कान हिलाने लगा। "क्या कह रहे हैं ये लोग?" उसे आश्चर्य हो रहा था। "क्या मेरे दौड़ने में कोई त्रुटि रह गयी है?" एक क्षण के लिए उसकी आंखें अंग्रेज सवार के चेहरे पर टिक गयीं। एक व्यंग्यात्मक मुद्रा लिए उसका चेहरा सदा गम्भीर और शान्त दिखलायी देता था, किन्तु इस समय उसकी आंखों में क्रोध की ज्वाला भड़क रही थी। अचानक वह जोर से अपनी कठोर कड़कड़ाती आवाज में चिल्ला उठा, उसके हाथ हवा में चमक उठे और एक तमाचे की आवाज भीड़ की कोलाहल में गूंज गयी।

छः

साईस एमरल्ड को वापिस घर ले आये। तीन घंटे बाद उसे जई खाने के लिए मिली। शाम को जब उसे कुएं के पानी से नहलाया जा रहा था, उसकी आंखें मेड़ के पीछे बड़े पीले चांद पर जा पड़ीं। एक अज्ञात भय से उसका दिल कांप उठा।

फिर जो दिन आये, वे विषाद और उदासी से भरे थे।

साईस अब एमरल्ड को कसरत या घुड़दौड़ के लिए अस्तबल से बाहर नहीं ले जाते थे। किन्तु प्रति दिन काफी बड़ी संख्या में ऐसे लोग आते थे, जो निपट अजनबी थे। वे उसे अस्तबल से बाहर बाड़े में ले जाते और वहां अच्छी तरह से उसकी जांच-परख किया करते। उन लोगों से एमरल्ड सर्वथा अपरि-

चित था। वे अपनी अंगुलियां उसके मुंह में घुसेड़ देते, उसकी खाल को झांवे से रगड़ते और हमेशा एक दूसरे पर चीखते-चिल्लाते रहते थे।

फिर एक शाम उसे अस्तबल से बाहर ले जाया गया। लम्बी उजाड़ सड़कों पर चलते हुए उसे लगा मानो रास्ता कभी खत्म न होगा। सड़क के दोनों ओर मकानों की खिड़कियों से रोशनी बाहर आ रही थी। मकान पीछे छूट गये, रेलवे-स्टेशन आया, वह हिलते हुए अंधेरे डिब्बे में खड़ा रहा। लम्बी यात्रा के कारण उसकी टांगें कांपने लगी थीं। इंजन की सीटियां, खटपट करती हुई रेल की पटरियां, धुएं की गन्दी दूषित गन्ध, हिलती हुई लालटेन का पीला-पीला प्रकाश——एमरल्ड की आंखों ने सब कुछ देखा। बाद में उसे रेल के डिब्बे से बाहर ले आया गया। बहुत देर तक वह अनजानी, अपरिचित सड़कों पर चलता रहा, बीच में अनेक गांव और पतझड़ के नंगे खेत आये और अन्त में उसे अन्य घोड़ों से अलग एक अजाने अस्तबल में बन्द कर दिया गया।

कई दिनों तक उसे अपने अंग्रेज सवार वासिली, नजार और ओनजिन याद आते रहे। जब वह सोता था, तब भी उन्हीं के चेहरे सपनों में दिखलायी देते थे। किन्तु समय गुजरता गया और धीरे-धीरे उनकी स्मृति धुंधली पड़ती गयी। उसे किसी से छिपा कर वहां बन्द कर दिया गया था। अकर्मण्यता ने उसे नकारा सा बना दिया। जवानी से गदराया उसका सुन्दर-सजीला शरीर उस अंधेरी कोठरी में तिल-तिल करके गलने लगा। अक्सर नये अजनबी लोगों का झुंड उसे घेर कर खड़ा हो जाता, हर आदमी उसके अंग-प्रत्यंग की जांच-पड़ताल करता और फिर वे आपस में ही लड़ने-झगड़ने लगते।

जब कभी दरवाजा खुलता, बाहर की एक उड़ती हुई सी झलक उसे मिल जाती। मैदान में घोड़ों को चलता या भागता हुआ देख कर उसका हृदय आर्त-नाद कर उठता। गुस्से में वह रुआंसा हो जाता और जोर-जोर से कातर स्वर में उन्हें पुकारने लगता। किन्तु उसी क्षण दरवाजा बन्द हो जाता और पुनः नये सिरे से समय की मनहूस, लम्बी घड़ियां उस अंधेरी कोठरी में घिसटने लगतीं।

अस्तबल के प्रबन्धकर्ता की आंखें छोटी और काली थीं, सिर बड़ा था, मोटे चेहरे पर छोटी काली मूंछें थीं। उस पर सदा निद्रा का अलस भाव घिरा रहता था। एमरल्ड में उसने कभी कोई दिलचस्पी नहीं दिखलायी, किन्तु फिर भी किसी अज्ञात कारण से एमरल्ड उससे डरता रहता था।

एक दिन सुबह, जब सब साईस सो रहे थे, वह दबे पांव एमरल्ड के पास आया, और उसकी नांद में जई के कुछ टुकड़े डाल कर चुपचाप वापिस लौट गया। एमरेल्ड को कुछ आश्चर्य हुआ, किन्तु फिर निश्चिन्त होकर उसने अपना मुंह नांद में डाल दिया। जई का स्वाद कुछ खट्टा-मीठा सा लग रहा था और

उसे छूते ही जुबान पर चरपराहट सी होने लगती थी। "कैसा अजीब स्वाद है," एमरेल्ड ने सोचा। "मैंने तो ऐसी जई कभी नहीं खायी।"

और तभी उसके पेट में दर्द की हल्की लहर उठी। कुछ देर तक पीड़ा की लहरें आती जाती रहीं, फिर हर मिनट उसका दबाव बढ़ने लगा और अन्त में तो वह पीड़ा असह्य हो उठी। एमरल्ड धीरे-धीरे कराहने लगा। उसकी आंखों के सामने अग्निपिण्ड से तैरने लगे, शरीर पर नमी सी छा गयी और उसे लगा मानो किसी ने उसका सारा बल निचोड़ लिया हो। उसकी निर्जीव कमजोर टांगें कांपने लगीं और वह धड़ाम से धरती पर गिर पड़ा। उसने उठने की चेष्टा की किन्तु बड़ी कठिनाई से अपनी अगली टांगें ही वह उठा सका और फिर एक तरफ निढाल होकर गिर पड़ा। उसे लगा मानो उसके सिर पर हवा के सनसनाते थपेड़े प्रहार कर रहे हैं। अंग्रेज सवार अपने घोड़े से लम्बे दांत दिखाता हुआ उसकी आंखों के सामने से गुजर गया। फिर उसे ओनजिन दिखायी दिया। वह हिनहिनाता हुआ भाग रहा था और उसके गले का टेंटुआ पहले की तरह बाहर निकला हुआ था। एक अज्ञात शक्ति एमरल्ड को बरबस अंधेरे, ठंडे गढ़हे में घसीटे ले जा रही थी। वह अब बिलकुल हिल-डुल नहीं सकता था।

अचानक उसका गला अकड़ गया टांगें ऐंठने लगीं और पीठ टेढ़ी हो गयी। सारे शरीर में कंपकंपी सी छूटने लगी। उसकी खाल से सफेद झाग निकलने लगा, जिसकी तीखी गन्ध अस्तबल में फैलने लगी।

लालटेन का कांपता पीला आलोक एक क्षण के लिए उसकी आंखों पर पड़ा और फिर सदा के लिए उसकी दृष्टि अंधेरे में खो गयी। एक खुरदरी सी आवाज उसके कानों में पड़ी, किन्तु जब किसी ने चिल्लाते हुए उसकी बगल पर लात मारी, उसे कुछ भी महसूस नहीं हुआ। वह जा चुका था — हमेशा के लिए।

१९०७

रत्न-कंगन

अगस्त का आधा महीना बीत चुका था। शुक्ल पक्ष अभी आरम्भ नहीं हुआ था। इन दिनों कृष्ण-सागर के उत्तरी तट पर मौसम एक अजीब सा वीभत्स रूप धारण कर लेता था। भारी घनी धुंध सागर और धरती को अपने में लपेटे रहती और लाइट हाऊस का भोंपू दिन-रात एक उन्मत्त सांड की तरह चिंघाड़ता रहता। शायद ही कोई ऐसा दिन हो, जब बूंदाबांदी न हो रही होती। कच्ची सड़कें और फुटपाथ कीचड़ के ढेर में खो जाते। बग्गियों और बैलगाड़ियों के पहिये कीचड़ में धंस जाते और कई दिनों तक उनके लिए आगे चलना असंभव हो जाता। उन्हीं दिनों उत्तर-पश्चिमी दिशा में स्तेपीय-भूमि से एक भयंकर तूफान आया। तूफानी हवा से जिस प्रकार समुद्र की लहरें आडोलित हो उठती हैं, उसी प्रकार वृक्षों के शिखर सरसराते हुए कांपने लगे। रात को घरों पर लोहे की छतें हवा के प्रकोप से इतनी जोर से खड़खड़ाती थी कि लगता था मानो कोई भारी जूते पहने उन पर दौड़ रहा हो। रात भर दरवाजे-खिड़कियां झनझनाते रहे और चिमनियों से कर्कश आक्रोश का स्वर चीत्कार सा करता हुआ सुनायी देता रहा। समुद्र में मछुओं की अनेक नौकाएं रास्ता भटक गयी; उनमें से दो तट पर वापिस न आ सकीं। एक सप्ताह बाद मछुओं की लाशें तट पर दिखायी दीं। समुद्र की लहरें उन्हें वहां फेंक गयी थीं।

तटवर्ती कस्बे के निवासी, जिनमें अधिक संख्या यूनानियों और यहूदियों

की थी, अन्य दक्षिण-वासियों की भांति कोई ऐसा खतरा नहीं उठाना चाहते थे, जिससे उनके प्राण जोखिम में पड़ जाएं। तूफान के भयंकर प्रकोप को देखकर वे भयभीत हो उठे और शीघ्र ही अपने शहर को वापिस लौटने लगे। कीचड़ से लदी-फदी सड़क पर ठेले-गाड़ियों का तांता लग गया। चटाइयां, सोफे, अलमारियां कुर्सियां, हाथ-मुंह धोने के बेसिन, केतलियां इत्यादि — घर-गृहस्थी का सब सामान इन गाड़ियों पर ठूंस-ठांस कर भर दिया गया था। बूंदाबांदी की मलमल सी धुंधली चादर के पीछे से सब चीजें एक बहुत ही दयनीय, करुण दृश्य प्रस्तुत कर रही थीं। लगता था, मानो सारे सामान पर एक मैली, मनहूस दरिद्रता की छाया मंडरा रही हो। बैलगाड़ियों पर नौकरानियां और बावर्ची भीगे हुए मोमजामे पर बैठे थे और उन्होंने अपने हाथों में छोटी-मोटी चीजें — इस्त्रियां, डिब्बे और टोकरियां — पकड़ रखीं थीं। थके-मांदे घोड़े बार-बार हांफते हुए ठहर जाते थे, उनके घुटने थकान से कांप रहे थे और उनकी बगलों से भाप छूट रही थी। आगे बैठे हुए कोचवान फटती हुई आवाज में गाली दे रहे थे। बारिश से बचने के लिये उन्होंने चटाइयों से अपना शरीर लपेट रखा था। उजड़े हुए खाली मकानों का दृश्य और भी अधिक करुणाजनक था। फूलों की क्यारियां तहस-नहस हो गयी थीं, खिड़कियों के शीशे टूट गये थे, कुत्ते लावारिस होकर घूम रहे थे। मकानों के चारों ओर सिगरेटों के टोटे, कागजों के टुकड़े, टूटे हुए चीनी के बर्तन, दफ्ती के बक्से और दवाई की शीशियां बिखरी पड़ीं थीं।

किन्तु अगस्त के अन्तिम दिनों में मौसम अचानक बदल गया। बादल छंट गये। उजली कोमल धूप में खिला हुआ हर दिन अपने साथ एक घनी, स्निग्ध सी शान्ति ले आता — जो शायद जुलाई के दिनों में भी दुर्लभ होती है। पतझड़ के सूखे खेतों में अन्न के पीले पौधों पर मकड़ी के जाले हवा में उड़ते हुए अबरक से चमक रहे थे। पेड़ों को अपनी शान्ति वापिस मिल गयी। उनके पत्ते चुपचाप, धीरे-धीरे झरने लगे।

मार्शल की पत्नी प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना शेयिना को इन दिनों अपने बंगले में ही टिका रहना पड़ा, क्योंकि शहर में उनके मकान की मरम्मत अभी पूरी नहीं हुई थी। तूफान के बाद मौसम में परिवर्तन, सुन्दर सुहावने दिन, एकान्त, शान्ति और स्वच्छ हवा, दक्षिण की ओर उड़ते हुए पक्षियों के झुंड जो टेलीग्राफ की तारों पर बैठ कर चहचहाते थे और समुद्र की ओर से आती हुई नमकीन हवा के सहलाते से मधुर झोंके — इन सब के बीच प्रिंसेस वीरा आनन्द-विभोर सी हो उठी।

दो

उस दिन सत्रह सितम्बर को उसका जन्म-दिन था। उसे वह दिन बहुत प्रिय था। बचपन की सुखद, सुन्दरतम स्मृतियां उस दिन के संग जुड़ी थीं। उस दिन की प्रतीक्षा करते समय उसे किसी अप्रत्याशित सुख की संभावना बनी रहती। सुबह किसी आवश्यक कार्य से शहर जाने के पूर्व उसके पति ने उसकी मेज पर बुन्दों का एक सुन्दर जोड़ा रख दिया था। नाशपातियों की आकृति वाले बढ़िया मोती उन बुन्दों में जड़े थे। अपने पति के इस बहुमूल्य उपहार को देखकर वह फूली नहीं समायी थी।

घर में वह बिलकुल अकेली थी। उसका अविवाहित भाई निकोलाय राजकीय अभियोक्ता था और अक्सर उसी घर में रहा करता था। किन्तु आज वह भी किसी मुकद्दमे के सिलसिले में शहर गया हुआ था। जाते समय उसके पति ने वादा किया था कि वह रात को भोजन के लिये अपने अभिन्नतम मित्रों के अतिरिक्त किसी और को नहीं लाएगा। सौभाग्य से उसका जन्म-दिन गरमियों में होने के कारण वह खर्च-खेचल से बच जाती थी। यदि वह शहर में होती तो इस अवसर पर एक भोज और शायद नृत्य की व्यवस्था भी करनी पड़ती। यहां गांव में इस टीम-टाम की कोई आवश्यकता नहीं, खर्च भी नाममात्र को ही होता है। समाज में प्रिंस शेयिन की प्रतिष्ठा थी, किन्तु उसके बावजूद अथवा शायद इसी के कारण घर का खर्च मुश्किल से चलता था। खानदानी जायदाद पूर्वजों की कृपा से दो कौड़ी की भी नहीं रह गयी थी, किन्तु कुल प्रतिष्ठा को बचाने के लिए हमेशा ही सामर्थ्य से अधिक ठाट-बाट से रहना पड़ता था। कोई एक खर्च थोड़े ही था—स्वागत-समारोह का आयोजन करना, दान-पुण्य करना, कीमती वस्त्र पहनना, घोड़े रखना, इत्यादि सभी की चिन्ता लगी रहती थी। प्रिंसेस वीरा का अपने पति के प्रति गहरा प्रेम पिछले कई वर्षों से एक सच्ची स्थायी मित्रता में परिणत हो चुका था। अपने पति को सर्वनाश के पथ से बचाने के लिए वह अपनी ओर से कोई कोर-कसर नहीं उठा रखती थी। पति के मन में बिना कोई सन्देह उत्पन्न किये वह आवश्यक वस्तुओं से वंचित रह जाती थी और जहां तक संभव हो पाता घर-गृहस्थी का खर्च भी हाथ खींच कर करती थी।

इस समय वह अपनी वाटिका में टहलते हुए खाने की मेज के लिये बड़ी सावधानी से फूल तोड़ रही थी। उजड़ी हुई फूलों की क्यारियों को देख कर जान पड़ता था मानो कई दिनों से वे इस उपेक्षित-अवस्था में पड़ी हों। विभिन्न रंगों के दुहरे कार्नेशन फूल अपना यौवन पार कर चुके थे। स्टॉक फूलों का भी यही हाल था; कुछ अभी तक खिल रहे थे और कुछ फूलों पर छोटी-छोटी

फलियां उग आयीं थीं, जिनकी गन्ध गोभी की गन्ध से मिलती-जुलती थी। गुलाब के फूलों की झाड़ियां गरमी में तीसरी बार खिल रही थीं—अब तक उन पर छोटी-छोटी कलियां और फूल दिखलायी दे रहे थे। डेलिया, पियोनी और गेंदा के फूल भी थे, जिनका मदमाता, गर्वीला सौन्दर्य निस्तब्ध वायुमंडल में पतझड़ की उदास गन्ध बिखेर रहा था। ऐसे फूल भी थे जिनकी प्रणय-लीला के सुनहरे दिन चुक गये थे, पुष्पित-पल्लवित होने की अवधि समाप्त हो चुकी थी और अब वे चुपचाप भावी-जीवन के बीज धरती पर गिरा रहे थे।

इतने में सामने की सड़क से मोटर का हॉर्न सुनायी दिया। अन्ना निकोलायेवना फ्रिस्से अपनी बहिन प्रिंसेस वीरा से मिलने के लिये आ रही थी। सुबह ही उसने टेलीफोन द्वारा वीरा को सूचित कर दिया था कि वह उसका हाथ बटाने के लिए उसके घर रहने आ रही है। मेहमानों का स्वागत करने की जिम्मेदारी भी वह संभाल लेगी।

वीरा ने हॉर्न सुन कर ही अपनी बहिन की मोटर को पहचान लिया। वह दरवाजे पर चली आयी। कुछ मिनटों बाद एक सुन्दर गाड़ी गेट के पास आकर रुक गयी। ड्राइवर ने नीचे उतर कर मोटर का दरवाजा खोल दिया।

दोनों बहनों ने प्रफुल्लित मन से एक दूसरे को चूमा। बचपन से दोनों में गहरा स्नेह था। शक्ल-सूरत में दोनों के बीच रत्ती भर समानता नहीं थी। बड़ी बहिन वीरा की शक्ल अपनी मां—जो एक सुन्दर अंग्रेज रमणी थी—से बहुत अधिक मिलती-जुलती थी। उसकी लम्बी चमकीली देह, कोमल किन्तु गम्भीर और गर्वोन्नत चेहरा, लम्बे सुघड़ हाथ, और झुके हुए आकर्षक कंधों को देखकर पुराने लघु-चित्रों की याद आ जाती थी। छोटी बहिन अन्ना का नैन-नक्शा अपने पिता से मिलता-जुलता था। वह एक तातार-प्रिंस थे, जिनके दादा ने उन्नीसवीं शताब्दी के शुरू में ईसाई धर्म स्वीकार किया था। उनके पूर्वजों में तमरलेन (तैमूर लंग) का रक्त प्रवाहित होता था। उसका पिता बड़े गर्व और अभिमान से उस हत्यारे को 'तैमूर लेंक' के तातारी नाम से पुकारता था। कद में अन्ना अपनी बहिन से जरा छोटी थी। उसके कंधे तनिक चौड़े थे और वह लोगों को चिढ़ाने-बनाने, हंसी-मजाक करने में सबसे आगे रहती थी। उसका चेहरा-मोहरा बिलकुल मंगोल सांचे में ढला हुआ था—गालों की उभरी हुई हड्डियां, छोटी-छोटी आंखें, जिन्हें कमजोर दृष्टि के कारण अक्सर वह सिकोड़ लेती थी, और छोटा सा उद्दीपक चेहरा जिस पर हमेशा दर्प का भाव झलकता रहता था। मांसल, भरा हुआ उसका निचला होंट तनिक बाहर निकला रहता। उसकी मुस्कराहट, नैन-नक्श का नारीत्व, चुलबुलाहट, दूसरों की नकल उतारना, छेड़छाड़—उसकी कोई हरकत ऐसी न थी, जिसमें एक विचित्र, रहस्यमय आकर्षण न भरा हो। कदाचित यही कारण था कि सौन्दर्य का अभाव होने

पर भी उसमें ऐसा कुछ था जो उसकी बहिन के गम्भीर, गरिमा-सम्पन्न लावण्य की अपेक्षा पुरुषों को अपनी ओर अधिक आकर्षित कर लेता था।

अन्ना का विवाह एक धनी किन्तु मूर्ख व्यक्ति से हुआ था। वह हमेशा हाथ पर हाथ धरे बैठा रहता, हालांकि वह एक खैराती-संस्था के बोर्ड का सदस्य था और अक्सर अपने नाम के आगे 'कामर जन्कर' की उपाधि लगाता था। अन्ना के दो बच्चे थे—एक लड़का, एक लड़की, किन्तु उसे अपना पति एक आंख नहीं सुहाता था। उसने निश्चय कर लिया था कि भविष्य में उसके कोई और बच्चा नहीं होगा। वीरा को बच्चों की बहुत लालसा थी; उसका बस चलता तो बेरोक-टोक ज्यादा से ज्यादा बच्चों की मां बन जाती, किन्तु दुर्भाग्य ने अब तक उसे सन्तान के प्रेम से वंचित रखा था। उसने अपना सारा प्यार अपनी बहिन के दोनों बच्चों पर उड़ेल दिया था। दोनों बच्चे शालीन और आज्ञाकारी थे। दोनों के हल्के भूरे रंग के घुंघराले बाल गुड्डे के बालों से दिखायी देते थे। सुन्दर होने के बावजूद दोनों बच्चे बहुत कमजोर थे और उनके चेहरों पर सूखा सा पीलापन छाया रहता था।

अन्ना के चंचल, उच्छृंखल स्वभाव में लापरवाही कूट-कूट कर भरी थी। उसके चरित्र में ऐसे परस्पर-विरोधी तत्व विद्यमान थे, जो कभी-कभी उसके व्यवहार को विचित्र, सनकी सा बना देते। योरप के विभिन्न देशों की राजधानियों और स्वास्थ्यप्रद स्थानों में वह घूमी थी, पुरुषों के संग खेल-खिलवाड़ करने में भी वह सबसे आगे रहती थी, किन्तु आश्चर्य की बात यह थी कि अपने पति के संग विश्वासघात करने की इच्छा उसमें कभी उत्पन्न नहीं हुई। यह दूसरी बात थी कि वह उसके सामने और पीठ पीछे उसका मखौल उड़ाने में कभी न चूकती। वह पैसा पानी की तरह बहाती थी, कोई ऐसा शौक नहीं था जो उसने पूरा न किया हो। जुआ, नाच, दिल को उत्तेजित करने वाले खेल-तमाशे, नयी सनसनीखेज घटनाएं—इन सबके प्रति वह गहरी दिलचस्पी प्रदर्शित करती थी। विदेश में वह अक्सर ऐसे रेस्तराओं में जाती थी, जिन्हें भद्र समाज सन्देह की दृष्टि से देखता था। इन सब बातों के बावजूद उसकी उदारता व सहृदयता किसी से छिपी न थी। धर्म के प्रति उसका गहरा, सच्चा लगाव था, यहां तक कि उसने गुप्त रूप से कैथोलिक धर्म स्वीकार कर लिया था। उसकी पीठ, वक्षस्थल और कंधों के सौंदर्य को देखकर आखें चकाचौंध सी हो जातीं। जब कभी वह सज-धज कर किसी 'बॉल' में जाती, तो उसकी पोशाक को देख कर लगता था मानो वह सुरुचि और फैशन की सब सीमाओं का उल्लंघन कर गयी है। उसके वस्त्र उसके अंगों को ढंकते कम थे, अनावृत्त अधिक करते थे। कुछ लोगों का कहना था कि अपने वस्त्रों के नीचे वह पतली महीन सी बनियान पहने रहा करती थी।

वीरा का आचार-व्यवहार अपनी छोटी बहिन की तुलना में बहुत अधिक सीधा-सादा था। सबके प्रति सद्‌भावना रखते हुए भी उसके भीतर कहीं काठिन्य का भाव छिपा था, जिसके कारण वह किसी से घुल-मिल कर बात नहीं कर पाती थी। वह सदा सबसे दूर-दूर रहती —और जब किसी से बातचीत करती तो लगता मानो उस पर कृपा कर रही हो। वह एक महारानी की तरह सबसे अलग-थलग, प्रकृतस्थ, गम्भीर मुद्रा में ही बैठी रहती थी।

तीन

"कितनी सुन्दर जगह है यह! सच वीरा, यहां मुझे सब कुछ अच्छा लगता है," अन्ना ने अपनी बहिन के संग तेजी से छोटे-छोटे कदम बढ़ाते हुए कहा। समुद्री तट के जरा ऊपर एक बेंच रखा था। "आओ, जरा देर यहां बैठ कर आराम करें। मुझे तो समुद्र देखे एक अर्सा गुजर गया!" वह बोली। "यहां की हवा लगते ही सब चिन्ताएं रफूचक्कर हो जाती है। जानती हो वीरा, पिछली गरमियों में मैंने क्रीमियां में मिसखोर के स्थान पर एक नयी चीज पता चलायी। अच्छा बताओ — समुद्र की लहरों की गन्ध कैसी होती है? बिलकुल मिग्नोनेट फूल की सुगन्ध से मिलती-जुलती — सच!"

वीरा स्नेह से मुस्करायी।

"तुम्हारा दिमाग हमेशा हवा में रहता है।"

"लेकिन वीरा यह सही बात है। एक बार मेरे यह कहने पर कि चांदनी का रंग हल्का गुलाबी सा होता है, सब लोग मुझ पर हंसने लगे थे। किन्तु कुछ दिन पहले बोरित्स्की — जो आजकल मेरा चित्र बना रहा है — ने सचमुच मेरे मत की पुष्टि कर दी। उसने मुझे बतलाया कि कलाकार बहुत पहले से ही इस बात को जानते हैं।"

"अच्छा तो आजकल इस कलाकार के पीछे पड़ी हो?"

"तुम तो बस ऐसी ही बे सिर पैर की बातें सोचती हो।" वह हंसती हुई टीले के किनारे तक चली आयी, जो एक लम्बी दीवार की तरह नीचे समुद्र में चला गया था। उसने झुक कर समुद्र की ओर झांका। हठात उसके मुंह से चीख निकल पड़ी। भय से उसका चेहरा पीला पड़ गया था।

"कितना ऊंचा है यह टीला!" उसके स्वर में धीमा सा कंपन था। "जब कभी मैं किसी ऊंची चोटी से नीचे की ओर देखती हूं, मेरे सारे शरीर में खट्टी-मीठी सी झुरझुरी दौड़ जाती है और मेरे पैरों की अंगुलियों में दर्द होने लगता है। नीचे झांकने का लोभ फिर भी संवरण नहीं कर पाती।"

वह किनारे की ओर बढ़ी किन्तु उसकी बहिन ने उसे रोक लिया।

"रहने भी दो अन्ना — जब मैं तुम्हें नीचे झांकते हुए देखती हूं तो मेरा सिर चकराने लगता है। आओ, मेरे पास बैठ जाओ।"

"अच्छा भई—अभी आती हूं; लेकिन वीरा, नीचे कितना मोहक, कितना सुन्दर लगता है, मेरी तो आंखें ही नहीं भरतीं। काश तुम जान पातीं कि जब कभी मैं दुनिया में इतनी आश्चर्यजनक चीजों को देखती हूं, मेरे दिल में ईश्वर के प्रति कितनी कृतज्ञता उमड़ पड़ती है।"

एक क्षण तक दोनों चुपचाप कुछ सोचती रहीं। नीचे, बहुत नीचे समुद्र निस्तब्ध और शान्त था। बेंच से समुद्र का दूसरा छोर दिखायी नहीं देता था—शायद इसलिए उसकी अबाध व्यापकता और गुरुता और भी अधिक बढ़ जाती थी। जल शान्त और निश्चल था, मानो अपना ही कोई आत्मीय हो। चारों ओर एक नीला विस्तार था, जिस पर पीले-नीले रंग की टेढ़ी धारियां जल-प्रवाह को चिन्हित कर रही थीं। क्षितिज की ओर समुद्र का जल गहरे नीले रंग में परिणत हो गया था।

तट के पास मछुओं की नौकाएं धुंधली सी दीखती थीं। शान्त जल में निस्पन्द निश्चल सी खड़ी हुई वे चुपचाप ऊंघती सी जान पड़ती थीं। कुछ दूर पर तीन मस्तूलों वाला जहाज खड़ा था। हवा के झोंकों से उसके सफेद, सुघड़ पाल फरफरा उठते थे। दूर से लगता था मानो वह हवा में गतिहीन, निश्चल टंगा हो।

"तुम जो कुछ कह रही हो, मैं अच्छी तरह समझती हूं," वीरा ने गंभीर-चिन्तन मुद्रा में कहा। "किन्तु न जाने क्यों मैं तुम्हारी तरह नहीं सोच पाती। जब कभी लम्बे अन्तराल के बाद मैं समुद्र को देखती हूं, मेरा मन उत्तेजित सा हो जाता है, लगता है, मानो मुझे कोई जोर से झिझोड़ रहा हो। समुद्र का विस्तार एक विराट, गहन और अभूतपूर्व आश्चर्य में मूर्तिमान हो उठता है। किन्तु बाद में जब आंखें अभ्यस्त हो जाती हैं, उसकी शून्यता दम घोटने लगती है। फिर तो बस समुद्र को देखते ही मन ऊबने लगता है।"

अन्ना मुस्कराने लगी।

"क्या बात है?" उसकी बहिन ने पूछा।

अन्ना ने बात बनाते हुए कहा : "पिछले वर्ष गर्मी के दिनों में हम घुड़सवारों के एक बड़े गिरोह में *याल्टा* से *उच कोश* जा रहे थे। वह स्थान जंगल के अफसर के बंगले से परे झरने के ऊपर था। चारों तरफ धुंध और सीलन थी, किन्तु हम चीड़ के पेड़ों के बीच रास्ता टटोलते हुए ऊपर चढ़ते गये। कुछ ही देर बाद धुंध हवा में घुल गयी और हम जंगल को पीछे छोड़ आये। अचानक हमें महसूस हुआ कि हम सब चट्टान के संकरे किनारे पर खड़े हैं—नीचे एक गहरा खड्ड था। दूर फैले हुए गाव माचिस की डिब्बियों से लगते थे, जंगल और

बागों के स्थान पर केवल घास के मैदान दिखलायी दे रहे थे। समूचा लैंडस्केप एक बड़े नक्शे की तरह हमारे सामने खुला पड़ा था। नीचे पचास-साठ मील तक समुद्र फैला था। उस चट्टान पर खड़े-खड़े मुझे लगा मानो मैं अधर में लटकी हूं और अभी फुर्र से ऊपर उड़ जाऊंगी। उस दृश्य की सुन्दरता भुलाए नहीं भूलती। कुछ क्षणों के लिए मुझे जिन्दगी बहुत हल्की सी जान पड़ी थी। मैंने गाइड की ओर मुड़ कर कहा : 'क्यों सैयद ओधलू, खूबसूरत जगह है न ?' किन्तु उसने घृणा से आंखें फेर लीं। 'बीबी जी, यह तो हम रोज देखता है, हमारा तो इसे देखते-देखते आंख पक गया।'"

"इस तुलना के लिए धन्यवाद !" वीरा ने हंसते हुए कहा। "तुम कुछ भी कहो अन्ना, मुझे तो हमेशा यह महसूस होता है कि हम उत्तर-निवासी समुद्र के सौन्दर्य को कभी नहीं समझ सकेंगे। सच पूछो तो मुझे जंगल भाते हैं। याद हैं तुम्हें येगोरोवस्कोय के जंगल, क्या कभी उनसे जी ऊबता था ? जहां आंखें उठाओ, चीड़ के पेड़ और काई नजर आती थी। तुम्हें याद हैं वे फूल जिन्हें देखकर लगता था मानो वे साटन के बने हों और किसी ने उनपर सफेद मोतियों के बेल-बूटे काढ़ दिये हों ? कितना शीतल और शान्त वातावरण था !"

"मुझे कोई अन्तर नहीं पड़ता — कौन सी चीज है जो मुझे अच्छी नहीं लगती !" अन्ना ने कहा। "किन्तु सबसे सुन्दर मुझे अपनी छोटी सी बहिन लगती है — मेरी अच्छी प्यारी वीरा ! सारी दुनिया में हम दोनों जैसा कोई नहीं — क्यों ठीक है न ?"

उसने वीरा के गले में हाथ डाल दिये और बिलकुल उससे सटकर, उसकी गाल से अपनी गाल चिपका कर बैठ गयी। अचानक उसने कहा :

"अरे मैं तो भूल ही गयी — यहां हम उपन्यास के दो पात्रों की तरह चर्चा कर रहे हैं और जो उपहार तुम्हारे लिये लायी थी, उसकी बात दिमाग से सफाचट उड़ गयी। पता नहीं, तुम्हें पसन्द भी आएगा ? देखो ..."

उसने अपने पर्स से एक छोटी सी कापी निकाली जिस पर एक असाधारण-सी जिल्द बंधी थी। जिल्द बहुत पुराने, घिसे हुए नीले रंग के मखमल से ढकी थी, जिस पर सोने की तारों से बहुत महीन और सुन्दर बेल-बूटे काढ़े गये थे। किसी कलाकार ने बड़े परिश्रम से उसे बनाकर अपनी विलक्षण दक्षता और प्रतिभा का चमत्कार दिखलाया था। कापी पर धागे सी पतली सोने की एक जंजीर लटक रही थी और उसके बीच कागज के पन्नों के स्थान पर हाथी दांत के पन्ने लगे थे।

"कितना सुन्दर है ! बिलकुल लाजवाब चीज है !" वीरा ने आल्हादित होकर अपनी बहिन को चूम लिया। "धन्यवाद अन्ना, तुम्हें यह निधि कहां से मिल गयी ?"

"एक दुकान में जाना हुआ था, जहां बहुत सी पुरानी, विलक्षण वस्तुएं रखी रहती थीं। तुम तो जानती हो, मुझे पुरानी अंगर-खंगर चीजों के प्रति कितनी उत्सुकता रहती है — वहीं से यह प्रार्थना-पुस्तक खरीद लायी। तुमने एक बात देखी — इस गहने की आकृति बिलकुल 'क्रॉस' से मिलती-जुलती है। वहां से तो मैंने सिर्फ जिल्द ली थी—बाकी सब चीजें, पन्ने, पेंसिल और बक्सुआ तो सब बाद में जुटाना पड़ा। मैंने मोल्लीनेत के सामने अपनी इच्छा प्रकट की थी किन्तु उसे मेरी एक बात भी समझ में नहीं आयी। दरअसल मैं चाहती थी कि बक्सुए की बनावट और समूचे पैटर्न में एक सामंजस्य हो — उसके लिए यह जरूरी था कि उसका रंग हल्का सुनहरा हो, पुराने सोने का बना हो और उस पर महीन नक्काशी की गयी हो। किन्तु उसने मेरी एक न सुनी और अपने मन से न जाने यह क्या बना डाला है, लेकिन देखो — यह जंजीर वेनिस की पुरानी कारीगरी का अद्‌भुत नमूना है।"

वीरा प्रशंसा-भाव से उस सुन्दर, सुनहरी जिल्द को सहलाने लगी।

"कितनी प्राचीनता छिपी है इस वस्तु में — न जाने यह कापी कितनी पुरानी होगी?"

"निश्चित-रूप से नहीं कहा जा सकता, किन्तु मेरा अनुमान है कि यह कापी पहले-पहल सत्रहवीं शताब्दी के उत्तर-काल या मध्य-अठारहवीं शताब्दी में बनी होगी," अन्ना ने कहा।

"मुझे इसे छूते हुए बड़ा अजीब सा लग रहा है। क्या मालूम, पौम्पादूर के मार्कुइस या मारी आन्तोयनेत के हाथों ने इसे स्पर्श किया हो? अन्ना, तुम भी खूब हो! प्रार्थना-पुस्तक को कापी में परिणत करने का चमत्कार केवल तुम ही कर सकती हो! चलो, देखें भीतर क्या हो रहा है?"

सामने ही चौड़े सपाट पत्थरों का चबूतरा खड़ा था, जिसे चारों ओर से इजाबेला की अंगूर-लताओं के जालीदार आंचल ने ढंक लिया था। हरी शाखाओं से धूप में चमकते घने भारी गुच्छे लटक रहे थे, जिनमें से बेरों की सुगन्ध आ रही थी। वृक्ष-लताओं का हल्का धुंधला सा हरा प्रकाश चबूतरे पर छिटक रहा था, जिसकी पीली छाया दोनों स्त्रियों के चेहरों पर पड़ रही थी।

"क्या भोज का आयोजन इसी स्थान पर किया गया है?" अन्ना ने पूछा।

"पहले तो यही इरादा था, किन्तु आजकल शाम के समय सर्दी बढ़ जाती है, इसलिये सारा प्रबन्ध खाने के कमरे में ही किया जायगा। भोजन के बाद लोग धूम्रपान करने यहां आ सकते हैं।"

"सब वही लोग हैं या किसी ऐसे व्यक्ति को भी आमंत्रित किया है, जिसे देखने की उत्सुकता रहेगी?"

"अभी कुछ पता नहीं — केवल इतना जानती हूं कि दादाजी आज जरूर उपस्थित रहेंगे।"

"अच्छा, दादा जी आ रहे हैं?" अन्ना ने खुशी से उसके हाथ पकड़ लिए। "उन्हें तो लम्बी मुद्दत से नहीं देखा।"

"वास्या की बहिन भी आ रही है और मेरा ख्याल है कि प्रो. स्पेश-निकोव भी पधारेंगे। कल तो सचमुच मेरे होश-हवास गुम हो गये। तुम जानती हो प्रोफेसर और दादा दोनों खाने के शौकीन हैं, किन्तु यहां या शहर में चाहे तुम अपना सर्वस्व बेच डालो, कोई अच्छी चीज मिलती ही नहीं। लूका ने किसी शिकारी से बटेर मंगवा लिये हैं और अब पूरी लगन से उन्हें पका रहा है। गाय का भुना हुआ गोश्त है, किन्तु केकड़े का मांस शायद सबको पसन्द आएगा।"

"सब ठीक तो है — तुम नाहक चिन्ता कर रही हो। सच पूछो तो स्वादिष्ट भोजन की चाट तुम्हें भी है।"

"किन्तु जो खास चीज है, वह तो मैंने बतलायी नहीं। आज सुबह एक मछुआ हमारे लिए गर्नार्ड मछली लाया था — कैसी भीमकाय देह थी उसकी। सच, उसे देखते ही मेरे तो रोंगटे खड़े हो गये।"

अन्ना ने तुरन्त उस मछली को देखने की इच्छा प्रकट की। उसकी जिज्ञासा का कोई अन्त नहीं था। उसे हर चीज में दिलचस्पी थी, चाहे उसका उससे दूर का सम्बंध भी न हो।

लूका बड़ी मुश्किल से पानी भरे सफेद पतीले को कुन्डों से घसीटता हुआ कमरे में ले आया। उसने दाढ़ी-मूछ मुड़ा रखी थी। उसके चेहरे का रंग सांवला और कद लम्बा था। बड़ी सावधानी से उसने पतीले को हाथों में थाम रखा था ताकि पानी की बूंदें नीचे गिर कर लकड़ी का फर्श गीला न कर दें।

"साढ़े बारह पौंड वजन है हुजूर!" उसके स्वर में बावर्ची का गर्व बोल रहा था। "अभी कुछ देर पहले हमने इसे तोला था।"

मछली पतीले से कहीं ज्यादा बड़ी थी। वह अपनी पूंछ मोड़कर उसमें लेटी थी। उसके शरीर पर सुनहरी धारियां चमक रही थीं, लाल-सुर्ख उसके सुफने थे और बड़े लोलुप सिर से हल्के नीले रंग के पंखों जैसे दो पर निकले हुए थे। वह अभी जीवित थी और उसके गलफड़े तेजी से हिल रहे थे।

छोटी बहिन ने बडी सतर्कता से मछली के मस्तक को अपनी छोटी अंगुली से छुआ। उसी क्षण मछली ने अपनी पूंछ सर्राटे से हवा में घुमायी। डर के मारे अन्ना के मुंह से चीख निकल गयी और उसने हड़बड़ा कर अपनी अंगुली पीछे खींच ली।

"हुजूर — आप चिन्ता न करें। अपनी तरफ से हम कोई कसर नहीं उठा रखेंगे।" बावर्ची ने वीरा को आश्वासन देते हुए कहा। "कुछ देर पहले

एक बल्गेरियन दो अनानास दे गया है, देखने में वे खरबूजों से लगते हैं, किन्तु उनकी सुगन्ध उनसे कहीं ज्यादा अच्छी है। एक बात आपसे पूछनी थी हुजूर—गर्नार्ड मछली के संग आप कौन सी चटनी लेना पसन्द करेंगी—पोलिश या तातार? अगर इन दोनों में से कोई भी पसन्द न हो तो मक्खन में रस्क डाल कर भी दिया जा सकता है—आपकी क्या आज्ञा है?"

"जैसा मुनासिब समझो वैसा ही करो। अब तुम जा सकते हो!" प्रिंसेस ने कहा।

चार

पांच बजे के बाद मेहमान आने लगे। प्रिंस वासिली अपनी स्थूलकाय विधवा बहिन ल्युदमिला ल्वोवना दुरासोवा के साथ आए। उसके नेक स्वभाव से सब परिचित थे। वह बहुत कम बोलती थी। उसके बाद वास्यूचोक आया। वह एक अमीर चरित्रहीन युवक था जिसके पास धन-दौलत की कमी नहीं थी किन्तु जो अपनी निर्लज्जता के लिए बदनाम था। उसमें कुछ ऐसे गुण थे जो हर महफिल में जान डाल देते थे। वह गाने और कविता सुनाने में निपुण था और अक्सर मूक-अभिनय, नाटक और खैराती-बाजार का आयोजन बड़ी कुशलता से कर लेता था। सुप्रसिद्ध पियानो-वादक जैनी रेतर भी उपस्थित थी। प्रिंसेस वीरा से उनकी मित्रता उस समय से चली आती थी, जब वे दोनों स्मोलनी इंस्टीट्यूट में थे। उनके संग निकोलाय निकोलायविच भी आए थे, जो रिश्ते में उनके जीजा लगते थे। उनके एकदम बाद अन्ना के पति मोटर में प्रोफेसर स्पेशनिकोव और उप-गर्वर वॉन सैक के संग पधारे। प्रोफेसर जब चलते थे तो उनका भारी बेडौल शरीर थलथल करने लगता था। सबसे अन्त में जनरल अनोसोव किराये की सुन्दर लैंडौ गाड़ी में आए। दो अफसर उनके साथ थे। पतले-दुबले स्टाफ कर्नल पोनामारयोव शक्ल-सूरत में अपनी आयु से अधिक बड़े लगते थे। दफ्तर के काम की ऊब और थकान ने उन्हें पीस डाला था, जिसके परिणामस्वरूप उनका स्वभाव चिड़चिड़ा सा हो गया था। दूसरे अफसर घुड़सवार सेना के गार्ड-लेफ्टीनेन्ट बाखतिंस्की थे। नृत्य-कला के वह इतने प्रसिद्ध उस्ताद थे कि सारा पीटर्सबर्ग उनका लोहा मानता था। शिष्टाचार और शाइस्तगी के तो वह चलते-फिरते पुतले थे।

लम्बे, स्थूलकाय, सफेद धवल बालों वाले जनरल अनोसोव एक हाथ से लोहे की कड़ी और दूसरे हाथ से लैंडौ का पिछला भाग पकड़ कर फुटबोर्ड से नीचे उतरे। कानों में लगाने का श्रुति-यंत्र उनके बाएं हाथ में था और रबड़ में मढ़ी हुई लकड़ी को उन्होंने दाहिने हाथ से पकड़ रखा था। उनके चौड़े, खुरदरे,

लाल चेहरे और चमकती हुई नाक के ऊपर दो सिकुड़ी हुई आंखों से एक हल्की व्यंगयात्मक मुस्कान झलकती रहती थी, जो केवल उन सीधे-सादे, निर्भीक लोगों में ही दिखायी देती है, जिन्होंने जीवन में अनेक अवसरों पर अपनी जान जोखिम में डाल कर मृत्यु का सामना किया हो।

दोनों बहिनों ने दूर से ही उन्हें पहचान लिया — भागती हुई दोनों बाहर आयीं और हंसी-मजाक में ही उन्हें अपने हाथों का सहारा देने लगीं।

"क्या मैं कोई पादरी हूं ?" जनरल की स्नेह भरी फटती हुई आवाज हवा में गूंज गयी।

"दादा — इतने दिनों से हम आपकी राह देख रहे हैं और एक आप हैं कि बस ईद का चांद बन गये।" वीरा ने उलहना भरे स्वर में कहा।

"दादा दक्षिण में आकर तो सारी हया-शर्म घोल कर पी गये हैं।" अन्ना ने हंसते हुए कहा। "क्यों जी, आप इतनी जल्दी अपनी धर्म-पुत्री को भुला बैठे ? बस दादा रहने दो, तुम एक नम्बर के ढोंगी हो।"

जनरल ने अपने सिर से टोपी उतार दी, दोनों बहनों के हाथ और कपोल चूमें और फिर दुबारा दोनों के हाथों का चुम्बन किया।

"जरा ठहरो — मेरी बात तो सुनो. नाहक गुस्सा क्यों हो रही हो ?" जनरल हर शब्द के बाद सांस लेने को रुक जाते थे — उन्हें दमा की पुरानी शिकायत थी।

"ईश्वर इन डाक्टरों से बचाए — गरमी भर गठिया का इलाज करवाता रहा — ये मरदूद डाक्टर मुझे एक अजीब किस्म का मुरब्बा देते रहे — उसकी दुर्गन्ध से मेरा सिर भन्ना उठता था — कहीं आने-जाने नहीं देते — तुमसे मिलने के लिए पहली बार घर से बाहर आया हूं — कैसा हाल-चाल है तुम लोगों का — वीरा, तू तो एक अच्छी-खासी संभ्रांत महिला नजर आती है, तुझे देख कर तो तेरी स्वर्गीय मां याद आ जाती है — तेरी शक्ल-सूरत बिलकुल उनसे मिलती है — अपने बच्चे के नामकरण पर मुझे बुलाएगी — क्यों ?"

"दादा, शायद यह अवसर कभी नहीं आएगा।"

"अरी — तू ने तो अभी से सारी आशा छोड़ दी — ईश्वर की प्रार्थना कर — सब कुछ ठीक हो जायगा। और अन्ना ! तू बिलकुल नहीं बदली — साठ वर्ष की उम्र में भी तू ऐसी ही नटखट रहेगी — लेकिन जरा ठहरो, पहले इन दोनों महानुभावों से तुम्हारा परिचय करवा दूं।"

"मुझे आपसे परिचित होने का सौभाग्य पहले से ही प्राप्त हो चुका है," कर्नल पोनामारयोव ने अभिवादन करते हुए कहा।

"मेरा परिचय भी प्रिंसेस से पीटर्सबर्ग में हो चुका है," गार्ड लेफ्टीनेन्ट बाखतिंस्की ने कहा।

"अच्छा अन्ना — तो लेफ्टीनेन्ट बाखतिस्की से तुम्हारा परिचय करवा दूं। नाचने और पीने में इनके सामने कोई नहीं ठहर सकता। अव्वल नम्बर के घुड़सवार हैं। प्यारे बाखतिस्की, बग्गी से वह चीज उतारना मत भूलना। शानदार दावत होनी चाहिए प्यारी वीरा ! देख लेना, आज तुम्हारे दादा खूब छक कर भोजन करेंगे। डाक्टरों की ऐसी की तैसी — उनका बस चलता तो मुझे भूखा मार देते।"

जनरल अनोसोव स्वर्गीय प्रिंस मिर्जा बुलत तुगानोवस्की के सहयोगी और सहोदर मित्र रह चुके थे। प्रिंस की मृत्यु के बाद उन्होंने अपना सारा स्नेह और प्रेम उनकी दोनों पुत्रियों पर उड़ेल दिया था। दोनों बहनें बचपन से ही उनसे परिचित थीं और अन्ना के तो वह धर्म-पिता थे। आज की तरह उन दिनों भी वह 'क' शहर में एक विशाल किन्तु परित्यक्त दुर्ग के गवर्नर थे और लगभग रोज तुगानोवस्की से मिलने आया करते थे। अपने लाड़-प्यार से उन्होंने उन दोनों बहनों को बिगाड़ दिया था। कभी उनके लिए उपहार लाते और कभी उन्हें अपने संग नाटक या सर्कस ले जाते। उन्हें देखते ही दोनों बहनों की बाछें खिल जातीं — अपने खेलों में उनसे बढ़ कर बढ़िया साथी उन्हें और कौन मिल सकता था ? कभी-कभी दादा शाम की चाय के बाद उन्हें अपने सैनिक-जीवन की दिलचस्प घटनाएं सुनाया करते थे जिन्हें स्मरण करके आज भी वे रोमांचित हो जाती थीं। दादा धीरे-धीरे उन्हें युद्ध की मुहिमों, लड़ाइयों, जय-पराजय, रात्रि-पड़ावों, घायल सैनिकों और पाले-तुषार से भीगी ठंडी रातों का इतने सीधे-सादे ढंग से किस्से सुनाते थे कि उन्हें लगता था मानो वे किसी वृहत महा-काव्य की रोचक गाथाओं को सुन रही हों। जब तक उन्हें जोर-जबरदस्ती सोने के लिए न भेज दिया जाता था, वे सब सुध-बुध खो कर दादा की बातों में खोई रहती थीं।

जनरल का अद्भुत, उदार और बहुमुखी व्यक्तित्व पुराने युग का जीता-जागता प्रतीक था। कहने को वह जनरल थे, किन्तु अभिमान और दम्भ उन्हें छू तक नहीं गया था। उनके सीधे-सादे आचार-व्यवहार को देख कर लगता था मानो वह जनरल न होकर पुराने जमाने का साधारण सैनिक हों — एक रूसी सैनिक — जो सेना में रहने के बावजूद एक किसान की भांति निश्छल और उदार होता है। शहीद और संत वह दोनों ही है, और दोनों के सदगुण उसके चरित्र को उदात्त, अजेय और गौरवपूर्ण बनाते हैं। निश्छल, सहज आस्था, जीवन के प्रति स्पष्ट स्वस्थ आशावादी दृष्टिकोण, अडिग, अपूर्व साहस, मृत्यु के प्रति विनम्रता और पराजित के प्रति करुणा का भाव, असीम धैर्य और अद्भुत शारीरिक और नैतिक-शक्ति — रूसी सैनिक की ये विशेषताएं किसी से छिपी नहीं हैं।

पोलिश-युद्ध के बाद, सिवाय रूसी-जापानी युद्ध के, अनोसोव ने प्रत्येक लड़ाई में सक्रिय रूप से भाग लिया था। जापानी-युद्ध में भी, यदि उनकी सेवाओं की मांग की जाती तो वे अवश्य जाते। किन्तु उसमें भाग न ले सकने का उन्हें कोई दुःख न था। वह अक्सर गहरी विनम्रता के साथ कहा करते थे : "मृत्यु को, बिना आवश्यकता के, चुनौती देना मूर्खता है।" अपनी नौकरी के दौरान में, कोड़े मारना तो दूर रहा — उन्होंने एक बार भी अपने अधीन किसी सैनिक पर हाथ तक न उठाया था। पोलिश-विद्रोह के समय जब रेजीमेंट के कमांडर ने उन्हें युद्ध-बन्दियों के एक दल पर गोली चलाने की आज्ञा दी, तो उन्होंने साफ उसके आदेश को मानने से इनकार कर दिया। "अगर कोई आदमी जासूस है, तो मैं अपने हाथों से उसका काम-तमाम कर सकता हूं, बन्दूक चलाने की जरूरत ही नहीं। किन्तु ये बेचारे तो युद्ध-बन्दी हैं, जब तक इनकी रक्षा का भार हमारे ऊपर है, इनका बाल भी बांका नहीं होना चाहिए।" अफसर को सीधी, स्थिर दृष्टि से देखते हुए उन्होंने यह बात पूरी विनम्रता और आदर से कही थी। उनके स्वर में झूठी शूरवीरता का दम्भ अथवा अफसर को चुनौती देने की ढिठाई का लेश-मात्र भी भाव न था। यही कारण था कि आज्ञा-उल्लंघन करने के अपराध में मृत्यु-दंड देने के बजाय उन्हें छोड़ दिया गया।

१८७७-७६ के युद्ध में वह अपनी योग्यता के बल पर शीघ्र ही कर्नल बन गये, हालांकि उन्हें ऊंची शिक्षा प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला था। वह अक्सर हंसी में कहा करते थे कि उनकी शिक्षा-दीक्षा तो 'गंवार-अकादमी' में हुई है। लड़ाई के दौरान में उन्होंने दैन्यूब नदी और बाल्कान पर्वतों को पार किया था और शिशिर ऋतु की कड़कड़ाती सर्दी में शिपका जैसे ठंडे स्थान में पड़ाव डाल कर रहे थे। वह उन सैनिकों में से थे जिन्होंने प्लैवना पर अन्तिम आक्रमण किया था। वह पांच बार जख्मी हुए थे — एकबार तो बारूद के गोले के सख्त आघात से वह अत्यन्त गम्भीर-रूप से घायल हो गये थे और उनकी अवस्था चिन्ताजनक हो गयी थी। जनरल रादेत्स्की और स्कोबलेव उन्हें व्यक्तिगत-रूप से जानते थे और उनका बड़ा आदर करते थे। स्कोबलेव ने उनके सम्बंध में कहा था : "मैं एक ऐसे अफसर को जानता हूं जो मुझ से ज्यादा बहादुर और साहसी है। उसका नाम मेजर अनोसोव है।"

अपनी देह पर अनेक जख्म लेकर वह युद्ध से लौटे थे। जो घाव उन्हें गोले के विस्फोटन से हुआ था, उसने उन्हें लगभग बहरा कर दिया। बाल्कान के पाले ने उनके एक पैर की तीनों अंगुलियों को बेकार कर दिया, जिसके कारण उन्हें काट देना पड़ा। शिपका से वह गठिया की बीमारी अपने संग ले आए। शान्ति-काल में दो वर्ष की सेवाओं के बाद यह उचित समझा गया कि उन्हें अवकाश दे दिया जाये, किन्तु उन्होंने इस चीज का तीव्र विरोध किया। उस

प्रदेश का गवर्नर जिसने उनके साहस को दैन्यूब पार करते समय देखा था, संकट की इस घड़ी में उनके काम आया। पीटर्सबर्ग के अधिकारी-गण अनोसोव जैसे प्रमुख कर्नल की भावनाओं को ठेस नहीं पहुंचाना चाहते थे, इसलिये उन्होंने कर्नल अनोसोव को जीवन भर के लिए 'क' शहर का गवर्नर नियुक्त कर दिया। यह पदवी गौरवयुक्त भले ही क्यों न हो, देश की रक्षा के दृष्टिकोण से इसका कोई विशेष मूल्य नहीं था।

शहर का बच्चा-बच्चा उनसे परिचित था। सब लोग हंसमुख ढंग से उनकी आदतों, खामियों और विचित्र वेष-भूषा का मजाक उड़ाया करते थे। वह कभी कोई शस्त्र उठाकर नहीं चलते थे और प्रायः पुराने फैशन का लम्बा कोट, ऊंची टोपी और लम्बा कवच पहने रहा करते थे। अपने दायें हाथ में छड़ी रखते और बायें हाथ में श्रवण-यंत्र। सैर करने के लिए जब वह घर से बाहर निकलते तो मुंह से बाहर जुबान लटकाए दो मोटे आलसी कुत्ते हमेशा उनके संग रहते। सुबह की सैर के समय यदि रास्ते में वह किसी परिचित-व्यक्ति से बातचीत करने खड़े हो जाते, तो पांच छः गलियों के पार तक उनके चिल्लाने और उनके कुत्तों के भौंकने का स्वर सुनायी दे जाता था।

हर ऊंचा सुनने वाले व्यक्ति की भांति वह भी ओपेरा (संगीत-नाटक) के बेहद शौकीन थे। कभी-कभी किसी रोमांटिक-दुगाने के दौरान में उनकी दनदनाती आवाज सारे हॉल में गूंज पड़ती : "वाह! कितनी बढ़िया चीज है, मजा आ गया।" हॉल में बैठे लोग उनकी ऐसी टिप्पणियों को सुनकर मुंह दबा कर हंसने लगते, किन्तु उन्हें पता ही न चलता कि उन्होंने कोई हास्यास्पद बात कह दी है। वह बेचारे क्या जानते थे कि अपनी ओर से जो बात बहुत धीरे से उन्होंने अपने पास बैठे व्यक्ति से कही है, वही बात सारे हाल में गूंज गयी है!

कभी-कभी अपने काम के सिलसिले में वह अपने दोनों कुत्तों के संग सैनिक-बन्दीगृह में जाते थे — जहां अपराधी अफसरों को पकड़ कर रखा जाता था। सैनिक जीवन की असुविधाओं से मुक्ति पाकर ये अफसर आराम से अपने दिन बिताते थे। चाय पीने, ताश खेलने और गपशप करने में ही उनका सारा समय कट जाता था। वह हर अफसर के पास जाकर बड़े सतर्क-भाव से उनसे तरह-तरह के प्रश्न पूछते : तुम्हारा नाम ? किसने तुम्हें पकड़ा ? कितनी अवधि के लिये यहां रहना पड़ेगा ? क्यों पकड़े गये ? कभी-कभी वह किसी बन्दी अफसर के साहसी कारनामे — चाहे वह गैर-कानूनी क्यों न हो — की मुक्त-कंठ से प्रशंसा करते और कभी किसी अफसर को ऐसी डांट पिलाते कि उनका स्वर बाहर तक सुनायी देता। किन्तु दूसरे ही क्षण वह उस अफसर से उसकी भोजन-व्यवस्था के सम्बंध में प्रश्न पूछने लगते : कहां से भोजन लाते हो ? कितना खर्च करते हो खाने-पीने में ? इत्यादि। कुछ ऐसे गरीब अफसर भी थे, जो किसी

उजड़े-पिछड़े शहर से यहां लम्बी अवधि की नजरबन्दी के लिए आते थे। उनके अपने शहर या कस्बे में सैनिक-बन्दीगृह की समुचित व्यवस्था न होने के कारण उन्हें यहां भेज दिया जाता था। उनमें से जब कभी कोई अफसर सकुचाते हुए यह कह देता कि आर्थिक-अवस्था अच्छी न होने के कारण उसे प्राइवेट सैनिकों के संग भोजन करना पड़ता है तो अनोसोव तुरन्त अपने घर से उसे भोजन भिजवाने की व्यवस्था कर देते। सैनिक कारागृह और उनके घर के बीच सौ गज से ज्यादा फासला नहीं था।

"क" शहर में ही उनका परिचय तुगानोवस्की परिवार से हुआ था, जो बाद में घनिष्ट-मित्रता में परिणत हो गया। परिवार के बच्चे उनसे इतने ज्यादा हिल-मिल गये थे कि वह प्रतिदिन शाम को उनसे मिलने अवश्य जाते। अगर कभी दोनों बहनें कुछ समय के लिये शहर से बाहर चली जातीं, या वह अपने काम में इतना उलझ जाते कि उनके घर जाने का समय न निकल पाता तो वह अपने को एकाएक बहुत ही एकाकी पाते। उन्हें लगता मानो घर के बड़े-बड़े कमरे उन्हें फाड़ खाने को दौड़ रहे हैं। गवर्नर के इतने विशाल-भव्य महल में वह अजीब सी रिक्तता महसूस करते थे, मानो वह बिलकुल अकेले रह गये हों। हर वर्ष वह एक महीने की गर्मी की छुट्टियां 'क' से चालीस मील की दूरी पर येगोरोवस्कोय में स्थित तुगानोवस्की के ग्रीष्म-गृह में बिताया करते थे।

वह अपने भीतर दबा समस्त प्रेम व स्नेह बच्चों — विशेष कर लड़कियों पर उड़ेल डालने के लिए सदा आतुर रहा करते थे। उनका कभी विवाह हुआ था, इस घटना को बीते इतना लम्बा अर्सा गुजर गया कि अब वह उसके सम्बंध में प्रायः सब कुछ भूल चुके थे। युद्ध आरम्भ होने से पूर्व उनकी पत्नी एक घुमक्कड़-अभिनेता की मखमली वास्कट और गोटेदार आस्तीनों पर रीझ गयी और उसके संग अपने पति को छोड़कर दूर किसी शहर भाग गयी। उसके बाद उसने आंसुओं से भरे क्षमा-याचना के अनेक पत्र अनोसोव को भेजे, किन्तु उसने उसे दुबारा अपने घर में पैर नहीं रखने दिया। जब तक वह जीवित रही, अनोसोव उसे नियमित-रूप से रुपये भेजते रहे। उनके कोई सन्तान नहीं थी।

पांच

हल्की सी गर्मी और घनी नीरवता में लिपटी शाम घिर आयी थी। चबूतरे और भोजन कक्ष में मोमबत्तियां शान्त, निस्पन्द भाव से जल रही थीं। भोजन के समय सब लोग प्रिंस वासिली ल्वोविच की बातों को बड़ी दिलचस्पी से सुन रहे थे। प्रिंस वासिली अपनी वाक्पटुता के लिए प्रसिद्ध थे। किस्से-कहानियों को सुनाने की उनमें एक विचित्र और असाधारण प्रतिभा थी। उप-

स्थित अतिथियों में से किसी एक व्यक्ति को लेकर, अथवा किसी परिचित मित्र के सम्बंध में वह कोई साधारण सी घटना छांट लेते और उसे नमक-मिर्च लगा कर इतने सहज-स्वाभाविक ढंग से सुनाते कि श्रोता-गण हंसते-हंसते लोट-पोट हो जाते। उस रात वह निकोलाय निकोलायविच का एक धनी और सुन्दर महिला के संग दुखान्त-प्रेम का दिलचस्प किस्सा सुना रहे थे। सारे किस्से में सच बात सिर्फ इतनी थी कि उस महिला के पति ने उसे तलाक देने से इन्कार कर दिया था। किन्तु प्रिंस ने इस घटना को लेकर तथ्य और कल्पना की जो अद्भुत खिचड़ी बनायी, वह देखते ही बनती थी। निकोलाय एक दम्भी, गम्भीर पुरुष था। प्रिंस ने बतलाया कि किस प्रकार एक रात पोल खुल जाने के भय से निकालाय अपनी प्रेमिका के घर से सिर पर पांव रखकर भाग निकला। गली-मुहल्ले के लोगों ने हैरत में देखा कि एक भद्र पुरुष जूते बगल में दबाए तेजी से भागा जा रहा है। सड़क के नुक्कड़ पर पुलिस के सन्तरी ने बेचारे निकोलाय को चोर समझ कर पकड़ लिया। निकोलाय उत्तेजित होकर जोर-जोर से चीखने लगा कि वह कोई चोर-उचक्का न होकर सहायक राजकीय अभियोक्ता है। बहुत समझाने-बुझाने के बाद बड़ी मुश्किल से सन्तरी उसका विश्वास कर पाया। प्रिंस ने बतलाया कि निकोलाय का विवाह उस महिला से सम्पन्न हो गया होता, यदि ऐन मौके पर एक अप्रत्याशित घटना न हो गयी होती। निकोलाय ने विवाह के लिए जो झूठे गवाह किराये पर इकट्ठा किये थे, उन्होंने अचानक हड़ताल कर दी। उनका कहना था कि जब तक उन्हें निर्धारित रकम से ज्यादा रुपये नहीं दिये जायेंगे, वे गवाही नहीं देंगे। निकोलाय कंजूस होने के अतिरिक्त हर किस्म की हड़ताल के विरुद्ध था। उसने ज्यादा रुपये देने से साफ इन्कार कर दिया। कानून की जिस धारा का उल्लेख उसने अपने पक्ष में किया था, कोर्ट ने उसका समर्थन किया। गवाह भड़क उठे। विवाह के अवसर पर नियमानुसार यह प्रश्न पूछा गया: "क्या उपस्थित सज्जनों को इस कानूनी विवाह पर कोई आपत्ति है?" झूठे गवाहों ने एक स्वर में कहा: "हां हमें आपत्ति है। कोर्ट में शपथ लेकर हमने जो प्रमाणित वक्तव्य दिया है, वह झूठा है। निकोलाय साहब ने डरा-धमकाकर हमसे यह वक्तव्य लिखवाया है, वरना हम कभी अपनी गवाही नहीं देते। इस महिला के पति जैसा नेक और धर्मात्मा पुरुष मिलना कठिन है—वह जोसफ जैसा पवित्र और देवता की भांति दया-शील और दयालु है।"

बस, विवाह की सारी तैयारियां धरी की धरी रह गयीं। विवाह-सम्बंधी किस्से-कहानियों को सुनाते समय प्रिंस वासिली अन्ना के पति गुस्ताव इवानोविच फ़िस्स पर भी छींटाकसी किये बिना नहीं रहते थे। अपने विवाह के अगले दिन (प्रिंस वासिली ने बतलाया) फ़िस्स साहब पुलिस को लेकर अपनी

नववधू के मां-बाप के घर आ धमके। उन्होंने पुलिस को यह सूचना दी थी कि चूंकि अन्ना के पास अपना पासपोर्ट नहीं है, इसलिये उसे अपने मां-बाप के घर से निकलवा कर उस व्यक्ति के घर भिजवा देना चाहिए जो कानून के मुताबिक उसका पति है! इस कहानी में सत्य का अंश केवल इतना था कि विवाह के बाद अन्ना को कुछ दिनों तक अपने मां-बाप के घर रहना पड़ा; जिससे अन्ना के पति बहुत परेशान और दुःखी हो गये थे। बात यह थी कि उन्हीं दिनों अन्ना की मां बिमार पड़ गयीं। वीरा उस समय दक्षिण में थी और मां की सेवा-सुश्रूषा करने के लिये अन्ना के अलावा घर में और कोई नहीं था। इस घटना को लेकर प्रिंस अक्सर अन्ना के पति का मजाक उड़ाया करते थे।

इस बार भी प्रिंस की मनघड़न्त कहानी सुनकर सब हंस रहे थे। अन्ना आंखें सिकोड़कर मुस्करा रही थी। गुस्ताव इवानोविच खुश होकर हंसी का ठहाका लगा रहे थे। उनके पतले-दुबले चेहरे, तनी हुई चमकती चमड़ी, छोटे-छोटे हल्के बाल और भीतर धंसी हुई आंखों को देखकर लगता था मानो हवा में लटकी हुई कोई खोपड़ी मैले दांत फाड़ती हुई हंस रही है। विवाह के प्रथम दिवस की भान्ति — इतने वर्षों बाद भी — वह अन्ना की पूजा किया करता था। वह हमेशा अन्ना के पास बैठने के लिए आतुर रहता, चोरी-चुपके, जाने-अनजाने में उसकी देह का स्पर्ष पाने के लिये लालायित रहता और हमेशा उसकी अंगुलियों पर नाचता रहता। अन्ना के प्रति उसके इस बचकाने लगाव और मोह को देखकर उसपर दया भी आती और लज्जा भी।

उठने से पहले वीरा निकोलायेवना ने अनजाने में मेहमानों को गिन लिया — कुल मिलाकर वे तेरह थे। अचानक उसके दिल में वहम उठ खड़ा हुआ। "यह ठीक नहीं हुआ" उसने सोचा। "मुझे पहले से ही मेहमानों की संख्या का ख्याल रखना चाहिये था। इसमें वास्या का भी दोष है — उसने टेलीफोन में मुझे इस सम्बंध में कुछ नहीं बताया।"

जब कभी शेयिन अथवा फ्रिस्स के घर मेहमान जमा होते, तो भोजन के बाद हमेशा *पोकर* खेला जाता था। दोनों बहनों को ऐसे खेलों के प्रति एक अजीब, बचकाना शौक था, जिनमें हार-जीत का फैसला भाग्य पर निर्भर होता है। दोनों घरों में खेल के कुछ निश्चित नियम निर्धारित कर दिये गये थे। सब खिलाड़ियों को निश्चित कीमत के हाथीदांत के चिन्ह वितरित कर दिये जाते थे। उस समय तक खेल जारी रहता था, जब तक सारे चिन्ह एक खिलाड़ी के पास जमा न हो जाते थे। फिर चाहे अन्य खिलाड़ी उसे दुबारा आरम्भ करने का कितना ही आग्रह क्यों न करें, उस शाम के लिए खेल समाप्त हो जाता था। तिजोरी से नये चिन्हों को लेने पर कड़ी पाबन्दी लगा दी गयी थी। खेल-खेल में वीरा और अन्ना इतना अधिक उत्तेजित हो उठती थीं कि बिना इन कड़े

नियमों के उन्हें रोकना असम्भव हो जाता। इस तरह कोई भी खिलाड़ी दो सौ रूबलों से अधिक नहीं हार सकता था।

इस बार भी हमेशा की तरह भोजन के बाद पोकर का खेल आरम्भ हो गया। वीरा खेल में भाग न लेकर ऊपर चबूतरे पर चाय की व्यवस्था करने जा रही थी कि इतने में बैठक से नौकरानी ने उसे बुलाया। वीरा ने देखा कि नौकरानी का चेहरा अत्यन्त रहस्यपूर्ण हो उठा है।

"दाशा, क्या बात है ?" शयन कक्ष से सटे हुऐं अपने छोटे से अध्ययन-कक्ष में जाते हुए वीरा ने तनिक झुंझला कर पूछा। "तुम इस तरह मुंह बाये खड़ी मेरी ओर क्यों ताक रही हो ? और सुनो, हाथ में क्या छिपा रखा है ?"

दाशा ने सफेद कागज में सावधानी से लिपटी हुई एक चौकोर वस्तु को मेज पर रख दिया। एक गुलाबी रिबन उस पर बंधा हुआ था।

"भगवान की सौगन्ध खाकर कहती हूं मालकिन, इसमें मेरा जरा भी दोष नहीं है। वह एकदम भीतर घुस आया और..." दाशा का मुंह लाल हो गया और वह बुरी तरह हकलाने लगी।

"वह कौन ?"

"एक हरकारा, मालकिन !"

"फिर क्या हुआ ?"

"वह रसोई में घुस आया और उसने वह छोटा सा बंडल मेज पर रख दिया। 'अपनी मालकिन को यह दे देना—लेकिन ध्यान रहे, मालकिन के अलावा और किसी को नहीं।' उसने मुझसे कहा। मैंने उससे पूछा कि वह कहां से आया है ? 'यहां सब लिखा है,' उसने बंडल की ओर संकेत किया और फिर तेजी से भाग गया।"

"जाओ—उसे किसी तरह अपने संग ले आओ।"

"अब कहां जाऊं मालकिन ! वह भोजन के समय आया था। उस वक्त मैंने आपको परेशान करना ठीक नहीं समझा। उसे गये तो अब लगभग आधा घंटा बीत चुका।"

"अच्छा, अब तुम जा सकती हो।"

वीरा ने कैंची से रिबन काट कर उसे उस कागज समेत, जिस पर उसका नाम और पता लिखा हुआ था, रद्दी की टोकरी में फेंक दिया। कागज के भीतर लाल मखमल से लिपटा हुआ गहने का छोटा सा बक्सा था, जिसे देखकर लगता था मानो वह अभी-अभी दुकान से खरीदा गया है। ढक्कन के चारों ओर हल्के नीले रंग की रेशमी गोटी लगी हुई थी। वीरा ने ढक्कन खोला—भीतर काले मखमल पर अंडे के आकार का एक स्वर्ण-कंगन जड़ा हुआ था और उसके बीच आठ तहों में सफायी से मुड़ा हुआ कागज का एक पुरजा रखा था। उसने झटपट

कागज खोल डाला। अक्षर पहचाने से लगे। किन्तु एक स्त्री होने के नाते कब तक वह अपनी उत्सुकता दबा पाती! झटपट पुरजा अलग रख दिया और आंखें कंगन पर टिक गयीं।

कंगन का सोना काफी मोटी तह का था, किन्तु भीतर से खोखला था और उसके चारों ओर लाल रंग के पुराने रत्न जड़े थे, जिनका पॉलिश उड़ चला था। किन्तु बीच में एक विचित्र हरा पत्थर था, जो मटर के दानों जितने बड़े उत्कृष्ट रत्नों से घिरा हुआ था। वीरा ने कंगन को जरा हिलाया ही था कि बिजली के प्रकाश में चिकने अंडाकार पत्थरों के भीतर से रक्तिम आलोक की सुन्दर किरनें फूट पड़ीं।

"यह तो खून की तरह लाल है।" वीरा सहम सी गयी।

फिर उसे वह पत्र याद आया, जो बक्से में रखा था। पत्र की सुन्दर लिखावट ने उसे अपनी ओर आकर्षित कर लिया। वह पढ़ने लगी:

आदरणीया प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना,

आपके जन्म-दिवस के शुभ-अवसर पर मैं आपको अपनी हार्दिक बधाई भेंट करता हूं। इस सुअवसर पर मैं आपको एक तुच्छ, नाचीज उपहार भेजने का दुस्साहस कर रहा हूं।

["अच्छा तो वही आदमी है!" वीरा का मन झुंझला उठा, किन्तु वह पत्र को अन्तिम शब्द तक पूरा पढ़ गयी।]

मैं जानता हूं कि आपको अपनी पसन्द का कोई उपहार भेजना अव्वल दर्जे की धृष्टता है—मेरा आप पर ऐसा कोई अधिकार नहीं है। मैं अपने को एक सुरुचि-सम्पन्न व्यक्ति भी नहीं मानता और सच कहूं, तो मेरे पास इतना रुपया-पैसा भी नहीं है कि बिना किसी संकोच अथवा कठिनाई के उपहार दे सकूं। इसके अतिरिक्त मेरा यह विश्वास है कि दुनिया में कोई ऐसी वस्तु नहीं है—चाहे वह अपने में कितनी बहुमूल्य क्यों न हो—जिसमें आपके सौंदर्य को अलंकृत करने की क्षमता हो।

यह कंगन मेरी परदादी का है। और मेरी स्वर्गीय मां ने इसे अन्तिम बार पहना था। बड़े रत्नों के बीच आपने एक हरा रत्न देखा होगा। यह बहुमूल्य रत्न—हरे रंग का पन्ना—अपने में बेजोड़ और अद्वितीय है। यह हमारे कुल की एक पुरानी परम्परा है कि जो स्त्री इस पन्ने को अपने पास रखेगी, वह भावी घटनाओं का पता चला सकेगी, मन को पीड़ा देने वाले विचार उसके पास नहीं फटकेंगे और इस पन्ने के जादू से पुरुष किसी दुर्घटना के शिकार न होंगे।

आप निश्चिन्त रहें कि इस कंगन को अभी तक किसी ने नहीं पहना

है, क्योंकि सब रत्न पुराने चांदी के कंगन से निकाल कर इस नये कंगन में लगा दिये गये हैं।

अगर आप चाहें तो इस घटिया, निकृष्ट उपहार को फेंक सकती हैं। या किसी और को देकर इससे छुटकारा पा सकती हैं। आपकी अंगुलियों ने इसे स्पर्श किया है, मेरे लिए यही खुशी क्या कम है?

इसे देखकर आप मुझ पर नाराज न हों, यही मेरी आपसे प्रार्थना है। सात साल पहले की बात सोच कर मेरा सिर लज्जा से गड़ जाता है, जब मैंने आपको अनर्गल-प्रलाप से भरे पत्र लिखे थे और मन ही मन आशा की थी कि आप उनका उत्तर अवश्य देंगी। आज वह आशा नहीं रह गयी है—रह गयी है आपके प्रति केवल असीम श्रद्धा, आदर और प्रशंसा की अमिट और अमर भावना। आज मैं आपके सुख के लिए केवल अपनी शुभ कामनाएं ही भेज सकता हूं। अगर आप सुखी हैं, तो संसार में मुझ जैसा सुखी व्यक्ति कोई नहीं है। मन ही मन मैं—जिस कुर्सी पर आप बैठी हैं, जिस फर्श पर आपने अपने कदम रखे हैं, जिन वृक्षों को आपने छुआ भर है, जिन नौकरों से आप बोलती हैं—इन सबको नतमस्तक होकर प्रणाम करता हूं। इन सौभाग्यशाली व्यक्तियों और वस्तुओं से ईर्ष्या करने के योग्य भी मैं अपने को नहीं पाता।

एक बार फिर लम्बे, निरर्थक पत्र के लिए मैं आपसे क्षमा मांगता हूं।

मृत्यु तक—और उसके बाद भी—आपका
तुच्छ दास,
"ज. स. ज."

"वास्या को यह पत्र दिखलाऊं या रहने दूं? अभी, या जब सब मेहमान चले जाएं? नहीं, अभी नहीं ... बाद में। अभी दिखलाऊंगी तो इस बेचारे की तरह मैं भी सबके सामने बेवकूफ बनूंगी।"

प्रिंसेस वीरा इसी उधेड़-बुन में फंसी थी, किन्तु उसकी दृष्टि बराबर उन पांच रत्नों पर टिकी हुई थी, जिनके भीतर से रक्तिम आलोक की प्रखर किरनें आंखों को चकाचौंध करती हुई फूट रही थीं।

छः

कर्नल पोनामारयोव को बड़ी मुश्किल से पोकर खेलने के लिये राजी किया गया। उनका कहना था कि आज तक उन्होंने पोकर नहीं खेला, कैसे खेला जाता है, यह भी उन्हें नहीं मालूम। जुए से—चाहे वह मनोरंजन के

लिये ही क्यों न खेला जा रहा हो — उन्हें सख्त घृणा थी। वह केवल एक खेल गहरी रुचि और दक्षता से खेलते थे और वह खेल था — 'वित'। उनके इन सब तर्कों के बावजूद अन्त में उन्हें पोकर खेलने के लिये फुसला ही लिया गया।

शुरू-शुरू में तो एक दो बार उन्हें पूछ-ताछ करने की आवश्यकता पड़ी, किन्तु बाद में उन्होंने खेल के नियमों को अच्छी तरह सीख-समझ लिया। आध घंटे में ही सारी गोटियां उनके आगे इकट्ठा हो गयीं।

"वाह! यह भी कोई बात हुई!" अन्ना ने हंसी में उन्हें उलाहना देते हुए कहा। "अभी तो खेल शुरू ही हुआ था और आपने सब गोटियां जीतकर सारा मजा किरकिरा कर दिया।"

वीरा समझ नहीं पा रही थी कि स्पेशनिकोव, कर्नल और एक प्रतिष्ठित किन्तु नीरस और बौड़म किस्म के जर्मन वाइस-गवर्नर—इन तीनों महानुभावों का मन कैसे बहलाया जाए। आखिर उसने उन तीनों को 'वित' के खेल में व्यस्त करवा दिया और गुस्ताव इवानोविच को पास बुलाकर कहा कि वह चौथे खिलाड़ी की हैसियत से इस खेल में शामिल हो जाएं। अन्ना ने जब पलकें झुकाकर उसे धन्यवाद दिया तो वह सब कुछ समझ गयी। यह बात किसी से छिपी न थी कि जब तक गुस्ताव इवानोविच को ताश के किसी खेल में न उलझा लिया जाय, वह सारी शाम अपने खोपड़ी-नुमा चेहरे पर सड़े दांत निपोरता हुआ अन्ना के इर्द-गिर्द छाया की तरह मंडराता रहेगा, और अपने भद्दे-भोंढे व्यवहार से सबको परेशान कर देगा।

वीरा के अब जान में जान आयी। सब मेहमान गपशप अथवा अपने-अपने खेलों में जुटे थे। वातावरण में कहीं भी कोई खिंचाव या तनाव नहीं रह गया था — सब लोग हल्के मन से एक दूसरे से हंस-बोल रहे थे। जैनी रेतर पियानो बजा रही थी और वास्यूचोक दबे स्वर में इटेलियन लोक-गीत और रुबिन्स्टेन के प्राच्य-गीत गा रहा था। उसका स्वर सुरीला और मीठा था, आवाज में एक सच्चाई थी, जिसे सुनकर लगता था मानो वह उसके हृदय से निकल रही है। जैनी रेतर एक निपुण संगीतज्ञ थी और पियानो पर हमेशा वास्यूचोक का साथ देने के लिये प्रस्तुत रहती थी। सुनने में आया था कि वास्यूचोक उससे प्रेम करता है।

एक कोने में अन्ना सोफे पर बैठी हुई हुस्सार (घुड़सवार अफसर) से बेधड़क छेड़छाड़ और हंसी-मजाक कर रही थी। वीरा उनके पास चली आयी और मुस्कराते हुए उनकी बातें सुनने लगी।

"देखो, यह हंसी की बात नहीं है..." अन्ना ने हंसते हुए अपनी सुन्दर, नटखट, तातार आंखें नचाकर कहा। "बस तुम समझते हो कि फौजी-टुकड़ी के आगे-आगे घोड़ा दौड़ाना, या रेस में लकड़ी के टट्टरों को पार करना ही सबसे

बड़ा बहादुरी का काम है। लेकिन जनाब, जरा हमारे कारनामे भी तो देखिये। अभी हाल में ही हमने 'लॉट्री-समारोह' मनाया था। यह कोई बच्चों का खेल नहीं था, तुम आते तो आंखें खुल जातीं। सारी जगह खचाखच भर गयी थी। सिगरेट और तमाखू के धुएं में सांस लेना दूभर था। कुली, कोचवान और न जाने कौन-कौन लोग आए थे। कोई न कोई हर दम मेरे पीछे लगा रहता—सब अपनी-अपनी शिकायतें मुझ से आकर ही कहते थे। दिनभर इधर से उधर और उधर से इधर चक्कर लगाती रही—छिन भर भी सांस लेने की फुरसत नहीं मिली। अब कुछ ही दिनों में जरूरतमन्द भद्र-महिलाओं की सहायता के लिये नृत्य-संगीत समारोह का प्रबन्ध करना है और उसके बाद गरीबों की सहायता के लिए नृत्य समारोह का ..."

"जिसमें तुम्हें मेरे संग मजुर्का (एक रूसी-नृत्य) नाचना पड़ेगा—ठीक है न ?" बारवतिन्सकी ने आगे झुक कर आराम-कुर्सी के नीचे अपनी एड़ियां खटखटा दीं।

"धन्यवाद ! किन्तु जब मैं अपने बच्चों की संस्था की बात सोचती हूं तो मेरा दिल सचमुच बहुत उदास हो जाता है। तुम समझ गये न—वही संस्था, जिसमें बदमाश बच्चे रखे जाते हैं ?"

"अच्छा ! उसमें तो बड़ा मजा आता होगा।"

"तुम्हें इस तरह हंसते हुए शर्म आनी चाहिए। असल में मां-बाप के दोषों और दुर्गुणों के कारण इन बच्चों की आत्माएं दूषित हो गयीं हैं। हम इन बच्चों को रहने-खाने की सुख-सुविधाएं देना चाहते हैं ..."

"हूं !"

"ताकि उनका चरित्र ऊंचा हो सके और वे अपना कर्त्तव्य और जिम्मेदारी पहचान सकें। अब मेरा मतलब समझ में आया ? हर रोज हजारों बच्चे हमारे पास लाए जाते हैं, किन्तु उनमें बदमाश लड़का हमें एक भी नहीं मिलता। अगर हम किसी बच्चे के मां-बाप से पूछते हैं कि क्या उनका लड़का बदमाश है, तो वे एकदम तुनुक उठते हैं—कितनी अजीब बात है। संस्था खुल गयी है, बच्चों के पालन-पोषण का सब इंतजाम हो गया है, किन्तु बच्चा एक भी नहीं है। सब कमरे खाली पड़े हैं—करें तो क्या करें ? हम अब यह घोषणा करने वाले हैं कि जो व्यक्ति किसी बदमाश बच्चे को हमारी संस्था में दाखिल करेगा, उसे पुरस्कार दिया जायगा।"

"अन्ना निकोलायेवना," बारवतिस्की ने बड़ी गम्भीर मुद्रा बनाकर उसे बीच में ही टोक दिया। "पुरस्कार क्यों देती हो ? मुझे तुम मुफ्त में ही अपनी संस्था में दाखिल कर लो। सच कहता हूं, मुझ जैसा बदमाश बच्चा तुम्हें और कहीं नहीं मिलेगा।"

"तुम से तो बात करना ही बेकार है — हमेशा हंसी-मजाक सूझता रहता है तुम्हें !" अन्ना ठहाका मारकर हंस पड़ी और सोफा के सिरहाने पर सिर टिका कर बैठ गयी। उसकी आंखें चमक रही थीं।

प्रिंस वासिली एक चौड़ी मेज के सामने बैठे हुए अपनी बहिन, अनोसोव और अपने बहनोई को एक अल्बम दिखला रहे थे जिसमें उन्होंने खुद अपने हाथों से कुछ व्यंग-चित्र (कार्टून) बनाये थे। वे चारों अल्बम के पन्ने उलटते हुए जोर-जोर से हंस रहे थे। धीरे-धीरे वे सब लोग जो ताश नहीं खेल रहे थे, प्रिंस वासिली को चारों ओर से घेर कर खड़े हो गये और अल्बम देखने लगे।

प्रिंस वासिली ने कुछ व्यंग्य-कथाएं लिखी थीं। अल्बम के व्यंग्य-चित्र इन कथाओं के आधार पर ही बनाये गये थे। बिल्कुल शान्त मुद्रा में वह निस्संकोच भाव से "तुर्की, बल्गेरिया तथा अन्य स्थानों में वीर जनरल अनोसोव के प्रेम-अनुभव" या घमन्डी प्रिंस निकोल बूलेत तूगानोवस्की का मोन्ट कार्लो में एक सनसनीखेज कारनामा" इत्यादि व्यंग-चित्र दिखला रहे थे।

"महिलाओ और महानुभावो! अब मैं आपको अपनी प्रिय बहिन ल्युड-मिला ल्वोवना के जीवन की कुछ झांकियों से परिचित करवाऊंगा।" उसने शरारत भरी निगाहों से अपनी बहिन को देखते हुए कहा। "प्रथम भाग : बचपन — बच्ची बड़ी हो रही थी। नाम था लीमा।"

अल्बम के पन्ने पर एक छोटी सी लड़की का चित्र जान-बूझ कर बचकाने ढंग से बनाया गया था, उसके चेहरे का केवल पार्श्व-भाग दीखता था, किन्तु आंखें दोनों बनायी गयी थीं। उसकी फ्राक के भीतर से दो रेखाओं को खींचकर टांगें बना दी गयीं थी और दोनों हाथों की अंगुलियां खुली हुई फैली थीं।

"कोई मुझे लीमा कह कर नहीं बुलाता था।" ल्युदमिला ल्वोवना ने हंसते हुए कहा।

"दूसरा भाग : प्रथम प्रेम — एक घुड़सवार सैनिक सुन्दरी लीमा के सम्मुख घुटने टेककर अपनी लिखी हुई एक कविता भेंट कर रहा है। कविता की कुछ पंक्तियों का सौंदर्य तो अद्वितीय है :

"'तुम्हारी टांग का अद्भुत आकर्षण एक अलौकिक-प्रेम का प्रतीक है!'

"अब जरा उस टांग का चित्र भी देख लीजिये। अब यह चित्र देखिये— इसमें घुड़सवार प्रेमी लीमा को फुसला रहा है कि वह उसके संग घर से भाग चले। इस चित्र में लीमा घर छोड़ कर अपने प्रेमी के संग भाग रही है। किन्तु कुछ ही दूर जाने पर एक अजीब संकट उन पर आ टूटा। देखिये, लीमा के क्रुद्ध पिता ने इन भगोड़ों को बीच रास्ते में ही पकड़ लिया। घुड़सवार प्रेमी पिता को देखते ही सिट्टी-पिट्टी भूल गया और बेचारी लीमा को मंझधार में छोड़ कर भाग निकला। 'तुमने अपनी नाक पर पाऊडर लगाने में जरा देर

लगा दी। हम अब बीच में ही पकड़ लिये गये हैं। तुम जरा ठहरो और उन्हें रोकने की चेष्टा करो ... तब तक मैं भाग कर झाड़ियों में छिप जाऊंगा।'"

"सुन्दरी लीमा" की कथा समाप्त होने के बाद एक नई कहानी आरम्भ हुई। कहानी का शीर्षक था: "प्रिंसेस वीरा और टेलीग्राफ-क्लर्क का प्रेमोन्माद।"

"*इस मर्मस्पर्शी-कविता के केवल कुछ चित्र यहां उद्धृत किये गये हैं*—कविता का मूल पाठ अभी लिखा जा रहा है," प्रिंस वासिली ने गम्भीर-मुद्रा में कहा।

"यह कोई नई चीज मालूम देती है," अनोसोव ने कहा। "मैंने इसे पहले कभी नहीं देखा।"

"यह सबसे ताजा अंक है, प्रथम संस्करण।"

वीरा ने धीरे से प्रिंस वासिली का कंधा छुआ। "कृपया इसे मत दिखलाओ।"

किन्तु प्रिंस वासिली ने उसकी बात नहीं सुनी—या शायद उसकी ओर अधिक ध्यान नहीं दिया।

"यह घटना बहुत पुरानी है—प्रागैतिहासिक युग का किस्सा समझ लीजिये। मई का सुहावना दिन था। वीरा नामक एक सुन्दर युवती को एक पत्र मिला जिसके प्रथम पृष्ठ पर एक दूसरे का चुम्बन लेते हुए दो कबूतरों का चित्र था। यह पत्र देखिये—और जरा इन कबूतरों पर भी ध्यान दीजिये।

"पत्र प्रेम के तड़पते-उफनते उद्गारों से भरा पड़ा है—हालांकि शब्दों के हिज्जे अक्षर-विन्यास के सब नियमों को तोड़ देते हैं, किन्तु यह दूसरी बात है। पत्र इस तरह आरम्भ होता है: 'हे सुन्दर केशों वाली अपसरा—तू ने मेरे हिरदे में प्रेम की भयंकर जवाला भड़का दी है। तेरी आंखों ने जहरीले सांप की तरह मेरी पीड़ित आतमा को डस लिया है ...' इत्यादि। यह पत्र बहुत ही विनीतभाव से समाप्त किया गया है: 'मैं एक अदना टेलीगिराफ-किलर्क हूं, किन्तु मेरी भावनाएं मीलॉर्ड जॉर्ज की भावनाओं से कम मूल्यवान नहीं है। मैं अपना पूरा नाम लिखने का दुस्साहस नहीं करूंगा—इतना भद्दा नाम जानकर आप क्या करेंगी। इसलिये मैं अपने नाम के केवल प्रथम अक्षर लिख रहा हूं—प. प. ज.। आप इस पत्र का उत्तर डाकखाने की मार्फत भेजने का कष्ट करें।' महिलाओ और महानुभावो, यह रहा हमारे टेलीग्राफ-क्लर्क का चित्र—अच्छी तरह देख लीजिये—बड़ी दक्षता से रंगीन-खड़िया द्वारा बनाया गया है।

"इस पत्र ने वीरा का दिल भेद दिया (यह रहा वीरा का दिल—और उसे भेदता हुआ यह रहा तीर), किन्तु वीरा का लालन-पालन एक शिष्ट, सुसंस्कृत परिवार में हुआ था, इसलिए उसने यह पत्र तुरन्त अपने माता-पिता

और बचपन के मित्र तथा भावी-पति, सुन्दर नवयुवक वास्या शेयिन को दिखला दिया। इस दृष्य का चित्र यह देखिए। कुछ समय बाद इन चित्रों की व्याख्या कविताओं द्वारा कर की जायगी। इसके लिए आपको कुछ दिन प्रतीक्षा करनी पड़ेगी।

"वास्या शेयिन ने सिसकियां भरते हुए सगाई की अंगूठी वीरा को वापिस लौटा दी। 'मैं तुम्हारी राह का रोड़ा नहीं बन सकता,' उसने वीरा से कहा। 'किन्तु तुम्हें फूंक-फूंककर पांव रखना चाहिए—जल्दी में कोई गलत कदम उठा लेना उचित नहीं होगा। तुम्हें उसकी और अपनी भावनाओं को अच्छी तरह तोल-परख कर देख लेना चाहिए कि वे सत्य की कसौटी पर खरी उतरती हैं या नहीं। तुम अभी बच्ची हो, पतंगे की तरह शमा में अपने को जला देना बुद्धिमानी नहीं है। तुम अभी नादान हो, किन्तु मैं इस दुनिया के छल-फरेब से पूरी तरह परिचित हूं। तुम्हें पता होना चाहिए कि ये टेलीग्राफ-क्लर्क देखने में बहुत भले और नेक दिखायी देते हैं, किन्तु भीतर से एक नम्बर के जालसाज और पाखंडी होते हैं। अपनी चिकनी-चुपड़ी बातों और मोहक आकर्षण से किसी नादान-निरीह लड़की की आंखों में धूल झोंक कर अपना उल्लू सीधा कर लेते हैं और फिर बाद में अंगूठा दिखा कर चम्पत हो जाते हैं।'

"इस तरह छः महीने बीत गये। जीवन का चक्र कब रुकता है? वीरा धीरे-धीरे अपने प्रेमी को भूल गयी और उसने सुन्दर वास्या से विवाह कर लिया। पर टेलीग्राफ-क्लर्क उसे नहीं भूल सका। एक दिन उसने अपना वेश बदल लिया। सारे कपड़ों पर कालिख पोत कर उसने एक चिमनी साफ करने वाले मजदूर की वेश-भूषा धारण कर ली और लुक-छिप कर प्रिंसेस वीरा के शयनकक्ष में घुस गया। देखिये—आप लोग इस चित्र में वीरा की हर वस्तु पर—कालीनों, दीवारों के कागज, तकियों और यहां तक कि फर्श पर भी—क्लर्क की पांच अंगुलियों और होंठों के चिन्ह देख सकते हैं।

"उसके बाद उसने ग्रामीण-स्त्री का वेश धारण कर लिया और हमारे घर की रसोई में बर्तन-भांड़े मांजने का काम शुरु कर दिया। किन्तु हमारे बावर्ची लूका की प्रेम-दृष्टि से घबरा कर उसे काम छोड़ना पड़ा।

"उसके बाद वह कुछ दिनों तक पागलखाने में रहा। इस चित्र में देखिए, वह भिक्षुक बनकर घूम रहा है। किन्तु इसके बावजूद कोई दिन ऐसा न जाता था जब वह प्रेम के उद्‌गारों से भरा एक पत्र वीरा को न भेजता हो। पत्रों पर उसके आंसुओं से भीगे स्याही के धब्बे जहां-तहां बिखरे रहते थे।

"आखिर उसकी मृत्यु का दिन भी आ पहुंचा। मरने से पहले उसने जो वसीयतनामा लिखवाया उसमें वीरा को टेलीग्राफ-दफ्तर के दो बटन और आंसुओं से भरी इत्र की एक बोतल भेंट की गयी थी।"

"महिलाओ और महानुभावो — आइये, चाय तैयार है।" वीरा निको-लायेवना ने कहा।

सात

शारदीय संध्या ... सूर्यास्त की अन्तिम किरणें धीरे-धीरे मिटने लगी थीं। नीले से बादल और धरती के बीच क्षितिज के छोर पर टिमकता हुआ सिन्दूरी धब्बा सिकुड़ने लगा था। धरती, पेड़ों के झुरमुट और आकाश — आंखों से ओझल होने लगे थे। ऊपर रात की अंधेरी छाया में बड़े-बड़े तारे अपनी पलकों को झपकाते हुए झिलमिला रहे थे। लाइट-हाऊस की नीली किरण एक पतली शहतीर सी ऊपर आकाश की ओर खिंचती चली गयी थी, जहां नभमंडल से टकरा कर वह एक तरल, फीके आलोक-वृत्त में फैल गयी थी। मोमबत्तियों पर लगे हुए शीशे के ढकनों पर कीट-पतंगे मंडरा रहे थे। मकान के सामने वाटिका में तमाखू के पौधों पर लगे हुए सितारे-नुमा फूलों की तेज-तीखी गन्ध रात के शीतल अंधियारे में फैल रही थी।

स्पैशनिकोव, वाइस-गवर्नर और कर्नल पोनामारयोव मेजबानों से विदाई लेकर जा चुके थे। जाते हुए वे यह वादा कर गये थे कि ट्राम-टर्मिनस पर पहुंच कर वे जनरल के लिए घोड़े वापिस भिजवा देंगे। बाकी मेहमान अभी चबूतरे पर बैठे थे। जनरल अनोसोव के विरोध के बावजूद उन्हें लम्बा कोट पहना दिया गया था और गर्म, मोटे कालीन से उनके पैर ढंक दिये गये थे। सामने मेज पर उनकी प्रिय शराब 'पोमार्ड क्लारे' (फ्रांसीसी मदिरा) से भरा गिलास रखा था और वह आराम से दोनों बहिनों के बीच बैठे थे। दोनों बहनें जनरल की छोटी से छोटी इच्छा पूरी करने के लिए हमेशा तत्पर रहती थीं — जब गिलास खाली हो जाता तो वह उसे गाढ़ी शराब से भर देतीं, कभी उन्हें दियासलाई की डिब्बी देतीं और कभी उनके लिए पनीर के टुकड़े काटे जाते। जनरल एक संतुष्ट, तृप्त बिल्ली की तरह मजे से बैठे थे।

"शरद-ऋतु शुरू हो गयी है," बूढ़े जनरल मोमबत्ती की लौ की ओर देख रहे थे और किसी गहरी चिन्ता से सिर हिला रहे थे। "बस अब मुझे अपना बोरिया-बिस्तर बांधना पड़ेगा। कैसा दुर्भाग्य है! मौसम अब इतना अच्छा हो गया है कि जी करता है कि सागर-तट के इस शान्त वातावरण में कुछ और दिन मजे से बिताए जाएं। काश, ऐसा हो पाता!"

"दादा, आप रह क्यों नहीं जाते?"

"ना बेटी — यह नामुमकिन है। छुट्टी खत्म हो गयी है। बिना समय पर पहुंचे ठीक नहीं होगा। फूलों की सुगन्ध तो देखो, कितनी मनोरम है! गर्मियों

में तो फूलों की खुशबू बिलकुल उड़ ही जाती है — सिवाय बबूल के सफेद फूलों के — और वह कोई अच्छी सुगन्ध नहीं देते। उन्हें सूंघ कर लगता है मानो मिठाइयों को सूंघ रहे हैं।

वीरा ने गुलाब के दो नन्हें-नन्हें फूल — एक गुलाबी और दूसरा लाल — छोटे से फूलदान से निकाल कर जनरल के कोट के बटनहोल में लगा दिये।

"धन्यवाद, प्यारी वीरा !" उन्होंने फूलों को सूंघने के लिए अपना सिर नीचे झुकाया। बूढ़े के सौम्य चेहरे पर स्नेह से भीगी मुस्कान खिल गयी।

"मुझे वे दिन अच्छी तरह से याद हैं, जब हम बुखारेस्ट में पड़ाव डालकर रह रहे थे। एक दिन मैं किसी काम से कहीं जा रहा था कि अचानक गुलाब के फूलों की सुगन्ध का एक झोंका मुझे अपने से शराबोर कर गया। मेरी आंखें दो सैनिकों पर जा पड़ीं। उनके पास इत्र की एक बोतल पड़ी थी। वे उस इत्र से अपने जूते और रायफल साफ कर रहे थे। 'यह क्या चीज है ?' मैंने बोतल की ओर इशारा करते हुए उनसे पूछा। 'हजूर यह एक किस्म का तेल है। हमने इसे अपनी खिचड़ी में डाला था किन्तु हमारी जुबान जल गयी। वैसे सूंघने में बुरा नहीं है।' मैंने उन्हें एक रूबल दिया और उन्होंने सहर्ष वह बोतल मुझे दे दी। आधी से ज्यादा बोतल खाली हो गयी थी किन्तु इसके बावजूद उस इत्र का मूल्य दो सौ रूबल से कम नहीं था। बोतल मुझे देकर दोनों सैनिक बहुत खुश थे। उनमें से एक ने कहा, 'हजूर, हमारे पास एक और चीज है। शायद खास किस्म के मटर के दाने है ... हमने उन्हें उबाला भी था, किन्तु वे कम्बख्त पकने में ही नहीं आते।' मैंने देख कर उन्हें बतलाया कि वे कॉफी की फलियां हैं। 'सैनिक इन्हें नहीं खाते — यह केवल तुर्की लोगों के काम आती हैं।' मैंने उनसे कहा। सौभाग्यवश उन्होंने धोखे में अफीम नहीं खायी। कई स्थानों पर मैंने अफीम की गोलियों को देखा था, जो पैरों के नीचे आकर कीचड़ में धंस गयीं थी।"

"दादा, सच बताओ, क्या आपको युद्ध में कभी डर नहीं लगा ?" अन्ना ने कौतूहलवश पूछा।

"अन्ना, तुम भी कैसी अजीब बातें करती हो। यह कभी हो सकता है कि लड़ाई में डर न लगे ? जो लोग बड़ी-बड़ी डींगें मारते हुए यह दावा करते हैं कि उन्हें युद्ध में दनदनाती गोलियों की बौछार तले मधुरतम संगीत का आनन्द मिलता है, वे सच नहीं बोलते। मूर्ख और दम्भी व्यक्ति ही ऐसी झूठी और हास्यास्पद बातें कर सकते है। डर सबको लगता है — अन्तर केवल इतना है कि कुछ लोग डर के मारे थर-थर कांपने लगते हैं, उनका मुंह पीला पड़ जाता है, किन्तु कुछ ऐसे भी व्यक्ति हैं, जो अपने भय को काबू में कर लेते हैं। भय हर जगह, हर समय एक जैसा ही लगता है, किन्तु अभ्यास द्वारा उस पर काबू पाने

की सामर्थ्य को बढ़ाया जा सकता है। वीर और साहसी सैनिक आकाश से नहीं टपकते, इसी अभ्यास द्वारा एक साधारण सैनिक असाधारण और दुर्गम काम करने में सफल होता है। किन्तु एक बार तो मैं इतना डर गया कि मुझे जीने की कोई उम्मीद ही न रही।"

"क्या बात हुई दादा ? कैसे ? कब ?" दोनों बहनें साथ ही बोल उठीं।

वे आज भी जनरल अनोसोव की कहानियों को उतनी ही दिलचस्पी के संग सुना करती थीं, जितनी बचपन में। अन्ना ने एक बच्चे की तरह अपनी कुहनियों को मेज पर टिका दिया और अपनी ठुड्डी को बन्द मुट्ठियों पर जमा कर आराम से बैठ गयी। अनोसोव धीरे-धीरे, रुक-रुक कर बड़े रोचक ढंग से अपने सीधे-सादे संस्मरण सुनाया करते थे। कभी-कभी युद्ध-सम्बंधी किसी घटना का उल्लेख करते समय वह कुछ ऐसे किताबी शब्दों और मुहावरों का प्रयोग किया करते थे जो सुनने में बहुत विचित्र और बेढंगे से प्रतीत होते थे, कुछ ऐसा जान पड़ता था मानो वह किसी पुराने कथा-वाचक की नकल उतार रहे हों।

"कोई लम्बी-चौड़ी घटना नहीं है," जनरल ने कहा। "सर्दी के दिन थे—मैं शिपका में था। यह उन दिनों की बात है जब बम-विस्फोट के कारण मुझ पर गहरा आघात पहुंचा था। खाई में छिपे हुए हम चार आदमी थे। उन्हीं दिनों मैं इस भयानक दुर्घटना का शिकार बना हुआ था। एक दिन जब मैं सोकर बिस्तरे से उठा तो मुझे लगा कि मैं याकोव होने के बजाय निकोलाय हूं। बहुत कोशिश की, किन्तु यह विचित्र भ्रम मुझसे चिपटा रहा। मुझे लगा मानो मैं तेजी से अपना मानसिक-संतुलन खोता जा रहा हूं। घबरा कर मैंने पानी का एक गिलास मंगवाया, अपने सिर को अच्छी तरह से धोया, तब कहीं जाकर होश-हवाश ठिकाने आये।"

"याकोव मिखायलोविच, मुझे पक्का विश्वास है कि उन दिनों आपने बहुत सी स्त्रियों के दिल घायल किये होंगे। जवानी की उम्र में आप एक छबीले, खूबसूरत युवक रहे होंगे, ऐसा मेरा विचार है।" पियानो-संगीतज्ञ जैनी रेतर ने कहा।

"खूबसूरत तो हमारे दादा आज भी हैं !" अन्ना चिल्लाई।

"नहीं, खूबसूरत मैं उन दिनों भी नहीं था।" अनोसोव ने शान्त भाव से मुस्कराते हुए कहा। "किन्तु औरतें मुझसे दूर भागती थीं, यह कहना भी गलत होगा। बुखारेस्ट की एक मर्मस्पर्शी घटना मैं आज भी नहीं भूल सका हूं। जब हमने शहर में प्रवेश किया, तो शहर के मुख्य बाजार में लोगों ने हवा में गोलियां चलाकर हमारा स्वागत किया। किन्तु इससे कई मकानों की खिड़कियां टूट गयीं। जहां कहीं गिलासों में पानी भर कर रख दिया गया था, वहां खिड़कियां सुरक्षित रहीं। पहले मुझे इस बात का पता नहीं था। जिस कमरे

में मैं ठहरा हुआ था, वहां खिड़की के आले पर एक छोटा सा पिंजरा रखा था, पिंजरे पर साफ पानी से भरी कांच की बोतल थी, जिसमें छोटी-छोटी सुनहरी मछलियां तैर रही थीं। बोतल के बीचों-बीच पानी पर एक छोटी सी चिड़िया बैठी थी। पानी में चिड़िया? मुझे अपनी आंखों पर विश्वास नहीं हुआ। किन्तु जब मैंने जरा गौर से उसे देखा तो पता चला कि बोतल का तल्ला बहुत चौड़ा है और उसके भीतर एक गहरा गड्ढा है। चिड़िया उसमें आसानी से बैठ सकती थी।

"कौतूहलवश मैं मकान के भीतर गया। मैंने देखा कि कमरे के कोने में एक बहुत सुन्दर बल्गेरियन लड़की बैठी थी। मैंने उसे अपना प्रवेश-पत्र दिखाया और जाने से पहले अवसर का लाभ उठा कर उससे पूछा कि उस मकान की खिड़कियां बन्दूकों की गोलियों से कैसे बच गयीं? उसने ही मुझे पहले-पहल बतलाया था कि बोतल में पानी रखने से खिड़कियों के शीशे नहीं टूटते। चिड़िया का भेद भी मुझे उससे ही मालूम हुआ था। कितना बुद्धू था मैं कि इतनी जरा सी बात भी नहीं समझ पाया। आपस में बातचीत करते हुए यका-यक हमारी आंखें चार हो गयीं। मुझे लगा मानो बिजली की एक लपट हम दोनों के बीच भक से कौंध गयी हो। मैं चौंक सा गया। एक जबरदस्त झटके के संग मेरे मन में विचार आया कि मैं उसे प्यार करने लगा हूं। मेरे मन में एक तूफान सा मच गया। उस क्षण मेरे हृदय में जरा भी संशय नहीं रहा कि मैं सदा के लिए उसके प्रेम-पाश में बंध गया हूं।"

जनरल अनोसोव चुप हो गये और धीरे-धीरे काली शराब पीने लगे।

"क्या आपने उसके सम्मुख अपना प्रेम प्रकट किया?" जैनी रेतर ने पूछा।

"बेशक! किन्तु शब्दों द्वारा नहीं... बात ही कुछ ऐसी थी कि..."

"दादा, कहीं ऐसी-वैसी बात तो नहीं है, जिसे सुन कर शर्म से मुंह छिपाना पड़े?" अन्ना ने चुटकी लेते हुए कहा।

"बिलकुल नहीं, हमारा सम्बंध ऐसा नहीं था, जिस पर लोग अंगुली उठाते। शहर के नागरिकों ने हर जगह हमारा स्वागत एक जैसा नहीं किया, इस बात से मैं इन्कार नहीं करूंगा। किन्तु बुखारेस्ट के लोगों की जिन्दादिली और मनमौजीपन देखते ही बनता था। एक बार मैं अपने कमरे में वॉयलन बजा रहा था। तुरन्त आस-पास के घरों की सब लड़कियां मेरे कमरे में जमा हो गयीं और नाचने लगीं। फिर तो यह दैनिक कार्यक्रम बन गया।

"एक ऐसी ही शाम को जब आकाश में चांद उग रहा था, मैंने देखा कि वह बल्गेरियन लड़की चुपके से कमरे से बाहर निकल कर अंधेरी ड्योढ़ी में गायब हो गयी है। उसे ढूंढ़ता हुआ जब मैं उसके पास पहुंचा तो वह मेरी

ओर ध्यान न देकर गुलाब की पंखुड़ियों को तोड़ने का उपक्रम करने लगी। बुखारेस्ट में लड़कियां गुलाब की पंखुड़ियां झोली में भर-भर कर घर ले जाती हैं। मैं अपने को अधिक देर तक वश में नहीं रख सका। उसकी कमर में हाथ डाल कर मैंने उसे अपनी छाती के पास खींच लिया और बहुत देर तक उसे चूमता रहा।

"उसके बाद, हर शाम को, जब आकाश में चांद और तारे खिल जाते थे, मैं उसके कमरे में चला जाता और उसके साथ रह कर दिन भर की थकान और परेशानियों को भुला देता। कुछ दिन में हमें शहर से कूच करने का हुक्म आ गया। विदा होते समय हमने वादा किया कि हम एक-दूसरे के प्रेम के प्रति सदा सच्चे रहेंगे। उसके बाद हमेशा के लिए हम एक-दूसरे से जुदा हो गये।"

"बस ?" ल्युदमिला ल्वोवना ने निराश स्वर में पूछा।

"और तुमने क्या सोचा था ?" जनरल ने कहा।

"याकोव मिखायलोविच, मुझे क्षमा करें, किन्तु यह प्रेम नहीं है। सेना का हर अफसर इस किस्म के सस्ते, साधारण प्रेम-व्यापार में डूबा रहता है। रोजमर्रा की घटनाओं की तरह उनके जीवन में इसका कोई महत्व नहीं है।"

"हो सकता है तुम ठीक हो। मुझे नहीं मालूम, वह प्रेम था या और कुछ !"

"मैं तुमसे एक बात पूछना चाहती हूं। क्या सच्चे प्रेम की अनुभूति तुम्हें जीवन में कभी नहीं हुई ? 'सच्चे-प्रेम' से मेरा मतलब निष्पाप, पवित्र, अलौकिक और शाश्वत प्रेम है। क्या जीवन में तुमने किसी से ऐसा प्रेम नहीं किया ?"

"इस सम्बंध में कुछ भी कहना काफी कठिन है।" जनरल ने हिचकिचाते हुए कहा और आराम कुर्सी से उठ खड़े हुए। "शायद नहीं। जब मैं जवान था तो सारा समय मौज-मस्ती, ताश और युद्ध में बीत जाता था। उन दिनों क्षण भर के लिए भी यह विचार नहीं उठा था कि जवानी और स्वास्थ्य की ये सुखद घड़ियां चिरस्थायी नहीं रहेंगी। बाद में जब पीछे मुड़ कर देखने-समझने का समय मिला, तो बुढ़ापे ने आ दबोचा। अच्छा प्यारी वीरा, बहुत देर हो गयी। अब मुझे विदा दो। आप सबको मेरा प्रणाम। ... हुस्सार !" बाख-तिस्की की ओर उन्मुख होकर जनरल ने कहा : "रात गर्म है, आओ चलें, रास्ते में गाड़ी पकड़ लेंगे।"

"दादा, मैं आपके संग चलूंगी।" वीरा ने कहा।

"और मैं भी," अन्ना बोली। जाने से पहले वीरा अपने पति के पास गयी। "मेरी दराज में एक लाल बक्सा पड़ा है," उसने धीमे स्वर में कहा। "उसमें एक पत्र है, उसे पढ़ लेना।"

आठ

अन्ना और बार्खातिस्की आगे-आगे चल रहे थे, वीरा और जनरल हाथ में हाथ डाले उनसे लगभग बीस कदम पीछे आ रहे थे। चारों ओर घुप्प अंधेरा छाया था। हाथ से हाथ नहीं सूझता था और कुछ दूर तक तो पैरों से रास्ता टटोल-टटोल कर चलना पड़ा था। जब आंखें अंधेरे की अभ्यस्त हो गयीं, तब कहीं जाकर रास्ता दीख पड़ा था। वृद्धावस्था के बावजूद जनरल अनोसोव को अपनी आंखों की ज्योति पर बड़ा गर्व था, जो अभी तक जरा भी मन्द या कमजोर नहीं हुई थी। वह वीरा को रास्ता दिखला रहे थे और बार-बार अपने चौड़े ठंडे हाथ से अपने कोट की आस्तीन पर पड़े वीरा के हाथ को प्यार से सहलाने लगते थे।

"ल्युदमिला ल्वोवना भी अजीब औरत है," अचानक जनरल बोल उठे, मानो कुछ देर से वह उसी के विषय में सोच रहे हों। "मेरा यह अनुभव पुराना है कि जब कोई स्त्री—विशेषकर यदि वह अविवाहित अथवा विधवा हो—पचास की उम्र पार कर लेती है, तो उसे हमेशा दूसरे लोगों के प्रेम के सम्बंध में टीका-टिप्पणी करने में बड़ा रस मिलता है। लोगों के भेद पता चलाने, दो की चार लगाने और झूठ-सच अफवाहें फैलाने के अलावा उन्हें और कोई काम नहीं रहता। दूसरों के सुख की चिन्ता उन्हें दिन-रात खाये जाती है। उदात्त और पवित्र प्रेम के विषय में वे घंटों लेक्चर झाड़ सकती हैं। किन्तु मैं समझता हूं कि आज कल लोग प्रेम करना ही नहीं जानते। सच्चे प्रेम की बड़ी-बड़ी बातें की जाती हैं, किन्तु मैंने सच्चे प्रेम का आज तक एक भी उदाहरण नहीं देखा—न इस जमाने में, न अपने जमाने में।"

"दादा, आप कैसी बातें कह रहे हैं?" वीरा ने जनरल का हाथ धीरे से दबाकर कहा। "जब आपने विवाह किया था, तो प्रेम भी अवश्य किया होगा। क्यों, क्या मैं झूठ कह रही हूं?"

"इससे कुछ नहीं बनता-बिगड़ता। वीरा, तुम्हें मालूम है, मेरा विवाह कैसे हुआ था? इसमें कोई शक नहीं कि वह लड़की बहुत खूबसूरत थी—एकदम ताजे आड़ू की तरह मादक और जवान। जब वह मेरे पास बैठती थी तो महज सांस लेने भर से उसका वक्षस्थल ऊपर-नीचे डोलने लगता था। वह अपनी लम्बी, आकर्षक पलकों को नीचे झुका लेती और अचानक उसका चेहरा गुलाबी हो उठता था। उसके कपोलों की कोमल, नर्म त्वचा, सफेद संगमरमर सी गर्दन, और गर्म, गदराये हाथों को देखकर दिल काबू में नहीं रहता था। उसके माता-पिता हम दोनों के इर्द-गिर्द हमेशा मंडराते रहते, कमरे के बाहर दरवाजे पर कान लगाकर हमारी बातें सुनते और विनीत, याचना भरे भाव से,

आज्ञाकारी कुत्तों की तरह हमेशा मेरा मुंह निहारते रहते थे। हर रोज विदा लेते समय वह जल्दी-जल्दी मेरे मुंह पर चुम्बनों की बौछार कर देती थी। चाय की मेज के नीचे जाने-अनजाने में उसका पैर मेरे पैर को छू जाता था। आखिर एक दिन उन्होंने मुझे अपने जाल में फंसा ही लिया। 'प्यारे निकिता आन्तोनोविच,' मैंने उस लड़की के पिता से कहा : 'मैं आपकी कन्या से विवाह करना चाहता हूं। क्या आप अपनी अनुमति देने की कृपा करेंगे ? सच मानिये, आपकी कन्या एक देवी ...' किन्तु मेरा वाक्य समाप्त होने से पूर्व ही पिता की आंखें सजल हो आयीं और वह आवेग में आकर मुझे चूमने लगा। 'मेरे बच्चे — मैंने तो इस बात का अनुमान पहले से ही लगा लिया था। ईश्वर तुम्हारी उम्र बड़ी करे। लेकिन देखो, वह हमारी आंखों की पुतली है, उसे किसी प्रकार का कष्ट न होने पाये।' किन्तु विवाह के तीन महीने बाद ही वह 'आंखों की पुतली' घर में मैली-कुचैली पोशाक पहने, नंगे पांव में स्लीपर डाले, कागज के क्लिपों पर लटकते अस्त-व्यस्त बालों को बिखेरे इधर से उधर चक्कर लगाती हुई, भटियारन की तरह नौकरों से लड़-झगड़ रही थी। अफसरों के सम्मुख उसका व्यवहार देखकर शर्म से सिर झुक जाता था — उनके सामने वह बन-बनकर बोलती थी, जान-बूझकर तुतलाती थी, खी-खी करके दांत फाड़ती रहती थी और आंखें नचा-नचाकर बात करती थी। दूसरों की उपस्थिति में न जाने क्यों वह मुझे जाक कहकर बुलाती थी। अलसाये, नकियाते स्वर में गाते हुए जब वह 'जा — ऽऽक' कहती थी तो मैं पसीना-पसीना हो जाता था। वह एक खर्चालू, कपटी, लापरवाह और लालची औरत थी। उसकी आंखों से हमेशा बदनीयती का भाव झलकता रहता था। अच्छा ही हुआ कि मैंने सदा के लिए उससे छुटकारा पा लिया। एक तरह से मैं उस बदकिस्मत अभिनेता का आभारी हूं, जिसने उससे मेरा पल्ला छुड़वा दिया। सौभाग्य से हमारे कोई सन्तान नहीं हुई।"

"दादा — क्या आपने उन दोनों को क्षमा कर दिया ?"

"'क्षमा' का शब्द गलत है, प्यारी वीरा। शुरू-शुरू में तो क्रोध ने मुझे अंधा बना दिया था। अगर उन्हें कहीं देख लेता, तो दोनों का काम-तमाम कर देता। फिर धीरे-धीरे गुस्सा मिटने लगा और हृदय में उसके प्रति केवल घृणा का भाव रह गया। ईश्वर की कृपा से मेरे हाथ रक्त-रंजित नहीं हुए, वह अच्छा ही हुआ। इसके अलावा मैं उन सब मुसीबतों से बच गया, जो अक्सर विवाहित पुरुषों को भोगनी पड़ती हैं। अगर यह दुर्घटना न होती, तो न जाने आज मेरी कैसी दुर्दशा होती — अन्य पतियों की तरह मेरा जीवन भी एक लद्दू ऊंट, दुधारी गाय या घरेलू बर्तन से बेहतर न होता। हर आदमी को अपनी पत्नी के भले-बुरे कामों में इच्छा-अनिच्छा से योग देना पड़ता है, उसका

रक्षक बनना पड़ता है, और उसकी पत्नी उसी की आड़ लेकर शिकार खेलती है। ना बाबा, ईश्वर ही बचाये ऐसे जीवन से। वीरा, परमात्मा जो करता है अच्छा ही करता है।"

"नहीं दादा, आप के मन में अब भी कड़वाहट भरी है। मुझे लगता है, आप उस घटना को अभी भूले नहीं हैं। आप अपना कटु-अनुभव समस्त मानव-जाति पर लाद रहे हैं, यह ठीक नहीं है। मुझे और वास्या को ही लीजिए। हमारा विवाह सफल रहा है, क्या आप ऐसा नहीं सोचते?"

अनोसोव कुछ देर तक चुप रहे।

"अच्छा—तुम्हारी मिसाल हम एक अपवाद के रूप में मान सकते हैं," उन्होंने अनमने-भाव से कहा। "किन्तु मैं पूछता हूं, लोग आम तौर पर क्यों विवाह करते हैं? पहले स्त्रियों को ही लिया जाए। हर स्त्री को इस बात में शर्म आती है कि उसकी सहेलियों का विवाह हो जाए और केवल वह अविवाहित रह जाए। इसके अलावा कौन लड़की यह चाहेगी कि वह जीवन भर मां-बाप का भार बनी रहे? घर की मालकिन बनकर वह स्वतंत्र रूप से अपनी गृहस्थी चलाना चाहती है। किन्तु हर स्त्री की सबसे बड़ी आवश्यकता—मां बनने की शारीरिक-लालसा और अपना अलग घोंसला बनाने की अभिलाषा बिना विवाह के पूरी नहीं हो सकती। पुरुषों के उद्देश्य बिल्कुल भिन्न हैं। सब से पहली बात तो यह है कि हर पुरुष किसी न किसी समय अपने अविवाहित जीवन की अव्यवस्था से असंतुष्ट हो जाता है। दैनिक जीवन की छोटी-छोटी परेशानियों—कमरे में बिखरा कूड़ा-कचरा, होटल का भोजन, धूल-मट्टी, सिगरेट के टोटे, फटे-अनसिले कपड़े, कर्ज का बोझ, उच्छृंखल दोस्त तथा अन्य दिक्कतों से आखिर एक दिन वह तंग हो उठता है। दूसरा कारण: वे यह जान लेते हैं कि स्वस्थ और मितव्ययी ढंग से जीवन बिताने के लिए परिवार में रहना आवश्यक है। तीसरा कारण: अमरता का भ्रम—कुछ लोग यह समझते हैं कि मृत्यु के बाद उनके व्यक्तित्व का एक अंश उनकी सन्तान में जीवित रहेगा। चौथा कारण: भोले युवक का किसी लड़की के प्रति मोह-आकर्षण—जिसका शिकार मैं हुआ था। कभी-कभी दहेज की मोटी रकम भी नौजवानों को विवाह के प्रति आकर्षित करती है। किन्तु इन सब बातों में प्रेम का स्थान कहां है? निःस्वार्थ, पवित्र प्रेम, जिस पर आदमी बलि हो जाता है, और फिर भी फल की आशा नहीं रखता—कहां है ऐसा प्रेम? सुनते हैं, 'प्रेम मृत्यु से भी अधिक शक्तिशाली है,'—मेरा मतलब उस प्रेम से है, जिसकी बलिवेदी पर आदमी हंसते-हंसते अपने प्राण न्यौछावर कर देता है। ठहरो, वीरा! मुझे मालूम है कि तुम दुबारा वास्या का उल्लेख करने जा रही हो। माना, वास्या भला आदमी है, मुझे वह अच्छा भी लगता है। हो सकता

है कि भविष्य में कभी उसका प्रेम अपने उज्ज्वल, निर्मल गौरव को प्रदर्शित कर सके। किन्तु मैं जिस प्रेम की चर्चा कर रहा हूं, जरा उसे समझने का यत्न करो। प्रेम एक विराट ट्रेजेडी है — दुनिया का सबसे बड़ा रहस्य! यही सच्चा प्रेम है, और इस प्रेम में स्वार्थ, सुविधाओं और समझौतों की गुंजाइश नहीं है।"

"दादा — आपने कभी जीवन में ऐसा प्रेम देखा है?" वीरा ने धीमे स्वर में पूछा।

"नहीं," जनरल अनोसोव ने दृढ़-स्वर में उत्तर दिया। "किन्तु मैं ऐसे दो उदाहरण दे सकता हूं, जिनमें मुझे ऐसे प्रेम की आभा दिखायी दी थी — पहले उदाहरण के पीछे केवल मूर्खता नजर आएगी और दूसरे के पीछे महज पागलपन! अगर तुम चाहो, तो मैं संक्षेप में तुम्हें प्रेम की ये अद्भुत घटनाएं सुना देता हूं — ज्यादा देर नहीं लगेगी।"

"जरूर, दादा, मैं सुन रही हूं।"

"हमारे डिवीजन में — रेजीमेन्ट में नहीं — एक रेजीमेन्टल कमान्डर थे, जिनकी पत्नी एक बहुत कुरूप औरत थी। उसे देखते ही प्राण सूख जाते थे। उसका शरीर हड्डियों का ढांचा था — सुर्ख बाल, लम्बी सींक सी टांगे, रुक्ष दुर्बल देह, लम्बा मुंह — देखने में वह पूरी हौवा लगती थी। सुर्खी और पाउडर लगाने से उसके चेहरे की त्वचा मास्को के किसी पुराने मकान के पलस्तर सी उखड़ गयी थी। किन्तु इसके बावजूद वह 'रेजीमेन्ट की मैसेलिना' समझी जाती थी। सब लोग उसके उत्साह और साहस, दर्प, जन-साधारण के प्रति घृणा, और नयी-नयी चीजों के शौक को देख कर दंग रह जाते थे। इसके अलावा उसे अफीम लेने की पुरानी लत थी।

"शरद ऋतु में एक दिन हमारी रेजीमेन्ट में एक नया ध्वजवाहक आया। वह अभी-अभी सैनिक-स्कूल का कोर्स समाप्त करके आया था। रेजीमेन्टल-कमान्डर की पत्नी पुरानी घाघ थी। एक महीने में उसने उस भोले-भाले लड़के को अपने जाल में फंसा लिया। दास और अनुचर की तरह वह उसके पीछे-पीछे भागता फिरता था और नाच के समय उसे हमेशा उसका साथी बनना पड़ता था। जहां कहीं भी वह जाती थी, उस लड़के को उसका रुमाल और पंखा हाथ में लेकर कुलियों की तरह उसके पीछे चलना पड़ता था, अपना फटा-पुराना कोट पहने उसे बर्फ और पाले में उसके घोड़े लाने के लिए दौड़ना पड़ता था। जब एक अबोध युवक अपना प्रथम-प्रेम एक अनुभवी, धूर्त, महत्वाकांक्षी और लम्पट स्त्री के पैरों पर समर्पित कर देता है, तो उसकी दीन-दयनीय अवस्था की कल्पना करते ही दिल कांप उठता है। उस स्त्री से चाहे वह छुटकारा पाने में सफल हो जाय, किन्तु उस घटना की भयानक छाया हमेशा उसके जीवन के प्रत्येक सुख को विशाक्त कर जाती है।

"क्रिसमस के आरम्भ होने तक रेजीमेन्टल कमान्डर की पत्नी उस युवक से ऊब गयी। उसे दूध की मक्खी की तरह फेंक कर वह अपने किसी पुराने चिर-परिचित प्रेमी के पीछे लग गयी। किन्तु वह युवक उसके बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकता था। जहां कहीं वह जाती, छाया की तरह वह उसके पीछे लगा रहता। उसके प्रेम में वह तिल-तिल करके जलने लगा। उसके पीले विवर्ण चेहरे और घुलती हुई देह को देखकर लगता था मानो वह महीनों से बीमार हो।

"गुरु-गम्भीर शब्दों में यदि हम उसकी अवस्था का वर्णन करें तो कह सकते हैं कि 'मृत्यु के चरण-चिन्ह उसके मस्तक पर अंकित हो गये थे।' उस स्त्री के प्रेम में युवक का हृदय दिन-रात जलता रहता था। कहते हैं कि वह सारी रात उसकी खिड़की के नीचे खड़ा रह कर काट देता था।

"वसन्त ऋतु में रेजीमेन्ट की ओर से एक पिकनिक का आयोजन किया गया। मैं रेजीमेन्टल कमान्डर की पत्नी और ध्वजवाहक दोनों से परिचित था, किन्तु उस दिन किसी कारण से मैं घटनास्थल पर उपस्थित नहीं था। साधारणतः ऐसे अवसरों पर खूब छक कर शराब पी जाती है। उस दिन भी सब लोग नशे में धुत थे। रात होने पर वे सब रेल की पटरी के संग-संग घर वापिस लौटने लगे। अचानक उन्होंने सामने से एक मालगाड़ी को आते देखा। इंजन की सीटी हवा में गूंज रही थी, और उसकी हैडलाइट (आगे की बत्ती) का प्रकाश आगे खिसकता हुआ निकटतर आता जा रहा था। अचानक उस स्त्री ने ध्वजवाहक के कानों में कहा : 'सदा तुम यही रट लगाये रहते हो कि तुम मुझ से प्रेम करते हो। किन्तु यदि मैं तुमसे कहूं कि रेल के नीचे अपने को फेंक दो, तो शायद तुम मेरी बात कभी नहीं मानोगे।' उस युवक ने उत्तर में एक शब्द भी नहीं कहा, तेजी से सीधा भागता हुआ वह रेल की पटरी पर लेट गया—ऐसे ढंग से लेटा था, जिससे रेल के अगले और पिछले पहियों के नीचे दब कर उसके दो टुकडे हो जाएं। किन्तु उसके किसी बेवकूफ साथी ने उसे पकड़ कर पीछे घसीट लिया—शरीर पटरी के बाहर आ गया किन्तु उसके हाथ, जो पटरियों पर जमे रहे थे, कट कर अलग हो गये।

"उफ!" वीरा धीरे से कराह उठी। "उस घटना के बाद ध्वजवाहक को इस्तीफा देकर वहां से चला जाना पड़ा। साथियों ने सफर के खर्च के लिए कुछ रुपये जमा करके उसे दे दिये। शहर में उसकी उपस्थिति से रेजीमेन्ट और रेजिमेंटल कमान्डर की पत्नी को अपनी बदनामी का खतरा बना रहता—इसलिए उसे वह शहर भी छोड़ना पड़ा। यही उस बेचारे की प्रेम-कहानी है—बाद में वह दर-दर भीख मांगता हुआ देखा गया। पीटर्सबर्ग के किसी कोने में बर्फ में अकड़ जाने से उसकी मृत्यु हो गयी।

"दूसरी घटना भी पहली की तरह करुणाजनक है। इसमें स्त्री का स्वभाव कमांडर की पत्नी से मिलता-जुलता था, यद्यपि यह स्त्री जवान और सुन्दर थी। उसका स्वभाव और व्यवहार एकदम निन्दनीय तथा लज्जास्पद था। घरेलू मामलों और घर-गृहस्थी के झगड़ों को हम अधिक महत्व नहीं देते, किन्तु उसकी आदतों को देख कर हमारा सर शर्म से झुक जाता था। उसका पति सब कुछ देख-सुन कर भी मौन साध लेता था। उसके मित्रों ने अनेक बार इशारों से उसका ध्यान उसकी पत्नी के आचरण की ओर आकर्षित करने की चेष्टा की थी, किन्तु हर बार हवा में हाथ हिला कर वह कह देता : 'मुझे अपनी पत्नी के निजी मामलों में टांग अड़ाने का कोई अधिकार नहीं है। लीना सुखी रहे, मेरे लिए यही बहुत है।' मूर्ख कहीं का !

"आखिर जो होना था, सो होकर रहा। वह अपने पति की कम्पनी के एक अफसर लेफ्टीनेन्ट विशन्याकोव के प्रेम में फंस गयी। उसने लेफ्टीनेन्ट को अपना दूसरा पति स्वीकार कर लिया और अवैध सम्बंध को एक ऐसा सहज, स्वाभाविक रूप दे दिया मानो वह विवाह की मर्यादा के अनुकूल हो। जब हमारी रेजीमेन्ट मोर्चे पर जाने लगी तो शहर की सब स्त्रियां हमें विदा करने के लिए स्टेशन पर आई थीं। उस दिन का दृश्य जब याद आता है तो मन गहरी वितृष्णा से भर जाता है। स्टेशन पर उस स्त्री ने अपने पति को एक बार भी आंख उठा कर नहीं देखा। कम से कम लोगों को दिखलाने के लिए ही उससे दो-चार बातें कर लेती। किन्तु उसकी आंखें तो लेफ्टीनेन्ट पर जमी हुई थीं। वह एक क्षण के लिए भी उसे अपनी आंखों से ओझल न होने देती थी। पुरानी, जीर्ण-शीर्ण दीवार पर लिपटी बेल की तरह वह अपने प्रेमी से चिपकी हुई थी। जब हम सब रेल में बैठ गये और रेल चलने लगी तो वह डायन अपने पति की ओर उन्मुख होकर जोर से चिल्ला उठी : 'वलोद्या का ध्यान रखना। यदि उसे कुछ हो गया तो मैं बच्चों समेत घर छोड़ कर भाग जाऊंगी और फिर कभी वापिस आने का नाम नहीं लूंगी।'

"तुम उसके पति को कायर, जड़बुद्धि और बौड़म समझती होगी, किन्तु तुम्हारा अनुमान सर्वथा गलत है। वह एक बहादुर सैनिक था। जैलोनिये गोरी के स्थान पर उसके नेतृत्व में उसकी कम्पनी ने तुर्की सेनाओं पर छ: बार धावा बोला था, दो सौ सैनिकों में केवल चौदह सैनिक जीवित बचे थे। वह स्वयं दो बार सख्त घायल हुआ, किन्तु उसने अस्पताल जाने से साफ इन्कार कर दिया। कम्पनी के सिपाही उसकी पूजा किया करते थे, उनके दिलों में उसके प्रति गहरा आदर का भाव था।

"जाते समय लीना — उसकी प्यारी लीना — ने उससे जो कुछ कहा था, उसे भला वह कैसे टाल सकता था ?'

"विशन्याकोव एक कायर, आलसी और निकम्मा आदमी था, किन्तु कप्तान एक नर्स या मां की तरह उसकी सेवा-टहल किया करता था। रात के समय कैम्प में जाड़े और कीचड़ से हड्डियां ठिठुरती रहतीं, किन्तु वह अपने कष्ट की चिन्ता किये बिना अपना ओवरकोट उतार कर उसे ओढ़ा देता। उसके स्थान पर स्वयं जमीन खोदने के काम का निरीक्षण करता और विशन्याकोव मजे से खाई में आराम करता या 'फारो' खेलता रहता था। जब कभी विशन्याकोव पर रात की चौकी भरने की ड्यूटी आ पड़ती, तो वह स्वयं उसके स्थान पर रात भर जाग कर पहरा दिया करता था। वह काम मौत के मुह में सिर डालने की तरह खतरनाक था। याद रखो, उन दिनों तुर्की सिपाही हमारे पहरेदारों को मूली-गाजर की तरह काट देते थे।

"यह बात कहना पाप है, किन्तु सौगन्ध खाकर तुमसे कहता हूं कि जब हमने यह समाचार सुना कि टायफायड के कारण विशन्याकोव की अस्पताल में मृत्यु हो गयी है, तो कम्पनी के सब सैनिक खुश हुए थे।"

"दादा — स्त्रियों के सम्बंध में आपकी क्या राय है? क्या आज तक आपको कोई ऐसी स्त्री नहीं मिली, जिसने सच्चा प्रेम किया हो?"

"क्यों नहीं, वीरा! मैं तो यह तक कहने के लिए प्रस्तुत हूं कि हर स्त्री अपने प्रेम के लिए साहस और गौरव से भरे ऐसे जौहर दिखला सकती है कि हमें आश्चर्य-चकित रह जाना पड़ता है। क्या तुम नहीं जानतीं, जब कोई स्त्री अपने प्रेमी को चूमती है, उसका आलिंगन करती है, उस पर अपने को समर्पित कर देती है, उस क्षण वह मां बन जाती है? प्रेम — यदि वह सचमुच प्रेम करती है — उसके जीवन को अर्थ देता है। समूचा विश्व उसके प्रेम में समाहित हो जाता है। आज प्रेम अपने उच्च आदर्शों से गिर कर दैनिक-जीवन की सुविधा और मनोरंजन का साधन-मात्र रह गया है, किन्तु उसके इस विकृत-रूप के लिए स्त्री को कदापि दोष नहीं दिया जा सकता। इसका सारा उत्तरदायित्व पुरुषों पर है, जो बीस वर्ष की आयु में ही भोग-विलास और विषय-वासना की दलदल में फंस कर प्रेम की कोमल अनुभूति और आस्था, गहरी भावनाओं, कर्मठता और आत्मबल को नष्ट कर देते हैं, जिनका दिल खरगोश की तरह कायर और शरीर चूजे की तरह पिलपिला हो जाता है। सुनते हैं कि एक जमाना था जब लोग सच्चे प्रेम का अर्थ और गौरव समझते थे। यह सच न भी हो, तो भी इस बात से कौन इनकार करेगा कि आज तक दुनिया में जितने भी महान, श्रेष्ठ और मेधावी पुरुष हुए हैं — कवि, उपन्यासकार, संगीतज्ञ, कलाकार — उन्होंने अपनी रचनाओं में इस उदात्त प्रेम की कल्पना की है, उसे पाने के लिए उनका हृदय तड़पता रहा है। अभी कुछ दिन पहले मैं मैनोन लेसकांट और ग्रियू के घुड़सवार की कथा पढ़ रहा था। सच वीरा, पढ़ते-पढ़ते मेरी आंखों में आंसू आ गये।

क्या हर स्त्री उस एकनिष्ठ प्रेम का स्वप्न नहीं देखती जो सब कुछ सह सकने की क्षमता रखता हो, सबके प्रति सम्वेदनशील हो, जिसमें विनय और आत्म-बलिदान की भावना कूट-कूट कर भरी हो ?"

"आप ठीक कहते हैं—दादा !"

"पर ऐसा प्रेम कहां मिलता है ? यही कारण है कि हर स्त्री के हृदय में प्रतिकार की भावना सुलगती रहती है। मुझे पूरा विश्वास है वीरा, कि अगले तीस वर्षों में स्त्रियों के हाथों में अभूतपूर्व शक्ति आ जायगी। मैं उस समय यह देखने के लिए जीवित नहीं रहूंगा, किन्तु वीरा, तुम शायद अपनी आंखों के सामने यह चमत्कार देख सकोगी। हिन्दू देवी-देवताओं की मूर्तियों के समान उनकी वेशभूषा आखों को चकाचौंध कर देगी। हम पुरुषों को घृणित, मिमियाते गुलामों की तरह अपने पैरों के नीचे रौंदकर नारी अपनी प्रतिहिंसा की आग बुझाने में सफल होगी। हम उसके पैरों की धूल चाटते फिरेंगे। उसकी हर जिद और आकांक्षा—चाहे वह कितनी विचित्र और असंगत क्यों न हो—हमारे लिए शिरोधार्य होगी। उसका एकमात्र कारण केवल यह होगा कि इतने युगों से हमने उसके प्रेम की अवहेलना की है, उसके स्वप्नों को खंडित किया है। हमें अपने जघन्य अपराधों का दंड भुगतना ही पड़ेगा। तुम विज्ञान का यह अटल नियम जानती हो : प्रत्येक क्रिया अपने समान एक प्रतिकूल प्रति-क्रिया को जन्म देती है।"

वह कुछ देर तक चुप रहे, फिर उन्होंने अचानक पूछा : "वीरा, अगर तुम्हें संकोच न लगे, तो क्या मुझे बतलाओगी कि टेलीग्राफ-क्लर्क की उस कहानी में कितना सच है, जो प्रिंस वासिली ने आज रात हमें सुनायी थी ? मैं जानना चाहूंगा कि वह केवल कपोल-कल्पित किस्सा है अथवा उसमें सच्चाई का भी कुछ अंश है ?"

"दादा—क्या आप सचमुच जानना चाहते हैं ?"

"अगर तुम्हें कोई झिझक न हो, तो मैं जरूर सुनना चाहूंगा—किन्तु यदि किसी कारण से तुम इसे अनुचित ..."

"नहीं दादा—बिलकुल अनुचित नहीं समझती। आपसे मुझे किसी तरह का कोई संकोच क्यों होने लगा ?"

और वीरा ने विस्तारपूर्वक जनरल को उस पागल आदमी की कहानी सुना दी, जो उसका विवाह होने से दो वर्ष पूर्व उसके प्रेम में दीवाना हो गया था।

वीरा ने उस युवक को आज तक न देखा था। वह उसके नाम से भी अनभिज्ञ थी क्योंकि वह पत्रों में अपने नाम के स्थान पर केवल 'ज. स. ज.' लिखा करता था। अपने एक पत्र में उसने यह अवश्य लिखा था कि वह किसी

दफ्तर में क्लर्क है। किन्तु उसने टेलीग्राफ-दफ्तर का उल्लेख नहीं किया था। उसके पत्रों से यह स्पष्ट रूप से जाहिर होता था कि वह वीरा की गति-विधि का बड़े ध्यान से अध्ययन किया करता था——किस शाम वह कहां गयी थी, कौन उसके संग था, वह किस पोशाक में थी——इन सब बातों का सही और विस्तृत ब्यौरा उसके पत्रों में दिया होता था। शुरू-शुरू में उसके पत्रों से अजीब गवांरूपन सा झलकता था। उसकी भावुकता हास्यास्पद सी जान पड़ती थी। किन्तु उसे एक भी ऐसा पत्र याद नहीं आता जिसमें उसने शिष्टता या शालीनता की सीमा का उल्लंघन किया हो। एक बार वीरा ने तंग आकर उसे पत्र भेजा था। "दादा, यह पत्र की बात मैंने अभी तक गुप्त रखी है। आप भी किसी को मत बताइयेगा।" वीरा ने बीच में रुककर कहा। हां, तो एक बार उसने उसे पत्र भेजा था जिसमें उसने उस युवक से प्रार्थना की थी कि वह अपने प्रेम-पत्रों से उसे ज्यादा परेशान न करे। उसके बाद उसके पत्रों का सिलसिला बन्द सा हो गया। हां कभी-कभी——नये वर्ष, ईस्टर या वीरा के जन्म-दिवस पर अब भी उसके पत्र आ जाते थे, किन्तु उन पत्रों में अपने प्रेम का उल्लेख करना उसने बिलकुल छोड़ दिया था। वीरा ने जनरल को उस उपहार के सम्बंध में भी बतलाया, जो उसे आज रात मिला था और उस विचित्र पत्र का भी उल्लेख किया जो उसके अज्ञात प्रेमी ने उपहार के संग उसे भेजा था।'

जनरल अनोसोव कुछ देर तक चुप रहे।

"कोई सरफिरा नौजवान होगा——अजीब पागल सा आदमी जान पड़ता है——किन्तु शायद मैं गलत होऊं। हो सकता है तुम्हारे रास्ते में एक ऐसा असाधारण और अद्वितीय प्रेम आ भटका है, स्त्रियां जिसके स्वप्न देखती हैं और पुरुष जिसे वहन करने में अपने को असमर्थ पाते हैं। जरा देखो——तुम्हें वह रोशनी पास आती हुई दिखायी दे रही है? शायद वह मेरी गाड़ी है।"

उसी समय उन्हें पीछे से मोटर का भोंपू सुनायी दिया। गैस के उज्ज्वल प्रकाश में पहियों के निशानों से भरी हुई सड़क एकाएक जगमगा उठी। मोटर पास आकर ठहर गयी। गुस्ताव इवानोविच ने खिड़की से सर बाहर निकाल कर कहा: "अन्ना, भीतर चली आओ, मैंने तुम्हारी सब चीजें मोटर में रख ली हैं। एक्सीलेंसी, आप भी हमारे संग चलें, आपका घर हमारे रास्ते में ही पड़ता है।" इवानोविच ने जनरल की ओर उन्मुख होकर कहा।

"शुक्रिया मेरे दोस्त, किन्तु मैं नहीं आ सकूंगा।" जनरल ने कहा। "तुम्हारे इस इंजन की बदबू और खड़खड़ाहट मुझ से बरदाश्त नहीं होती। अच्छा वीरा, अब चला। कभी-कभी आता रहूंगा।" उन्होंने वीरा के मस्तक और हाथों को चूमते हुए कहा।

सब ने एक-दूसरे से विदा ली। फ्रिस्स ने वीरा को उसके बंगले के फाटक के सामने छोड़ दिया और तेजी से चक्कर काटकर अंधेरी सड़क में मोटर मोड़ ली। दूर तक उसकी मोटर की गड़गड़ाहट सुनाई देती रही।

नौ

प्रिंसेज वीरा उद्विग्न मन से चबूतरे की सीढ़ियां चढ़ने लगी। कमरे में आकर उसे दूर से अपने भाई निकोलाय के चिल्लाने का स्वर सुनाई दिया। निकोलाय एक पतला-दुबला पुरुष था और इस समय बहुत क्रोध और बेचैनी में चहलकदमी कर रहा था। वासिली ल्वोविच ताश खेलने के मेज पर अपने सन से सफेद छोटे-छोटे बालों वाले सर को झुकाये चौक के टुकड़े से हरे कपड़े पर रेखाएं खींच रहे थे।

"हमें पहले से ही कोई कदम उठाना चाहिए था।" निकोलाय ने झुंझला कर कहा। उसने अपने दायें हाथ से हवा में एक ऐसा संकेत किया जिसे देखकर लगता था मानो वह अपने सर से कोई अदृश्य बोझ उठाकर नीचे फेंक रहा हो। "मैं पहले न कहता था कि पत्रों के इस किस्से को आगे बढ़ाना सरासर गलत है। जब तुम्हारा वीरा से विवाह नहीं हुआ था, उस समय भी तुम दोनों बच्चों की तरह इन पत्रों को पढ़-पढ़कर मजा लूटते थे। तुमने कभी सोचा ही नहीं कि मामला इतना तूल पकड़ जाएगा। वीरा, तुम आ गयीं? अभी-अभी मैं और वासिली ल्वोविच तुम्हारे उस पागल—प. प. ज. की बातें कर रहे थे। मैं इस पत्र-व्यवहार को धृष्टतापूर्ण और लज्जास्पद समझता हूं।"

"पत्र-व्यवहार कैसा?" शेयिन ने निकोलाय को बीच में टोककर कठोर स्वर में कहा: "पत्र केवल उसने लिखे हैं।"

यह सुनकर वीरा का चेहरा लाल हो गया और वह ताड़ के चौड़े पंखे के नीचे सोफा पर बैठ गयी।

"मुझे माफ करना, मेरा मतलब यह नहीं था।" निकोलाय ने कहा और फिर हवा में हाथ नचाकर वही संकेत किया जिसे देखकर लगता था मानो वह कोई भारी, अदृश्य वस्तु अपनी छाती से निकाल कर बाहर फेंक रहा हो।

"उसे तुम 'मेरा पागल आदमी' क्यों कहते हो? वह मेरा उतना ही है जितना तुम्हारा!" अपने पति का रुख देखकर वीरा का साहस बढ़ गया था।

"अच्छा भई, मुझे माफ करो—दुबारा गलती कर बैठा। संक्षेप में मेरा मतलब सिर्फ इतना था कि हमें इस पागलपन को और अधिक प्रोत्साहित नहीं करना चाहिए। अब यह मामला उतना सीधा नहीं रहा जब हम व्यंग-चित्र बनाकर इसे हंसी में उड़ा सकते थे। मुझे तो सिर्फ यह डर है कि अगर

हम इसी तरह हाथ पर हाथ धर कर बैठे रहे तो कहीं वीरा और तुम्हारी इज्जत पर बट्टा न लग जाए।"

"कोल्या, तुम तो तिल का ताड़ बना रहे हो।" शेयिन ने कहा।

"हो सकता है, किन्तु क्या तुम स्वयं यह नहीं अनुभव करते कि इस घटना से तुम्हारी स्थिति कितनी हास्यास्पद बन सकती है?"

"कैसे?" प्रिंस ने कहा।

"फर्ज करो यह बेहूदा कंगन ..." निकोलाय ने मेज से लाल बक्स उठा लिया और घृणा से उसे नीचे फेंक दिया। "यह भयानक वस्तु हमारे घर में रखी रहती है, या हम इसे दाशा को दे देते हैं, या इसे बाहर फेंक देते हैं, तो जानते हो क्या होगा? पहली बात तो यह कि 'प. प. ज.' अपने मित्र और सगे-सम्बंधियों के सामने यह डींग मारता फिरेगा कि प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना शेयिना उसके भेजे हुए उपहारों को स्वीकार कर लेती है। दूसरी बात: यदि हम उसका उपहार घर में रख लेते हैं तो उसकी हिम्मत बढ़ जायेगी और वह नये-नये तमाशे दिखलायेगा। कल वह वीरा को हीरे की अंगूठी भेजेगा, परसों मोतियों का हार—और क्या मालूम—अगर वह कभी किसी गबन या चार सौ बीस के मामले में पकड़ा गया तो श्रीमान और श्रीमती शेयिन को गवाही देने अदालत में जाना पड़ेगा। बहुत खूब ..."

"कंगन को वापिस करना होगा।" प्रिंस दृढ़ स्वर में चिल्ला उठे।

"मैं भी यही सोचती हूं, जितनी जल्दी इसे वापिस कर दिया जाये, उतना ही अच्छा है।" वीरा ने अपने पति से सहमत होते हुए कहा। "किन्तु इसे हम कहां भेजेंगे? हमें उसका पता तो मालूम ही नहीं है।"

"अरे, उसका पता चलाना तो मेरे बायें हाथ का खेल है।" निकोलाय निकोलायविच ने लापरवाही भरे भाव से कहा। "हम उसके नाम के आरम्भिक अक्षर तो जानते ही हैं। प. प. ज., यही अक्षर हैं न वीरा?"

"ज. स. ज.।"

"अच्छा, यह तो हुआ नाम। इसके अलावा हम यह भी जानते हैं कि वह किसी दफ्तर में नौकरी करता है। कल मैं शहर की निर्देशिका (डाइरेक्टरी) में हर अधिकारी और क्लर्क का नाम देखूंगा। अगर वहां भी उसका नाम नहीं मिला तो उसका पता चलाने का काम किसी जासूस के हाथों में सौंप दूंगा। आवश्यकता पड़ने पर पत्र पर लिखे हुए उसके हस्ताक्षर हमारे काम आ सकते हैं। कल दो बजे तक उसका पूरा नाम, पता और कब वह घर में मिल सकता है, इन सब बातों की जानकारी हासिल हो जायेगी। कल न केवल हम उसकी 'अमूल्य निधि' उसे वापिस लौटा देंगे, बल्कि इस बात का आश्वासन भी प्राप्त कर लेंगे कि उसके अस्तित्व का अहसास हमें भविष्य में कभी न हो।"

"यह तुम कैसे कर सकते हो ?" प्रिंस वासिली ने पूछा।

"क्यों नहीं ... कल मैं गवर्नर से मिलने जा रहा हूं।"

"कृपया ऐसा कभी भूल कर भी न करना। तुम्हें पता है, गवर्नर के साथ हमारे सम्बंध अच्छे नहीं, बेकार अपनी हंसी उड़वाने से क्या फायदा ?"

"अच्छा, गवर्नर न सही, पुलिस के चीफ से इस सिलसिले में बातचीत करूंगा। हम दोनों एक ही क्लब में जाते हैं। वह हमारे मजनू की अक्ल ठिकाने लगा देगा। जानते हो, उसके सामने बड़े बड़े शेरों के होश फाख्ता हो जाते हैं। डराने-धमकाने का उसका तरीका ही निराला है। वह अभियुक्त की नाक के सामने अपनी अंगुली ले जाता है, अपनी कलाई को सीधा और स्थिर रख कर केवल अंगुली को नाक के सामने हिलाता हुआ गरजता है : 'जनाब, आपकी दाल यहां नहीं गलेगी !' बस इतने से ही काम बन जाता है।"

"छिः, पुलिस के साथ सांठ-गांठ करोगे ?" वीरा ने घृणा से अपना मुंह बिचका लिया।

"मैं वीरा की बात से सहमत हूं," प्रिंस वासिली ने कहा। "बाहर के आदमियों को इस मामले में घसीटना उचित नहीं होगा। दूसरे के कान में कोई बात पहुंची नहीं कि दूसरे ही दिन गलत-सलत अफवाहें फैलने लगती हैं। मैं अपने शहर को खूब अच्छी तरह से जानता हूं—कांच की दीवारों के बीच रहना पड़ता है। बेहतर यही होगा कि उससे मैं स्वयं मिलूं—हो सकता है वह साठ बरस का बूढ़ा हो। मैं उसे कंगन लौटा दूंगा और दो-चार बातें भी कर लूंगा।"

"मैं भी तुम्हारे संग चलूंगा।" निकोलाय निकोलायविच ने उसे बीच में टोक दिया। "तुम्हारा दिल बहुत कोमल है। उससे बात करने की जिम्मेदारी मेरी रहेगी। अच्छा, अब मुझे इजाजत दो।" जेब से घड़ी निकाल कर उसने सरसरी नजर से समय देखा। "मैं अब जरा अपने कमरे में जाकर कुछ काम करूंगा। थकान के मारे टांगें टूट रही हैं, किन्तु अभी दो फाइलें देखनी पड़ेंगी, फिर कहीं चैन की सांस ले सकूंगा।"

"न जाने क्यों, उस बदनसीब आदमी के लिए मुझे बड़ा अफसोस हो रहा है।" वीरा ने झिझकते हुए कहा।

"मैं नहीं समझता कि ऐसे आदमी के लिए अफसोस करने की कोई जरूरत है," निकोलाय ड्योढ़ी की ओर मुड़ते हुए बोला। "अगर हमारे वर्ग का कोई पुरुष कंगन और पत्रों का यह नाटक करता, तो प्रिंस वासिली को उसे द्वन्द-युद्ध के लिए चुनौती देनी पड़ती। अगर वह नहीं देते, तो मैं देता। पुराने जमाने में अगर ऐसी घटना होती तो मैं अपने अस्तबल में कोड़ों से उसकी ऐसी पिटाई करता कि बच्चू की चमड़ी उधड़ जाती। वासिली—कल तुम अपने दफ्तर में मेरी इंतजार करना—मैं तुम्हें फोन करूंगा।"

दस

सीढ़ियों पर कूड़ा-करकट बिखरा था और चारों ओर से चूहों, बिल्लियों, चरबी, तेल और धुलते हुए कपड़ों की दुर्गन्ध आ रही थी। पांचवी मंजिल पर चढ़ने से पूर्व प्रिंस वासिली जरा ठिठक गये।

"जरा ठहरो," प्रिंस वासिली ने हांफते हुए कहा। "कुछ देर यहां खड़े रह कर सांस ले लें। कोल्या, हमने यहां आकर बड़ी भूल की।"

दो मंजिलें और ऊपर चढ़नी पड़ीं। सीढ़ियां अंधेरे में डूबी थीं। निकोलाय को फ्लेट का नम्बर पता चलाने के लिए दो बार माचिस जलानी पड़ी।

घंटी का बटन दबाने पर एक वृद्ध स्त्री बाहर निकली। उसने अपनी सलेटी रंग की आंखों पर ऐनक लगा रखी थी, बाल सफेद हो गये थे, उसकी झुकी हुई कमर को देख कर लगता था मानों वह किसी रोग से पीड़ित हो।

"क्या श्री जेल्टकोव भीतर हैं?" निकोलाय निकोलायविच ने पूछा।

उस स्त्री ने आतंकित-भाव से दोनों आगन्तुकों को बारी-बारी से देखा। उनकी भद्र वेश-भूषा देखकर वह कुछ आश्वस्त हुई।

"आप अन्दर चले आइये," उसने पीछे हटते हुए कहा। "आपके बाएं हाथ पर पहला दरवाजा—हां, यही उनका कमरा है।"

बुलात-तुगानोवस्की ने जोर-जोर से तीन बार दरवाजा खटखटाया।

"आ जाइये," भीतर से एक धीमी आवाज आई।

कमरा चौकोर शक्ल का था और काफी चौड़ा था, किन्तु उसकी छत बहुत नीची थी। दो गोल खिड़कियां थीं जिन्हें देखकर लगता था मानो किसी ने दीवार पर दो सुराख कर दिये हों। बहुत कम रोशनी इन खिड़कियों से भीतर आ पाती थी। वह कमरा माल ढोने वाले जहाज का भोजन-गृह सा दिखायी देता था। एक ओर दीवार से सटा हुआ छोटा सा पलंग था, दूसरी ओर एक बढ़िया किन्तु पुराने कालीन से ढंका हुआ सोफा पड़ा था और बीच में एक मेज थी जिस पर यूक्रेन का रंगीन मेजपोश बिछा था।

शुरू-शुरू में वे दोनों गृह-स्वामी का चेहरा न देख सके क्योंकि वह रोशनी की तरफ पीठ किये असमंजस में खड़ा-खड़ा अपने दोनों हाथ एक दूसरे से रगड़ रहा था। वह एक लम्बा, दुबला-पतला व्यक्ति था और उसके बाल रेशम से कोमल और लम्बे थे।

"अगर मैं गलती नहीं कर रहा तो मेरे विचार में आप ही श्री जैल्तकोव हैं," निकोलाय ने ढिठाई से कहा।

"हां, मेरा ही नाम जैल्तकोव है। आपसे मिल कर बड़ी प्रसन्नता हुई।" अपना हाथ आगे बढ़ा कर वह तुगानोवस्की की ओर दो कदम आगे बढ़ आया।

किन्तु निकोलाय निकोलायविच ने उसके अभिवादन की ओर कोई ध्यान नहीं दिया और शेयिन की ओर मुड़ कर बोला :

"देख लिया — हमारा अनुमान आखिर ठीक निकला।" जैल्तकोव अपनी पतली, कांपती अंगुलियों से भूरे रंग की वास्कट के बटनों को कभी खोल रहा था, कभी बन्द कर रहा था। कुछ देर बाद उसने संकुचित भाव से नीचे झुक कर सोफा की ओर इशारा किया : "तशरीफ रखिये।"

अब उसकी शक्ल अच्छी तरह दिखलायी दे रही थी। आंखें नीली थीं, लड़कियों सा कोमल, पीला उसका चेहरा था, एक जिद्दी-हठी बालक की सी उसकी ठुड्डी दो हिस्सों में बंट गयी थी। आयु तीस-पैंतीस के बीच रही होगी।

"धन्यवाद !" शेयिन ने कहा। वह उसके चेहरे को बड़े कौतूहल से जांच परख रहा था।

"शुक्रिया !" निकोलाय ने फ्रेंच में कहा। किन्तु दोनों में से कोई भी सोफे पर नहीं बैठा।

"हमें ज्यादा कुछ नहीं कहना है। मेरे संग जो सज्जन आये हैं, वह इस प्रान्त के मार्शल हैं — प्रिंस वासिली ल्वोविच शेयिन। मेरा नाम मिर्जा बुलात-तुगानोवस्की है। मैं असिस्टेंट पब्लिक-प्रोसेक्यूटर (राजकीय उप-प्राभियोक्ता) हूं। हम जिस काम के सिलसिले में आपसे बात करने आये हैं, उससे मेरा और प्रिंस — दोनों का ही गहरा सम्बंध है। किन्तु यदि मैं कहूं कि हम दोनों से ही ज्यादा उसका सम्बंध प्रिंस की धर्मपत्नी — जो मेरी बहिन है — से है, तो शायद ज्यादा युक्तिसंगत होगा।

जैल्तकोव के मुंह पर हवाइयां उड़ने लगीं। भय से उसके होंठ पीले पड़ गये। वह सोफा पर बैठ गया और कांपते होठों से हकलाते हुए कहने लगा : "महानुभावो, आप तशरीफ रखिये।" किन्तु उसे याद आया कि यही वाक्य वह पहले भी कह चुका है। हड़बड़ा कर वह सोफा से उठ खड़ा हुआ। तेजी से कदम रखता हुआ खिड़की के पास आकर खड़ा हो गया। उद्विग्न-उद्भ्रान्त भाव से अपने बाल खींचने लगा और फिर वापिस सोफा की ओर लौट आया। उसके कांपते हाथ एक स्थान पर नहीं टिक पा रहे थे, कभी वह अपनी वास्कट के बटनों को मरोड़ने लगता और कभी अपनी मूंछों को नोचने लगता।

"आप जो आज्ञा दें ..." उसने खोखले स्वर में कहा। वह अपनी दीन अभ्यर्थना-भरी आंखों से बराबर प्रिंस वासिली को देख रहा था।

किन्तु शेयिन चुप रहा — उसके स्थान पर निकोलाय निकोलायविच ने मौन तोड़ते हुए कहा :

"सबसे पहले मैं आपकी चीज आपको वापिस लौटा रहा हूं," यह कहकर निकोलाय ने कंगन वाले लाल बक्से को मेज पर रख दिया।

"यह उपहार आपकी सुरुचि का परिचायक है, इसमें कोई सन्देह नहीं, किन्तु हमारी आपसे यह विनम्र प्रार्थना है कि भविष्य में आप ऐसी चीजें भेज कर हमें आश्चर्य में नहीं डालेंगे।"

"कृपया मुझे क्षमा कीजिये। मैं जानता हूं मेरा अपराध अक्षम्य है," जैल्तकोव ने दबे होठों से कहा। उसका चेहरा लाल हो गया था और उसकी आंखें फर्श पर चिपकी हुई थीं। "आपके लिए चाय मंगवाऊं ?"

"श्री जैल्तकोव ..." निकोलाय निकोलायविच ने उसके अन्तिम वाक्य को सुना-अनसुना करके अपनी बात जारी रखते हुए कहा : "मुझे यह देख कर बड़ी खुशी हुई कि आप एक सज्जन पुरुष हैं और इशारे से ही बात समझ लेते हैं। मुझे आशा है कि जल्द ही हमारे बीच समझौता हो जायगा। मेरा अनुमान है कि आप पिछले सात-आठ वर्षों से प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना का पीछा कर रहे हैं—क्या यह बात सही है ?"

"हां," जैल्तकोव ने धीमे स्वर में उत्तर दिया। सत्रंस्त-भाव में उसकी पलकें नीचे झुक गयीं।

"किन्तु अब तक हमने आपके खिलाफ कोई कार्रवाही नहीं की—हालांकि आप इस बात को स्वीकार करेंगे, कि हम ऐसा कर सकते थे और शायद हमें ऐसा करना भी चाहिए था। क्या आप मुझसे सहमत हैं ?

"हां।"

"किन्तु आपने यह रत्न-कंगन भेज कर हमारी सहनशक्ति की सीमाओं को तोड़ दिया। आप मेरी बात को समझ रहे हैं न ? मैं आपसे यह बात नहीं छिपाऊंगा कि आपके उपहार को देख कर जो पहला विचार मेरे दिमाग में आया, वह यह था कि इस मामले को पुलिस के सिपुर्द कर दिया जाय। किन्तु हमने यह कदम नहीं उठाया। और मुझे खुशी है कि हमने ऐसा नहीं किया, क्योंकि आपको देखते ही मुझे यकीन हो गया कि आप एक संभ्रान्त व्यक्ति हैं।"

"मुझे क्षमा करें—अभी आपने क्या कहा ?" जैल्तकोव अचानक बीच में बोल उठा और हंसने लगा। "आप यह मामला पुलिस को सिपुर्द करने वाले थे ? क्यों, यही फरमाया न आपने ?"

उसने जेब में अपने हाथ डाल दिये, और सोफा के एक कोने में आराम से बैठ गया। माचिस की डिबिया और सिगरेट-केस बाहर निकाल कर उसने एक सिगरेट सुलगा ली।

"अच्छा तो आप यह मामला पुलिस के हवाले करने जा रहे थे ? प्रिंस, मेरे बैठने पर आप को कोई आपत्ति तो नहीं है ?" उसने शोयिन से कहा। "आप अपनी बात जारी रखें।"

प्रिंस ने मेज के पास कुर्सी खींच ली और उस पर बैठ गये। वह उस

युवक को देखकर बिलकुल स्तम्भित हो गये थे और बड़ी उत्सुकता से उसके चेहरे को एकटक देख रहे थे।

"भले आदमी — हम तुम्हारे खिलाफ यह कदम किसी समय भी उठा सकते हैं।" निकोलाय निकोलायविच ने जरा ढिठाई से कहा। "तुम शायद नहीं जानते कि किसी अपरिचित परिवार के मामलों में इस तरह दखल देना...'

"ठहरिये — मैं आपको बीच में रोककर यह कहना चाहूंगा कि ..."

"नहीं — मैं आपको बीच में रोक कर यह कहना चाहूंगा ..." असिस्टेंट प्रोसेक्यूटर गर्म हो कर चिल्लाए।

"आपकी जैसे मरजी। आपने जो कहना है, कह लीजिये, किन्तु मैं प्रिंस वासिली से दो शब्द कहना चाहूंगा।" और तुगानोवस्की की ओर कोई ध्यान न देकर प्रिंस की ओर उन्मुख होकर उसने कहा : "यह मेरे जीवन की सबसे कठिन घड़ी है। मान-मर्यादा के नियमों की चिन्ता किये बिना मैं आप से दो-चार बातें साफ-साफ करना चाहूंगा। क्या आप मेरी बात सुनेंगे ?"

"आप कहिये — मैं सुन रहा हूं," शेयिन ने कहा। "कोल्या, तुम जरा चुप रहो।" उसने तुगानोवस्की को धीरे से डपट दिया।

कुछ देर तक जैल्तकोव जोर-जोर से सांस लेता रहा, मानो उसका दम घुट रहा हो। किन्तु अचानक उसके मुंह से शब्दों की बाढ़ सी निकलने लगी। उसके होंठ भयानक-रूप से सफेद पड़ गये थे — सफेद और सख्त, मानो किसी मुर्दे के होंठ हों। लगता था मानो वह केवल अपने जबड़ों से बोल रहा हो।

"मुझे समझ में नहीं आता कि मैं किन शब्दों में यह कहूं कि... मैं आपकी पत्नी से प्रेम करता हूं। किन्तु जो व्यक्ति सात वर्षों तक मौन रह कर — बिना किसी फल की आशा किये — प्रेम की वेदना सह सकता है, क्या उसे अपने प्रेम को स्वीकार करने के अधिकार से भी वंचित रहना पड़ेगा ? मैं मानता हूं कि जब वीरा निकोलायेवना अविवाहित थीं, मैंने उन्हें अनेक मूर्खतापूर्ण पत्र भेजे थे — उन दिनों मैं यह भी सोचता था कि वह कभी न कभी मेरे पत्रों का उत्तर अवश्य देंगी। मैं यह भी मानता हूं कि उन्हें रत्न-कंगन भेजने का निर्णय और भी अधिक मूर्खतापूर्ण और हास्यास्पद था। किन्तु — मैं सीधा आपकी आंखों को देख रहा हूं और सोचता हूं कि आप अवश्य मेरी बात समझ जाएंगे। मैं उनसे प्रेम करना छोड़ दूं, यह मेरी शक्ति के बाहर की बात है — बिलकुल असंभव है। प्रिंस, फर्ज करो, आपको यह सारी बात बिलकुल अरुचिकर लगती है, तो आप क्या करेंगे — किस प्रकार आप मेरी इस भावना को तोड़ पायेंगे ? हो सकता है, आप निकोलाय निकोलायविच के सुझाव से सहमत हों और पुलिस की मदद से मुझे यह शहर छोड़ने के लिए मजबूर कर दें — किन्तु किसी दूसरे शहर में क्या मैं वीरा निकोलायेवना से प्रेम करना छोड़ दूंगा ? आप लोग

शायद मुझे जेल भिजवा दें — किन्तु वहां भी मैं कोई ऐसा उपाय खोज निकालूंगा, जिससे मैं वीरा निकोलायेवना को हमेशा अपने अस्तित्व का अहसास करवाता रहूं। इसलिये इस समस्या को सुलझाने का केवल एक उपाय है — मृत्यु। यदि आपकी खुशी इसी में है तो मैं — आप जो तरीका सुझाएं — उसी के अनुसार मृत्यु स्वीकार करने के लिए राजी हूं।"

"काम की बात तो करने से रहे, एक नया सनसनीखेज नाटक शुरू कर दिया। ये सब बेकार की बातें हैं!" निकोलाय निकोलायविच ने हैट पहनते हुए कहा। "मुझे तो दो-टूक बात करनी आती है। आप भविष्य में कोई ऐसा काम न करें जिससे प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना को नाहक परेशान होना पड़े, वरना हमें अपनी शक्ति और मर्यादा के अनुसार आपके विरुद्ध कार्रवाई करनी पड़ेगी।"

किन्तु जैल्तकोव ने निकोलाय की ओर आंख उठाकर देखा भी नहीं, हालांकि उसने उसकी धमकी सुन ली थी। उसने प्रिंस वासिली को गौर से देखते हुए पूछा: "क्या मैं दस मिनट के लिये बाहर जा सकता हूं? मैं प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना से टेलीफोन पर कुछ बातें करना चाहूंगा। आप निश्चिन्त रहें — हम दोनों के बीच जो बातचीत होगी, उसका एक-एक शब्द मैं आपको बतला दूंगा।"

"अच्छा, जैसा आप ठीक समझें।" शेयिन ने कहा।

जब निकोलाय शेयिन के संग अकेला रह गया, तो उस पर झपट पड़ा।

"कहीं ऐसे काम बनता है?" उसने अभ्यासवश फिर अपनी छाती से कोई अदृश्य वस्तु निकालकर बाहर हवा में फेंक दी। "तुमने सारा गुड़ गोबर कर दिया। कहीं ऐसे बात की जाती है? मैंने तुम्हें पहले ही चेतावनी दी थी कि तुम बीच में मत पड़ना। मैं सब सम्भाल लूंगा। सारी बात बिगाड़ कर रख दी। उसे देखकर तुम मक्खन की तरह पिघल गये और उसे अपना दिल खोलने का मौका मिल गया। मैं दो शब्दों में ही सारा मामला निपटा देता।"

"जरा सब्र करो — अभी सारी बात साफ हुई जाती है," प्रिंस वासिली ने कहा। "तुमने उसका चेहरा नहीं देखा? वह ऐसा आदमी नहीं है जो जान-बूझ कर किसी को धोखा दे सके। तुम्हीं बताओ, वह प्रेम करता है, इसमें भला उसका क्या दोष है? प्रेम के सम्बंध में आज भी हममें से कोई कुछ नहीं जानता, फिर उस सहज, स्वाभाविक अनुभूति को जोर-जबरदस्ती दबा पाना क्या सम्भव है?" प्रिंस वासिली चिन्तामग्न होकर कुछ देर तक चुप बैठे रहे, फिर धीमे स्वर में बोले, "मुझे इस आदमी को देखकर बहुत दुःख होता है। जो व्यक्ति इतनी भारी ट्रेजेडी से अपनी नियति को जोड़ सकता है, उसकी आत्म-पीड़ा को मैं एक विदूषक की तरह हंसी में नहीं उड़ा सकता।"

"यह पतनशील प्रवृत्ति है — और कुछ नहीं।" निकोलाय ने कहा।

दस मिनट बाद जैल्तकोव वापिस लौट आया। उसकी गहरी आंखें असाधारण-रूप से चमक रही थीं, मानो आंसुओं की सूखी बदलियां उमड़-उमड़ कर घिर आयी हों, और बिना बरसे भीतर कहीं लीन हो गयी हों। उसे देखकर लगता था मानो अब वह सभ्य समाज के शिष्टाचार के प्रति बिलकुल उदासीन हो गया था। उसे एक भद्र पुरुष की तरह दूसरों के सामने पेश आना चाहिये, इसकी अब उसे कोई चिन्ता नहीं रह गयी थी। एक बार फिर शेयिन के संवेदनशील हृदय ने उसकी व्यथा को समझ लिया।

"मैं तैयार हूं," उसने कहा। "अब आपको मेरे कारण कभी परेशान नहीं होना पड़ेगा। कल से आप के लिए मेरा अस्तित्व नहीं के बराबर होगा। समझ लीजिये, मैं मर गया हूं। केवल एक शर्त है — प्रिंस वासिली, यह प्रार्थना मैं आपसे कर रहा हूं। मैंने रुपया गबन किया है, इसलिये वैसे भी मुझे यह शहर छोड़कर भागना पड़ेगा। क्या जाने से पहले मैं प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना को एक अन्तिम पत्र भेज सकता है ?"

"एक बार जो बात खत्म हो गयी, सो खत्म हो गयी। अब आपको पत्र भेजने की कोई जरूरत नहीं।" निकोलाय ने चिल्लाकर कहा।

"हां, अगर आप चाहें, तो भेज सकते हैं।" शेयिन ने कहा।

"बस मैं यही कहना चाहता था।" जैल्तकोव ने अभिमान से मुस्कराते हुए कहा। "भविष्य में मुझे देखना तो दूर रहा, आप भूलकर भी मेरे सम्बंध में कुछ न सुनेंगे। प्रिंसेस वीरा निकोलायेवना तो मुझसे बात भी नहीं करना चाहती थीं। जब मैंने उनसे पूछा कि यदि मैं इस शहर में रह कर कभी-कभार उन्हें लुक-छिप कर दूर से ही देख लिया करूं — ताकि वह मुझे न देख सकें — तो क्या उन्हें कोई आपत्ति तो न होगी ? आप जानते हैं उन्होंने मेरी प्रार्थना के उत्तर में क्या कहा ? 'काश तुम जान सकते कि मैं इन सब बातों से कितना तंग आ गई हूं। कृपया इस किस्से को जल्द से जल्द बन्द कर दीजिये।' आप मानेंगे कि मैंने सारे किस्से को बन्द कर दिया है। जो कुछ मैं कर सकता था, वह सब मैं कर चुका हूं — ठीक है न ?"

शाम को घर आकर प्रिंस वासिली ने अपनी पत्नी को वे सब बातें विस्तार पूर्वक बतला दीं, जो दुपहर के समय उनके और जैल्तकोव के बीच हुई थीं। वह इसे अपना कर्त्तव्य समझते थे।

प्रिंस वासिली की बातों ने वीरा को व्याकुल या स्तम्भित नहीं किया। वह केवल चिन्तित सी हो उठी। उस रात प्रिंस वासिली को अपने बिस्तर की ओर आता देख वीरा ने दीवार की ओर मुंह फेर कर धीरे से कहा : "इधर मत आओ — मुझे लगता है कि वह आदमी अपनी जान लेकर रहेगा।"

ग्यारह

प्रिंसेस वीरा को अखबार पढ़ने का कतई शौक नहीं था — एक तो उसे छूने से ही हाथ गन्दा हो जाता था, दूसरे इन अखबारों की भाषा कुछ ऐसी अजीब होती कि कितना ही सर खपाओ, पल्ले कुछ नहीं पड़ता था।

किन्तु संयोगवश उस दिन उसकी आंख अचानक अखबार के पन्ने के एक कोने पर जा अटकी। वह पूरा समाचार एक सांस में पढ़ गयी :

"रहस्यमयी मृत्यु — कल रात लगभग सात बजे बोर्ड ऑफ कन्ट्रोल के एक कर्मचारी ज. स. जैल्तकोव ने आत्म हत्या कर ली। तहकीकात करने पर मालूम हुआ कि कुछ दिन पहले उक्त कर्मचारी पर सरकारी रुपया गबन करने का अभियोग लगाया गया था। वह अपने पीछे एक पत्र छोड़ गया है जिसमें उसने इस बात का उल्लेख किया है। चूंकि गवाहों के वक्तव्य के आधार पर यह बात प्रमाणित हो गयी है कि मृत व्यक्ति ने खुद अपने हाथों से अपनी हत्या की है, इसलिए यह फैसला हुआ है कि उसके शव की चीड़-फाड़ न हो।"

"मुझे ऐसा क्यों लग रहा था कि कोई अनिष्ट होने वाला है ? क्या इस घटना की परिणति मृत्यु में ही होनी थी ? कौन सा रहस्य छिपा है इस दुर्घटना के पीछे — प्रेम या महज पागलपन ?" वीरा सोच रही थी।

दिन भर वह फलों के बगीचे और वाटिका में घूमती रही। क्षण प्रति क्षण उसकी चिन्ता बढ़ती जा रही थी और वह एक विचित्र सी बेचैनी महसूस करती थी। बार-बार उसका ध्यान उसी एक व्यक्ति पर केन्द्रित हो जाता था, जो हमेशा उसके लिए एक अजनबी रहा, जिसे उसने कभी नहीं देखा और न अब देखने की कोई सम्भावना ही रह गयी थी। कैसा अजीब आदमी था वह !

"कौन जाने — तुम्हारा साक्षात्कार एक ऐसे प्रेम से हुआ है, जिसमें आत्म बलिदान की उदात्त भावना भरी है और जो सही अर्थों में सच्चा और अद्वितीय है।" वीरा के मस्तिष्क में जनरल अनोसोव के शब्द घूम गये।

छः बजे डाकिया आया। इस बार वीरा निकोलायेवना जैल्तकोव के अक्षर देखते ही पहचान गयी। पत्र खोलते हुए जो स्निग्ध और कोमल भावना उसके मन में घिर आयी, उसकी आशा स्वयं उसने कभी अपने से नहीं की थी।

जैल्तकोव ने पत्र में लिखा था :

"यह मेरा दोष नहीं है वीरा निकोलायेवना, कि परमात्मा ने मुझे उस अद्वितीय सुख का पात्र बनाया, जो मुझे तुमसे प्रेम करन के उपलक्ष्य में प्राप्त हुआ। राजनीति, विज्ञान, दर्शन अथवा मानव-जाति के सुनहरे भविष्य के प्रति मैं हमेशा उदासीन रहा हूं, न ही मुझे इन बातों में कोई दिलचस्पी रही है। मेरे जीवन का लक्ष्य और केन्द्र केवल तुम थीं। तुम्हारे जीवन में नाजायज दखल

देकर मैंनें तुम्हें क्लेश पहुंचाया है, आज मैं इस बात को अच्छी तरह समझता हूं। अगर सम्भव हो सके, तो इसके लिए मुझे क्षमा कर देना। आज मैं सबकुछ छोड़ कर जा रहा हूं — तुम्हें मेरे अस्तित्व का जरा भी अहसास न हो, इसलिए मैं कभी वापिस नहीं लौटूंगा।

"तुम हो, और सांस ले रही हो, मेरे लिए यह एक बड़ी चीज है — इसके लिए मैं तुम्हारा सदा कृतज्ञ रहूंगा। मैंने अच्छी तरह से आत्म-परीक्षण किया है — विश्वास करो, यह कोई बीमारी नहीं है, न ही यह एक पागल आदमी की सनक है। यह सिर्फ प्रेम है, जिसे किसी कारणवश ईश्वर ने मेरी झोली में डाल दिया और उसे पाकर मेरा सारा जीवन कृतार्थ हो गया।

"मैं जानता हूं कि तुम्हें और तुम्हारे भाई निकोलाय निकोलायविच को मेरा व्यवहार काफी हास्यास्पद सा जान पड़ा होगा। किन्तु मुझे इसका जरा भी रंज नहीं है। विदा होने से पहले मैं आनन्द-विह्वल हो कर कहता हूं : 'तेरा नाम सदा ज्योतिमय हो।'

"आठ वर्ष पहले मैंने तुम्हें दर्शकों की भीड़ में देखा था — तुम उस दिन सर्कस देखने आयीं थीं। तुम्हें देखते ही मेरे मन में बिजली सा यह विचार कौंध गया कि मैं तुमसे प्रेम करता हूं। मुझे लगा था कि तुम दुनिया में अद्वितीय हो, हर प्राणी, पशु, पौधा या आकाश का तारा तुम्हारे सामने फीका पड़ जाएगा क्योंकि उनमें से कोई भी तुमसे ज्यादा सुन्दर अथवा कोमल नहीं हो सकता। मुझे लगा मानो पृथ्वी का समस्त सौन्दर्य तुम में मूर्त हो उठा है।

"तुम्हीं बताओ, ऐसी हालत में, मैं क्या करता? क्या किसी दूसरे शहर भाग जाता? किन्तु यह असम्भव था। दिन-रात मेरा दिल तुम्हारे आसपास भटकता रहता था, तुम्हारे पैरों पर लोटता रहता था, तुम्हारे ध्यान में खोया रहता था। मेरे समस्त विचारों और सपनों की केन्द्र-बिन्दु केवल तुम थीं। हर घड़ी एक मीठी सी खुमारी मुझे घेरे रहती। जब कभी उस कंगन के सम्बंध में सोचता हूं, लज्जा से धरती में गड़ जाता हूं। उसे तुम्हारे पास भेजना गलती थी। किन्तु मैं अपने को रोक न सका। उस बेहूदे उपहार की तुम्हारे मेहमानों पर क्या प्रतिक्रिया हुई होगी, इसका अनुमान मैं अच्छी तरह लगा सकता हूं।

"दस मिनट और हैं — उसके बाद मैं नहीं रहूंगा। इतने समय में मैं इस पत्र पर टिकट लगा लूंगा और उसे लेटर-बॉक्स में छोड़ आऊंगा ताकि किसी और को मेरा यह काम न करना पड़े। कृपया इस पत्र को जला देना। अभी-अभी मैंने अंगीठी जलायी है — धीरे-धीरे वे सब चीजें जल कर राख हो जायेंगी, जिन्हें जीवन की अमूल्य निधियों की तरह मैं अब तक संजोता आया हूं। देखो यह रहा तुम्हारा रुमाल। हां, इसे मैंने चुराया था। नोबलमैन-असेम्बली में नृत्य का आयोजन हुआ था। उसमें तुम आयीं थीं और अपना रुमाल कुर्सी पर भूल

गयीं थीं। इसे मैंने वहीं से उठाया था। यह रहा वह कागज का पुरजा, जिसमें तुमने मुझे पत्र लिखने से मना किया था। न जाने कितनी बार मैंने इस पुरजे को चूमा है! इन चीजों में कला-प्रदर्शनी का एक प्रोग्राम भी है, जिसे तुमने अपने हाथों से पकड़ा था और बाहर जाते हुए कुर्सी पर छोड़ गयीं थीं। बस यही सब कुछ है—और कुछ नहीं! आज मैं इन सब चीजों से छुटकारा पा लूंगा। किन्तु अब भी मुझे पक्का विश्वास है कि तुम कभी-कभार मुझे अवश्य याद करोगी! मुझे मालूम है कि तुम्हें संगीत में गहरी रुचि है। जब कभी बीथोवां के 'कुआर्टेट्ज' प्रस्तुत किये जाते थे, तुम उन्हें सुनने अवश्य जाती थीं। यदि तुम मुझे कभी याद करो तो स्मृति के उन क्षणों में बीथोवां का सोनाटा (D. dur No. 2, op 2) बजा लेना। मेरी आत्मा को शान्ति मिलेगी।

"समझ में नहीं आता, इस पत्र को कैसे समाप्त करूं। मैं हृदय से तुम्हें धन्यवाद देता हूं, क्योंकि तुम मेरे जीवन का एकमात्र सुख और सम्बल रही हो। ईश्वर तुम्हें सुखी रखे। आशा है, कोई भी साधारण अथवा अस्थायी वस्तु तुम्हारी भव्य आत्मा को दूषित न कर सकेगी। मैं तुम्हारे हाथ चूमता हूं।

"ज. स. ज"

वह पत्र लेकर सीधे अपने पति के पास चली आयी। रोते-रोते उसकी आंखें सूज गयीं थीं और होंठ बार-बार फड़क उठते थे।

"मैं तुमसे कोई बात छिपाना नहीं चाहती," वीरा ने प्रिंस वासिली के हाथ में पत्र देते हुए कहा। "किन्तु मुझे लगता है कि हमारे जीवन पर एक अशुभ और भयंकर घटना की छाया हमेशा मंडराती रहेगी। तुम और निकोलाय शायद इस मामले को सही ढंग से नहीं सुलझा पाए।"

प्रिंस शेयिन ने पत्र को बड़े ध्यान से पढ़ा और फिर सावधानी से तह करके उसे एक ओर रख दिया। कुछ देर खामोश रहने के बाद प्रिंस वासिली धीरे से बोले, "इस शख्स की ईमानदारी पर शक नहीं किया जा सकता। मैं यह भी समझता हूं कि तुम्हारे प्रति उसकी जो भावनाएं रही हैं, उनका विश्लेषण करने का मुझे कोई अधिकार नहीं है।"

"क्या वह मर गया?" वीरा ने पूछा।

"हां, वह अब इस लोक में नहीं है। मेरे विचार में वह तुमसे प्रेम करता था और वह प्रेम किसी पागलपन के कारण नहीं था। मैंने बड़ी बारीकी से उसकी चाल-ढाल, उसकी प्रत्येक भाव-मुद्रा का अध्ययन किया था और उसी समय मैं समझ गया था कि तुम्हारे बिना उसका जीवन निरर्थक है। उसे देख कर मुझे लगा था मानो मर्मान्तिक पीड़ा की एक विराट अनुभूति उसकी आत्मा में रिस-रिस कर बह रही है। उसी क्षण मैंने जान लिया था कि मैं एक मृत-

व्यक्ति से बात कर रहा हूं। वीरा, सच पूछो तो उस समय मैं स्वयं नहीं जानता था कि उससे क्या बात करूं — कैसे पेश आऊं!"

"वास्या," वीरा ने उसे बीच में टोककर कहा, "अगर उसके चेहरे की अन्तिम झलक देखने के लिये मैं शहर जाऊं, तो क्या तुम्हें बुरा लगेगा?"

"बुरा क्यों लगेगा वीरा? तुम्हें अवश्य जाना चाहिये। मैं स्वयं जाना चाहता था, किन्तु निकोलाय ने सारे मामले को गड़बड़ कर दिया है। मुझे डर है, मौजूदा परिस्थिति में मेरा वहां जाना उचित न होगा।"

बारह

जब लुतरान्स्कया स्ट्रीट पहुंचने के लिए केवल दो गलियां पार करनी शेष रह गयीं, तो वीरा निकोलायेवना अपनी बग्गी से नीचे उतर गयीं और पैदल ही जैल्तकोव के घर की ओर चलने लगीं। उसे जैल्तकोव के कमरे का पता चलाने में कोई दिक्कत नहीं उठानी पड़ी। दरवाजा खटखटाने पर वही स्थूलकाय स्त्री चौखट पर आ खड़ी हुई जिसने अपनी सलेटी रंग की आंखों पर चांदी के फ्रेम की ऐनक पहन रखी थी। पिछले दिन की तरह उसने वीरा को देखते ही पूछा: "आप किनसे मिलना चाहती हैं?"

"श्री जैल्तकोव से।"

वीरा की वेशभूषा — उसका हैट और दस्ताने — और उसके अधिकार-पूर्ण स्वर से मकान-मालकिन प्रभावित हुए बिना न रह सकी।

"कृपया भीतर चली आइये। बायें हाथ की तरफ पहला दरवाजा उन्हीं का है — वह इतनी जल्दी हमें छोड़कर विदा हो जायेंगे, यह हम कभी स्वप्न में भी नहीं सोच सकते थे। अगर उन्होंने रुपया गबन भी किया था, तो इस सम्बंध में उन्हें मुझे तो कुछ कहना चाहिए था। आप से क्या छिपाऊं, अविवाहित पुरुषों को कमरा किराये पर देने से हमें कोई विशेष लाभ नहीं होता। किन्तु यदि केवल छः, सात सौ रूबल की बात थी, तो मैं इतनी रकम जोड़ने का इंतजाम कहीं न कहीं से अवश्य कर देती। किन्तु उन्होंने मुझे कुछ बतलाया ही नहीं। श्रीमती जी, उनकी जितनी भी प्रशंसा की जाए, वह थोड़ी है। वह सचमुच एक अद्‌भुत और असाधारण व्यक्ति थे। आठ वर्षों से वह मेरे कमरे में किरायेदार थे, किन्तु मैं उन्हें अपने पुत्र से भी ज्यादा मानती थी।"

वीरा खड़ी न रह सकी, ड्योढ़ी में एक कुर्सी पर बैठ गयी।

"आपके कमरे में रहने वाले वह सज्जन मेरे मित्र थे।" वीरा मानो शब्दों को तोल-तोल कर बोल रही थी। "क्या आप उनके अन्तिम क्षणों के सम्बंध में मुझे कुछ बतला सकती हैं?"

"दुर्घटना से कुछ घंटे पहले दो सज्जन उनसे मिलने आए थे। वह काफी देर तक उनसे बातचीत करते रहे थे। उन्होंने मुझे बतलाया कि ये लोग उन्हें किसी जागीर का सहकारी अमीन नियुक्त करना चाहते हैं। इतना कह कर वह एकदम टेलीफोन करने चले गये। जब वह फोन करके वापिस लौटे तो बहुत खुश नजर आ रहे थे। उसके बाद वे दोनों सज्जन चले गये और वह बैठ कर एक पत्र लिखने लगे। लेटर-बॉक्स में पत्र डालने के बाद वह घर वापिस आ गये। उसके बाद एक हल्का सा धमाका हुआ—बच्चे की पिस्तौल के पटाखे सी आवाज हमें सुनायी दी थी। हमने उसकी ओर कोई ध्यान नहीं दिया। हर रोज सात बजे वह चाय पीते थे। हमारे घर की नौकरानी लुकेर्या ने उसके कमरे का दरवाजा खटखटाया, किन्तु भीतर से कोई उत्तर नहीं आया। बार-बार दरवाजा खटखटाने पर भी जब उन्होंने सांकल नहीं खोली, तो हमें मजबूरन दरवाजा तोड़ कर अन्दर घुसना पड़ा। कमरे के भीतर उनके बजाय उनकी लाश पड़ी थी।"

"उस कंगन का क्या हुआ?" वीरा ने आदेश भरे स्वर में पूछा।

"अरे हां! उस कंगन की बात तो मैं भूल ही गयी। आप क्या उस कंगन के विषय में कुछ जानती हैं? पत्र लिखने से पहले वह मेरे पास आये और मुझ से पूछने लगे: 'क्या तुम कैथोलिक हो?' 'हां' मैंने कहा। 'तुम्हारी एक धार्मिक-प्रथा मुझे बहुत अच्छी लगती है,' उन्होंने कहा। "तुम लोग मरियम की मूर्ति को अंगूठियों, कंठहारों और अन्य आभूषणों से अलंकृत करते हो। क्या तुम अपनी उस मूर्ति पर मेरा यह कंगन रख दोगी?' मैंने हामी भर दी।"

"क्या मैं उन्हें एक बार देख सकती हूं?"

"अवश्य—बायीं तरफ उनके कमरे का दरवाजा है। आज वे लोग शव-परीक्षा के लिए उन्हें अस्पताल ले जाने के लिए आये थे, किन्तु उनके भाई ने प्रार्थना की है कि उनका क्रिया-कर्म ईसाई धर्म के अनुसार किया जाए। आइये, मेरे संग चलिए।"

वीरा ने सतर्क-भाव से धीरे-धीरे दरवाजा खोला। कमरा धूप के सुगन्धित धुएं से महक रहा था। एक ओर ताक में तीन मोमबत्तिया जल रही थीं। जैल्तकोव की देह तिरछे ढंग से मेज पर पडी थी। मृत व्यक्ति को सिरहाने की कोई आवश्यकता नहीं, किन्तु फिर भी किसी ने सावधानी से एक छोटा सा गद्दा उसके सर के नीचे टिका दिया था। उसकी मुंदी हुई आंखों पर एक रहस्यमयी गम्भीरता का विचित्र-सा भाव घिर आया था। उसके होंठों पर एक उल्लासपूर्ण और शान्त मुस्कराहट थिरक आयी थी—मानो मरने से पहले उसे किसी ऐसे मधुर और विराट रहस्य का पता चल गया है, जिसके आलोक में जीवन की सब विकट पहेलियां एकाएक सुलझ गयी हों। वीरा को याद आया

कि उसने वैसी ही शान्त गरिमा का भाव दो महान शहीदों — पुश्किन और नेपोलियन — के मृत चेहरों की चित्र अनुकृतियों में भी देखा था।

"अगर आप चाहें, तो मैं जा सकती हूं," बुढ़िया ने बहुत ही सगे, स्नेह-भरे स्वर में वीरा से कहा।

"अच्छा — मैं अभी कुछ देर में आपको बुला भेजूंगी।" उसने अपनी वास्कट की जेब से गुलाब का लाल फूल निकाला, बायें हाथ से जैल्तकोव का सर धीरे से ऊपर उठाया और दायें हाथ से फूल उठाकर उसकी गर्दन के नीचे रख दिया। उस क्षण वीरा को लगा कि वह प्रेम — जिसका स्वप्न हर स्त्री देखती है, उसके जीवन को स्पर्श करके एक उज्ज्वल सितारे सा सदा के लिए अंधेरे में विलीन हो गया है। जनरल अनोसोव ने जिस चिरस्थायी और एकनिष्ठ प्रेम की भविष्यवाणी की थी, उसका एक-एक अक्षर वीरा के मस्तिष्क में घूमने लगा। उसने सामने लेटे हुए मृत व्यक्ति के माथे पर गिरे हुए बालों को पीछे हटा दिया, अपने दोनों हाथों से उसकी कनपटियों को धीमे से पकड़कर अपने होंठ उसके ठंडे, नम माथे पर रख दिये और एक लम्बे, स्नेहसिक्त चुम्बन से उसे ढक दिया।

जब वीरा कमरे से बाहर जाने लगी, तो मकान मालकिन ने उससे कहा :

"जरा, सुनिये! आपसे मुझे कुछ कहना है। मैं जानती हूं कि आप उन व्यक्तियों में से नहीं हैं, जो केवल कौतूहल-वश उसे देखने यहां आते हैं। मृत्यु से पहले भी जैल्तकोव ने मुझसे कहा था कि यदि कोई महिला उन्हें देखने के लिए यहां आये तो उसे यह कह देना कि बीथोवां की सर्वश्रेष्ठ संगीत-रचना — उन्होंने इस पुरजे पर उसका नाम लिख दिया था — लीजिए, देख लीजिए।"

"कहां लिखा था?" वीरा निकोलायेवना ने पुरजा पढ़ा और उसके आंसू अचानक फूट पड़े। "मुझे माफ कीजिये — इस मृत्यु से मुझे गहरी ठेस पहुंची है — मैं अपने को रोक न सकी।" वीरा ने सुबकते हुए कहा।

पुरजे पर उसके परिचित अक्षरों में लिखा था :

एल. वान बीथोवां — सोनाटा नं. २ ओप. २. लार्गो ऐपैसियानाटो।

तेरह

वीरा जब शाम को घर वापिस आयी, तो उसे यह देखकर खुशी हुई कि उसका पति और भाई — दोनों में से कोई भी घर में मौजूद नहीं है।

किन्तु जैनी रेतर उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। जो कुछ वीरा ने आज देखा और सुना था, उसका बोझ उसके क्लान्त और दुखी मन के लिए असह्य सा हो उठा था। वह जैनी रेतर के पास भागती हुई आई और उसके सुडौल,

सुन्दर हाथों को चूमने लगी। "प्यारी जैनी, तुम पियानो बजाओ और मैं सुनूंगी — मैं तुमसे प्रार्थना करती हूं — जरूर कुछ बजाओ।" यह कहकर वह कमरे से बाहर चली आयी और बाग के एक बेंच पर बैठ गयी।

वह जानती थी कि जैनी बीथोवां के सोनाटा का वही अंश बजाएगी जिसका उल्लेख उस मृत व्यक्ति ने — जिसका विचित्र नाम जैल्तकोव था — अपने पत्र में किया है।

और हुआ भी वही। आरम्भिक सुरों को सुनते ही वीरा ने उस असाधारण कृति के विलक्षण सौन्दर्य को पहचान लिया। उसे लगा मानो उसकी आत्मा को कोई धीरे-धीरे चीर रहा है। जनरल अनोसोव के शब्द उसके मस्तिष्क में फड़फड़ाने लगे — जो महान, अद्वितीय प्रेम हजार वर्षों में केवल एक बार प्रकट होता है, वह उसके जीवन में आया था — आया था और चला गया। वह विस्मित होकर सोचने लगी कि उसके लिए जैल्तकोव ने बीथोवां की उस विशेष कृति को ही क्यों चुना? उसके मस्तिष्क में कुछ शब्द अपने-आप एक संग जुड़ने लगे और फिर संगीत के सुरों में समन्वित होकर एक-दूसरे के संग इस तरह घुल-मिल गये मानो वे किसी प्रार्थना के पद हों और हर पद की अन्तिम पंक्ति '*तेरा नाम ज्योतिर्मय हो*' देर तक गूंजती रहती है।

"अब मेरे कोमल स्वरों से एक ऐसे जीवन की अभिव्यक्ति होगी जिसने हंसते-हंसते सब यातनाओं, पीड़ाओं और अन्त में मृत्यु को भी स्वीकार कर लिया। मेरे प्रेम की सदा अवहेलना की गयी — किन्तु उसकी व्यथा, शिकायत या कड़वाहट को मैंने कभी अपने हृदय में स्थान नहीं दिया—तुम्हारे लिए मेरी यही प्रार्थना है: *तेरा नाम ज्योतिर्मय हो।*

"मैं जानता हूं कि मुझे पीड़ा, रक्त और मृत्यु को झेलना पड़ेगा — इनसे छुटकारा पाने की आशा अब नहीं है। मैं यह भी जानता हूं कि देह से आत्मा आसानी से नहीं छूटती। हे लावण्यमयी! यह सब जानता हूं, फिर भी तेरी आराधना करता हूं, मुक्त-कंठ से तेरी प्रशंसा करता हूं, तेरे प्रति मेरे हृदय में प्रेम की कोमल भावना छिपी है—सदा के लिए। *तेरा नाम ज्योतिर्मय हो।*

"मुझे सब याद है — तुम्हारे पैरों की आहट, तुम्हारी मुस्कान, तुम्हारी दृष्टि — क्या मैं इन्हें कभी भूल सकता हूं? मेरे जीवन की अन्तिम स्मृतियां एक मीठे अवसाद में लिपटी हुई हैं — कोमल, सुन्दर अवसाद में। किन्तु मेरे कारण तुम्हें कोई क्लेश नहीं होगा। मैं चुपचाप अपनी यात्रा पर निकल पड़ा हूं — निपट एकाकी। किन्तु इसके लिए दुख क्यों करूं? ईश्वर की इच्छा और नियति के नियम को भला कौन टाल सका है? इसीलिए मैं अकेला चल पड़ा हूं। *तेरा नाम ज्योतिर्मय हो।*

मृत्यु की इस दुखद घड़ी में मेरी प्रार्थना केवल तुम्हारे लिए है। मेरा जीवन भी सुन्दर हो सकता था। शिकायत न कर — मेरे दिल! क्या मिलेगा शिकायत से? मेरी आत्मा मृत्यु का आवाहन कर रही है, किन्तु मेरा हृदय तुम्हारी स्तुति में लीन है। *तेरा नाम ज्योतिर्मय हो।*

"तुम नहीं जानती — न वे लोग जानते हैं, जो तुमसे परिचित हैं — कि तुम कितनी सुन्दर हो! टन...टन... घड़ी का गजर बज रहा है। समय आ गया। मरते हुए—जीवन से विदाई लेने की इस उदास वेला में भी मैं तुम्हारा गौरव-गान गा रहा हूं: तुम धन्य हो!'

"देखो, यह मृत्यु है, जो मेरे समीप बढ़ती चली आ रही है — सर्वजित् मृत्यु! किन्तु मैं अब भी कहता हूं: तुम धन्य हो!"

प्रिंसेस वीरा बबूल के पतले तने से लिपट कर फफक-फफक कर रो रही थी। उसकी सिसकियों से पेड़ ' प उठता था। हवा का हल्का-सा झोंका पेड़ के पत्तों को धीमे से सरसरा गया, मानो उससे सहानुभूति प्रकट कर रहा हो। तमाखू के पौधों की तीखी, उत्तेजक गन्ध हवा में फैल रही थी। वीरा की मर्मान्तक वेदना संगीत के दिव्य सुरों में धीरे-धीरे स्पन्दित होने लगी:

"शान्ति, प्रिय, शान्ति! सच बताओ, इस क्षण क्या तुम मुझे याद कर रही हो? मेरा अन्तिम प्यार तुम्हारी — बस केवल तुम्हारी सुधि में बसा है! सुनो प्रिय, जब कभी तुम मुझे याद करोगी, मैं तुम्हारे पास चला आऊंगा। फिर मेरे लिए इतना दुःख क्यों? एक-दूसरे के प्रति हमारा प्रेम अमर है, कालातीत है। तुम मुझे याद कर रही हो न? मैं तुम्हारे आंसुओं को देख सकता हूं। धीरज धरो प्रिय...अब मैं सो रहा हूं, नींद ... कितनी मधुर और मोहक है यह नींद!"

संगीत धीरे-धीरे मिटने लगा। जेनी रेतर जब कमरे से बाहर आयी तो उसने देखा कि प्रिंसेस वीरा बेंच पर चुपचाप बैठी है — उसका चेहरा आंसुओं से भीग गया है।

"क्या बात है?" जैनी रेतर ने वीरा के पास आकर पूछा।

वीरा की आंखें आसुओं से चमक रही थीं। उसने अधीर और उत्तेजित होकर जैनी के दोनों हाथ पकड़ लिये और उसके चेहरे, होठों और आंखों को बार-बार चूमने लगी।

"जैनी, अब मुझे कोई दुख नहीं। उसने मुझे क्षमा कर दिया है।"

१९११